श्रीताजिक नीलकण्ठी

भाषाटीकासहित

(तीनों तन्त्र)
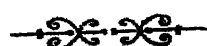
(टीकाकार)

पण्डित शक्तिधर सुकुल

संपादक

पं० खूबचन्द शर्मा गौड़

श्रीकेसरीदास सेठ द्वारा

नवलकिशोर-प्रेस, लखनऊ में मुद्रित और प्रकाशित

सन् १९३८ ई०

द्वितीय बार २०००

२ वर्षतन्त्र । प्रथम संज्ञातन्त्र में ३ प्रकरण हैं और वर्षतन्त्र ६ प्रकरण का इनके अतिरिक्त प्रस्तुत संस्करण में प्रश्नतन्त्र नामक एक विस्तृत तीसरा त सम्मिलित करके विषय का एक अच्छा सामञ्जस्य बना दिया गया है, जो प्र जिज्ञासुओं की एक बहुत बड़ी आवश्यकता की पूर्ति कर रहा है।

ताजिक नीलकण्ठी की टीकाएँ संस्कृत भाषा में कई एक विद्वानों ने की है प्रथम तो ग्रन्थकार के पुत्र गोविन्द दैवज्ञ ने रसाला नाम की टीका लिखी । पि ग्रन्थकार के पौत्र माधव दैवज्ञ ने शिशुबोधिनी नामक व्याख्या की । इन अनन्तर विश्वनाथ दैवज्ञ ने कोई उदाहरण नामक व्याख्या की है । परन्तु ये टीका सर्वसाधारण और विशेषतया हिंदी भाषा-भाषी जनता के लिए उपयोगी न हो सकतीं । ऐसे संस्कृतभाषामूल दुरूह ग्रन्थों की सरल हिंदी व्याख्या हो की परम आवश्यकता है।

नवलकिशोर इस्टेट के अध्यक्ष श्रीमुंशी रामकुमारजी भार्गव की कृपा ताजिक नीलकण्ठी का यह द्वितीय संस्करण देखने में आया । इसके टीकाका पं० शक्तिधर सुकुलजी ने संस्कृत और हिंदी व्याख्या करने में पर्याप्त परिश्र किया था, जिसका अवलोकन कर जयपुर राजमान्य पण्डितप्रवर सरयूप्रसाद जी ने प्रसन्न हो टीकाकार को एक प्रशंसापत्र भी प्रदान किया था।

प्रस्तुत संस्करण का संशोधन और सम्पादन तथा तीसरे प्रश्नतन्त्र का अनुवाद पं० खूबचन्दजी शर्मा गौड़ ने किया है । संस्कृत व्याख्या का अनावश्यक भाग—जिसका तात्पर्य हिंदीभाषा में आ गया है—निकाल कर हिंदी भाषा का अच्छ परिमार्जन कर दिया गया है । इसके अतिरिक्त आवश्यकतानुसार विषय को अतिसरल बनाने के लिए बहुत-से चक्र आदि का समावेश करके इस संस्करण को बहुत उपयोगी बनाया गया है । यथावसर पादटिप्पणियाँ दे दी गई हैं, जिनसे ग्रन्थ लगाने में बड़ी सहायता मिलती है । आशा है, दैवज्ञ-समाज इसका यथेष्ट आदर करेगा, जिससे कार्यालय को प्रोत्साहन मिलेगा और भविष्य में उत्तमोत्तम ग्रन्थ प्रकाशित करके विद्वत्समाज की सेवा करता रहेगा । किमधिकं दैवज्ञमहोदयेष्विति शम् ।

१ नवम्बर } पाण्डेयोपाह्व भगवतीप्रसाद 'अनुज'
१९३८ ई० }

ताजिक नीलकण्ठी भाषाटीका की विषय-सूची।

ग्रहों का स्वरूप

ग्रहों का स्वरूप

तृतीय प्रश्नतन्त्र

इति

•

श्रीगणेशाय नमः ।

ताजिकनीलकण्ठी

भाषाटीकासहिता ।

संज्ञातन्त्रं प्रारभ्यते ।
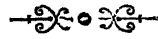
प्रथमं प्रकरणम् ।

ग्रन्थस्य निर्विघ्नपरिसमाप्त्यर्थं मङ्गलमाचरन् चिकीर्षितं प्रतिजानीते ।

प्रणम्य हेरम्बमथो दिवाकरं
गुरोरनन्तस्य तथा पदाम्बुजम् ।
श्रीनीलकण्ठो विविनक्ति सूक्तिभि-
स्तत्ताजिकं सूरिमनःप्रसादकृत् ॥ १ ॥

नत्वोजस्य[१] पदद्वन्द्वं गुरुं रव्यादिखेचरान् ।
नीलकण्ठकृतेर्व्याख्यां बुद्धिदां सन्तनोम्यहम् ॥

प्रणम्येति—श्रीनीलकण्ठः, तत्ताजिकं तत्पूर्वाचार्योक्तं ताजिकं सूक्तिभिः सुयुक्तिभिः नानाछन्दोभिर्वा विविनक्ति प्रकटीकरोति । कीदृशं ताजिकं सूरिमनःप्रसादकृत् 'सूरयो विद्वांसः तेषां मनः अन्तःकरणं तस्य प्रसादः तं करोतीति सूरिमनःप्रसादकृत्' । एतद्ग्रन्थावलोकनेन विद्वन्मनः प्रसन्नतां यातीति भावः । किं कृत्वा हेरम्बं गणाधिपं अथो दिवाकरं सूर्यं तथा तेनैव प्रकारेण अनन्तदैवज्ञाख्यस्य गुरोः पदाम्बुजं चरणकमलं प्रणम्य कायवाङ्मनोभिर्नमस्कृत्येत्यर्थः ॥ १ ॥

दो० । बन्दनकरि गणराज को, शारद गुरुहिं मनाय ।
नीलकण्ठि शुभग्रन्थ का, अर्थ करौं मतिदाय ॥

आदि में ग्रन्थ की निर्विघ्नपरिसमाप्ति के लिये इष्टदेवताओं के नमस्काररूप मंगलाचरण को करते हुए कर्त्तव्यग्रन्थ की प्रतिज्ञा करते हैं ।

१—अः शिवस्तस्माज्जातः अजः गणेशस्तस्येति ।

गणेश, दिवाकर तथा अनन्तनामक गुरु के चरणारविन्दों को प्रणाम करके श्रीनीलकंठजी पण्डितों के मन को प्रसन्न करनेवाले उस ताजिकग्रन्थ को सुन्दरयुक्तियों और नानाछन्दों में वर्णन करते हैं । यह पूर्वाचार्यों द्वारा सविस्तर वर्णन कियागया है ॥ १ ॥

द्वादश राशियों का स्वरूप वर्णन ।

मेष राशि का स्वरूप ।

पुमांश्चरोऽग्निः सुदृढश्चतुष्पाद्रक्तोष्णपित्तोऽतिरवोद्रिगुग्रः ।
पीतो दिनं प्राग्विषमोदयोऽल्पसङ्गप्रजो रूक्षनृपः समोजः ॥ २ ॥

दो० । मेषादिक सब राशि के, वर्णादिक अरु जाति ।
कहवै ताजिकशास्त्रसों, करि विचार बहुभाँति ॥ २ ॥

पुरुष राशि, चरसञ्ज्ञक, अग्नितत्त्ववाला, दृढ़काय, चार पैरोंवाला, लालरंग, गर्मस्वभाव, पित्तप्रकृति, महाशब्दकारी, पर्वतपर विचरनेवाला, क्रूर, पीला वर्ण, दिन में बली, पूर्व दिशा का स्वामी, विषम उदयवाला, थोड़ा स्त्रीसङ्ग व थोड़ी प्रजावाला, रूखा शरीर, क्षत्रियवर्ण और समान अंगोंवाला मेष के आकार का मेषराशि का स्वरूप है । समरसिंह आदिने मेष, सिंह, और धन के दो वर्ण कहे हैं इसीसे मेष राशि के लाल और पीले दो वर्ण आचार्य ने दिखाये हैं ॥ २ ॥

वृषराशि का स्वरूप ।

वृषः स्थिरः स्त्री क्षितिशीतरूक्षो
याम्येट् सुभूर्वायुनिशाचतुष्पात् ।
श्वेतोऽतिशब्दो विषमोदयश्च
मध्यप्रजासङ्गशुभोऽपि वैश्यः ॥ ३ ॥

बैल के आकार, स्थिरसंज्ञक, स्त्रीराशि, पृथ्वीतत्त्व, शीतलस्वभाव, रूखी कान्ति, दक्षिण दिशा का मालिक, सुन्दर भूमि में रहनेवाला वायु प्रकृति, रात्रि में बली, चार पैरोंवाला, सफेद वर्ण, महाशब्दकारी विषम उदयवाला, मध्यम स्त्री व मध्यम संतानवाला, सौम्यरूप, वैश्यवर्ण और ढीले अंगोंवाला वृषराशि का स्वरूप जानना चाहिए ॥ ३ ॥

मिथुनराशि का स्वरूप।

प्रत्यक्समीरः शुकभा द्विपान्ना द्वन्द्वं द्विमूर्तिर्विषमोदयोष्णः।
मध्यप्रजासङ्गवनस्थशूद्रो दीर्घस्वनः स्निग्धदिनेट् तथोग्रः॥ ४॥

पश्चिम दिशा का मालिक, वायुतत्त्व, तोते का-सा हरित वर्ण, दो पैरोंवाला, पुरुष राशि, द्वन्द्वरूप (स्त्री-पुरुष के जोड़े को द्वन्द्व या मिथुन कहते हैं), चर-स्थिर स्वभाव (पूर्व[1] का आधा स्थिर और उत्तर का आधा चर है, यह विशेष भट्टोत्पल ने कहा है)। विषम उदयवाला, गर्म स्वभाव, मध्यम सन्तान व स्त्रीवाला, अरण्यगामी, शूद्रवर्ण, महाशब्दकारी, चिकना, दिनमें बली, क्रूर और ढीले अंगोंवाला मिथुनराशि का स्वरूप जानना चाहिए॥ ४॥

कर्कराशि का स्वरूप।

बहुप्रजासङ्गपदः कुलीरश्चरोऽङ्गनापाटलहीनशब्दः।
शुभः कफी स्निग्धजलाम्बुचारी समोदयो विप्रनिशोत्तरेशः॥५॥

बहुत सन्तान, बहुत स्त्रीप्रसंगी, बहुत चरणोंवाला, कीटाकार, चरसंज्ञक, स्त्रीजाति, सफेद व लालवर्ण, शब्दरहित, सौम्यस्वभाव, कफप्रकृति, चिकना, जल तत्त्ववाला और जल में ही विचरनेवाला, सम उदय, ब्राह्मण वर्ण, रात्रि में बली, उत्तर दिशा का मालिक और ढीले अंगोंवाला कर्कराशि का स्वरूप जानना चाहिए॥ ५॥

सिंहराशि का स्वरूप।

पुमान् स्थिरोऽग्निर्दिनपीतरूक्षो पित्तोष्णपूर्वेशदृढश्चतुष्पात्।
समोदयो दीर्घरवोऽल्पसङ्गप्रजो हरिः शैलनृपोग्रधूम्रः॥ ६॥

पुरुष राशि, स्थिरसञ्ज्ञक, अग्नितत्त्व, दिनमें बली, पीत वर्ण, रूखी कांति, पित्तप्रकृति, गर्मस्वभाव, पूर्व दिशा का मालिक, पुष्टशरीर, चार पैरोंवाला, सम उदय, महाशब्दकारी, अल्प स्त्रीसंग और अल्प सन्तानवाला, पर्वतपर विचरनेवाला, क्षत्रिय वर्ण, क्रूरस्वभाव और धुआँ-सा वर्णवाला सिंहराशि का स्वरूप जानना चाहिए। यह भी पीत और धूम्र दो वर्णोंवाला है॥ ६॥

१—उक्तं च भट्टोत्पलेन—चरराशौ विपरीतं मिश्रं वाच्यं द्विमूर्त्युदये-स्थिरवत्प्रथमेऽर्द्धे स्यादपरे चरराशिवत्सर्वमिति।

कन्याराशि का स्वरूप ।

पाण्डुर्द्विपात्स्त्रीद्वितनुर्यमाशा निशामरुच्छीतसमोदयाच्छमा
कन्यार्द्धशब्दा शुभभूमिवैश्या रूक्षाऽल्पसङ्गप्रसवा शुभा च ॥७

पिङ्गलवर्ण, दो पैरोंवाली, स्त्रीराशि, चर-स्थिर स्वभाव, दक्षिण दिशा की स्वामिनी, रात्रि में बलयुत, वातप्रकृति, ठण्ढा स्वभाव, सम उदय, भूमितत्त्व और खण्डित शब्द करनेवाली, सुन्दर भूमि में विचरनेवाली, वैश्यवर्ण, कान्ति से रहित, अल्प प्रसंग व थोड़ी सन्तानवाली, सौम्यरूप तथा ढीले अङ्गोंवाली कन्या राशि होती है ॥ ७ ॥

तुलाराशि का स्वरूप ।

पुमांश्चरश्चित्रसमोदयोष्णः प्रत्यङ्मरुत्स्निग्धरवो न वन्यः ।
स्वल्पप्रजासङ्गमशूद्र उग्रस्तुलो द्युवीर्यो द्विपदः समानः ॥८॥

पुरुषराशि, चरसंज्ञक, विचित्रवर्णोंवाला, सम उदय, गर्म स्वभाववाला, पश्चिम दिशा का स्वामी, वायु तत्त्ववाला, चिकना, शब्दरहित, वन में रहनेवाला, थोड़ी संतान और अल्पसंगवाला, शूद्रवर्ण, क्रूर, दिन में बली, दो पैरोंवाला, समान अंगोंवाला तथा तराजू का सा तुलाराशि का स्वरूप है ॥ ८ ॥

वृश्चिक राशि का स्वरूप ।

स्थिरःसितःस्त्रीजलमुत्तरेशो निशारवो नो बहुपात्कफी च ।
समोदयोवारिचरोऽतिसङ्गप्रजः शुभः स्निग्धतनुर्द्विजोऽलिः ॥९॥

स्थिरसंज्ञक, सफेद वर्ण, स्त्रीराशि और जल तत्त्ववाला, उत्तर दिशा का स्वामी, रात्रि में बली, शब्दरहित, बहुत पैरोंवाला, कफप्रकृति, समोदयवान्, जलचारी, बहुत स्त्रीप्रसंगी, बहुत संतानवाला, सौम्य स्वभाव, चिकनी कायावाला और ब्राह्मण वर्ण तथा बिच्छू के से रूपवाला वृश्चिक-राशि का स्वरूप जानना चाहिए ॥ ९ ॥

धनराशि का स्वरूप ।

ना स्वर्णभाः शैलसमोदयोऽतिशब्दो दिनं प्राग् दृढरूक्षपीतः
राजोष्णपित्तो धनुरल्पसूतिसङ्गो द्विमूर्तिर्द्विपदोऽग्निरुग्रः ॥१०॥

पुरुष राशि, सोने की सी कान्ति, पर्वतगामी, सम उदय, महाशब्द

कारी, दिनमें बली, पूर्वदिशा का स्वामी, दृढ़अंग, रूक्ष कान्ति, पीले वर्ण वाला, क्षत्रियवर्ण, गर्मस्वभाव, पित्तप्रकृति, थोड़ी सन्तानों व स्त्रीप्रसंगवाला, चर-स्थिर स्वभाव, दो पैरोंवाला (अर्थात् पूर्व के आधे में दो पैर और उत्तर के आधे में चार पैरोंवाला), अग्नितत्त्व और क्रूर स्वभाव धन राशि का स्वरूप जानना । इस राशि के भी ग्रन्थकर्त्ता ने सुनहले तथ पीले ये दो वर्ण दिखलाये हैं ॥ १० ॥

मकरराशि का स्वरूप ।

मृगश्चरः क्ष्मार्द्धरवो यमाशा स्त्रीपिङ्गरूक्षः शुभभूमिशीतः ।
स्वल्पप्रजासङ्गसमीररात्रिरादौ चतुष्पाद्विषमोदयो विट् ॥ ११ ॥

चरसञ्ज्ञक, पृथ्वीतत्त्ववाला, खण्डित शब्दकारी, दक्षिण दिशा का स्वामी, स्त्रीराशि, पिंगल वर्ण, रूक्ष कान्ति, सौम्य स्वभाव, भूमिचारी, ठण्ढा स्वभाव, थोड़ी सन्तान तथा स्त्रीप्रसङ्गवाला, वातप्रकृति, रात्रि में बली, आदि में चार पैरोंवाला (अर्थात् पूर्व के आधे में चार पैर और उत्तर के आधे में जलचर, मगर और मृगरूप), विषम उदय और वैश्यवर्ण मकर राशि का स्वरूप होता है ॥ ११ ॥

कुम्भराशि का स्वरूप ।

कुम्भोऽपदो ना दिनमध्यसंगप्रसूः स्थिरः कर्बुरवन्यवायुः ।
स्निग्धोष्णखण्डस्वरतुल्यधातुः शूद्रः प्रतीची विषमोदयोग्रः १२

पैरोंसे रहित, पुरुषराशि, दिन में बली, मध्यम स्त्रीसंग व सन्तानवाला, स्थिरसञ्ज्ञक, विचित्रवर्ण, वनचारी, वातप्रकृति, चिकना शरीर, गर्म स्वभाव, खण्डित शब्द, तुल्य धातु (वात-पित्त-कफ) वाला, शूद्रवर्ण, पश्चिम दिशा का स्वामी, विषम उदय, क्रूर स्वभाव और कलश के आकार का कुम्भराशि का रूप होता है ॥ १२ ॥

मीनराशि का स्वरूप ।

मीनोऽपदः स्त्री कफवारिरात्रिर्निशब्दबभ्रुर्द्वितनुर्जलस्थः ।
स्निग्धोऽतिसङ्गप्रसवोऽपि विप्रः शुभोत्तराशेट् विषमोदयश्च १३

पैरों से रहित, स्त्रीराशि, कफप्रकृति, जलतत्त्व, रात्रि में बली, शब्द-रहित, पिंगल वर्ण, द्विस्वभाव (चर–स्थिर तनु), जलचारी, स्निग्ध (चिकना),

बहुत स्त्रीप्रसंगी, बहुत पुत्रोंवाला, ब्राह्मण वर्ण, सौम्य स्वभाव, उत्तरदिशा स्वामी, विषम उदय तथा मछली के आकार मीनराशि का स्वरूप होता है ॥ १३ ॥

राशियों के मित्रादि विभाग ।

धराम्बुनोरग्निसमीरयोश्च वर्गे सुहृत्त्वं परतोऽरिभावः ।
चापान्त्यभागस्य चतुष्पदत्वं ज्ञेयं मृगान्त्यस्य जलेचरत्वम् ॥ १४ ॥

पृथ्वीराशि और जलराशियों के वर्ग में मित्रता जानना चाहिए अर्थात् पृथ्वीतत्त्ववाली राशियों का तथा जलतत्त्ववाली राशियों का आपस में मिलाप समझना चाहिए। ऐसेही अग्निराशि और वायुराशियों के वर्ग में भी मित्रता जानना चाहिए। इनसे विपरीत शत्रुभाव जानना। जैसे कि पिता-पुत्रों, स्त्री-पुरुषों, स्वामी-सेवकों अथवा अन्यलोगों के मैत्री विचार में पृथ्वीराशि और जलराशियों का संबन्ध हो तो मित्रपना कहना। ऐसेही अग्निराशि और वायुराशियों का सम्बन्ध हो तो भी मित्रपना कहना। अन्यथा शत्रुभाव समझना चाहिए। जैसे कि पृथ्वी-अग्नि, भूमि-वायु, जल-अग्नि, और जल-वायु इन सबों के वर्ग में शत्रु-भाव समझना। जब दोनों का एक ही पृथिव्यादिवर्ग हो तब दोनों की आपसमें बड़ी प्रीति होती है। पहले धन और मकर का विशेष स्वरूप नहीं कहा है अतः उसका सिंहावलोकन न्याय से कहते हैं कि धनराशि का अन्त्य भाग चार पैरवाला और मकर का उत्तरार्द्ध जलचर होता है॥ १४ ॥

राशियों का संक्षिप्त रूप ।

पित्तानिलौ धातुसमः कफश्च त्रिर्मेषतः सूरिभिरूहनीयाः ।
राजन्यविट्शूद्रधरासुराश्च सर्वफलं राश्यनुसारतस्स्यात् ॥ १५ ॥

मेष से मीनपर्यंत राशियों का पित्त, अनिल, धातुसम और कफ ये प्रकृतियाँ तीन आवृत्ति से विचारना चाहिए। जैसे—मेष पित्तप्रकृति, वृष वात, मिथुन धातुसम, कर्क कफी, सिंह पित्त, कन्या वात, तुला धातुसम, वृश्चिक कफी, धन पित्त, मकर वात, कुम्भ धातुसम और मीन कफ प्रकृति जानना चाहिए। पुनः मेषादि बारह राशियों में राजन्य, विट्, शूद्र, धरासुर, इन चारों को तीन आवृत्तियों से विचारना चाहिए। जैसे कि मेष क्षत्रिय वर्ण, वृष वैश्य, मिथुन शूद्र, कर्क ब्राह्मण तथा सिंह क्षत्रिय, कन्या वैश्य, तुला शूद्र, वृश्चिक ब्राह्मण, धन क्षत्रिय, मकर वैश्य, कुम्भ शूद्र और मीन ब्राह्मण वर्ण जानना चाहिए। इन सबका फल राशियों के अनुसार जानना चाहिए ॥ १५ ॥

०	संज्ञा	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धन	मकर	कुंभ	मीन
१	पुंस्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
२	चरस्थिरादि	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव
३	तत्त्व	अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल	अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल	अग्नि	पृथ्वी	वायु	जल
४	पुष्ट-कृश	दृढ़	दृढ़	मृदु	मृदु	दृढ़	कृश	दृढ़	कृश	दृढ़	दृढ़	दृढ़	दृढ़
५	पादसंज्ञा	चतुष्पद	चतुष्पद	द्विपद	वक्रपद	चतुष्पद	द्विपद	द्विपद	वक्रपद	द्विपद	चतुष्पद	द्विपद	अपद
६	वर्ण	पाटलरक्त	श्वेत	हरित	पाटल	धूम्र	पांडुर	विचित्र	श्वेत	पीत	पिंगल	कर्बुर	धूम्र
७	गुण	तप्तदेह	शीत.	तप्त	शीत	उष्ण	वायु	उष्ण	वायु	उष्ण	शीत	उष्ण	शीत
८	धातु	पित्त	वायु	वायु	कफ	पित्त	जल	पित्त	कफ	पित्त	वायु	वायु	कफ
९	शब्द	अतिरव	अतिरव	दीर्घशब्द	हीनशब्द	दीर्घशब्द	अर्ध	शब्दरहित	शब्दरहित	अतिशब्द	अतिशब्द	खंडरहित	शब्दहीन
१०	चार स्थान	पर्वतचर	समभूमि	वनचर	जलचर	पर्वतचर	शुभभूमि	वनचर	जलचर	पर्वतचर	वनचर	भूमिचर	जलचर
११	क्रूरादि	उग्र	सौम्य	उग्र	सौम्य	उग्र	सौम्य	उग्र	सौम्य	उग्र	सौम्य	उग्र	सौम्य
१२	दिवादिबल	दिवा	रात्रि	दिवा	रात्रि	दिवा	रात्रि	दिवा	रात्रि	दिवा	रात्रि	दिवा	रात्रि
१३	सम विषम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम	विषम	सम
१४	दिशा	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
१५	स्त्रीसंगवसंतान	अल्प	मध्य	मध्य	बहु	अल्प	अल्प	अल्प	अति	अल्प	अल्प	मध्य	अति
१६	कान्ति	रूक्ष	रूक्ष	स्निग्ध	स्निग्ध	रूक्ष	रूक्ष	स्निग्ध	स्निग्ध	रूक्ष	रूक्ष	स्निग्ध	स्निग्ध
१७	जाति	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	ब्राह्मण
१८	समादि उदय	विषम	विषम	विषम	सम	सम	सम	सम	सम	सम	विषम	विषम	विषम

वर्षफल साधन के लिए वर्षप्रवृत्ति का समय कहते हैं।

गताः समाः पादयुताः प्रकृतिघ्नसमागणात्।
खवेदाप्तघटीयुक्ता जन्मवारादिसंयुताः॥
अब्दप्रवेशो वारादिसप्ततष्टेऽत्र निर्दिशेत्॥ १६॥

गतवर्षों को पादयुत करे अर्थात् जन्मकालिक शक को वर्तमान शाके में घटाने से जो शेष रहता है उसी को गतवर्ष कहते हैं। उसमें उसी की चौथाई को जोड़ देवे—फिर गत वर्षों को इकीस से गुण देवे, फिर उसमें चालीस का भाग देवे, भाग देने से जो लब्ध मिले उसको चौथाई से जुड़े हुए में जोड़ देवे। फिर शेष बचे को साठ से गुणा करे, उसमें भी चालीस का भाग देवे, भाग देने से जो लब्ध मिले उसको पूर्वोक्त चौथाई से जुड़े हुए में जोड़े। तदनन्तर जन्मकालिक वार, इष्टघटी और पलों को क्रम से जोड़ देवे फिर ऊपर के अंक में सात के भाग देने से जो शेष रहता है उसको वर्षप्रवेश की वार, घटी और पल जानना॥ १६॥

अब उदाहरणक्रम लिखा जाता है।

पहले यहाँ किसी का जन्म समय लिखते हैं—श्रीसंवत् १६४८। शके १५१३। माघशुक्लप्रतिपदाबुधे घटी १६। श्रवणनक्षत्र घटी ५४। वज्रयोगे घटी ६। अस्मिन् शुभदिने श्रीसूर्योदयादिष्टघटी ३७। पल ५३। तथ रात्रिगत घटी १२ पल १२ जन्म अक्षभा ७। ३० देशान्तरयोजनानि धनानि ३० सूर्यः ९। ७। ३०। ६ जन्मलग्नम् ५। १०। ५३। ५०।

वर्षप्रवेश का उदाहरण।

जैसे कि जन्मकाल का शक १५१३ है और वर्त्तमान शक १५५ है। इस जन्मकालिक शाके को घटाया तो शेष ३७ गत वर्ष हुए। इस इसके चतुर्थांश ९। १५ को जोड़ा तो ४६। १५ हुए। फिर गतव गुण ३७ को २१ इकीस से गुण दिया तो ७७७ हुआ। इसमें चालीस ४ का भाग दिया तो १९। २५। ३० लब्ध हुआ। इसको चतुर्थांश से जु हुए वर्षगण की घटी में जोड़ दिया तो वा. ४६। घ. ३४। प. २५। वि. ३

ये हुए । इनमें जन्मकालिक बुधवार ४ घटी ३७ पल ५३ को क्रम से जोड़ दिया तो ५१ । १२ । १८ । ३० यह हुआ । फिर ऊपर के अंक में सात से भाग लेने से शेष वर्ष प्रवेश का वारादि २।१२ । १८ । ३० जानिए अर्थात् चन्द्रवार में १२ घटी १८ पल ३० विपल पर वर्ष लगा । ऐसेही और वर्षों के साधन को भी समझ लेना चाहिए ॥

जन्म समय स्पष्ट सूर्य के जितने अंश बीते हों उसी सूर्य के उतने ही अंश के दिन वर्ष प्रवेश के वारादि होते हैं ।

वर्षसारिणीयम् ।

ग.व.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
वार	१	२	३	५	६	०	१	३	४	५	६	१	२	३	४	६	०	१	२	४
घटी	१५	३१	४६	२	१७	३३	४८	४	१९	३५	५०	६	२१	३७	५२	८	२३	३९	५४	१०
पल	३१	३	३४	६	३७	९	४०	१२	४३	१५	४६	१८	४९	२१	५२	२४	५५	२७	५८	३०
वि.	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
ति.	११	२२	३	१४	२५	६	१७	१९	१०	२१	२	१३	२४	५	१६	२७	८	१९	०	११
न.	१०	२०	३	१३	२३	६	१६	२६	९	१९	२	१२	२१	४	१४	२०	७	१७	०	१०
यो.	१०	२०	३	१३	२३	६	१६	२६	९	१९	२	१२	२१	४	१४	२४	७	१७	०	१०
लग्न	३	६	९	०	३	६	९	०	३	०	१०	१	४	७	१०	१	४	७	११	२
अंश	२	६	१०	१४	१६	२०	२४	२६	२९	२	६	१०	१४	१६	२०	२४	२६	२९	०	२
मुंथा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८

ग.व.	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०
वार	५	६	०	२	३	४	५	०	१	२	४	५	६	०	२	३	४	५	०	१
घटी	२६	४१	५७	१२	२८	४३	५९	१४	३०	४५	१	१६	३२	४७	३	१८	३४	४९	५	२१
पल	१	३३	४	३६	७	३९	१०	४२	१३	४५	१६	४८	१९	५१	२२	५४	२५	५७	२८	०
वि.	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
ति.	२२	३	१४	२५	७	१८	२९	१०	२१	२	१३	२४	५	१६	२७	८	१९	०	११	२३
न.	२०	३	१३	२३	६	१६	२६	९	१९	२	१२	२२	५	१५	२५	८	१७	०	१०	२०
यो.	२०	३	१३	२३	६	१६	२६	९	१९	२	१२	२२	५	१५	२५	८	१७	०	१०	२०
लग्न.	५	०	११	२	५	०	१	२	६	९	०	३	६	५	०	३	६	१०	१	४
अंश	६	१०	१४	१६	२०	२४	२६	२९	२	४	८	१२	१६	२	१४	२४	२९	०	२	८
मंथा	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४

ग.व.	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
वार	२	३	५	६	०	१	३	४	५	६	१	२	३	४	६	०	१	३	४	५
घटी	३३	५२	२	२३	३८	५४	९	२५	४०	५६	११	२७	४२	५८	१३	२९	४४	०	१५	३१
पल	३१	३	३४	६	३७	९	४०	१२	४३	१५	४६	१८	४९	२१	५२	२४	५५	२७	५८	३०
वि.	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
ति.	४	१५	२६	७	१८	२९	१०	२१	२	१३	२४	५	६	७	८	२०	१	२२	१	४
न.	३	१३	२३	६	१६	२६	९	१९	२	१२	२२	५	५	२५	८	१८	१	११	२१	४
यो.	३	१३	२३	६	१६	२६	९	१९	२	१२	२२	५	५	२५	८	१८	१	११	२१	४
लग्न	७	१०	१	४	७	१०	१	५	८	११	२	५	८	११	२	५	९	१	३	६
अंश	०	१४	१६	२०	२४	२६	२९	०	४	८	१२	१६	२८	१२	२४	२९	०	२	६	१०
मुथा.	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२

ग.व.	६१	६२	६३	६४	६५	६६	६७	६८	६९	७०	७१	७२	७३	७४	७५	७६	७७	७८	७९	८०
वार	६	१	२	३	४	५	०	१	२	४	५	६	०	२	३	४	५	०	१	२
घटी	४७	७	१८	३३	४९	४	२	३५	५१	६	२२	३७	५३	८	२४	३९	५५	१०	२६	४२
पल	१	३३	४	३६	७	३९	१०	४२	१३	४५	१६	४०	१९	५१	२२	५४	२५	५७	२८	०
वि.	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
ति.	१५	२६	७	१८	२९	१०	२१	२	१३	२४	५	१७	२८	९	२०	१	१२	२३	४	१५
न.	१३	२३	६	१६	२६	९	१९	२	०	२२	५	१५	२५	८	१८	१	११	२१	४	१४
यो.	१३	२३	६	१६	२६	९	१९	२	१२	२२	५	१५	२५	८	१८	१	११	२१	४	१४
लग्न	९	०	३	६	९	०	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	८	११	२	५	८
अंश	१४	१८	१०	२४	२६	२८	०	४	८	१०	१४	१८	१२	२४	२०	०	२	६	८	१४
मुथा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८

तिथिसाधन ।

शिवघ्नोऽब्दः स्वखाद्रीन्दुलवाढ्यः खाग्निशेषितः ।
जन्मतिथ्यन्वितस्तत्र तिथावब्दप्रवेशनम् ॥ १७ ॥

अब तिथिसाधन कहते हैं—गतवर्ष को ग्यारह से गुणकर दो जग
स्थापन करे। फिर पहले में एकसौसत्तर १७० का भाग देकर लब्ध व
दूसरे स्थान में जोड़ देवे। तदनन्तर शुक्लपक्ष की परेवा से गिनव
जन्म-तिथि की संख्या को उसमें जोड़ दे। फिर उसमें तीस ३० :
भाग देवे। भाग देने से जो शेष रहता है उसी तिथि में वर्ष प्रवेश हो
है, परन्तु यह पूर्ण नियम नहीं है। कभी पूर्व तिथि में अथवा अगा

की तिथि में वर्ष प्रवेश होता है। यहाँ वार ही का प्रमाण लिया जाता है अर्थात् तीन तिथियों के मध्य में जिस प्रवेशतिथि में पूर्व का लाया हुआ वार हो वही वर्ष प्रवेश में तिथि जानना चाहिए। यहाँ जिस महीने में जन्म होता है उसी महीने में वर्ष का प्रवेश होता है। कभी-कभी इसके अतिरिक्त अन्य महीने में भी होता है। जन्मकालीन सूर्य के तुल्य जिस महीने में सूर्य हो वही वर्ष प्रवेश में महीना लिया जाता है ॥१७॥

तिथ्यानयन का उदाहरण।

गतवर्ष गण ३७ को ग्यारह ११ से गुणा किया तो ४०७ हुआ। फिर इसको दो जगह स्थापन कर एक में एकसौसत्तर १७० का भाग दिया। भाग देने से २ लब्ध मिले इनको उसमें जोड़ दिया तो ४०९ हुआ। फिर जन्मकालीन शुक्लपक्ष की परेवा से लेके वर्तमान तिथि २ द्वितीया को जोड़ा तो ४११ हुआ। इसमें तीस ३० का भाग दिया तो इक्कीस २१ शेष मिले। इनमें पन्द्रह निकाल डाले बाकी छः ६ बचे तो कृष्णपक्ष की षष्ठी तिथि आई, परंतु इस तिथि में पूर्व का लाया हुआ[१] वार नहीं आया क्योंकि वह अगाड़ी वर्तमान है इससे इस तिथि में एक १ और जोड़ दिया तो कृष्णपक्ष की सप्तमी ७ तिथि आई। इसी तिथि में वर्षका प्रवेश हुआ।

वर्षप्रवेश लिखने का उदाहरण।

संवत् १६८५ शाके १५५० माघकृष्ण सप्तमीचंद्रवासरे घटी ३७ पल ३९। हस्तनक्षत्रे घटी १७ पल २८। सुकर्मायोगे घटी २७ पल २८। इस शुभ दिनमें सूर्य के उदय से गत इष्टघटी १२ पल १८ विपल ३० में अड़तीसवें वर्षका प्रवेश हुआ।

पंचांगस्थित ग्रहों से तत्काल ग्रह स्पष्ट करने का विधान कहते हैं।

गतैष्यदिवसाद्येन गतिर्निघ्नी खषट्हृता।
लब्धमंशादिकं शोध्यं योज्यं स्पष्टो भवेद्ग्रहः॥ १८॥

गत और ऐष्य दिवसों से अर्थात् ऋण चालक और धन चालक से ग्रहों की गति को गुणा करे फिर गोमूत्रिका क्रम से ६० का भाग देवे। भाग देने से जो अंश, कला, विकलात्मक लब्ध हो वे उसको पञ्चाङ्ग स्थित ग्रहों

(१) "सैकानिरेका करणीया" तिथि लाने में अपने प्रयोजन के लिये कहीं एकको जोड़ देवे या घटा देवे। यह पूर्वाचार्यों का मत है।

में घटावे या जोड़े अर्थात् जब ऋण चालक हो तब घटावे और जब धन चालक हो तब जोड़ देवे । जोड़ने तथा घटाने से वह तात्कालिक स्पष्ट ग्रह होवेगा । वक्रगतिवाला ग्रह और राहु-केतु इनका चालन मार्गी ग्रहों की अपेक्षा विपरीत जानना चाहिए—अर्थात् धनचालक में ऋण चालक, और ऋण चालक में धनचालक की विधि जानना योग्य है ॥ १८ ॥

चालक बनाने की विधि ।

(इष्टवारादिकं शोध्यं पङ्क्तिस्थे वारपूर्वके ।
चालनं त्वृणसंज्ञं स्याद्विलोमे धनसंज्ञकम् ॥ १ ॥
प्रस्तारस्तु यदाग्रे स्यादिष्टं संशोधयेदृणम् ।
इष्टकालो यदाग्रे स्यात्प्रस्तारं शोधयेद्धनम् ॥ २ ॥)

वारपूर्वक पंक्ति में वर्षप्रवेश समय के वार, इष्टघटी-पलों के घटाने से ऋण संज्ञक चालन होता है; और वारपूर्वक इष्टघटी-पलों में वारपूर्वक पंक्ति के घटाने से धनसञ्ज्ञक चालन होता है, अर्थात् जब प्रस्तार में इष्ट घटाया जावेगा तब ऋणसञ्ज्ञक चालन कहना चाहिए और जब इष्ट में प्रस्तार घटाया जावेगा तब धन संज्ञक चालन जाना चाहिए । जैसे—यदि प्रस्तार (पंक्ति) आगे हो तो उसमें इष्ट को घटाने से ऋण चालन होता है । और इष्ट आगे हो तो उसमें प्रस्तार को घटाने से धन चालन होता है ।

उदाहरण ।

जैसे कि वर्षप्रवेश का २ । १२ । १८ यह वार, इष्टघटी, पल है । इसमें पंक्तिस्थ ६ । १३ । ५६ वारादि को शोधन किया तो २ । ५८ । २२ यह चालनाङ्क हुआ । इसको धनसंज्ञक चालन समझो । इसी करके सूर्य की गति ६१ व विगति १७ को गुण दिया । फिर साठ का भाग दिया—भाग देने से ३ । २ । ११ यह लब्ध हुआ । इसमें पञ्चाङ्गस्थित सूर्य ६ । ४ । २७ । ५५ को जोड़ दिया तो जोड़ने से ६ । ७ । ३० । ६ यह वर्ष प्रवेश में तात्कालिक सूर्य स्पष्ट हुआ । ऐसे ही मङ्गल आदि ग्रहों को समझ लेना चाहिए, परंतु मार्गी ग्रहों की अपेक्षा से वक्री ग्रहों में धनचालन हो वहाँ ऋण चालन और जहाँ ऋण चालन हो वहां धनचालन समझना चाहिए ।

पञ्चाङ्गस्थ नक्षत्र से चन्द्रानयनविधि।

खषट्घ्नं भयातं भभोगोद्धृतं तत्खतर्कघ्नधिष्ण्येषु युक्तं द्विनिघ्नम्।
नवाप्तं शशीभागपूर्वस्तुभुक्तिः खखाभ्राष्टवेदाभभोगेन भक्ताः १६

भयात को अर्थात् वर्षप्रवेश के समय में जो नक्षत्र हो उसी की इष्टकालावधि भुक्तघटियों को साठ से गुणा करे फिर उसी में भभोग से अर्थात् नक्षत्र के गतैष्ययोग से भाग लेवे। भाग लेनेसे जो लब्ध मिले उसको साठ से गुणा किये हुए अश्विनी आदि गतनक्षत्रों में जोड़ देवे, फिर जोड़े हुए में नव से भाग लेवे, भाग लेने से जो लब्ध मिले उसको अंश जाने। फिर शेष बचे हुए को साठ से गुणा करे, उसमें भी नव से भाग लेवे, भाग लेने से जो लब्ध मिले उसको कला जाने। फिर शेष को साठ से गुणा करे उसमें नवसे भाग लेवे, भाग लेने से जो लब्ध मिले उसको विकला समझे। इसप्रकार भागपूर्वक चंद्रमा को जानना चाहिए। अब गति लाने को कहते हैं कि अड़तालीस हज़ार को साठ से गुणा करे, फिर उसमें भभोग से भाग लेवे, भाग लेने से जो लब्ध आवे उसको चन्द्रमा की गति समझे। फिर शेष बचे हुए को साठ से गुणा करे, उसमें भभोग से भाग लेवे, भाग लेने से जो लब्ध मिले उसको विगति जानना चाहिए॥ १६॥

भयात-भभोग बनाने की विधि।

(गतर्क्षनाड्यः खरसेषु शुद्धाः सूर्योदयादिष्टघटीषु युक्ताः।
भयातसंज्ञा भवतीह तस्य निजर्क्षनाडीसहितो भभोगः॥ १॥)

गत नक्षत्र की घड़ियों को साठ ६० में घटावे, शेष बची हुई घड़ियों को सूर्योदय से इष्टघड़ियों में जोड़ देवे। जोड़ने से उसकी भयात संज्ञा होती है और निज नक्षत्र की घड़ियों को साठ से शोधी हुई घड़ियों में जोड़ देने से भभोग होता है। यह स्थूलमत है। कदाचित् एक ही दिन में गत नक्षत्र थोड़ा हो वहाँ यह क्रिया करनी चाहिए कि यदि एक ही दिनमें गत नक्षत्र थोड़ासा हो तो उसीको इष्टमें घटा दो, घटा देनेसे भयात होगा और थोड़ेसे गतनक्षत्र की नाड़ियों को साठ ६० में घटा कर उसीमें पर दिनवाले नक्षत्रकी घड़ियों के जोड़ देने से भभोग बन जाता है।

चन्द्रस्पष्ट करने का उदाहरण।

जैसे वर्षप्रवेश के समय में हस्त नक्षत्र की पूर्व दिन में भुक्त घटियाँ ४१। २४ हैं। इनको इष्ट की घटियों १२। १८ में जोड़ दिया जोड़ने से

इष्टघटी पर्यन्त हस्त नक्षत्र की ५३ । ४२ ये भयात संज्ञक भुक्तघटियाँ हुईं । इनको साठ से गुण दिया तो ३२२२ हुआ और भभोग ५८ । ५२ यह है । इन दोनों भाज्य भाजकों को साठ से गुणा किया तो भाज्य २६ ३३ २० यह हुआ और भाजक ३५ । ३२ यह है । इसी से भाग लिया, भाग लेने से ५४। ४४ । १ यह लब्ध हुआ । इसीमें गत नक्षत्र की संख्या १२ को साठ से गुणकर ७२० को जोड़ दिया । जोड़ने से ७७४ । ४४ । १ यह हुआ । इसका २ से गुण दिया तो १५४६ । २८ । २ यह हुआ । इसमें नवका भाग दिया, भाग देनेसे १७२ । ६ । ४७ ये अंशादिक लब्ध हुए । अंशों में ३० का भाग लगाया तो ५ । २२ । ६ । ४७ यह तात्कालिक राश्यादि चन्द्रमा हुआ । अब गति लाने को कहते हैं । जैसे अड़तालीस हज़ार को साठ से गुणा किया तो २८८०००० यह भाज्य हुआ । इसमें पूर्वोक्त भाजक ३५३२ से भाग लेनेसे ८१५। २४ यह लब्ध हुई कलादि को चन्द्रमा की स्पष्ट गति जानो । कही हुई रीति से साधे हुए तात्कालिकस्पष्ट ग्रहों को जानना चाहिए ।

रव्यादयो ग्रहाः स्पष्टाः स्युः ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
६	५	८	८	८	७	६	२	८
७	२२	२२	१२	१६	१५	२२	२२	२२
३०	६	३६	१६	३४	३१	२४	२४	२४
६	४७	१	६	१३	४८	३६	३६	३६
६१	८१५	४४	५६	१३	७०	३	३	३
१७	२४	१	२३	५०	७	११	११	११

२७ नक्षत्रोपरिस्पष्टराश्यादि चन्द्रसारिणी

अ.	भ.	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पु.	पु.	श्ले.	म.	पू.	उ.	ह.
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
०	०	१	१	२	२	३	३	४	४	४	५	५
१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	००	१३	२६	१०	२३
२०	४०	००	२०	४०	००	२०	४०	००	२०	४०	००	२०
००	००	००	००	००	००	००	००	००	००	००	००	००

चि.	स्वा.	वि.	ऽनु.	ज्ये.	मू.	पू.	उ.	श्र.	ध.	श.	पू.	उ.	रे.
१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७
६	६	७	७	८	८	८	९	९	१०	१०	११	११	१२
६	२०	३	१६	००	१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	००
४०	००	२०	४०	००	२०	४०	००	२०	४०	००	२०	४०	००
००	००	००	००	००	००	००	००	००	००	००	००	००	००

भयातगतघटी पर चन्द्रसारिणी।

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	१	१	१	१	२	२	२	२	२	३	३	३	३	४	४	४	४	४	५	५
१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०

२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
५	५	६	६	६	६	६	७	७	७	७	८	८	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०
३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	,	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०

४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
१०	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३
५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०

सर्वर्क्षपर गतिका स्पष्ट।

५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४	६५	६६	६७
८८८	८७२	८५७	८४२	८२७	८१३	८००	७८६	७७४	७६१	७५०	७३८	७२७	७१६
४८	४०	०८	०६	३४	३३	००	५४	१२	५७	००	३०	१८	२८

यह चंद्रमा का १ कल्पित उदाहरण लिखते हैं। जैसे–हस्त ५३। ४२ भयात ५८। ५२ भभोग तो यहाँ उत्तरा को देखा तो ५। १०। ०० ०० मिला ५४ के नीचे ०। १२। ००। ०० है यह ६० घटी का ध्रुवा है यह सब नक्षत्र का ही है इसलिये सानुपात ०। ०। ९। ४७ और मिला तो जोड़ा तब ५। २२। ९। ४७ स्पष्ट चंद्रमा हुआ और गति-विगति ८१३। ३३ हुई।

पूर्व और परनत की साधनविधि।

पूर्वं नतं स्याद्दिनरात्रिखण्डं दिवानिशोरिष्टघटीविहीनम्।
दिवानिशोरिष्टघटीषु शुद्धयाद् द्युरात्रिखण्डं त्वपरं नतं स्यात् २०

दिन और रात्रि के अर्धखण्ड में दिन और रात्रि के इष्ट की घड़ियाँ

घट जावें तो पूर्वनत होता है तथा दिन और रात्रि के इष्टकी घड़ियों में दिन या रात्रि के खण्ड घट जावें तो पर नत[1] होता है। अर्थात् दिन के आधे में इष्ट घड़ियाँ घटजावें तो दिनमें पूर्व नत होता है। तथा रात्रि के आधे में इष्ट घड़ियाँ घट जावें तो रात्रि में पूर्वनत होता है। यह लक्षण दिन वा रात्रि के आधे से पूर्व इष्टकाल के होते हुए जानना योग्य है। जब इष्टकाल में दिन का आधा घटजावे तब दिन में परनत होता है। और जब इष्टघड़ियों में से रात्रि का आधा घटजावे तब रात्रि में परनत होता है॥ २०॥

नत बनाने का उदाहरण।

जैसे दिनमान २५। २८ है। इसका आधा १२। ४४ है। इसमें इष्टकाल की १२। १८। ३० घड़ियों को घटा दिया तो दिन में ०। २५। ३० यह पूर्व नत हुआ।

सन्धिसहित तन्वादि १२ भावों के साधन की विधि।

तात्काले सायनार्कस्य भुक्तभोग्यांशसंगुणात्।
स्वोदयात्खाग्नि ३० लब्धं यद्भुक्तं भोग्यं रवेस्त्यजेत्॥२१॥
इष्टनाडीपलेभ्यश्च गतगम्यान्निजोदयात्।
शेषं खत्र्याहतं भक्तमशुद्धेन लवादिकम्॥ २२॥
अशुद्धं शुद्धभे हीनं युक्तनुर्व्ययनांशकम्।
एवं लंकोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात्॥ २३॥
पूर्वपश्चान्नतादन्यत्प्राग्वत्तद्दशमं भवेत्।
सषड्भे लग्नखे जाया तुर्यौ लग्नोनतुर्यतः॥ २४॥
अग्रे त्रयः षडेवन्ते भार्द्धयुक्ताः परेऽपि षट्।
षष्ठांशयुक्तनुस्सन्धिरग्रे षष्ठांशयोजनात्॥ २५॥
त्रयस्ससन्धयो भावाः षष्ठांशो नैकयुक्सुखात्।
खेटे भावसमे पूर्णं फलं सन्धिसमे तु खम्॥ २६॥

अब छह श्लोकों से सन्धि सहित तन्वादि १२ भावों का साधन

---

(१) मध्याह्न के बिन्दु से निचले भाग का नाम 'नत' है।

कहते हैं कि तात्कालिक सूर्य को अयनांशों से युक्त करे अर्थात् राश्यंश-कलात्मक सूर्य में अयनांशों को जोड़ देवे, फिर भुक्त[1] अथवा भोग्यांशों से निजदेशीय स्वोदय को गुण देवे । फिर उसमें तीस ३० का भाग देवे, भाग देने से जो लब्ध मिले वह सूर्य का भुक्त अथवा भोग्य काल होता है । उसी भुक्त या भोग्य को इष्टकी घटीपलों से घटा देवे । घटा देने से जो शेष मिले उसमें अपने उदय से गत या गम्य को घटावे अर्थात् जब भुक्तकाल साधा गया हो तो गुणित उदय से पृष्ठोदयों को घटावे और जब भोग्य काल साधा गया हो तब गुणित उदय से अगाड़ी के उदयों को घटावे । घटाने से जो शेष मिले उसको तीस ३० से गुणा करे फिर उसी में अशुद्धोदय से भाग लेवे । भाग लेने से जो अंशादि मिलें उनको अशुद्ध में घटा देवे और शुद्ध में जोड़ देवे अर्थात ऋण लग्न के साधने में मेष से गणना करके, जितनी संख्या वाला अशुद्धोदय हो उतनी राशि संख्या वाले में अंशादिकों को घटा देवे और धन लग्न के साधन करने में भी मेष से गिनकर जितनी संख्या वाला शुद्धोदय हो उसीमें जोड़ देवे। तदनन्तर अयनांशों से रहित करे। रहित करने से जो शेष रहता है वह लग्न होता है।

इसी प्रकार पूर्वोक्त रीति से राश्यंशकलात्मक सूर्य में अयनांशों को जोड़ देवे । तदन्तर लङ्कोदयी राशियों से सूर्य के भुक्त काल अथवा भोग्य काल को साधन करे । फिर उसी को पलात्मक किये हुए पूर्वनत वा पश्चिमनत से शोधन करे और शेष कर्म को पूर्व के समान साधन करने से दशम भाव सिद्ध होता है, अर्थात् जब पूर्व नत हो तब पूर्वनत को इष्टकाल समझकर उसी में लङ्कोदयी राशियों से सूर्य के भुक्तकाल को बनाकर घटावे और अन्य संपूर्ण क्रिया ऋण लग्न के समान करनी चाहिए। जब पश्चिम नत हो तब पश्चिम नत को ही इष्टकाल मानकर उसी में लङ्कोदयी राशियों से सूर्यों के भोग्यकाल को बनाकर घटा देवे और अन्य संपूर्ण क्रिया धन लग्न के समान करे तो वह दशमभाव सिद्ध होता है।

अब लग्न व दशम भाव को कहकर अन्य भावों को कहते हैं कि, लग्न में छः राशियों के जोड़ देने से सातवाँ भाव स्पष्ट होता है। ऐसे ही

[1]—जब ऋणलग्न साधन करना हो तब भुक्त अंशों का ग्रहण करना चाहिए, और जब धनलग्न साधन करना हो तब भोग्यअंशों का ग्रहण करना योग्य है।

दशम भाव में छः राशियों के जोड़ने से चौथा भाव सिद्ध होता है। इस प्रकार चार भाव उत्पन्न हुए। अब लग्न को चौथे भाव में घटावे जो शेष रहे उसका छठा अंश निकाले। उसी छठे अंश को लग्न में जोड़ देवे, जोड़ देने से वही लग्न और दूसरे भाव की सन्धि होती है, अर्थात् लग्न की विराम सन्धि और दूसरे भाव की आरम्भ सन्धि होती है। यह सब जगह जानना चाहिए। (अग्रे षष्ठांशयोजनादिति) अगाड़ी छठे अंश के जोड़ने से अन्य भाव व सन्धियों की निष्पत्ति होगी। जैसे कि आई हुई जो लग्न की विराम सन्धि व दूसरे की आरम्भ सन्धि है, उसमें छठे अंश के जोड़ने से दूसरा भाव होता है फिर दूसरे भाव में छठे अंश के जोड़ देने से दूसरे व तीसरे भाव की सन्धि होगी। इसी सन्धि में षष्ठांश के जोड़ने से तीसरा भाव निष्पन्न होगा, और इसी तीसरे भाव में षष्ठांश के जोड़ देने से तीसरे व चौथे भाव की सन्धि होगी। इस प्रकार सहित सन्धियों के तीन भाव उत्पन्न हुए। अब अगाड़ी सहित सन्धियों के तीन भावों को साधन करते हैं कि, जैसे पूर्व लाया हुआ जो षष्ठांश है उसका एक में घटावे, घटाने से जो शेष मिले उसी से चौथे भाव को युक्त करे तो वह चौथे व पञ्चम भाव की संधि होती है। इसी में एक से शोधे हुए षष्ठांश के जोड़ देने से पाँचवाँ भाव सिद्ध होता है। इसी पाँचवें भाव में एकोन षष्ठांश के जोड़ने से पाँचवें व छठे भाव की सन्धि होगी। इसी सन्धि में एकोन षष्ठांश के जोड़ देने से छठा भाव निष्पन्न होगा। इसी छठे भाव में एकोनषष्ठांश के जोड़ने से छठे व सप्तम भाव की सन्धि होगी। इस प्रकार सहित सन्धियों के छः भाव सिद्ध हुए। अब इन्हीं भावों में से प्रत्येक भाव में छः राशियों के जोड़ देने से सन्धियों के सहित शेष छह भाव होंगे।

अब भाव व सन्धियों की निष्पत्ति के प्रयोजन को कहते हैं कि जो ग्रह जिस भाव में स्थित हो और यदि उसी भाव के राशि, अंश, कला, विकलाओं से बराबर हो तो वह ग्रह उसी भाव के संपूर्ण शुभ वा अशुभ फल को देता है और जो सन्धियों के राशि, अंश, कला, विकलाओं से तुल्य हो तो वह शून्य ही फल को देता है॥ २१। २६॥

भुक्तं भोग्यं स्वेष्टकालान्न शुध्येत्त्रिंशन्निघ्नात्स्वोदयाप्तं लवाद्यम्।
हीनं युक्तं भास्करे तत्तनुस्याद्रात्रौ लग्नं भार्द्धयुक्ताद्रवेस्तु २७॥

अब यह आशङ्का होती है कि उक्त रीति से लाया हुआ सूर्य का

भुक्तकाल अथवा भोग्यकाल इष्टकी घटी-पलों से नहीं घटे तो किस उपाय से लग्न को साधन करना चाहिए ? इसका समाधान यह है कि जब सूर्य का भुक्त अथवा भोग्य इष्ट की घटी-पलों से नहीं शुद्ध हो तब इष्ट की घटी-पलों को ही तीस से गुण देवे । तदनन्तर सायन सूर्य के राश्युदय से भाग लेवे भाग लेने से जो अंशादिक लब्ध मिलें उनको सूर्य में घटा दे अथवा जोड़ देवे—अर्थात् जब सूर्य का भुक्त आया हो तब लब्ध हुए अंशादिकों को सूर्य में घटा देना और जब सूर्य का भोग्य आया हो तब लब्ध हुए अंशादिकों को सूर्य में जोड़ देना चाहिए । घटाने व जोड़ देने से ही लग्न होता है । यदि रात्रि में लग्न का साधन करना हो तो छः राशियों को सूर्य में जोड़कर भुक्त व भोग्य काल से लग्न का साधन करे और ऐसे ही रात्रि के समय दशम लग्न के साधन में भी छः राशियों को सूर्य में जोड़कर भुक्तकाल व भोग्यकाल का साधन करे । शेष संपूर्ण क्रिया पूर्व की समान करने से दशम लग्न सिद्ध होगा ॥ २७ ॥

ग्रहलाघवीय अयनांश-साधनविधि ।

(वेदाब्धयब्ध्यूनः खरसहृतशकोऽयनांशः) शाके में ४४४ को घटा देवे । और उसमें ६० का भाग दे देवे, जो लब्ध हो उसको अंश और शेष को कला समझना चाहिए । जैसे १५५० शाके में ४४४ को घटाया घटाने से ११०६ यह शेष रहा । इसमें साठ ६० का भाग लगाया तो लब्ध १८ और शेष छब्बीस २६ रहे । यह १८ । २६ अयनांश हुआ ।

मकरन्दीय अयनांश-साधनविधि ।

(भूलोचनाब्धिरहितः स्वदिगंशहीनः
शाकः खतर्कविहृतोऽयनभागकाः स्युः ।)

वर्तमान शाके में ४२१ घटावे जो शेष बचे उसे दो जगह स्थापन करे । एक में १० का भाग दे । लब्ध आवे उसको दूसरे अंक में घटा दे । जो अंक हो उसमें ६० का भाग देने से अयनांश होता है । जैसे १५५० शाके में ४२१ घटाये तो ११२९ शेष बचे । ११२९ में १० का भाग दिया तो ११२ । ५४ लब्ध हुआ । इसको ११२९ में घटाया तो १०१६ । ६ शेष बचे । इसमें ६० का भाग दिया तो १६ । ५६ । अयनांश हुआ । यही अयनांश है ।

लग्नस्पष्ट करने का उदाहरण ।

जैसे तात्कालिक सूर्य ९ । ७ । ३० । ६ है। इस राश्यंशकलात्मक सूर्य में १८ । २६ जोड़ दिया तो ९ । २५ । ५६ । ६ यह सायनार्क हुआ। इसमें राशि को छोड़कर अंशादिकों को तीस अंशों से घटाया तो ४।३।५४ यह भोग्यांश हुए । अब यह विचार कर्तव्य है कि जब भुक्त अंश थोड़े हों और भोग्य अंश अधिक हों तब भुक्त अंशों से स्वोदय को गुण देवे, अथवा भुक्त अंश अधिक हों और भोग्य अंश थोड़े हों तो भोग्य ही अंशों से स्वोदय को गुणा करे; क्योंकि थोड़े अंशों से क्रिया करने में लघुता होती है, इसलिए इस उदाहरण में भोग्य अंशों से स्वोदय को गुणा करेंगे ।

स्वोदय बनाने की विधि ।

(मेषादिगे सायनभागसूर्ये दिनार्धजाभा पलभा भवेत्सा ।
त्रिष्ठाहताः स्युर्दशभिर्भुजङ्गैर्दिग्भिश्चराधानि गुणोद्धृतान्त्याः१)

मेष की सायन संक्रान्ति के दिन मध्याह्न में जो द्वादशांगुल शंकु की अंगुलात्मक छाया होती है वह पलभा कहाती है। उस पलभा को तीन जगह रखकर क्रम से १०, ८, १० से गुण दे । फिर गुणे हुए अन्त के अंक में ३ का भाग देकर लब्ध को उसी स्थान में रक्खे। यह चरार्ध संज्ञक ध्रुवा होता है । इसको लंकोदय में क्रम से और उत्क्रम से स्थापित अंकों में घटाने से और जोड़ने से स्वोदय होता है ।

जैसे ७ । ३० पलभा है । इसको क्रम से १०, ८, १० से गुण दिया तो ७५ । ६० । ७५ हुआ । इसके अन्त्य अंक ७५ में ३ का भाग दिया तो २५ लब्ध हुआ । ७५ । ६० । २५ चरार्ध ध्रुवा हुआ । इसको लंकोदय में घटाने और जोड़ने से—

घटाया	२७८ । २९९ । ३२३ ।			जोड़ा	३२३ । २९९ । २७८		
	७५ । ६० । २५ ।				२५ । ६० । ७५		
यह	२०३ । २३९ । २९८ ।				३४८ । ३५९ । ३५३		स्वोद

हुआ । देखो चक्र । इसी प्रकार जहां का जन्म हो वहीं के पलभा स्वोदय बनाना चाहिए ।

संवत् शकोपरि अयनांशज्ञानाय सारिणीयम् ।

६३९	६९९	७५९	८१९	८७९	९३९	९९९	१०५९	१११९	११७९	१२३९	१२९९	१३५९	१४१९	१४७९	१५३९	१५९९	१६५९	१७१९	१७७९	१८३९	१८९९	१९५९	२०१९	२०७९	२१३९	२१९९	२२५९	२३१९	२३७९
५०४	५६४	६२४	६८४	७४४	८०४	८६४	९२४	९८४	१०४४	११०४	११६४	१२२४	१२८४	१३४४	१४०४	१४६४	१५२४	१५८४	१६४४	१७०४	१७६४	१८२४	१८८४	१९४४	२००४	२०६४	२१२४	२१८४	२२४४
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०

शेषाब्दोपरि अयनांशज्ञानाय सारिणीयम् ।

०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
००	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९

वर्षमध्ये अयनांशकलाविकलादिज्ञानाय सारिणीयम् ।

मे० सूर्य	वृ० सू०	मि० सू०	क० सू०	सिं० सू०	कं० सू०	तु० सू०	वृ० सू०	ध० सू०	म० सू०	कुं० सू०	मी० सू०
० वि०	५ वि०	१० वि.	१५ वि०	२० वि०	२५ वि०	३० वि०	३५ वि०	४० वि०	४५ वि०	५० वि०	५५ वि०

सारिणीपर से अयनांश ग्रहण प्रकार ।

अयनांश में संवत, शाके और इष्ट वर्ष के संवत शाके यदि समान होयँ तो संवत् शाके के नीचे लिखे अयनांश को ग्रहण करे और यदि समान न हों तो इष्ट संवत् शाके में सारिणी के संवत् शाके घटाकर जो शेष रहे उस शेषाब्द चक्र के नीचे लिखे अयनांश को लेकर दोनों को जोड़ देवे । फिर देखे कि कौन सा महीना है और सूर्य कौन सी राशि के हैं । उसके अनुसार ।

प्रकार का अयनांश बनाना हो तो स्पष्ट अयनांश के दसवें भाग को उसी में हीन कर २० कला ४२ विकला जोड़ने से दूसरी तरह का अयनांश स्पष्ट हो जावेगा

सारिणी पर उदाहरण ।

संवत् १६८५ में सारिणी के संवत् १६५९ को घटाया तो शेष रहे २६ तो संवत् १६५९ के नीचे अयनांश १८ शेष २६ के नीचे ०। २६ है इन को जोड़ दिया तो १८। २६ यह अयनांश हुआ । अब माघ में मकर के सूर्य हैं तो मकर के नीचे ४५ प्रति विकला और मिलीं इनको भी जोड़ा तो १८। २६। ४५ यह मासादिक स्पष्ट अयनांश हुआ ।

जन्मभूमावुदयचक्रम् ।

मेष	२०३	मीन
वृष	२३९	कुम्भ
मिथुन	२९८	मकर
कर्क	३४८	धन
सिंह	३५९	वृश्चिक
कन्या	३५३	तुला

इस चक्र से देखकर भोग्य अंशो ४। ३। ५४ से मकरराशि के उदय २९८ को गुणा किया तो १२११। २२ । १२ यह हुआ । इसमें तीस से भाग लेने से ४०। २२। ४४ यह सूर्य का भोग्यकाल उत्पन्न हुआ। इसको इष्ट की घड़ी १२ * १८ पलों ७३८ से शोधन किया तो

नोट—यदि चक्र में लिखे वर्षों से आगे का अयनांश जानना हो तो ६० वर्ष प्रति १ अंश तीस अंश से घटाता हुआ विलोम क्रम से एक अंश तक लावे। यह धन संस्कारिक है (जैसा कि इस समय अयनांश जोड़ा जाता है)। फिर वही ६० वर्ष प्रति एक अंश क्रमोत्क्रम से अर्थात् १ अंश से ३० अंश तक और उल्टे क्रम से फिर ३० अंश से १ अंश तक ऋण संस्कारिक इसी प्रकार से वारंवार होता है। क्योंकि परम अयनांश ३० अंश तक है। दूसरे पक्षवाले (कोई-कोई सिद्धांतों में) परम अयनांश २७ अंश तक ही माना है अर्थात् प्रति वर्ष ५४ विकला सिर्फ बढ़ता (धन) है। सारिणी के अयनांश के दसवें भाग को उसी में हीन के फिर उसमें २० कला ४२ विकला और मिलाने से दूसरे पक्ष का स्पष्ट अयांश बन जाता है।

शेष ३६७ । ३७ । १६ यह मिला । इसमें मकर से अगाड़ी कुम्भ के उदय २९९ को घटाया तो ५५८ । ३७ । १६ यह शेष रहा । इसमें कुम्भ के अगाड़ी मीन के उदय २०३ को घटाया तो २५५ । ३७ । १६ यह शेष रहा । इसमें मीन के अगाड़ी मेष के उदय २०३ को घटाया तो ५२ । ३७ । १६ यह शेष रहा । इसमें मेष से अगाड़ी वृष का उदय २९९ यह नहीं घट सकता है, इसीसे शेष ५२ । ३७ । १६ को तीस से गुणा किया तो १५७८ । ३८ यह हुआ । इसमें अशुद्धोदय वृष २९९ से भाग लिया तो ६ । ३६ । १८ यह अंशादि लब्ध हुए । इनमें अशुद्ध से पूर्व मेष से मिलकर एक राशि को जोड़ दिया तो जोड़ने से १ । ६ । ३६ । १८ यह सहित राशि के अंशादि हुए । इनमें अयनांशों १८ । २६ को घटा दिया तो ० । १८ । १० । १६ यह लग्न हुआ । इसमें छः और जोड़े तो ६ । १८ । १० । १६ यह सातवाँ भाव संसिद्ध हुआ । अब दशम भाव के उदाहरण को लिखते हैं ।

लंकोदयचक्रम् ।

मेष	७२८	मीन
वृष	२९९	कुम्भ
मिथुन	३२३	मकर
कर्क	३२३	धन
सिंह	२९९	वृश्चिक
कन्या	२७८	तुला

दिन का आधा १२ । ४४ यह है । इसमें इष्ट १२ । १८ । ३० को घटाया तो ० । २५ । ३० यह पूर्वनत हुआ । इसी को यहाँ इष्टकाल समझो और लङ्कोदय मकर ३२३ से सायनांश सूर्य के भुक्त अंशों को गुण दिया, फिर तीस ३० का भाग लगाया । भाग लेने से यह सूर्य का २७९ । १४ । ० भुक्तकाल लब्ध हुआ । यह इष्ट की घड़ी पलों ० । २५ । ३० से शुद्ध नहीं हो सकता इसीसे इष्ट ही २५ । ३० को तीस ३० से गुणा किया गुणा करने से ७६५ यह हुआ । इसमें स्वोदय ३२३ से भाग लिया तो भाग लेने से २ । २२ । ६ ये अंशादि लब्ध हुए । इनको राश्यादि सूर्य ९ । ७ । ३० । ६ में घटाया तो ९ । ५ । ८ । ० यह दशम भाव सिद्ध हुआ । इसमें ६ छः राशियों के जोड़ने से ३ । ५ । ८ । ० यह चौथा भाव सिद्ध हुआ । अब इसी चौथे भाव ३ । ५ । ८ । ० में लग्न को घटाया तो २ । १६ । ५७ । ४४ यह शेष रहा । इसमें छः से भाग लिया तो ० । १२ । ४९ । ३७ यह राश्यादि लब्ध हुए । इनको लग्न ० । १८ । १० । १६ में जोड़

दिया तो १ । ० । ५९ । ५३ यह लग्न की विराम संधि हुई । इसमें षष्ठांश ० । १२ । ४९ । ३७ को जोड़ दिया तो १ । १३ । ४९ । ३० यह दूसरा भाव सिद्ध हुआ । इस दूसरे भाव १ । १३ । ४९ । ३० में षष्ठांश ० । १२ । ४९ । ३७ को जोड़ दिया तो १ । २६ । ३९ । ७ यह दूसरे भाव की संधि हुई । इसमें षष्ठांश ० । १२ । ४९ । ३७ को जोड़ दिया तो २ । ९ । २८ । ४४ यह तीसरा भाव हुआ । इसमें षष्ठांश ० । १२ । ४९ । ३७ को जोड़ा तो २ । २२ । १८ । २१ यह तीसरे भाव की संधि हुई । अब पहिले जो षष्ठांश को लाये हैं उस ० । १२ । ४९ । ३७ को एक १ से घटाया तो घटाने से ० । १७ । १० । २३ यह शेष रहा। इसको चौथे भाव ३ । ५ । ८ । ० में जोड़ दिया तो ३ । २२ । १८ । २३ यह चौथे भाव की संधि हुई । इसी में एक से घटाये हुए षष्ठांश को जोड़ दिया तो ४ । ९ । २८ । ४६ यह पञ्चम भाव हुआ । इस ४ । ९ । २८ । ४६ में एकोन षष्ठांश ० । १७ । १० । २३ को जोड़ दिया तो ४ । २६ । ३९ । ९ यह पञ्चम भाव की संधि हुई । इस ४ । २६ । ३९ । ९ में एकोन षष्ठांश ० । १७ । १० । २३ को जोड़ दिया तो ५ । १३ । ४९ । ३२ यह छठा भाव हुआ । इसमें एकोन षष्ठांश को जोड़ा तो ६ । ० । ५९ । ५५ यह छठे भाव की संधि हुई । इस प्रकार सहित संधियों के छः भावों के उदाहरणों को दिखलाया । अब इन्हीं सहित संधियों के छः भावों में प्रत्येक छः के जोड़ने से अन्य सहित संधियों के छः भाव सिद्ध होंगे । अब इन सबके जानने के लिए चक्रों को लिखते हैं—

तन्वादिद्वादशभावाः ससन्धयः स्युः ।

त.	ध.	स.	सु.	सु.	रि.	जाया	मृ.	ध.	क.	आ.	व्यय
० १८ १० १६	१ १३ ४९ ३०	२ ९ २८ ४४	३ ५ ८ ००	४ ९ २८ ४६	५ १३ ४९ ३२	६ १८ १० १६	७ १३ ४९ ३०	८ ९ २८ ४४	९ ५ ८ ००	१० ९ २८ ४६	११ १३ ४९ ३२
सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.
१ ० ५९ ५३	१ २६ ३९ ७	२ २२ १८ २१	३ २२ १८ २३	४ २६ ३९ ९	६ ०० ५९ ५५	७ ०० ५९ ५३	७ २६ ३१ ७	८ २९ १८ २१	९ २२ १८ २३	१० २६ ३९ ९	० ० ५९ ५५

सायनलग्नसारिणीयम्।

	अंश		०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
२०३	० ६ ४६	० मे.	० ०	० ७	० १४	० २०	० २७	० ३४	० ४१	० ४७	० ५४	१ १	१ ८	१ १४	१ २१	१ २८	१ ३५	१ ४२	१ ४८	१ ५५	२ २	२ ९	२ १५	२ २२	२ २९	२ ३६	२ ४२	२ ४९	२ ५६	३ ३	३ ९	३ १६
२३९	० ७ ५८	१ वृ.	३ २३	३ ३१	३ ३९	३ ४७	३ ५५	४ ३	४ ११	४ १९	४ २७	४ ३५	४ ४३	४ ५१	४ ५९	५ ७	५ १५	५ २३	५ ३०	५ ३८	५ ४६	५ ५४	६ २	६ १०	६ १८	६ २६	६ ३४	६ ४२	६ ५०	६ ५८	७ ६	७ १४
२९८	० ९ ५६	२ मि.	७ २२	७ ३२	७ ४२	७ ५२	८ २	८ १२	८ २२	८ ३२	८ ४१	८ ५१	९ १	९ ११	९ २१	९ ३१	९ ४१	९ ५१	१० १	१० ११	१० २१	१० ३१	१० ४१	१० ५१	११ १	११ १०	११ २०	११ ३०	११ ४०	११ ५०	१२ ०	१२ १०
३४८	० ११ ३६	३ क.	१२ २०	१२ ३३	१२ ४३	१२ ५५	१३ ६	१३ १८	१३ ३०	१३ ४१	१३ ५३	१४ ४	१४ १६	१४ २८	१४ ३९	१४ ५१	१५ २	१५ १४	१५ २६	१५ ३७	१५ ४९	१६ ०	१६ १२	१६ २४	१६ ३५	१६ ४७	१६ ५८	१७ १०	१७ २२	१७ ३३	१७ ४५	१७ ५६
३५९	० ११ ५८	४ सिं.	१८ ८	१८ २०	१८ ३२	१८ ४४	१८ ५६	१९ ८	१९ २०	१९ ३२	१९ ४४	१९ ५६	२० ८	२० २०	२० ३२	२० ४४	२० ५६	२१ ८	२१ २०	२१ ३१	२१ ४३	२१ ५५	२२ ७	२२ १९	२२ ३१	२२ ४३	२२ ५५	२३ ७	२३ १९	२३ ३१	२३ ४३	२३ ५५
३५३	० ११ ४६	५ कं.	२४ ७	२४ १९	२४ ३१	२४ ४२	२४ ५४	२५ ६	२५ १८	२५ २९	२५ ४१	२५ ५३	२६ ५	२६ १६	२६ २८	२६ ४०	२६ ५२	२७ ४	२७ १५	२७ २७	२७ ३९	२७ ५१	२८ २	२८ १४	२८ २६	२८ ३८	२८ ४९	२९ १	२९ १३	२९ २५	२९ ३६	२९ ४८
३५३	० ११ ४६	६ तु.	३० ०	३० १२	३० २४	३० ३५	३० ४७	३० ५९	३१ ११	३१ २२	३१ ३४	३१ ४६	३१ ५८	३२ ९	३२ २१	३२ ३३	३२ ४५	३२ ५७	३३ ८	३३ २०	३३ ३२	३३ ४४	३३ ५५	३४ ७	३४ १९	३४ ३१	३४ ४२	३४ ५४	३५ ६	३५ १८	३५ २९	३५ ४१
३५९	० ११ ५८	७ वृ.	३५ ५३	३६ ५	३६ १७	३६ २९	३६ ४१	३६ ५३	३७ ५	३७ १७	३७ २९	३७ ४१	३७ ५३	३८ ५	३८ १७	३८ २९	३८ ४१	३८ ५३	३९ ४	३९ १६	३९ २८	३९ ४०	३९ ५२	४० ४	४० १६	४० २८	४० ४०	४० ५२	४१ ४	४१ १६	४१ २८	४१ ४०
३४८	० ११ ३६	८ ध.	४१ ५२	४२ ४	४२ १५	४२ २७	४२ ३८	४२ ५०	४३ २	४३ १३	४३ २५	४३ ३६	४३ ४८	४४ ०	४४ ११	४४ २३	४४ ३४	४४ ४६	४४ ५८	४५ ९	४५ २१	४५ ३२	४५ ४४	४५ ५६	४६ ७	४६ १९	४६ ३०	४६ ४२	४६ ५४	४७ ५	४७ १७	४७ २८
२९८	० ९ ५६	९ म.	४७ ४०	४७ ५०	४८ ०	४८ १०	४८ २०	४८ ३०	४८ ४०	४८ ५०	४८ ५९	४९ ९	४९ १९	४९ २९	४९ ३९	४९ ४९	४९ ५९	५० ९	५० १९	५० २९	५० ३९	५० ४९	५० ५९	५१ ९	५१ १९	५१ २८	५१ ३८	५१ ४८	५१ ५८	५२ ८	५२ १८	५२ २८
२३९	० ७ ५८	१० कु.	५२ ३८	५२ ४६	५२ ५४	५३ ३	५३ १०	५३ १८	५३ २६	५३ ३४	५३ ४२	५३ ५०	५३ ५८	५४ ६	५४ १४	५४ २२	५४ ३०	५४ ३८	५४ ४५	५४ ५३	५५ १	५५ ९	५५ १७	५५ २५	५५ ३३	५५ ४१	५५ ४९	५५ ५७	५६ ५	५६ १३	५६ २१	५६ २९
२०३	० ६ ४६	११ मी.	५६ ३७	५६ ४४	५६ ५१	५६ ५७	५७ ४	५७ ११	५७ १८	५७ २४	५७ ३१	५७ ३८	५७ ४५	५७ ५१	५७ ५८	५८ ५	५८ १२	५८ १९	५८ २५	५८ ३२	५८ ३९	५८ ४६	५८ ५२	५८ ५९	५९ ६	५९ १३	५९ १९	५९ २६	५९ ३३	५९ ४०	५९ ४६	५९ ५३

दिया तो १ । ० । ५६ । ५३ यह लग्न की विराम संधि हुई । इसमें षष्ठांश ० । १२ । ४६ । ३७ को जोड़ दिया तो १ । १३ । ४६ । ३० यह दूसरा भाव सिद्ध हुआ । इस दूसरे भाव १ । १३ । ४६ । ३० में षष्ठांश ० । १२ । ४६ । ३७ को जोड़ दिया तो १ । २६ । ३६ । ७ यह दूसरे भाव की संधि हुई । इसमें षष्ठांश ० । १२ । ४६ । ३७ को जोड़ दिया तो २ । ६ । २८ । ४४ यह तीसरा भाव हुआ । इसमें षष्ठांश ० । १२ । ४६ । ३७ को जोड़ा तो २ । २२ । १८ । २१ यह तीसरे भाव की संधि हुई । अब पहिले जो षष्ठांश को लाये हैं उस ० । १२ । ४६ । ३७ को एक १ से घटाया तो घटाने से ० । १७ । १० । २३ यह शेष रहा । इसको चौथे भाव ३ । ५ । ८ । ० में जोड़ दिया तो ३ । २२ । १८ । २३ यह चौथे भाव की संधि हुई । इसी में एक से घटाये हुए षष्ठांश को जोड़ दिया तो ४ । ६ । २८ । ४६ यह पञ्चम भाव हुआ । इस ४ । ६ । २८ । ४६ में एकोन षष्ठांश ० । १७ । १० । २३ को जोड़ दिया तो ४ । २६ । ३६ । ६ यह पञ्चम भाव की संधि हुई । इस ४ । २६ । ३६ । ६ में एकोन षष्ठांश ० । १७ । १० । २३ को जोड़ दिया तो ५ । १३ । ४६ । ३२ यह छठा भाव हुआ । इसमें एकोन षष्ठांश को जोड़ा तो ६ । ० । ५६ । ५५ यह छठे भाव की संधि हुई । इस प्रकार सहित संधियों के छः भावों के उदाहरणों को दिखलाया । अब इन्हीं सहित संधियों के छः भावों में प्रत्येक छः के जोड़ने से अन्य सहित संधियों के छः भाव सिद्ध होंगे । अब इन सबके जानने के लिए चक्रों को लिखते हैं—

तन्वादिद्वादशभावाः ससन्धयः स्युः ।

त.	ध.	स.	सु.	सु.	रि.	जाया	मृ.	ध.	क.	आ.	व्यय
०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
१८	१३	६	५	६	१३	१८	१३	६	५	६	१३
१०	४६	२८	८	२८	४६	१०	४६	२८	८	२८	४६
१६	३०	४४	००	४६	३२	१६	३०	४४	००	४६	३२
सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.	सं.
१	१	२	३	४	६	७	७	८	९	१०	०
०	२६	२२	२२	२६	००	००	२६	२९	२२	२६	०
५९	३६	१८	१८	३६	५९	५९	३१	१८	१८	३६	५९
५३	७	२१	२३	६	५५	५३	७	२१	२३	६	५५

सायनलग्नसारिणीयम् ।

	अंश		०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
२०३	० ६ ४६	० मे.	० ०	० ७	० १४	० २०	० २७	० ३४	० ४१	० ४७	० ५४	१ १	१ ८	१ १४	१ २१	१ २८	१ ३५
२३९	० ७ ५८	१ वृ.	३ २३	३ ३१	३ ३९	३ ४७	३ ५५	४ ३	४ ११	४ १९	४ २७	४ ३५	४ ४३	४ ५१	४ ५९	५ ७	५ १५
२९८	० ९ ५६	२ मि.	७ २२	७ ३२	७ ४२	७ ५२	८ २	८ १२	८ २२	८ ३२	८ ४१	८ ५१	९ १	९ ११	९ २१	९ ३१	९ ४१
३४८	० ११ ३६	३ क.	१२ २०	१२ ३२	१२ ४३	१२ ५५	१३ ६	१३ १८	१३ ३०	१३ ४१	१३ ५३	१४ ४	१४ १६	१४ २८	१४ ३९	१४ ५१	१५ २
३५९	० ११ ५८	४ सिं.	१८ ८	१८ २०	१८ ३२	१८ ४४	१८ ५६	१९ ८	१९ २०	१९ ३२	१९ ४४	१९ ५६	२० ८	२० २०	२० ३२	२० ४४	२० ५६
३५३	० ११ ४६	५ कं.	२४ ७	२४ १९	२४ ३१	२४ ४२	२४ ५४	२५ ६	२५ १८	२५ २९	२५ ४१	२५ ५३	२६ ५	२६ १६	२६ २८	२६ ४०	२६ ५२
३५३	० ११ ४६	६ तु.	३० ०	३० १२	३० २४	३० ३५	३० ४७	३० ५९	३१ ११	३१ २२	३१ ३४	३१ ४६	३१ ५८	३२ ९	३२ २१	३२ ३३	३२ ४५
३५९	० ११ ५८	७ वृ.	३५ ५३	३६ ५	३६ १७	३६ २९	३६ ४१	३६ ५३	३७ ५	३७ १७	३७ २९	३७ ४१	३७ ५३	३८ ५	३८ १७	३८ २९	३८ ४१
३४८	० ११ ३६	८ ध.	४१ ५२	४२ ४	४२ १५	४२ २७	४२ ३८	४२ ५०	४३ २	४३ १३	४३ २५	४३ ३६	४३ ४८	४४ ०	४४ ११	४४ २३	४४ ३४
२९८	० ९ ५६	९ म.	४७ ४०	४७ ५०	४८ ०	४८ १०	४८ २०	४८ ३०	४८ ४०	४८ ५०	४८ ५९	४९ ९	४९ १९	४९ २९	४९ ३९	४९ ४९	४९ ५९
२३९	० ७ ५८	१० कु.	५२ ३८	५२ ४६	५२ ५४	५३ २	५३ १०	५३ १८	५३ २६	५३ ३४	५३ ४२	५३ ५०	५३ ५८	५४ ६	५४ १४	५४ २२	५४ ३०
२०३	० ६ ४६	११ मी.	५६ ३७	५६ ४४	५६ ५१	५६ ५७	५७ ४	५७ ११	५७ १८	५७ २४	५७ ३१	५७ ३८	५७ ४५	५७ ५१	५७ ५८	५८ ५	५८ १२

	अंश		१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
२०३	० ६ ४६	० मे.	१ ४२	१ ४८	१ ५५	२ २	२ ९	२ १५	२ २२	२ २९	२ ३६	२ ४२	२ ४९	२ ५६	३ ३	३ ९	३ १६
२३९	० ७ ५८	१ वृ.	५ २३	५ ३०	५ ३८	५ ४६	५ ५४	६ २	६ १०	६ १८	६ २६	६ ३४	६ ४२	६ ५०	६ ५८	७ ६	७ १४
२९८	० ९ ५६	२ मि.	९ ५१	१० १	१० ११	१० २१	१० ३१	१० ४१	१० ५१	११ १	११ १०	११ २०	११ ३०	११ ४०	११ ५०	१२ ०	१२ १०
३४८	० ११ ३६	३ क.	१५ १४	१५ २६	१५ ३७	१५ ४९	१६ ०	१६ १२	१६ २३	१६ ३५	१६ ४७	१६ ५८	१७ १०	१७ २२	१७ ३३	१७ ४५	१७ ५६
३५९	० ११ ५८	४ सिं.	२१ ८	२१ २०	२१ ३१	२१ ४३	२१ ५५	२२ ७	२२ १९	२२ ३१	२२ ४३	२२ ५५	२३ ७	२३ १९	२३ ३१	२३ ४३	२३ ५५
३५३	० ११ ४६	५ कं.	२७ ४	२७ १५	२७ २७	२७ ३९	२७ ५१	२८ २	२८ १४	२८ २६	२८ ३८	२८ ४९	२९ १	२९ १३	२९ २५	२९ ३६	२९ ४८
३५३	० ११ ४६	६ तु.	३२ ५७	३३ ८	३३ २०	३३ ३२	३३ ४४	३३ ५५	३४ ७	३४ १९	३४ ३१	३४ ४२	३४ ५४	३५ ६	३५ १८	३५ २९	३५ ४१
३५९	० ११ ५८	७ वृ.	३८ ५३	३९ ४	३९ १६	३९ २८	३९ ४०	३९ ५२	४० ४	४० १६	४० २८	४० ४०	४० ५२	४१ ४	४१ १६	४१ २८	४१ ४०
३४८	० ११ ३६	८ ध.	४४ ४६	४४ ५८	४५ ९	४५ २१	४५ ३२	४५ ४४	४५ ५६	४६ ७	४६ १९	४६ ३०	४६ ४२	४६ ५४	४७ ५	४७ १७	४७ २८
२९८	० ९ ५६	९ म.	५० ९	५० १९	५० २९	५० ३९	५० ४९	५० ५९	५१ ९	५१ १९	५१ २८	५१ ३८	५१ ४८	५१ ५८	५२ ८	५२ १८	५२ २८
२३९	० ७ ५८	१० कु.	५४ ३८	५४ ४५	५४ ५३	५५ १	५५ ९	५५ १७	५५ २५	५५ ३३	५५ ४१	५५ ४९	५५ ५७	५६ ५	५६ १३	५६ २१	५६ २९
२०३	० ६ ४६	११ मी.	५८ १९	५८ २५	५८ ३२	५८ ३९	५८ ४६	५८ ५२	५८ ५९	५९ ६	५९ १३	५९ १९	५९ २६	५९ ३३	५९ ४०	५९ ४६	५९ ५३

सायनलग्नकलादिसारिणीयम् ।

कलादि कोष्ठकः				०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
२०३	० ४ ४६	मे.	मी	० ०	० ७	० १४	० २०	० २७	० ३४	० ४१	० ४७	० ५४	१ १	१ ८	१ १४	१ २१	१ २८	१ ३५	१ ४२	१ ४८	१ ५५	२ २	२ ९	२ १६	२ २२	२ २९	२ ३६	२ ४२	२ ४९	२ ५६	३ ३	३ ९	३ १६
२३९	० ७ ५८	वृ.	कुं.	० ०	० ८	० १६	० २४	० ३२	० ४०	० ४८	० ५६	१ ४	१ १२	१ २०	१ २८	१ ३६	१ ४४	१ ५१	२ ०	२ ७	२ १५	२ २३	२ ३१	२ ३९	२ ४७	२ ५५	३ ३	३ ११	३ १९	३ २७	३ ३५	३ ४३	३ ५१
२९८	० ९ ५९	मि	म.	० ०	० १०	० २०	० ३०	० ४०	० ५०	१ ०	१ १०	१ १९	१ २९	१ ३९	१ ४९	१ ५९	२ ९	२ १९	२ २९	२ ३९	२ ४९	२ ५९	३ ९	३ १९	३ २९	३ ३९	३ ४८	३ ५८	४ ८	४ १८	४ २८	४ ३८	४ ४८
३४८	० ११ ३६	क.	ध.	० ०	० १२	० २३	० ३५	० ४६	० ५८	१ १०	१ २१	१ ३३	१ ४४	१ ५६	२ ८	२ १९	२ ३१	२ ४२	२ ५४	३ ६	३ १७	३ २९	३ ४०	३ ५२	४ ४	४ १५	४ २७	४ ३८	४ ५०	५ २	५ १३	५ २५	५ ३६
३५९	० ११ ५८	सिं	वृ.	० ०	० १२	० २४	० ३६	० ४८	१ ०	१ १२	१ २४	१ ३६	१ ४८	२ ०	२ १२	२ २४	२ ३६	२ ४८	३ ०	३ ११	३ २३	३ ३५	३ ४७	३ ५९	४ ११	४ २३	४ ३५	४ ४७	४ ५९	५ ११	५ २३	५ ३५	५ ४७
३५३	० ११ ४६	कं.	तु.	० ०	० १२	० २४	० ३५	० ४७	० ५९	१ ११	१ २२	१ ३४	१ ४६	१ ५८	२ ९	२ २१	२ ३३	२ ४५	२ ५७	३ ८	३ २०	३ ३२	३ ४४	३ ५०	४ ७	४ १९	४ ३१	४ ४२	४ ५४	५ ६	५ १८	५ २९	५ ४१

				३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९
२०३	० ४ ४७	मे.	मी	३ २३	३ ३०	३ ३७	३ ४३	३ ५०	३ ५७	४ ४	४ १०	४ १७	४ २४	४ ३१	४ ३७	४ ४४	४ ५१	४ ५८	५ ५	५ ११	५ १८	५ २५	५ ३२	५ ३८	५ ४५	५ ५२	५ ५९	६ ५	६ १२	६ १९	६ २६	६ ३२	६ ३९
२३९	० ७ ५८	वृ.	कुं.	३ ५९	४ ७	४ १५	४ २३	४ ३१	४ ३९	४ ४७	४ ५५	५ ३	५ ११	५ १९	५ २७	५ ३५	५ ४३	५ ५१	५ ५९	६ ६	६ १४	६ २२	६ ३०	६ ३८	६ ४६	६ ५४	७ २	७ १०	७ १८	७ २६	७ ३४	७ ४२	७ ५०
२९८	० ९ ५९	मि	म.	४ ५८	५ ८	५ १८	५ २८	५ ३८	५ ४८	५ ५८	६ ८	६ १७	६ २७	६ ३७	६ ४७	६ ५७	७ ७	७ १७	७ २७	७ ३७	७ ४७	७ ५७	८ ७	८ १७	८ २७	८ ३७	८ ४६	८ ५६	९ ६	९ १६	९ २६	९ ३६	९ ४६
३४८	० ११ ३६	क.	ध.	५ ४८	६ ०	६ ११	६ २३	६ ३४	६ ४६	६ ५८	७ ९	७ २१	७ ३२	७ ४४	७ ५६	८ ७	८ १९	८ ३०	८ ४२	८ ५४	९ ५	९ १७	९ २८	९ ४०	९ ५२	१० ३	१० १५	१० २६	१० ३८	१० ५०	११ १	११ १३	११ २४
३५९	० ११ ५८	सिं	वृ.	५ ५९	६ ११	६ २३	६ ३५	६ ४७	६ ५९	७ ११	७ २३	७ ३५	७ ४७	७ ५९	८ ११	८ २३	८ ३५	८ ४७	८ ५९	९ १०	९ २२	९ ३४	९ ४६	९ ५८	१० १०	१० २२	१० ३४	१० ४६	१० ५८	११ १०	११ २१	११ ३४	११ ४६
३५३	० ११ ४६	कं.	तु.	५ ५३	६ ५	६ १७	६ २८	६ ४०	६ ५२	७ ४	७ १५	७ २७	७ ३९	७ ५१	८ २	८ १४	८ २६	८ ३८	८ ५०	९ १	९ १३	९ २५	९ ३७	९ ४८	१० ०	१० १२	१० २४	१० ३५	१० ४७	१० ५९	११ ११	११ २२	११ ३४

सायनदशमलग्नसारणीयम्।

राशि	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मे. ०	० ०	०० ०९	०० १९	०० २८	०० ३७	०० ४६	०० ५६	१ १५	१ १४	१ २३	१ ३३	१ ४२	१ ५१	२ ०	२ १०	२ १९	२ २८	२ ३८	२ ४७	२ ५६	३ ५	३ १४	३ २४	३ ३३	३ ४२	३ ५२	४ १	४ १०	४ १९	४ २९
वृ. १	४ ३८	४ ४८	४ ५८	५ ८	५ १८	५ २८	५ ३८	५ ४८	५ ५८	६ ८	६ १८	६ २८	६ ३८	६ ४८	६ ५८	७ ८	७ १७	७ २७	७ ३७	७ ४७	७ ५७	८ ७	८ १७	८ २७	८ ३७	८ ४७	८ ५७	९ ७	९ १७	९ २७
मि. २	९ ३७	९ ४८	९ ५९	१० ९	१० २०	१० ३१	१० ४२	१० ५२	११ ३	११ १४	११ २५	११ ३६	११ ४६	११ ५७	१२ ८	१२ १९	१२ २९	१२ ४०	१२ ५१	१३ २	१३ १२	१३ २३	१३ ३४	१३ ४५	१३ ५५	१४ ६	१४ १७	१४ २८	१४ ३८	१४ ४९
क. ३	१५ ०	१५ ११	१५ २२	१५ ३२	१५ ४३	१५ ५४	१६ ५	१६ १५	१६ २६	१६ ३७	१६ ४८	१६ ५८	१७ ९	१७ २०	१७ ३१	१७ ४२	१७ ५२	१८ ३	१८ १४	१८ २५	१८ ३५	१८ ४६	१८ ५७	१९ ८	१९ १८	१९ २९	१९ ४०	१९ ५१	२० १	२० १२
सिं. ४	२० २३	२० ३३	२० ४३	२० ५३	२१ ३	२१ १३	२१ २३	२१ ३३	२१ ४३	२१ ५३	२२ ३	२२ १३	२२ २३	२२ ३३	२२ ४३	२२ ५३	२३ २	२३ १२	२३ २२	२३ ३२	२३ ४२	२३ ५२	२४ २	२४ १२	२४ २२	२४ ३२	२४ ४२	२४ ५२	२५ २	२५ १२
कं. ५	२५ २२	२५ ३१	२५ ४१	२५ ५०	२५ ५८	२६ ८	२६ १८	२६ २७	२६ ३६	२६ ४५	२६ ५५	२७ ४	२७ १३	२७ २२	२७ ३७	२७ ४१	२७ ५०	२८ ०	२८ ९	२८ १८	२८ २७	२८ ३७	२८ ४६	२८ ५५	२९ ४	२९ १४	२९ २३	२९ ३२	२९ ४१	२९ ५१
तु. ६	३० ०	३० ९	३० १९	३० २८	३० ३७	३० ४६	३० ५६	३१ ५	३१ १४	३१ २३	३१ ३३	३१ ४२	३१ ५१	३२ ०	३२ १०	३२ १९	३२ २८	३२ ३८	३२ ४७	३२ ५६	३३ ५	३३ १५	३३ २४	३३ ३३	३३ ४२	३३ ५२	३४ १	३४ १०	३४ १९	३४ २९
वृ. ७	३४ ३८	३४ ४८	३४ ५८	३५ ८	३५ १८	३५ २८	३५ ३८	३५ ४८	३५ ५८	३६ ८	३६ १८	३६ २८	३६ ३८	३६ ४८	३६ ५८	३७ ८	३७ १७	३७ २७	३७ ३७	३७ ४७	३७ ५७	३८ ७	३८ १७	३८ २७	३८ ३७	३८ ४७	३८ ५७	३९ ७	३९ १७	३९ २७
ध. ८	३९ ३७	३९ ४८	३९ ५९	४० ९	४० २०	४० ३१	४० ४२	४० ५३	४१ ३	४१ १४	४१ २५	४१ ३५	४१ ४६	४१ ५७	४२ ८	४२ १९	४२ २९	४२ ४०	४२ ५१	४३ २	४३ १२	४३ २३	४३ ३४	४३ ४५	४३ ५५	४४ ६	४४ १७	४४ २८	४४ ३८	४४ ४९
म. ९	४५ ०	४५ ११	४५ २२	४५ ३२	४५ ४३	४५ ५४	४६ ५	४६ १५	४६ २६	४६ ३७	४६ ४८	४६ ५८	४७ ९	४७ २०	४७ ३१	४७ ४२	४७ ५२	४८ ३	४८ १४	४८ २५	४८ ३५	४८ ४६	४८ ५७	४९ ८	४९ १८	४९ २९	४९ ४०	४९ ५१	५० १	५० १२
कुं. १०	५० २३	५० ३३	५० ४३	५० ५३	५१ ३	५१ १३	५१ २३	५१ ३३	५१ ४३	५१ ५३	५२ ३	५२ १३	५२ २३	५२ ३३	५२ ४३	५२ ५३	५३ २	५३ १२	५३ २२	५३ ३२	५३ ४२	५३ ५२	५४ २	५४ १२	५४ २२	५४ ३२	५४ ४२	५४ ५२	५५ २	५५ १२
मी. ११	५५ २२	५५ ३१	५५ ४१	५५ ५०	५५ ५९	५६ ८	५६ १८	५६ २७	५६ ३६	५६ ४५	५६ ५४	५७ ४	५७ १३	५७ २३	५७ ३२	५७ ४१	५७ ५०	५८ ०	५८ ९	५८ १८	५८ २७	५८ ३७	५८ ४६	५८ ५५	५९ ४	५९ १४	५९ २३	५९ ३२	५९ ४२	५९ ५१

सायनदशमलग्नकलादिसारिणीयम् ।

कलादि कोष्ठक			०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
० ९ १६	मे. कं.	तु. मी	० ० ०	० ९ १६	० १८ ३२	० २७ ४८	० ३७ ४	० ४६ २०	० ५५ ३६	१ ४ ५२	१ १४ ८	१ २३ २४	१ ३२ २४	१ ४१ ५६	१ ५१ १२	२ ० २८	२ ९ ४४	२ १९ १०	२ २८ १६	२ ३७ ३२	२ ४६ ४८	२ ५६ ४	३ ५ २०	३ १४ ३६	३ २३ ५२	३ ३३ ८	३ ४२ २४	३ ५१ ४०	४ ० ५६	४ १० १२	४ १९ २८	४ २८ ४४
० ९ ५८	वृ. सिं	वृ. कुं.	० ० ०	० ९ ५८	० १९ ५६	० २९ ५४	० ३९ ५३	० ४९ ५०	० ५९ ४८	१ ९ ४६	१ १९ ४४	१ २९ ४२	१ ३९ ४०	१ ४९ ३८	१ ५६ ३६	२ ९ ३४	२ १९ ३२	२ २९ ३०	२ ३९ २८	२ ४९ २६	२ ५९ २४	३ ९ २२	३ १९ २०	३ २९ १८	३ ३९ १६	३ ४९ १४	३ ५९ १२	४ ९ १०	४ १९ ८	४ २९ ६	४ ३९ ४	४ ४९ २
० १० ४६	मि. क.	ध. म.	० ० ०	० १० ४६	० २१ ३२	० ३२ १८	० ४३ ४	० ५३ ५०	१ ४ ३६	१ १५ २२	१ २६ ८	१ ३६ ५४	१ ४७ ४०	१ ४८ २६	२ ९ १२	२ १९ ५८	२ ३० ४४	२ ४१ ३०	२ ५२ १६	३ ३ २	३ १३ ४८	३ २४ ३४	३ ३५ २०	३ ४६ ६	३ ५६ ५२	४ ७ ३८	४ १८ २४	४ २९ १०	४ ३९ ५६	४ ५० ५२	५ १ २८	५ १२ १४

कलादि कोष्ठक			३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९
० ९ १६	मे. कं.	तु. मी	४ ३८ ०	४ ४७ १६	४ ५६ ३२	५ ५ ४८	५ १५ ४	५ २४ २०	५ ३३ ३६	५ ४२ ५२	५ ५२ ८	६ १ २४	६ १० ४०	६ १९ ५६	६ २९ १२	६ ३८ २८	६ ४७ ४४	६ ५७ ०	७ ६ १६	७ १५ ३२	७ २४ ४८	७ ३४ ४	७ ४३ २०	७ ५२ ३६	८ १ ५२	८ ११ ८	८ २० २४	८ २९ ४०	८ ३८ ५६	८ ४८ १२	८ ५७ २८	९ ६ ४४
० ९ ५८	वृ. सिं	वृ. कुं	४ ५९ ०	५ ८ २८	५ १८ ५६	५ २८ ५४	५ ३८ ५२	५ ४८ ५०	५ ५८ ४८	६ ८ ४६	६ १८ ४४	६ २८ ४२	६ ३८ ४०	६ ४८ ३८	६ ५८ ३६	७ ८ ३४	७ १८ ३२	७ २८ ३०	७ ३८ २८	७ ४८ २६	७ ५८ ५४	८ ८ २२	८ १८ २०	८ २८ १८	८ ३८ १६	८ ४८ १४	८ ५८ १२	९ ८ १०	९ १८ ८	९ २८ ६	९ ३८ ४	९ ४८ २
० १० ४६	मि. क.	ध. म.	५ २३ ०	५ ३३ ४६	५ ४४ ३२	५ ५५ १८	६ ६ ४	६ १६ ५०	६ २७ ३६	६ ३८ २२	६ ४९ ८	६ ५९ ५४	७ १० ४०	७ २१ २६	७ ३२ १२	७ ४२ ५८	७ ५३ ५४	८ ४ ३०	८ १५ १६	८ २६ २	८ ३६ ४८	८ ४७ ३४	८ ५८ २०	९ ९ ६	९ १९ ५२	९ ३० ३८	९ ४१ २४	९ ५२ १०	१० २ ५६	१० १३ ४२	१० २४ २८	१० ३५ १४

विशेष ज्ञातव्य :—सायन लग्नसारिणी, सायन लग्न-कलादिसारिणी और सायन दशमलग्नसारिणी में तीन अंकों के स्थान में दो ही अंक रक्खे हैं । तीस से ऊपर एक ग्रहण कर लिया है और तीस से कम का अंक छोड़ दिया है । तीस का भी एक ग्रहण किया है । जैसे दशमसारिणी के पहले अंश में ९ । १६ के स्थान में ९ और दूसरे अंश में १८ । ३२ के स्थान में १९ लिये हैं । इसीप्रकार सर्वत्र समझ लेना चाहिए ।

सारिणी से लग्नसाधन का उदाहरण ।

अब इस स्पष्ट लग्न व दशम सारिणी से स्पष्ट लग्न तथा दशम लाने का उदाहरण लिखते हैं । स्पष्ट सूर्य ६ । ७ । ३० । ६ अयनांश १८ । २६ इष्टकाल १२ । १८ सायन सूर्य ६ । २५ । ५६ । ३ है । सायन सूर्य के राशि ६ अंश २५ पर सारिणी में देखा तो ५१ । ४८ । २० मिले । फिर उसी राशि अर्थात् मकर राशि के सामने कला ५६ के नीचे देखा तो ६ । १६ । १६ मिले । फिर मकर राशि के सामने ६ विकला के नीचे देखा तो ०० । ५६ । ३६ मिले । इन सब अंकों को गोमूत्रिका विधान से रखकर जोड़ दिया तो ५१ । ५७ । ३७ । १५ । ३६ ये अंक हुए । इसमें इष्टकाल १२ । १८ जोड़ दिया तो यह अंक ६४ । १५ । ३७ । १५ । ३६ (अब इनमें से १५ घटाने से दशम का अंक होता है) हुए । इसमें से ६० निकाल दिये तो ४ । १५ । ३७ । १५ । ३६ यह लग्न के सिद्ध अंक हुए । (इनमें १५ घटाने से ४६ । १५ । ३७ । १५ । ३६ यह दशम के सिद्ध अंक हैं । यह अन्यत्र लिख लिये । अब लग्न के सिद्ध अंकों में से ऊपर के तीन अंकों ४ । १५ । ३७ में घटनेवाले बराबर या किंचित् न्यून अंक लग्नसारिणी में देखे तो ४ । १० । ४८ यह अंक वृषराशि के ६ अंश पर मिले । यही लग्न राशि अंश हुए । अब इनको घटाया तो ० । ४ । ४९ रहे । १५ यह ऊपर के अंक से लिये शून्य छोड़ दिया तो ४ । ४९ । १५ हुए इनके बराबर वृषराशि के सामने कलावाली सारिणी में देखा तो ४ । ४६ । ४८ यह ३६ कला पर मिले यही लग्न की कला हुईं । इनको घटाया तो ० । २ । २७ रहे शून्य छोड़ दिया और ३६ ऊपर से लिये तो २ । २७ । ३६ हुए । इनको फिर कला विकलावाली सारिणी में देखा तो १८ विकला पर २ । २३ । २४

गोमूत्रिकाक्रम ।

```
५१ । ४८ । २०
      ६ । १६ । १६
          ० । ५६ । ३६
------------------------------
५१ । ५७ । ३७ । १५ । ३६ जोड़
१२ । १८ । ०० । ०० । ०० इष्ट
------------------------------
६४ । १५ । ३७ । १५ । ३६ जोड़
१५ । ०० । ०० । ०० । ०० घटाये
------------------------------
४९ । १५ । ३७ । १५ । ३६ यह दशम का अंक हुआ
४ । १५ । ३७ । १५ । ३६ यह लग्न का अंक है
```

मिले इनको घटाया तो ० । ४ । १२ रहे । इनको छोड़ दिया । प्रथम जो वृष राशि के राशि अंश कला विकला मिले हैं १ । ६ । ३६ । १८ यह लग्न के सायन अंक हैं । इनमें से १८ । २६ अयनांश घटाया तो ० । १८ । १० । १८ यह स्पष्ट लग्न हुई ।

दशमलग्न उदाहरण

अब दशम के लिये लग्नसारिणी में जो अंक बने हैं उनको यहाँ रखते हैं ४६ । १५ । ३७ । १५ । ३६ यह दशम का अंक सिद्ध है । अब दशम के सिद्ध अंक में से ऊपर के ३ अंक ४६ । १५ । ३७ में घटनेवाले बराबर या किंचित् न्यून अंक दशम सारिणी में देखे तो ४६।०७।३८ मिले यह अंक मकर राशि के २३ अंश पर मिले । यही दशम के राशि अंश हुए । इनको घटाया तो ० । ७ । ५६ रहे । शून्य छोड़ दिया १५ ऊपर से उतार लिया तो ७ । ५६ । १५ हुए । इनके बराबर या न्यून अंक दशम की कलावाली सारिणी में देखा तो ७ । ५३ । ४४ यह ४४ कला पर मिले । इनको घटाया तो ० । ५ । ३१ रहे । शून्य छोड़ दिया ३६ ऊपर से ले लिया तो ५ । ३१ । ३६ इनके बराबर या किंचित् न्यून अंक कला विकलावाली सारिणी में देखा तो ३० विकला पर ५ ।२३। ००मिले इनको घटाया तो ००।८।३६ रहे यह छोड़ दिये । अब सब अंक मकरराशि के अंश कला विकला यह हैं ६ । २३ । ४४ । ३० इनमें अयनांश १८ । २६ घटाया तो ६ । ५ । १८ । ३० यह सिद्ध दशम लग्न हुआ । यह पूर्व स्पष्ट दशम से १० कला ३० विकला का अन्तर है सोनोट[१] में देखो ।

१ नोट—जिस चरखण्ड से लग्न स्पष्ट के मान बनाये गये हैं उसी चरखण्ड से दिन मान बनाया जावे और उससे नत बनाया जावे तो सारिणी में तद्वत् अंक मिलेंगे । सारिणी अशुद्ध नहीं हो सकती क्योंकि सूक्ष्म प्रकार से बनाई जाती है।

भावस्थग्रहफल ।

खेटे सन्धिद्वयान्तस्थे फलं तद्भावजं भवेत् ।
हीनेऽधिके द्विसन्धिभ्यां भावे पूर्वापरे फलम् ॥ २८ ॥

अब भावस्थ ग्रहों का फल कहते हैं—दोनों सन्धियों के मध्य में जो भाव वर्त्तमान हो उसी भाव में ग्रह स्थित हो तो उसी भाव का फल होता है अर्थात् आरम्भ सन्धि से अधिक, विरामसन्धि से न्यून ग्रह जिस भाव में स्थित हो वह उसी भाव का फल देता है और आरम्भ-विराम इन दोनों सन्धियों से हीन वा अधिक ग्रह हो तो पूर्व व परभाव में फल होता है, अर्थात् यदि आरम्भ संधि से हीन ग्रह हो तो वह विराम सन्धि से पूर्वभाव के फल को देता है। जब विराम सन्धि से अधिक ग्रह हो तो वह आरम्भ सन्धि से अगाड़ी भाव के फल को देता है। यहाँ एकही सन्धि में एक की विराम संधि दूसरे की आरम्भ संधि पूर्वाचार्यों ने कही है ॥ २८ ॥

विंशोपक-बलसाधन ।

ग्रहसन्ध्यन्तरं कार्यं विंशत्या गुणितं भजेत् ।
भावसन्ध्यन्तरेणाप्तं फलं विंशोपकाः स्मृताः ॥ २९ ॥

ग्रह और सन्धि का अंतर करे फिर उसको २० से गुण देवे । तदनन्तर उसमें भाव और सन्धि के अन्तर से भाग लेवे । भाग लेने से जो अंशादि फल मिले वही ग्रह का बिस्वा फल होता है ॥ २९ ॥

उदाहरण ।

जैसे राश्यात्मक सूर्य ९ । ७ । ३० । ६ यह है और इसकी सन्धि ६ । २२ । १८ । २३ यह है। इन दोनों का अन्तर किया तो १४ । १८ । १७ यह शेष रहा । इसको बीस से गुण दिया तो २८६ । ५ । ४० यह भाज्य हुआ । और दशवाँ भाव ९ । ५ । ८ । ० यह है और इसकी संधि ९ । २२ । १८ । २३ यह है । इनका अंतर किया तो शेष १७ । २० । २३ यह मिला । इसको भाजक मानो । अब ६० से भाज्य और भाजक को गुणा किया तो १०६५९४० यह भाज्य और ६१८२३ यह भाजक हुआ । इसीसे भाग लेने से १७ । १४ यह लब्ध हुआ । सूर्य का विंशोपकात्मक बल जानना चाहिए। ऐसे ही चन्द्र आदि ग्रहों के विंशोपक जानो ।

राशीश और द्रेष्काणेशों को कहते हैं।

भौमोशनः सौम्यशशीनवित्सिता-
रेज्यार्किमन्दाङ्गिरसो गृहेश्वराः।
आद्याः कुजाद्या रवितोऽपि मध्यमा-
स्सिताचृतीयाः क्रियतो दृकाणपाः॥ ३० ॥

मङ्गल, शुक्र, बुध, चन्द्र, सूर्य, बुध, शुक्र, मङ्गल, बृहस्पति, शनैश्चर, शनैश्चर और बृहस्पति—ये क्रम से मेषादि बारह राशियों के स्वामी हैं। जैसे मेष का मङ्गल, वृष का शुक्र, मिथुन का बुध, कर्क का चन्द्रमा सिंह का सूर्य, कन्या का बुध, तुला का शुक्र, वृश्चिक का मङ्गल, धन का बृहस्पति, मकर और कुम्भ का शनैश्चर और मीन का बृहस्पति स्वामी है।

अब द्रेष्काण के स्वामियों को कहते हैं कि राशि का तीसरा अंश दश १० अंशोंवाला द्रेष्काण कहा जाता है। एक राशि में तीन द्रेष्काण होते हैं। मेषादि बारह राशियों के प्रथम १० अंशों के मङ्गल आदि द्रेष्काण के स्वामी होते हैं। और दूसरे मेषादि राशियों में १० अंशों के सूर्य आदि द्रेष्काण के स्वामी होते हैं और तीसरे मेषादि बारह राशियों में १० अंशों के शुक्र आदि द्रेष्काण के स्वामी कहे जाते हैं। अब इनका चक्र लिखते हैं॥ ३० ॥

मेषादिराशियों के स्वामी।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	रा.
मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.	प्र.

द्रेष्काणचक्र।

अं	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशि
१०	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	प्रथमाः
२०	सू.	चं.	मं.	बुः	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	द्वितीयाः
३०	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	सू.	चं.	मं.	तृतीयाः

ग्रहों की उच्चनीचराशियों के भाग।

सूर्यादितुङ्गान्यजोक्षनक्रकन्याकुलीरान्त्यतुलालवैः स्युः।
दिग्भिर्गुणैरष्टयमैः शरैकैर्भूतैर्भसंख्यैर्नखसम्मितैश्च ॥ ३१ ॥

सूर्यादि ग्रहों की मेष आदि राशियाँ दश आदि अंशों से उच्च होती हैं। जैसे सूर्य का मेष दश अंशों से उच्च है, चन्द्रमा का वृष तीन अंशों से उच्च है, मङ्गल का मकर अट्ठाईस अंशों से उच्च है, बुध का कन्या पंद्रह अंशों से उच्च होता है और बृहस्पति का कर्क पाँच अंशों से उच्च है, शुक्र का मीन सत्ताईस अंशों से उच्च है, शनैश्चर का तुला बीस अंशों से उच्च है। इतने अंशों से ग्रह परम उच्च हैं ॥ ३१ ॥

ग्रहों के नीचस्थान, उच्चबलआनयन प्रकार तथा नवांशों के स्वामी।

तत्सप्तमं नीचमनेन हीनो ग्रहोऽधिकश्चेद्रसभाद्विशोध्यः।
चक्रात्तदंशाङ्कलवो बलं स्यात्क्रियेणतौलीन्दुभतो नवांशाः ३२

अब ग्रहों के नीचस्थान, उच्चबल और नवांशों के स्वामियों को कहते हैं—पहले कहे सूर्यादिकों की उच्चराशियों की सातवीं राशि दशादि अंशों से नीच होती हैं। जैसे सूर्य तुला के दशअंशों से नीच है, चन्द्रमा वृश्चिक के तीन अंशों से नीच, मंगल कर्क के अट्ठाईस अंशों से नीच, बुध मीन के पन्द्रह अंशों से नीच, बृहस्पति मकर के पाँच अंशों से नीच, शुक्र कन्या के सत्ताईस अंशों से नीच, शनैश्चर मेष के बीस अंशों से नीच है अर्थात् परमनीच है। अब उच्चबल को कहते हैं कि इसी नीच से हीन ग्रह यदि छः से अधिक हो तो उसको बारह राशियों में घटाकर शेष के अंश करे, फिर उन अंशों में नव से भाग लेवे। भाग लेने से जो लब्ध कलादि हो वह उच्चबल होता है। अब नवांशों के स्वामियों को कहते हैं कि मेष, मकर, तुला और कर्क ये तीन आवृत्तियों से मेषादि राशियों के आद्य होते हैं। जैसे—मेष, सिंह और धन इन राशियों का आद्य मेष है। वृष, कन्या और मकर इन राशियों का आद्य मकर होता है। मिथुन, तुला और कुम्भ इन राशियों का आद्य तुला है और कर्क, वृश्चिक तथा मीन इन राशियों का पहला कर्क होवेगा ॥ ३२ ॥

ग्रहोच्चराशिचक्र ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
०	१	९	५	३	११	६	उच्चराशि
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	अंश

ग्रहनीचराशिचक्र ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
६	७	३	११	९	५	००	नीचराशि
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	अंश

नवांशचक्र

अंशाः		मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
३	२०	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.
६	४०	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.
१०	०	मि.	मी.	ध.	कं.	मि.	मी.	ध.	कं.	मि.	मी.	ध.	कं.
१३	२०	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.
१६	४०	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	कुं	वृ.
२०	०	कं.	मि.	मी.	ध.	कं.	मि.	मी.	ध.	कं.	मि.	मी.	ध.
२३	२०	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म
२६	४०	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.
३०	०	ध.	कं.	मि.	मी.	ध.	कं.	मि.	मी.	ध.	कं.	मि.	मी.

मेषादि द्वादशराशियों के हद्देश ।

मेषेऽङ्गतर्काष्टशरेषुभागा
जीवास्फुजिज्ज्ञारशनैश्चराणाम् ।
वृषेऽष्टषण्णागशरानलांशाः
शुक्रज्ञजीवार्किकुजेशहद्दाः ॥ २३ ॥
युग्मे षडङ्गेषुनगाङ्कभागाः
सौम्यास्फुजिज्जीवकुजार्किहद्दाः ।
कर्केऽद्रितर्काङ्गनगाब्धिभागाः
कुजास्फुजिज्ज्ञेज्यशनैश्चराणाम् ॥ २४ ॥
सिंहेऽङ्गभूताद्रिरसाङ्गभागाः
सुरेज्यशुक्रार्किबुधारहद्दाः ।
स्त्रियां नगाशाब्धिनगाग्निभागाः
सौम्योशनोजीवकुजार्किनाथाः ॥ २५ ॥
तुले रसाष्टाद्रिनगाग्निभागाः
कोणज्ञजीवास्फुजिदारनाथाः ।
कीटे नगाब्ध्यष्टशराङ्गभागा
भौमास्फुजिज्ज्ञेज्यशनैश्चराणाम् ॥ २६ ॥
चापे रवीष्वम्बुधिपञ्चवेदा
जीवास्फुजिज्ज्ञारशनैश्चराणाम् ।
मृगे नगाद्र्यष्टयुगश्रुतीनां
सौम्येज्यशुक्रार्किकुजेशहद्दाः ॥ २७ ॥
कुम्भे नगाङ्गाद्रिशरेषुभागाः
शुक्रज्ञजीवारशनैश्चराणाम् ।

मीनेऽर्कवेदानलनन्दपक्षाः
सितेज्यसौम्यारशनैश्चराणाम्॥ ३८॥

मेषादि बारह राशियों के हद्देशों को कहते हैं—जैसे मेषराशि में पहले छः अंशों का बृहस्पति हद्देश है, फिर छः अंशों का शुक्र, आठ अंशों का बुध, पाँच अंशों का मंगल और पाँच अंशों का शनैश्चर स्वामी है। ऐसे ही वृष राशि में आठ अंशों का शुक्र, छः अंशों का बुध, आठ अंशों का बृहस्पति, पाँच अंशों का शनैश्चर और तीन अंशों का मंगल हद्देश है॥ ३३॥ मिथुन राशि में छः अंशों का बुध, छः अंशों का शुक्र, पाँच अंशों का बृहस्पति, सात अंशों का मंगल और छः अंशों का शनैश्चर हद्देश है। कर्क राशि में पहले सात अंशों का मंगल, छः अंशों का शुक्र, छः अंशों का बुध, सात अंशों का बृहस्पति और चार अंशों का शनैश्चर हद्देश है॥ ३४॥ सिंह राशि में पहले छः अंशों का बृहस्पति हद्देश है, फिर पाँच अंशों का शुक्र, सात अंशों का शनैश्चर, छः अंशों का बुध और छः अंशो का मंगल हद्देश है। ऐसे ही कन्या राशि में पहले सात अंशों का बुध हद्देश है, फिर दश अंशों का शुक्र, चार अंशों का बृहस्पति, सात अंशों का मंगल और दो अंशों का शनैश्चर हद्देश है॥ ३५॥ तुलाराशि में पहले छः अंशों का शनैश्चर स्वामी है, फिर आठ अंशों का बुध, सात अंशों का बृहस्पति, सात अंशों का शुक्र और दो अंशों का स्वामी मंगल है। वृश्चिक राशि में पहले सात अंशों का मंगल, चार अंशों का शुक्र, आठ अंशों का बुध, पाँच अंशों का बृहस्पति और छः अंशों का शनैश्चर हद्देश है॥ ३६॥ धनराशि में पहले बारह अंशों का हद्देश बृहस्पति, पाँच अंशों का शुक्र, चार अंशों का बुध, पाँच अंशों का मंगल और चार अंशों का शनैश्चर स्वामी है। मकर राशि में पहले सात अंशों का बुध, सात अंशों का बृहस्पति, आठ अंशों का शुक्र, चार अंशों का शनैश्चर और चार अंशों का स्वामी मंगल है॥ ३७॥ कुम्भराशि में पहले सात अंशों का शुक्र, छः अंशों का बुध, सात अंशों का बृहस्पति, पाँच अंशों का मंगल और पाँच अंशों का शनैश्चर हद्देश है। मीन राशि में पहले बारह अंशों का हद्देश शुक्र, चार अंशों का बृहस्पति, तीन अंशों का बुध, नव अंशों का मंगल और दो अंशों का स्वामी शनैचर है॥ ३८॥

मेषादिराशियों के हद्देश ।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशयः
गु. ६	शु. ८	बु. ६	मं. ७	गु. ६	बु. ७	श. ६	मं. ७	बृ. १२	बु. ७	शु. ७	शु. १२	सग्रहांकाः
शु. ६	बु. ६	शु. ६	शु. ६	शु. ५	शु. १०	बु. ८	शु. ४	शु. ५	गु. ७	बु. ६	गु. ४	,,
बु. ८	गु. ८	गु. ५	बु. ६	श. ७	गु. ४	गु. ७	बु. ८	बु. ४	शु. ८	गु. ७	बु. ३	,,
मं. ५	श. ५	मं. ७	गु. ७	बु. ६	मं. ७	शु. ७	गु. ५	मं. ५	श. ४	मं. ५	मं. ९	,,
श. ५	मं. ३	श. ६	श. ४	मं. ६	श. २	मं. २	श. ६	श. ४	मं. ४	श. ५	श. २	,,

पंचवर्गीबल ।

त्रिंशत्स्वभे विंशतिरात्मतुङ्गे हद्देत्तचन्द्रा दशकं द्दकाणे ।
मुसल्लहे पञ्चलवाः प्रदिष्टा विंशोपका वेदलवैः प्रकल्प्याः ॥३९॥

अपनी राशि में जो ग्रह हो उसका ३० विश्वा बल, जो अपने उच्च में होवे उसका २० विश्वा बल, जो अपने हद्दा में हो तो १५ विश्वा बल, अपने द्रेष्काण में हो तो १० विश्वा बल, और जो अपने नवांश में हो तो ५ विश्वा बल लेना चाहिए । पूर्वोक्त पाँचों अधिकारियों के बलों को जोड़-कर उसमें ४ का भाग देने से विश्वा बल होता है ॥ ३९ ॥

स्वस्वाधिकारोक्तबलं सुहृद्भे पादोनमर्द्धं समभेऽरिभेऽङ्घ्रिः ।
एवं समानीयबलं तदैक्ये वेदोद्धृते हीनबलः शरोनः ॥ ४० ॥

अपने अधिकार में जो ग्रह हो उसका पूर्वोक्त पूर्णबल होता है । मित्र के घर में जो ग्रह हो उसका चौथाई से हीन बल होता है । सम के घर में आधा बल लेना चाहिए और शत्रु के घर में चौथाई बल लेना चाहिए । अर्थात् अपने घर में ग्रह हो तो ३० अंश बल, जो मित्र के घर में ग्रह हो तो साढ़े बाईस अंश बल लेवे, सम के घर में ग्रह हो तो पन्द्रह १५ अंश बल ग्रहण करे

एवं जो ग्रह शत्रु के घर में हो तो साढ़े सात ७। ३० अंश बल लेवे। इसी प्रकार हद्दा आदि का बल जानना चाहिए।

इस प्रकार पञ्चवर्गी बल का एक योग करे, उसमें चार ४ का भाग लेवे। भाग लेने से जो लब्ध हो वह ग्रहों का विंशोपकात्मक बल होता है। यदि पाँच से ग्रह कम हो तो ग्रह को हीन बल समझना चाहिए। जैसे वृद्ध-कारिका में कहा है—

(पञ्चाल्पो हीनवीर्यः स्यादधिको मध्य उच्यते।
दशाधिको बली प्रोक्तः पञ्चवर्गी बलात्मकः॥)

अर्थात् पाँच से कम हीनवीर्य ग्रह होता है और पाँच से नवतक मध्यम वीर्यवाला ग्रह कहा जाता है। और दश से अधिक ग्रह पूर्णबली होता है। यह सिद्धांत जानना चाहिए। अब पञ्चवर्गीबल के चक्र को लिखते हैं। यहाँ उच्च बल को छोड़कर चार ही का चक्र लिखा है। प्रयोजन के लिये ग्रहों के मित्र, सम और शत्रुओं को लिखते हैं।

पंचवर्गीचक्र।

	स्वगृही	मित्रगृही	समगृही	शत्रुगृही
गृह	३०	२२ ३०	१५	७ ३०
हद्दा	१५	११ १५	७ ३०	३ ४५
द्रेष्काण	१०	७ ३०	५	२ ३०
नवांश	५	३ ४५	२ ३०	१ १५

तात्कालिक मित्र-सम-शत्रु विचार।

(मित्रं तृतीयपञ्चमनवमैकादशगतोऽपि यो यस्य।
धनमृतिरिपुरिष्फेषु च समो ग्रहः स्यादिति ज्ञेयम्॥ १॥
शत्रुस्तथैकतुर्ये जायास्थाने तथा दशमे।
ताजिकहिल्लाजमतेनैतादृक्कथितमस्माभिः॥ २॥)

जो ग्रह किसी ग्रह से ३, ५, ९, ११ स्थान में स्थित होता है वह मित्र है। २, ८, ६, १२ स्थान में स्थित ग्रह सम हैं। १, ४, ७, १० स्थान में स्थित ग्रह शत्रु हैं॥ १-२ ॥

ग्रहों के तात्कालिक मित्र, सम और शत्रु ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रव्यादि ग्रह
चं. शु.	सू. शु.	श.	श.	श.	चं. सू.	मं. गु. बु.	ग्रहों के मित्र
मं. बु. बृ.	श.	सू. शु.	सू. शु.	सू. बु.	मं. बु. गु. श.	चं. शु.	ग्रहों के सम
श.	मं. बु. बृ.	चं. बु. बृ.	चं मं. बृ.	चं. मं. शु.	०	सू.	ग्रहों के शत्रु

बलाबल जानने के लिए नैसर्गिक मित्र, सम और शत्रुओं को कहते हैं।

(समानता च खेटानामुच्यते मुनिसंमता ॥ १ ॥
सूर्यस्य सुहृदश्चन्द्रभौमजीवा बुधः समः ।
भार्गवो रविजन्मा च शत्रू ज्ञेयौ विचक्षणैः ॥ २ ॥
चन्द्रस्य मित्रे विज्ञेयौ भास्करः शीतरश्मिजः ।
भौमो गुरुः शनिः शुक्रो मध्यस्थाः परिकीर्तिताः ॥ ३ ॥
भौमस्य जीवो मार्तण्डश्चन्द्रमाः सुहृदो मताः ।
समौ सूर्यजदैत्येज्यौ हिमरश्मिसुतोरिपुः ॥ ४ ॥
बुधस्य मित्रे शुक्रार्कौ विद्वेषी चन्द्रमा मतः ।
शनिजीवधरापुत्रा उदासीनाः स्मृता बुधैः ॥ ५ ॥
बृहस्पतेः सूर्यचन्द्रभूमिजाः सुहृदो मताः ।
मध्याः शनिः शुक्रबुधौ विद्विषौ परिकीर्तितौ ॥ ६ ॥
शुक्रस्य सुहृदौ ज्ञेयौ शनिचन्द्रात्मजौ बुधैः ।
समौ भूमिजदेवेज्यौ शत्रू चन्द्रदिवाकरौ ॥ ७ ॥
शनेर्मित्रे सितबुधौ ज्ञेयौ देवार्चितः समः ।
भास्करेन्दुधरापुत्रा रिपवो मुनिभिः स्मृताः ॥ ८ ॥

राहोः शनिबुधौ मित्रे गुरुशुक्रौ समौ स्मृतौ।
सूर्यभौमनिशानाथा भक्त्या मुनिभिरीरिताः॥ ६॥)

अब बल वा अबल के जानने के लिये ग्रहों के मित्र, शत्रु और सम ये मुनियों करके कहे गये हैं। परन्तु इस नीलकण्ठी ग्रंथ में नहीं कहे हैं अतः बुद्धि-बोधार्थ ग्रंथांतर से उद्धृत श्लोकों के अर्थ का चक्र लिखा जाता है।

नैसर्गिक मित्र-सम-शत्रु चक्र।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	ग्रह
चं. मं. बृ.	सू. बु.	सू. बृ. चं.	सू. शु.	सू. चं. मं.	श. बु.	शु. बु.	श. बु.	मित्र
बु.	मं. बृ. श. शु	श. शु.	बृ, श. मं.	श.	मं. बृ.	बृ.	बृ. शु.	सम
शु. श.	०	बु.	चं.	शु. बु.	चं. सू.	सू. चं. मं.	सू. मं. चं.	शत्रु

उदाहरण।

जैसे सूर्य ९। ७। ३०। ६ है। मकरराशि में स्थित होने से गृह का मालिक शनैश्चर है। यह सूर्य का वैरी है, इस कारण से गृह में साढ़े सात ७। ३० अंश का बल प्राप्त हुआ। अब उच्च बल के उदाहरण को दिखलाते हैं। जैसे—सूर्य का नीच ६। १० है। इससे हीन हुआ सूर्य २। २७। ३०। ६ है। इसके अंश बनाये तो ८७। ३०। ६ हुए। इनमें नौ से भाग लेने से ९। ४३ लब्ध हुए। यह सूर्य का उच्चबल हुआ। अब हद्देश के बल को दिखाते हैं कि जैसे मकरराशि में सूर्य के सात अंश और तीस कला विद्यमान हैं। आदि में मकर राशि के सात अंशों में बुध का हद्दा होता है और यह सूर्य सात से अधिक अगाड़ी के सात अंशों में वर्तमान है इस कारण से हद्दा का स्वामी बृहस्पति हुआ। यह सूर्य का सम है इसलिये समहद्दा में साढ़े सात अंशों ७। ३० का बल प्राप्त हुआ। अब द्रेष्काण बल दिखाते हैं। जैसे—मकरराशि के पहले दश अंशों में सूर्य वर्तमान है इससे मंगल से गिनकर बृहस्पति मिला सो तो सूर्य का सम है

इस कारण से ५ पाँच अंशों का बल प्राप्त हुआ। अब नवांश के बल को दिखलाते हैं कि नवांश की गणना से बृहस्पति मुसल्लेश हुआ सो तो यह सूर्य का सम है इस कारण से साढ़े दो अंशों २। ३० का बल प्राप्त हुआ। इन पाँचों का योग किया तो ३२। १३ यह हुआ। इसमें चार का भाग लेने से लब्ध ८। ३ यह सूर्य का विश्वात्मक बल हुआ। इसी प्रकार चन्द्र आदि ग्रहों का विश्वात्मक बल जानना चाहिए। अब पञ्चवर्गी का चक्र लिखते हैं ॥

पंचवर्गीबल चक्र ।

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रहाः
७ ३०	७ ३०	७ ३०	७ ३०	३० ०	१५ ००	१५ ००	गृहबल
९ ४३	४ ३२	१५ १०	१० १८	० ३६	६ २३	१८ ३२	उच्चबल
७ ३०	३ ४५	७ ३०	७ ३०	१५ ००	७ ३०	१५ ००	हद्दाबल
५ ०	२ ३०	२ ३०	२ ३०	७ ३०	१० ००	५ ००	द्रेष्काणबल
२ ३०	५ ०	२ ३०	१ १५	५ ०	२ ३०	३ ४५	नवांशबल
३२ १३	२२ १७	३५ १०	२९ ०३	५८ ०६	४१ २३	५७ १३	योग
८ ३	५ ४९	८ ४७	७ १५	१५ ३१	१० २०	१४ १८	विश्वाबल

सूर्य-उच्चबलसारिणी (परमोच्च ०।१०)

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मे. ०	१८ ५३	१९ ००	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ००	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ००	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २४	१८ १३	१८ ६	१८ ००	१७ ५३
वृ. १	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ००	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ०६	१६ ००	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ०६	१५ ००	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३
मि. २	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ००	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ०६	१३ ००	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ०६	१२ ००	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३
क. ३	११ ६	११ ००	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ००	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ००	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ००	७ ५३
सिं. ४	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ००	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ००	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ००	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३
कं. ५	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ००	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ००	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ००	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३
तु. ६	१ ६	१ ००	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	०० ०	० ६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ००	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ००	२ ६
वृ. ७	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ००	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ००	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ००	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६
ध. ८	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ००	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ००	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ००	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६
म. ९	८ ५३	९ ००	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ००	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ००	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ००	१२ ६
कु. १०	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ००	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ००	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६
मी. ११	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ००	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ००	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६

चन्द्र-उच्चबलसारिणी (परमोच्च १। ३)।

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
मे. ०	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३
वृ. १	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ००	१९ ५३	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३	१८ ४६
मि. २	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६
क. ३	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ६
सिं. ४	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३	८ ४६
कं. ५	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २६
तु. ६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६
वृ. ७	० २०	० १३	० ६	० ०	० ०६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६	१ १३
ध. ८	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३
म. ९	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३
कुं. १०	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६	११ १३
मी. ११	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३

अंश	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मे. ०	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३
वृ. १	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६
मि. २	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६
क. ३	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६
सिं. ४	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६
कं. ५	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६
तु. ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६
वृ. ७	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३
ध. ८	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३
म. ९	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३
कुं. १०	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३
मी. ११	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३

भौम-उच्चबलसारिणी (परमोच्च ६।२८)।

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मे. ०	१३ ०६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३
वृ. १	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३
मि. २	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३
क. ३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६
सिं. ४	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६
कं. ५	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६
तु. ६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६
वृ. ७	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६
ध. ८	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६
म. ९	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ ५३
कुं. १०	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३
मी. ११	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १३

बुधोच्च-बलसारिणी (परमोच्च ५ । १५)।

अं.	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मे.	१	१	१	२	२	२	२	२	२	२	२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	४	४
०	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१४	२०	२६	३३	४०	४६	५३
वृ.	५	५	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	६	७	७	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८
१	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३
मि.	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	११	११
२	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३
क.	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३
सिं.	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८
४	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३
कं.	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	२०	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१८	१८	१८	१८	१८
५	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६
तु.	१८	१८	१८	१८	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६
वृ.	१५	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	११	११
७	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६
ध.	११	११	११	११	११	११	११	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	९	९	९	९	९	९	९	९	९	८	८	८	८	८
८	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६
म.	८	८	८	८	७	७	७	७	७	७	७	७	७	६	६	६	६	६	६	६	६	६	५	५	५	५	५	५	५	५
९	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६
कुं.	५	४	४	४	४	४	४	४	४	४	३	३	३	३	३	३	३	३	३	२	२	२	२	२	२	२	२	२	१	१
१०	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६
मी.	१	१	१	१	१	१	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१
११	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३

गुरु-उच्चबलसारिणी (परमोच्च ३ । ५)

अं.	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मे.	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	११	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२
०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०
वृ.	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१६	१७	१५	१५	१५	१५	१६
१	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०
मि.	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१९	१९	१९	१९
२	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०
क.	१९	१९	१९	१९	१९	२०	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१७	१७	१७	१७	१७	१७
३	२६	३३	४०	४६	५३	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०
सि.	१७	१७	१७	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
४	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०
कं.	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	११	११	११	११	११	११	११	११	११	१०	१०	१०
५	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०
तु.	१०	१०	१०	१०	१०	१०	९	९	९	९	९	९	९	९	९	८	८	८	८	८	८	८	८	८	७	७	७	७	७	७
६	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०
वृ.	७	७	७	६	६	६	६	६	६	६	६	६	५	५	५	५	५	५	५	५	५	४	४	४	४	४	४	४	४	४
७	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०
ध.	३	३	३	३	३	३	३	३	३	२	२	२	२	२	२	२	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१	१	०	०	०
८	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०
म.	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	२
९	३३	२६	२०	१३	६	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०
कुं.	२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	४	३	५	५	५	५	५	५	५	५	५	६
१०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०
मी.	६	६	६	६	६	६	६	६	७	७	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९
११	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०

शुक्र-उच्चबलसारिणी (परमोच्च ११।२७)।

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मे.	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१६	१६	१६	१६	१६
०	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६
वृ.	१६	१६	१६	१६	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३
१	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६
मि.	१३	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	११	११	११	११	११	११	११	११	११	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	९	९
२	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६
क.	९	९	९	९	९	९	९	८	८	८	८	८	८	८	८	८	७	७	७	७	७	७	७	७	७	६	६	६	६	६
३	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६
सिं.	६	६	६	६	५	५	५	५	५	५	५	५	५	४	४	४	४	४	४	४	४	४	३	३	३	३	३	३	३	३
४	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६
कं.	३	२	२	२	२	२	२	२	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
५	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	६	१३
तु.	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	२	२	२	३	३	३	३	३	३
६	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३
वृ.	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	६
७	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३
ध.	७	७	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०
८	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३
म.	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	११	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१३	१३
९	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३
कु.	१३	१३	१३	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६
१०	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३
११	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	२०	१९	१९
मी.	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	५३	४६

शनि-उच्चबलसारिणी (परमोच्च ६।२०) ।

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मे.	२	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१
०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०
वृ.	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	२	२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	४
१	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०
मि.	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	६	७	७	७	७	७	७	७
२	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०
क.	७	७	८	८	८	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११
३	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०
सिं.	११	११	११	११	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१४	१४	१४	१४
४	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०
कं.	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७
५	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०
तु.	१७	१७	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	२०	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९
६	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०
वृ.	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१५	१५	१५
७	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०
ध.	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१२	१२	१२	१२	१२	१२
८	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०
म.	१२	१२	१२	११	११	११	११	११	११	११	११	११	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	९	९	९	९	९	९	९	९	९
९	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०
कुं.	८	८	८	८	८	८	८	८	८	७	७	७	७	७	७	७	७	७	६	६	६	६	६	६	६	६	६	५	५	५
१०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०
मी.	५	५	५	५	५	५	४	४	४	४	४	४	४	४	४	३	३	३	३	३	३	३	३	३	२	२	२	२	२	२
११	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०

सारिणी पर से उच्चबल का उदाहरण । सू० ९ । ०७ । ३० । ०६ हैं तो ९ राशि के सामने ७ अंश पर देखा तो ९ । ४० मिले । अब ३० कला ०६ विकला अधिक है तो इनका अनुपात किया यानी १ अंश उसके आगे का अंक लिया दोनों का अंतर किया तो ६ हुआ इससे ३० । ०६ को गुणा किया तो १८० । ३६ हुए इनमें ६० का भाग दिया तो लब्ध ३ मिले । इनको पूर्वफल अधिक होने से जोड़ दिया तो ९ । ४३ यह स्पष्ट कलादि उच्चबल हुआ ।

द्वादशवर्गी विचार ।

क्षेत्रं होरात्र्यङ्घिपञ्चाङ्गसप्त-
वस्वङ्कांशेशार्कभागास्सुधीभिः ।
विज्ञातव्या लग्नसंस्थाः शुभानां
वर्गाः श्रेष्ठाः पापवर्गा अनिष्टाः ॥ ४१ ॥

गृह, होरा, द्रेष्काण, चतुर्थांश, पञ्चमांश, षष्ठांश, सप्तमांश, अष्टमांश, नवमांश, दशमांश, एकादशांश और द्वादशांश । ये बारह भाग लग्न में विद्यमान ग्रहों के पण्डितों को जानना चाहिए । अब इनका फल कहते हैं कि शुभ ग्रहों के वर्ग अधिक हों तो श्रेष्ठ हैं अर्थात् अच्छे फल देनेवाले हैं और यदि पापग्रहों के वर्ग अधिक हों तो बुरे फल के देनेवाले होते हैं ॥४१॥

होरा, द्रेष्काण और तुर्यांश के स्वामियों को कहते हैं ।

ओजे रवीन्द्वोः समइन्दुरव्यो-
र्होरे गृहार्द्धप्रमिते विचिन्त्ये ।
द्रेष्काणपाः स्वेषुनवर्क्षनाथा-
स्तुर्यांशपाः स्वर्क्षजकेन्द्रनाथाः ॥ ४२ ॥

अब होरा, द्रेष्काण और चतुर्थांशों के स्वामियों को कहते हैं । जैसे—विषम राशि (मेष) में सूर्य और चन्द्रमा के पंद्रह अंश परिमाणवाले होरा होते हैं अर्थात् पहले के पंद्रह अंशों में सूर्य का होरा, तदनन्तर पंद्रह अंशों में चन्द्रमा का होरा होता है तथा समराशि में पहले के पंद्रह अंशों में चन्द्रमा का होरा होता है । फिर अन्त्य के पंद्रह अंशों में सूर्य का होरा

होता है । अब द्रेष्काण के स्वामियों को कहते हैं कि एकराशि तीस अंशों की होती है उसमें तीन द्रेष्काण होते हैं । पहला द्रेष्काण दश अंश परिमाण-वाला कहाता है, दूसरा बीस अंशों तक, तीसरा ३० अंशों तक होता है । जिस ग्रह का तृतीयांशेश (द्रेष्काण) विचार करना हो वह जिस राशि के पहले दश अंशों में हो तो उसी राशि का स्वामी द्रेष्काण का मालिक होता है । और यदि १० अंश से ऊपर २० अंश तक हो तो अपनी राशि से पाँचवीं राशि का स्वामी दूसरे द्रेष्काण का पति होता है । यदि २० से अधिक अंश हों तो अपनी राशि से नवीं राशि का स्वामी तीसरे द्रेष्काण का अधिप होता है । अब तुर्यांश के स्वामियों को कहते हैं । जिस राशि में जो ग्रह विद्यमान हो उस राशि से केंद्र के स्वामी चतुर्थांश के अधिप होते हैं । जैसे–राशि के तीस अंशों के चतुर्थांश साढे सात हुए । ७ । ३० पहले चतुर्थांश में ग्रह जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी ही तुर्यांश का स्वामी होगा । और दूसरे १५ अंश तक ग्रह जिस राशि में हो उससे चौथी राशि का स्वामी दूसरे तुर्यांश का स्वामी होगा। और २२। ३० अंश तक ग्रह जिस राशि में हो उस राशि से सातवीं राशि का स्वामी तीसरे चतुर्थांश का अधिप होता है। और २२ । ३० अंश से अधिक अंश हों तो जिस राशि में स्थित हो उस राशि से दशवीं राशि का स्वामी चौथे चतुर्थांश का अधिप होता है ।। ४२ ।।

होरेशचक्र ।

अंश	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
१५	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.
३०	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.

तृतीयांशेश (द्रेष्काणेश) चक्र ।

अंश	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
१०	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.
२०	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.	मं.	शु.	बु.	चं.
३०	बृ.	श.	श.	बृ.	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.

चतुर्थांशेश चक्र।

अंश	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
७।३०	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.
१५।०	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.	मं.	शु.	बु.
२२।३०	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.
३०।०	श.	श.	बृ.	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.

पंचमांशेश और द्वादशांशेश को कहते हैं।

ओजर्क्षे पञ्चमांशेशाः कुजार्कीज्यज्ञभार्गवाः।
समभे व्यत्ययाज्ज्ञेया द्वादशांशाः स्वभात्स्मृताः॥ ४३॥

अब पञ्चमांश और द्वादशांश के स्वामियों को कहते हैं। एक पञ्चमांश का प्रमाण छः अंशों का होता है। ऐसे ही राशि में पाँच पंचमांश होते हैं। विषमराशि में पहले पंचमांश का स्वामी मंगल होता है, दूसरे पंचमांश का स्वामी शनैश्चर, तीसरे पंचमांश का स्वामी बृहस्पति, चौथे पंचमांश का स्वामी बुध और पाँचवें पंचमांश का स्वामी शुक्र होता है। और समराशि में पूर्वोक्त स्वामियों को उससे विपरीत से जानना चाहिए। जैसे—समराशि में पहले पंचमांश का स्वामी शुक्र, दूसरे का बुध, तीसरे का बृहस्पति, चौथे का शनैश्चर और पाँचवें का स्वामी मंगल होता है। अब द्वादशांश के स्वामियों को कहते हैं। द्वादशांश अपना राशि से पूर्वाचार्यों ने कहे हैं। द्वादशांश का प्रमाण ढाई २। ३० अंशों का है। वे राशि में बारह होते हैं। जैसे—२। ३० इस प्रमाण से जितने संख्यावाले अंशों में ग्रह स्थित हो अपनी राशि से उतनी संख्यावाली राशि का स्वामी द्वादशांश का स्वामी जानना चाहिए॥ ४३॥

पंचमांशेशचक्र।

अंश	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
६	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.
१२	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.
१८	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.	बृ.
२४	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.
३०	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	म.	शु.	म.	शु.	मं.

षड्सप्ताष्टांकदशैकादशांशेशों का आनयन प्रकार ।

लवीकृतो व्योमचरोऽङ्गशैलवस्वङ्कदिग्रुद्रगुणः खरामैः ।
भक्तो गतास्तर्कनगाष्टनन्ददिग्रुद्रभागाःकुयुताःक्रियात्स्युः४४॥

अब षडंश, सप्तमांश, अष्टमांश, नवमांश दशमांश, और एकादशांशों के स्वामियों को कहते हैं। ग्रह के अंश करे अर्थात् राशि को तीस से गुणदेवे। फिर उसमें नीचे स्थित हुए अंशों को जोड़ देवे। इस प्रकार अंशात्मक ग्रह को करे तदनन्तर उसको छः जगहों में स्थापन करे, फिर क्रम से ६।७।८।९।१०। ११ इन अंकों से गुणा करे फिर तीस ३० से भाग लेवे। भाग लेने से जो लब्ध हों वह गत छः ६ सात ७ आठ ८ नव ९ दश १० ग्यारह ११ भाग होते हैं। इन सबों में एक को जोड़ कर मेष से गिने, गिनती में जहाँ विश्राम हो उस राशि का स्वामी उस वर्ग का स्वामी होता है। यदि एक के जोड़ने पर बारह से अधिक देख पड़े तो बारह से भाग लेना चाहिए॥ ४४ ॥

उदाहरण

जैसे—सूर्य ९।७।३०।६ हैं। इसका स्वामी शनैश्चर हुआ। अब होरा का उदाहरण दिखाते हैं। जैसे-सूर्य सम मकरराशि में पहले पन्द्रह अंशों में वर्तमान है, इस कारण होरा का स्वामी चन्द्रमा हुआ। अब द्रेष्काण का उदाहरण दिखाते हैं। जैसे—सूर्य पहले भाग के मध्य में वर्तमान है इस से द्रेष्काण का स्वामी शनैश्चर हुआ। अब चतुर्थांश के उदाहरण को दिखाते हैं। जैसे—सूर्य दूसरे चतुर्थांश में वर्तमान है इससे मकरराशि से चौथी राशि मेष का स्वामी मंगल है, वही चतुर्थांश का स्वामी हुआ। अब पंचमांश का उदाहरण कहते हैं। सूर्य समराशि में दूसरे विभाग में वर्तमान है, इस से पंचमांश का स्वामी बुध हुआ। अब षष्ठांश का उदाहरण कहते हैं। जैसे कि सूर्य ९।७।३०।६ है। इस मकर राशि को तीस ३० से गुणा किया और इसमें सातअंश जोड़े तो २७७।३०।६ यह ध्रुवांक हुआ। इसको छः ६ से गुणा तो १६६५।००।३६ यह ध्रुवांक हुआ। इसमें तीस का भाग लेने से ५५ हुए। इसमें एक और जोड़ा ५६ हुए। इसमें बारह से भाग लिया तो आठ ८ शेष रहे। मेष से गिना तो वृश्चिक राशि हुई। उसका स्वामी मंगल षष्ठांश का स्वामी हुआ। अब सप्तमांश का उदाहरण कहते हैं। जैसे—२७७।३०।६ इस ध्रुवांक को सात से गुणा किया तो १९४२।३०।४२ यह अंक हुआ। इसमें तीस का भाग लेने से लब्ध चौंसठ ६४ हुए। इस

में एक और जोड़ा तो ६५ हुए फिर इसमें बारह का भाग लेने से ५ शेष रहे। मेष से गिना तो पाँचवीं सिंहराशि है, उसका स्वामी सूर्य ही सप्तमांश का स्वामी हुआ। अब अष्टमांश का उदाहरण कहते हैं कि २७७। ३०।६ इस ध्रुवांक को आठ से गुणा किया तो २२२०।०।४८ यह ध्रुवांक हुआ। इसमें तीस ३० से भाग लिया तो ७४ यह लब्ध हुए। इसमें एक और जोड़ा तो ७५ हुए। इसमें बारह का भाग लेने से ३ शेष रहे। मेष से गिना तो तीसरी राशि मिथुन हुई उसका स्वामी बुध ही अष्टमांश का स्वामी हुआ। अब नवमांश का उदाहरण कहते हैं। जैसे-२२७। ३०।६ ध्रुवांक को नव से गुणा तो २४९७। ३०। ५४ यह ध्रुवांक हुआ। इसमें तीस का भाग लेने से ८३ लब्ध हुए। इसमें एक जोड़ा तो ८४ हुए। इस में बारह का भाग लेने से ० शून्य शेष रहा, मेष से गिना तो मीन राशि हुई उसका स्वामी बृहस्पति ही नवमांश का स्वामी हुआ। अब दशमांश का उदाहरण कहते हैं। जैसे—२७७। ३०। ६ इस ध्रुवांक को दशसे गुणा किया तो २७७५। १। ० यह ध्रुवांक हुआ। इसमें तीस का भाग लेनेसे ९२ लब्ध हुए। इनमें एक और जोड़ा ९३ हुए। इनमें बारह का भाग लेने से ९ शेष रहे। मेष से गिना तो नवीं धनराशि हुई। उसका स्वामी बृहस्पति ही दशमांश का स्वामी हुआ। अब एकादशांश के स्वामी का उदाहरण कहते हैं। जैसे—२७७। ३०। ६ इन अंशों को ग्यारह से गुणा किया तो ३०५२। ३१। ६ यह ध्रुवांक हुआ। इसमें तीस ३० का भाग लेने से १०१ लब्ध हुआ। इसमें एक १ और जोड़ा तो १०२ हुए। बारह से भाग लिया शेष ६ रहे। मेष से गिना तो छठी कन्या राशि हुई उसका स्वामी बुध ही एकादशांश का अधिप हुआ। अब द्वादशांश का उदाहरण कहते हैं। जैसे सूर्य ९। ७ ३०। ६ है द्वादशांश विभाग की गिनती से चौथे विभाग के मध्य में वर्तमान है इससे मकर से गिना तो चौथी राशि मेष हुई, उसका स्वामी मंगल ही द्वादशांश का अधिप हुआ। ऐसे ही चन्द्र आदि ग्रहों के भी होरा आदि के स्वामी जानना चाहिए।

अब षष्ठांश को लिखते हैं कि एक राशि में प्रथम षष्ठांश ५ अंश का होता है। इस प्रकार विषमराशि में प्रथम मंगल, दूसरे में शुक्र, तीसरे में बुध, चौथे में चन्द्रमा, पाँचवें में सूर्य और छठे में बुध जानना। सम में इसको तुला से गिनना। इसी क्रम से सब जानना। चक्र में देखो।

षष्ठांशचक्र।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ	ध.	म.	कुं.	मा.	अंश
१ मं.	७ शु.	१ मं.	७ शु.	१ मं.	७ शु.	१ मं.	७ शु.	१ मं.	७ शु.	१ मं.	७ शु.	अं. ५
२ शु.	८ मं.	२ शु.	८ मं.	२ शु.	८ मं	२ शु.	८ मं.	२ शु.	८ मं.	२ शु.	८ मं.	अं. १०
३ बु.	९ बृ.	३ बु.	९ बृ.	३ बु.	९ बृ.	३ बु.	९ बृ.	३ बु.	९ बृ.	३ बु.	९ बृ.	अं. १५
४ चं.	१० श.	४ चं.	१० श.	४ चं.	१० श.	४ चं.	१० श.	४ चं.	१० श.	४ चं.	१० श.	अं. २०
५ सू.	११ श.	५ सू.	११ श.	५ सू.	११ श.	५ सू.	११ श.	५ सू.	११ श.	५ सू.	११ श	अं. २५
६ बु.	१२ बृ.	६ बु.	१२ बृ.	६ बु.	१२ बृ.	६ बु.	१२ बृ.	६ बु.	१२ बृ.	६ बु.	१२ बृ.	अं. ३०

अब सप्तमांश को लिखते हैं। यहां एक राशि के ३० अंशों का ४–१७–८३ अंशादिकों का सप्तमांश हुआ। इसलिये मेष से गणना करने से प्रथम मंगल, दूसरे वृष राशि में मंगल, तीसरे में बुध इत्यादि क्रम से जानना। चक्र से समझो।

सप्तमांशचक्र।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अंश
१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	४।१७।८
२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ	७ शु.	८।३४।१६
३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	१२।५१।२४
४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	१७।८।३२
५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	२१।२५।४०
६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	२५।४२।४८
७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ सू.	१२ बृ.	३०।००।००

अब अष्टमांश को लिखते हैं। यहाँ एक राशि के ३० अंशों का ३।४५ अष्टमांश हुआ। इसलिए मेष से गणना करने से पहले में मंगल, दूसरे में शुक्र, तीसरे में बुध, चौथे में चन्द्रमा इत्यादि क्रम से अष्टमांशपति होते हैं। चक्र में देखो।

अष्टमांशचक्र।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अंश
१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	अं. ३ ४५
२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु	७।३०
३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	११।४५
४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	१५।००
५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ सू.	१ मं.	९ बृ.	५ स.	१ मं.	९ बृ.	१८।४५
६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	६ बु.	२ शु.	१० श.	२२।३०
७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	७ शु.	३ बु.	११ श.	२६।१५
८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ बृ.	८ मं.	४ चं.	१२ [illegible]	८ मं.	४ चं.	१२ [illegible]	३०।००

नवमांश। पूर्व पंचवर्गी में कह चुके हैं, वही यहाँ भी काम आवेगा। दशमांश १ राशि के दशवें हिस्से को कहते हैं। ३ अंश का पहिला, ६ अंश तक दूसरा, ९ अंश तक तीसरा, १२ अंश तक चौथा, १५ अंश तक पाँचवाँ, १८ अंश तक छठा, २१ अंश तक सातवाँ, २४ अंशतक आठवाँ, २७ अंशतक नवमांश और ३० अंश में दशमांश पूरा होता है। इसका क्रम स्पष्ट चक्र में देखो।

एकादशांशचक्र।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अंश
१ मं.	११ श.	९ बृ.	७ शु.	५ सू.	३ बु.	१ मं.	११ श.	९ बृ.	७ शु.	५ सू.	३ बु.	अं. ३
२ शु.	१२ बृ.	१० श.	८ मं.	६ बु.	४ चं.	२ शु.	१२ बृ.	१० श.	८ मं.	६ बु.	४ चं.	६
३ बु.	१ मं.	११ श.	९ बृ.	७ शु.	५ सू.	३ बु.	१ मं.	११ श.	९ बृ.	७ शु.	५ सू.	९
४ चं.	२ शु.	१२ बृ.	१० श.	८ मं.	६ बु.	४ चं.	२ शु.	१२ बृ.	१० श.	८ मं.	६ बु.	१२
५ सू.	३ बु.	१ मं.	११ श.	९ बृ.	७ शु.	५ सू.	३ बु.	१ मं.	११ श.	९ बृ.	७ शु.	१५
६ बु.	४ चं.	२ शु.	१२ बृ.	१० श.	८ मं.	६ बु.	४ चं.	२ शु.	१२ बृ.	१० श.	८ मं.	१८
७ शु.	५ सू.	३ बु.	१ मं.	११ श.	९ बृ.	७ शु.	५ सू.	३ बु.	१ मं.	११ श.	९ बृ.	२१
८ मं.	६ बु.	४ चं.	२ शु.	१२ बृ.	१० श.	८ मं.	६ बु.	४ चं.	२ शु.	१२ बृ.	१० श.	२४
९ बृ.	७ शु.	५ सू.	३ बु.	१ मं.	११ श.	९ बृ.	७ शु.	५ सू.	३ बु.	१ मं.	११ श.	२७
१० श.	८ मं.	६ बु.	४ चं.	२ शु.	१२ बृ.	१० श.	८ मं.	६ बु.	४ चं.	२ शु.	१२ बृ.	३०

एकादशांश को लिखते हैं। एकराशि के ३० अंश का एकादशांश (ग्यारहवाँ भाग) २ अं० ४३ कला ३८ विकला का हुआ। इसी प्रकार ३० अंशों का एकादशांश होता है। प्रथम मेषराशि में जो ग्रह पहिले एकादशांश में है उसी राशि से बारहवीं राशि का स्वामी वृष राशि का पहिला एकादशांश पति होता है। यही चक्र में स्पष्ट है।

एकादशांशचक्र ।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं.	क.	वि.
१ मं.	१२ बृ.	११ श.	१० श.	९ बृ.	८ मं.	७ शु.	६ बु.	५ सू.	४ चं.	३ बु.	२ शु.	२	४३	३८
२ शु.	१ मं.	१२ बृ.	११ श.	१० श.	९ बृ.	८ मं.	७ शु.	६ बु.	५ सू.	४ चं.	३ बु.	५	२७	१६
३ बु.	२ शु.	१ मं.	१२ बृ.	११ श.	१० श.	९ बृ.	८ मं.	७ शु.	६ बु.	५ सू.	४ चं.	८	१०	५५
४ चं.	३ बु.	२ शु.	१ मं.	१२ बृ.	११ श.	१० श.	९ बृ.	८ मं.	७ शु.	६ बु.	५ सू.	१०	५४	३२
५ सू.	४ चं.	३ बु.	२ शु.	१ मं.	१२ बृ.	११ श.	१० श.	९ बृ.	८ .	७ शु.	६ बु.	१३	३८	१०
६ बु.	५ सू.	४ चं.	३ बु.	२ शु.	१ मं.	१२ बृ.	११ श.	१० श.	९ बृ.	८ मं.	७ शु.	१६	२१	४९
७ शु.	६ बु.	५ सू.	४ चं	३ बु.	२ शु.	१ मं.	१२ बृ.	११ श.	१० श.	९ बृ.	८ मं.	१९	५	२७
८ मं.	७ शु.	६ बु.	५ सू.	४ चं.	३ बु.	२ शु	१ मं.	१२ बृ.	११ श.	१० श.	९ बृ.	२१	४९	५
९ बृ.	८ मं.	७ शु.	६ बु.	५ सू.	४ चं.	३ बु.	२ शु.	१ मं.	१२ बृ.	११ श.	१० श.	२४	३२	४
१० श.	९ बृ.	८ मं.	७ शु.	६ बु.	५ सू.	४ चं.	३ बु.	२ शु.	१ मं.	१२ बृ.	११ श.	२७	१६	२१
११ श.	१० श.	९ बृ.	८ मं.	७ शु.	६ बु.	५ सू.	४ चं.	३ बु.	२ शु.	१ मं.	१२ बृ.	३०	००	००

अब द्वादशांश को लिखते हैं कि एक राशि के ३० अंशों का द्वादशांश २ अंश ३० कला का हुआ। इस तरह ढाई ढाई अंशों के विभाग से १२ द्वादशांश हुए। उसका चक्र लिखा जाता है। जिस राशि में जो ग्रह विदित है उसी का द्वादशांश प्रथम होता है। इत्यादि का क्रमानुसार चक्र में समझ लेना चाहिए।

द्वादशांशचक्र।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अंश
१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	२।३०
२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	५।००
३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	७।३०
४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	१०।००
५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	१२।३०
६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	१५।००
७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	१७।३०
८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	२०।००
९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	२२।३०
१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	२५।००
११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	२७।३०
१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	३०।००

दो०। नीलकण्ठि शुभग्रन्थ में, द्वादशवर्गप्रकार।
कहिहौं आगे सबनके, द्वादशचक्रविचार॥

द्वादशवर्गी चक्र ।

रवि	चन्द्रमा	मंगल	बुध	बृहस्प.	शुक्र	शनि.	ग्रहाः
शनि	बुध	बृहस्प.	बृहस्प.	बृहस्प.	मंगल	शुक्र	गृहम्
चंद्रमा	सूर्य	सूर्य	सूर्य	चंद्रमा	सूर्य	सूर्य	होरा
शनि	शुक्र	शुक्र	मंगल	शुक्र	चंद्रमा	शुक्र	त्रिलवाः
मंगल	बृहस्प.	बृहस्प.	बृहस्प.	बुध	शुक्र	शुक्र	चतुर्लवाः
बुध	शनि.	बृहस्प.	बृहस्प.	शुक्र	मंगल	शुक्र	पंचमांशाः
मंगल	शनि.	बुध	शुक्र	बुध	शनि.	शुक्र	षष्ठांशाः
सूर्य	शुक्र	बृहस्प.	शनि.	बुध	शुक्र	मंगल	सप्तमांशाः
बुध	शनि.	शुक्र	मंगल	शुक्र	बुध	शुक्र	अष्टमांशाः
बृहस्प.	चंद्रमा	सूर्य	चंद्रमा	शुक्र	शनि.	बृहस्प.	नवमांशाः
बृहस्प.	शनि.	सूर्य	मंगल	बुध	शनि.	बृहस्प.	दशमांशाः
बुध	चंद्रमा	शनि.	बृहस्प.	बुध	शुक्र	बृहस्प.	एकादशांशाः
मंगल	शुक्र	शुक्र	मंगल	मंगल	सूर्य	बृहस्प.	द्वादशांशाः

द्वादशवर्ग फल कहते हैं ।

एवंद्वादशवर्गीस्याद्ग्रहाणांबलसिद्धये ।
स्वोच्चमित्रशुभाच्छ्रेष्ठानीचारिक्रूरतोऽशुभा ॥ ४५ ॥

इस प्रकार ग्रहों के बल की सिद्धि के लिये द्वादशवर्गी होती है । वह अपने उच्च, मित्र और शुभों से श्रेष्ठ फल की देनेवाली है और नीच, शत्रु और क्रूरों से अशुभ फल की देनेवाली कही है—अर्थात् जिसग्रह की द्वादशवर्गी

करनी हो यदि वह अपने गृहादि व उच्चवर्ग अथवा शुभग्रह के वर्ग में स्थित हो तब शुभफल की देनेवाली होती है और यदि वही ग्रह नीचवर्ग या शत्रुवर्ग अथवा पापग्रहों के वर्ग में स्थित हो तब अशुभफल की देनेवाली होती है ॥ ४५ ॥

द्वादशवर्गी में शुभ और पापग्रह वर्गों के फल का निश्चय करते हैं।

एवं ग्रहाणां शुभपापवर्गपंक्तिद्वयं वीक्ष्य शुभाधिकत्वे।
दशाफलं भावफलं च वाच्यं शुभं त्वनिष्टं त्वशुभाधिकत्वे ॥ ४६ ॥

इस पूर्वोक्त प्रकार से ग्रहों के शुभ तथा पापवर्गों की दोनों पंक्तियों को देखे, यदि शुभ अधिक हों तो दशाओं और भावों का फल शुभ कहना चाहिए और यदि पापग्रह अधिक हों तो दशाओं और भावों का फल अशुभ कहना चाहिए। अर्थात् पूर्वोक्त प्रकार से ग्रहों की द्वादशवर्गी करे। यहां गृह, होरादि बारह स्थानों में कितने शुभग्रह के वर्ग हैं और कितने पापग्रह के वर्ग हैं यह विचार करके शुभ ग्रहों की संख्या अलग लिखे और पापग्रहों की संख्या अलग लिखे। इन दोनों पंक्तियों का अन्तर करे अन्तर करने पर यदि शुभग्रह अधिक होवें तो उस ग्रह की दशा का फल और भाव का फल शुभ कहना चाहिए। और यदि पापग्रह अधिक हों तो उस ग्रह की दशा और भाव का फल अशुभ कहना चाहिए ॥ ४६ ॥

ग्रहभेद से तथा सौम्यपापवर्गभेदसे फल का तारतम्य कहते हैं।

क्रूरोपि सौम्याधिकवर्गशाली
शुभोऽतिसौम्यः शुभखेचरश्चेत्।
सौम्योपि पापाधिकवर्गयोगा-
न्नेष्टोऽतिनिन्द्यः खलु पापखेटः ॥ ४७ ॥

जिस ग्रह का द्वादशवर्गी में विचार करना हो वह यदि पापग्रह भी हो, परन्तु द्वादश वर्गी में शुभ ग्रहों के अधिक वर्गों से युक्त हो तो शुभफल का देनेवाला होता है। और यदि शुभग्रह द्वादशवर्गी में शुभग्रहों के अधिक वर्गों से युक्त हो तो वह अत्यन्त शुभफल का देनेवाला होता है। और यदि शुभग्रह भी द्वादशवर्गी में पापग्रहों के अधिक वर्गों से युक्त हो तो वह अशुभ फल का देनेवाला होता है। और यदि पापग्रह द्वादशवर्गी में पापग्रहों के अधिक वर्गों से युक्त हो तो वह अत्यन्त दुष्टफल का देनेवाला होता है ॥ ४७ ॥

द्वादशभावों का शुभाशुभ फल ।

राशीशमित्रोच्चरिपुक्रमेण चिन्त्यं तनोरप्यनयैव रीत्या ।
भावेषु सर्वेष्वपि वर्गचक्रं विलोक्य तत्तत्फलमूहनीयम् ॥ ४८ ॥

अब लग्न का भी इसी रीति से शुभग्रह तथा पापग्रह के अधिक वर्गों से शुभ या अशुभ फल विचारना चाहिए । जैसे–लग्न शुभग्रहों के अधिक वर्गों से युक्त हो तो शुभ करता है । अथवा लग्न का स्वामी शुभग्रह होकर मित्र के घर में या अपने घर में अथवा अपने उच्च के स्थान में विद्यमान हो तो वह शुभफल देता है । यदि लग्न का स्वामी समघर में वर्तमान हो तो शुभ और अशुभफल सामान्य से होते हैं । यदि लग्न पापग्रहों के अधिक वर्गों से युक्त हो अथवा लग्न का स्वामी पापग्रह होकर शत्रु के घर में या नीच स्थान में स्थित हो तो वह अशुभ फल देता है । ऐसे ही सब भावों में द्वादशवर्गी करे फिर उसको देखकर उन भावों के शुभ और अशुभ फलों का इसी रीति से विचार करना चाहिए ॥ ४८ ॥

लग्न का विचार ।

शरीरवर्णचिह्नायुर्वयोमानं सुखासुखम् ।
जातिः शीलञ्च मतिमाँल्लग्नात्सर्वं विचिन्तयेत् ॥ ४९ ॥

वर्षलग्न या प्रश्नलग्न से शरीरादिकों का सब विचार करे । जैसे शरीर दुर्बल है या पुष्ट है, रक्त, श्वेत, तोते के सदृश वर्ण व मशकादि चिह्न, जीवन, बाल्य, यौवन, वृद्धवयस, सुख व दुःख, ब्राह्मणादि जाति और आचरण इन सबका विचार करना चाहिए ॥ ४९ ॥

धनभाव और तृतीय भाव का विचार ।

सुवर्णरूप्यरत्नानि धातुर्द्रव्यं सखाधने ।
विक्रमे भ्रातृभृत्याध्वपित्र्यस्खलनसाहसम् ॥ ५० ॥

सोना, रूपा, रत्न, गैरिकादि धातु, कांस्य आदि द्रव्य, मैत्री का विचार अर्थात् कैसे मित्र होंगे–इन सब का धनभाव से विचार करना चाहिए । तीसरे भाव में भाई और बहिनों का होना, सेवक, मार्ग चलना, पितृ-सम्बन्धि कार्य और कार्यों का भ्रंश तथा साहस कर्म अर्थात् विना विचार किये कर्मकर डालना इन सबका विचार करे ॥ ५० ॥

चतुर्थ तथा पंचम भाव का विचार ।

पितृवित्तनिधिक्षेत्रं गृहं भूमिश्च तुर्यतः ।
पुत्रे मन्त्रधनोपायगर्भविद्यात्मजेक्षणम् ॥ ५१ ॥

बाप का द्रव्य, गड़ी हुई वस्तु (भाँड़ा आदि), खेती आदि, घर, पृथ्वी और लाभ इन सबका चौथे घर से विचारना चाहिए । पाँचवें भाव से मन्त्र (गुप्तसंभाषण) अथवा अनेकविध सलाह, धन का उपाय, गर्भ, विद्या की प्राप्ति और पुत्रों का लाभ—इन सबका विचार करना चाहिए ॥५१॥

षष्ठ और सप्तम भाव का विचार ।

रिपौ मातुलमान्द्यारिचतुष्पाद्बन्धभीर्व्रणान् ।
द्यूने कलत्रवाणिज्यनष्टविस्मृतिसंकथा ।
हृताध्वकलिमार्गादि चिन्त्यं द्यूने ग्रहोऽशुभः ॥ ५२ ॥

छठे घर से मामा, मान्द्य (अग्नि मान्द्य रोग), शत्रु, चतुष्पात् (गाय, भैंस, घोड़ा, बैल इत्यादि), पराधीन होना, तापत्रय से भय और घाव इन सबका विचार करना चाहिए । सातवें घर से भार्या, बनियें का कर्म, नष्ट वस्तु, विस्मरण होना (हरी हुई द्रव्य के जाने का विचार), कलह और यात्रा का विचार करना चाहिए और जो सातवें घर में शुभ या पापग्रह हो तो वह अनिष्ट फल का देनेवाला होता है ॥ ५२ ॥

अष्टम भाव का विचार ।

मृत्यौ चिरंतनं द्रव्यं मृतवित्तं रणोरिपुः ।
दुर्गस्थानं मृतिर्नष्टं परीवारो मनोऽव्यथा ॥ ५३ ॥

आठवें घर से पुराना द्रव्य, मरे का धन, संग्राम, शत्रु, दुर्गस्थान (किला आदि), मृत्यु, वस्तुओं का नुक्सान, कुटुम्ब और मन की पीड़ा इनका विचार करना चाहिए ॥ ५३ ॥

नवम तथा दशम भाव का विचार ।

धर्मेरतिस्तथा पन्था धर्मोपायं विचिन्तयेत् ।
व्योम्नि मुद्रां परं पुण्यं राज्यं वृद्धिं च पैतृकम् ॥ ५४ ॥

नवम भाव से रमण करना, यात्रा का विचार और धर्म का साधन इन

का विचार करे । दशवें घर से मुद्रा (रुपया आदि बनाना), पद्म पुण्य राज्य, भाग्य की वृद्धि और पितृ संबंधि विचार करना चाहिए ॥ ५४ ॥

एकादश भाव का विचार ।

आये सर्वार्थधान्यार्घं कन्यामित्रचतुष्पदः ।
राज्ञो वित्तं परीवारो लाभोपायांश्च भूरिशः ॥ ५५ ॥

ग्यारहवें स्थान से सम्पूर्ण द्रव्यों का प्रयोजन, धान्य का मूल्य, कन्या, मित्र, चतुष्पद (गौ, महिषी, बैल और हाथी, घोड़ा इत्यादि चौपाये), राज्यद्रव्य, कुटुम्ब विचार और अनेक प्रकार के लाभों का उपाय इन सब का विचार करना चाहिए ॥ ५५ ॥

व्ययभाव का विचार ।

व्यये वैरिनिरोधार्तिव्ययादि परिचिन्तयेत् ॥ ५६ ॥

बारहवें घर से वैरिनिरोध अर्थात् शत्रुओं द्वारा रोके जाने से अत्यन्त पीड़ा और व्ययादि अर्थात् खर्च आदिकों का विचार (नफा नुकसान) इन सबका विचार करना चाहिए ॥ ५६ ॥

भाव संज्ञा तथा बलिष्ठ ग्रह का लक्षण ।

लग्नाम्बुद्यूनकर्माणि केन्द्रमुक्तञ्चकण्टकम् ।
चतुष्टयं चात्रखेटोबली लग्नेविशेषतः ॥ ५७ ॥

पहला, चौथा, सातवाँ और दशवाँ इन स्थानों की केन्द्र, कण्टक और चतुष्टय संज्ञा कही है । इस केन्द्र में स्थित ग्रह बली होता है । परन्तु लग्न में स्थित ग्रह विशेष बली होता है ॥ ५७ ॥

ग्रहों के शुभ स्थान और बलिष्ठ योग ।

लग्नकर्मास्ततुर्यायसुताङ्कस्थो बली ग्रहः ।
यथादिमं विशेषेण सत्रिवित्तेषु चन्द्रमाः ॥ ५८ ॥

पहला, दशवाँ, सातवाँ, चौथा, ग्यारहवाँ, पाँचवाँ और नवाँ इन स्थानों में स्थित ग्रह बली होता है । परन्तु यथाक्रम अग्रिम स्थानों की अपेक्षा पूर्व में स्थित ग्रह विशेष बलवाला होता है । जैसे—नवमस्थ की अपेक्षा पञ्चमस्थ ग्रह बली होता है उसकी अपेक्षा ग्यारहवें घर में स्थित ग्यारहवें की अपेक्षा चौथे स्थान में स्थित, चौथे की अपेक्षा सातवें घर में

स्थित, सातवें की अपेक्षा दशवें घर में स्थित, और दशवें की अपेक्षा लग्न में स्थित ग्रह विशेष बलिष्ठ होता है । यह सम्पूर्ण ग्रहों का साधारण बल कहा गया । अब चन्द्रमा का बल कहते हैं कि दूसरे और तीसरे स्थानों सहित पूर्वोक्त स्थानों में स्थित चन्द्रमा बली होता है । जैसे दूसरे स्थान में स्थित चन्द्रमा बलिष्ठ है, उससे तीसरे, तीसरे से नवयें, नवयें से पाँचवें, पाँचवें से ग्यारहवें, ग्यारहवें से चौथे, चौथे से सातवें, सातवें से दशवें और दशवें से लग्न में स्थित चन्द्रमा बलिष्ठ होता है ॥ ५८ ॥

मंगल का बल ।

कुजः सत्रिषु पृच्छायां सूतौ वान्यत्र चिन्तयेत् ।
भावानवेत्थं शस्ताः स्यूरिस्फाष्टरिपवोऽशुभाः ॥
दीप्तांशातिक्रमे शस्ता इमेपीति विचिन्तयेत् ॥ ५९ ॥

तीसरे स्थान समेत पूर्वोक्त स्थानों में मंगल बलिष्ठ जानना चाहिए । इसी प्रकार प्रश्न लग्न, जन्म समय और वर्ष लग्नादिकों में इन स्थानों में स्थित ग्रह का विचार करे । इस प्रकार नव भाव श्रेष्ठ फल के देनेवाले होते हैं । और ग्रहों से युक्त बारहवाँ, आठवाँ और छठा ये भाव अशुभकारी होते हैं यदि यही भाव, बैठे हुए ग्रहों के दीप्तांशों को उल्लंघन कर विद्यमान हों तो शुभ फल को देते हैं । वहाँ भी यदि ये दीप्तांशों के मध्य में विराजें तो अभिमत फल के देनेवाले नहीं होंगे ॥ ५९ ॥

त्रिराशिपतियों का विचार ।

त्रिराशिपाः सूर्यसितार्किशुक्रा
दिने निशीज्येन्दुबुधक्ष्माजाः ।
मेषाच्चतुर्णां हरिभाद्विलोमं
नित्यं परेष्वार्किकुजेज्यचन्द्राः ॥ ६० ॥

अब मेषादि बारह राशियों में त्रिराशिपों को कहते हैं—यदि दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो मेषादि चार राशियों के सूर्य, शुक्र, शनैश्चर, शुक्र ये क्रम से त्रिराशिप होते हैं । जैसे—मेष लग्न का सूर्य वृष का शुक्र, मिथुन का शनैश्चर और कर्क का शुक्र त्रिराशिप होता है । रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो मेषादि चार राशियों के बृहस्पति, चंद्रमा, बुध और

मंगल ये त्रिराशिप होते हैं। जैसे मेष लग्न का गुरु, वृष का चंद्रमा, मिथुन का बुध और कर्क का मंगल त्रिराशिप होता है। और पूर्वोक्त त्रिराशिप सिंह से चार राशियों के विलोम होते हैं अर्थात् मेषादिकों के जो दिनेश हैं वे रात्रि के ईश होते हैं और जो मेषादिकों के रात्रीश हैं वे दिनेश होते हैं। जैसे दिन में सिंह लग्न का बृहस्पति, कन्या का चंद्रमा, तुला का बुध और वृश्चिक का मंगल त्रिराशिप होता है। रात्रि में सिंह का सूर्य, कन्या का शुक्र, तुला का शनैश्चर और वृश्चिक का शुक्र त्रिराशिप होता है। और धन आदि चार राशियों के सदा शनैश्चर, मंगल, बृहस्पति और चन्द्रमा ये त्रिराशिप होते हैं। जैसे–धन का शनैश्चर, मकर का मंगल, कुम्भ का बृहस्पति और मीन का चन्द्रमा त्रिराशिप होता है। इन राशियों में चाहे दिन में वर्ष प्रवेश हो चाहे रात्रि में हो येही त्रिराशिप होवेंगे। इन राशियों में विपर्यय नहीं होता है॥ ६०॥

त्रिराशिपचक्र।

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	राशि
सू.	शु.	श.	शु.	बृ.	चं.	बु.	मं.	श.	मं.	गु.	चं.	दिने
गु.	चं	बु.	मं.	सू.	शु.	श.	शु.	श.	मं.	गु.	चं.	रात्रौ

त्रिराशिपों का प्रयोजन।

वर्षेशार्थं दिननिशा विभागोक्तास्त्रिराशिपाः।
पञ्चवर्गीबलाद्यर्थं द्रेष्काणेशान्विचिन्तयेत्॥ ६१॥

पूर्वोक्त त्रिराशिपों का प्रयोजन यह है कि दिन व रात्रि के विभाग से वर्षेश के जानने के लिये त्रिराशिपों को कहा है और पञ्चवर्गी के बलादिकों के लिये पूर्वोक्त द्रेष्काण के स्वामियों को विचारना चाहिए॥ ६१॥

वर्षेश निर्णय के लिये पंचाधिकारी।

जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो मुन्थहाधिप इतस्त्रिराशिपः।
सूर्यराशिपतिरह्निचन्द्रभाधीश्वरो निशि विमृश्य पञ्चकम्॥ ६२॥

उदाहरणार्थ वर्षेश के निश्चय के लिए पांच अधिकारियों को कहते हैं। जन्म लग्न का स्वामी, वर्ष लग्न का स्वामी, मुन्थहा का अधिप, त्रिराशिप का स्वामी, तथा दिन में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य जिस राशि में बैठे हों उसी

राशि का स्वामी दिन का पति होता है और रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो चंद्रमा जिस राशि में स्थित हो उसी राशि का स्वामी रात्रि नाथ होता है । इस प्रकार पाँच अधिकारी ग्रहों का विचार करे ॥ ६२ ॥

बलीय एषां तनुमीक्षमाणः सवर्षपो लग्नमनीक्षमाणः ।
नैवाब्दपो दृष्टयतिरेकतः स्याद्बलस्य साम्ये विदुरेवमाद्याः ६३

इन पाँच अधिकारियों के मध्य में जो ग्रह बली हो अर्थात् पञ्चवर्गी में अधिक बली होकर लग्न को देखता हो तो वह उस वर्ष का स्वामी होता है । और बलिष्ठ ग्रह भी यदि लग्न को न देखता हो तो वह वर्ष का स्वामी नहीं होता है । जब बलयुक्त पाँचों अधिकारी हों अर्थात् पञ्चवर्गी में बराबर बलवाले हों तो उनमें से जो अधिक दृष्टि से लग्न को देखता हो उसी को पहले के पण्डितों ने वर्षेश कहा है ॥ ६३ ॥

दृष्टि की समता होने पर वर्षेश का विचार ।

दृगादिसाम्येप्यथ निर्बलत्वे
वर्षाधिपः स्यान्मुथहेश्वरस्तु ।
पञ्चापि चेन्नो तनुमीक्षमाणा
वीर्याधिकोऽब्दस्य विभुर्विचिन्त्यः ॥ ६४ ॥

अब दृष्टि की समता में कहते हैं कि पाँचों अधिकारियों की लग्न पर बराबर दृष्टि भी हो और आदि शब्द से पाँचों अधिकारियों का समान बल भी हो अथवा पाँचों निर्बल हों तो मुन्थहा का स्वामी वर्षेश होता है और यदि बलयुक्त पाँचों अधिकारी भी लग्न को न देखते हों तो भी उन अधिकारियों में पञ्चवर्गी में जिसका बल अधिक हो उसी को वर्षेश जानना चाहिए ॥ ६४ ॥

मतान्तर से दृष्टिबल की साम्यता में वर्षाऽधिपति निर्णय ।

बलादिसाम्ये रविराशिपोह्नि
निशीन्दुराशीडिति केचिदाहुः ।
येनेत्थशालोऽब्दविभुः शशी स
वर्षाधिपश्चन्द्रभपोऽन्यथात्वे ॥ ६५ ॥

अब मतान्तर से बल और दृष्टि की समता में वर्ष के अधिपति का निश्चय कहते हैं। पाँचों अधिकारियों का पञ्चवर्गी में समान बल और पांचों अधिकारियों की लग्न पर समान दृष्टि हो तो दिन में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य जिस राशि में स्थित हो उस राशि का स्वामी वर्षेश्वर जानना चाहिए। और रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो चंद्रमा जिस राशि में विराजमान हो उसी राशि का स्वामी वर्षेश्वर जानना चाहिए। यह किसी-किसी आचार्य का मत है। यदि कहे हुए प्रकार से चंद्रमा वर्ष का स्वामी हो तो वह पञ्चवर्गी में स्थित जिस ग्रह से इत्थशाल करता हो तो वही ग्रह वर्ष का स्वामी होवेगा। अन्यथा इत्थशाल के योगाभाव में चन्द्रमा जिस राशि में विद्यमान हो उसी राशि का स्वामी वर्षेश्वर जानना चाहिए॥ ६५॥

मुंथहा का विचार।

स्वजन्मलग्नात्प्रतिवर्षमेके-
कराशिभोगान्मुथहाभ्रमेण।
स्वजन्मलग्नं रवितष्टयातं
शरद्युतं साभमुखेन्थिहा स्यात्॥ ६६॥

अब मुन्थहा लाने का प्रकार कहते हैं कि जब जन्म हुआ है उस समय में जो लग्न हो उसी में मुंथा होती है। वह प्रतिवर्ष एक एक राशि के भोग से भ्रमती है। उदाहरण। जैसे—जन्मसमय में जन्म की लग्न कन्या है उसही में स्थित रही और दूसरे वर्ष में तुलाराशि में गई इत्यादि। जन्म समय जो लग्न हो उसमें गतवर्ष गण को जोड़ देवे फिर बारह से भाग लेने से जो शेष रहता है उतने ही प्रमाणवाली राश्यादि, मुन्थहा अभिमत व र्ष में होती है। इसमें प्रमाण वृद्धों की कारिका है। जैसे—(गताब्दसमा जन्मलग्ने योजयित्वा ततः परम्। द्वादशेनैव विभजेच्छेषं मुन्थां वदेत्सुधीः) अर्थात् गतवर्षों को जन्म लग्न में जोड़कर बारह का भाग लेने से जो शेष रहता है उसी को पण्डित मुन्थहा कहते हैं॥ ६६॥

उदाहरण।

जैसे—जन्मलग्न राशि ५ अंश १० कला ५३ विकला ५० है। इसमें गत वर्ष ३७ को जोड़ दिया तो ४२। १०। ५३। ५० हुए फिर बारह का भाग लेने से शेष अङ्क प्रमाणवाली राश्यादि मुन्थहा ६। १०। ५३। ५०

राशि का स्वामी दिन का पति होता है और रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो चंद्रमा जिस राशि में स्थित हो उसी राशि का स्वामी रात्रि नाथ होता है। इस प्रकार पाँच अधिकारी ग्रहों का विचार करे ॥ ६२ ॥

बलीय एषां तनुमीक्षमाणः सवर्षपो लग्नमनीक्षमाणः ।
नैवाब्दपो दृष्ट्यतिरेकतःस्याद्बलस्य साम्ये विदुरेवमाद्याः ६३

इन पाँच अधिकारियों के मध्य में जो ग्रह बली हो अर्थात् पञ्चवर्गी में अधिक बली होकर लग्न को देखता हो तो वह उस वर्ष का स्वामी होता है। और बलिष्ठ ग्रह भी यदि लग्न को न देखता हो तो वह वर्ष का स्वामी नहीं होता है। जब बलयुक्त पाँचों अधिकारी हों अर्थात् पञ्चवर्गी में बराबर बलवाले हों तो उनमें से जो अधिक दृष्टि से लग्न को देखता हो उसी को पहले के पण्डितों ने वर्षेश कहा है ॥ ६३ ॥

दृष्टि की समता होने पर वर्षेश का विचार ।

दृगादिसाम्येऽप्यथ निर्बलत्वे
वर्षाधिपः स्यान्मुथहेश्वरस्तु ।
पञ्चापि चेन्नो तनुमीक्षमाणा
वीर्याधिकोऽब्दस्य विभुर्विचिन्त्यः ॥ ६४ ॥

अब दृष्टि की समता में कहते हैं कि पाँचों अधिकारियों की लग्न पर बराबर दृष्टि भी हो और आदि शब्द से पाँचों अधिकारियों का समान बल भी हो अथवा पाँचों निर्बल हों तो मुन्थहा का स्वामी वर्षेश होता है और यदि बलयुक्त पाँचों अधिकारी भी लग्न को न देखते हों तो भी उन अधिकारियों में पञ्चवर्गी में जिसका बल अधिक हो उसी को वर्षेश जानना चाहिए ॥ ६४ ॥

मतान्तर से दृष्टिबल की साम्यता में वर्षाऽधिपति निर्णय ।

बलादिसाम्ये रविराशिपोह्नि
निशीन्दुराशीडिति केचिदाहुः ।
येनेत्थशालोऽब्दविभुः शशी स
वर्षाधिपश्चन्द्रभपोऽन्यथात्वे ॥ ६५ ॥

अब मतान्तर से बल और दृष्टि की समता में वर्ष के अधिपति का निश्चय कहते हैं। पाँचों अधिकारियों का पञ्चवर्गी में समान बल और पांचों अधिकारियों की लग्न पर समान दृष्टि हो तो दिन में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य जिस राशि में स्थित हो उस राशि का स्वामी वर्षेश्वर जानना चाहिए। और रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो चंद्रमा जिस राशि में विराजमान हो उसी राशि का स्वामी वर्षेश्वर जानना चाहिए। यह किसी-किसी आचार्य का मत है। यदि कहे हुए प्रकार से चंद्रमा वर्ष का स्वामी हो तो वह पञ्चवर्गी में स्थित जिस ग्रह से इत्थशाल करता हो तो वही ग्रह वर्ष का स्वामी होवेगा। अन्यथा इत्थशाल के योगाभाव में चन्द्रमा जिस राशि में विद्यमान हो उसी राशि का स्वामी वर्षेश्वर जानना चाहिए ॥ ६५ ॥

मुंथहा का विचार।

स्वजन्मलग्नात्प्रतिवर्षमेकै-
करशिभोगान्मुथहाभ्रमेण।
स्वजन्मलग्नं रवितष्टयातं
शरद्युतं साभमुखेन्थिहा स्यात् ॥ ६६ ॥

अब मुन्थहा लाने का प्रकार कहते हैं कि जब जन्म हुआ है उस समय में जो लग्न हो उसी में मुंथा होती है। वह प्रतिवर्ष एक एक राशि के भोग से भ्रमती है। उदाहरण। जैसे—जन्मसमय में जन्म की लग्न कन्या है उसही में स्थित रही और दूसरे वर्ष में तुलाराशि में गई इत्यादि। जन्म समय जो लग्न हो उसमें गतवर्ष गण को जोड़ देवे फिर बारह से भाग लेने से जो शेष रहता है उतने ही प्रमाणवाली राश्यादि, मुन्थहा अभिमत व° में होती है। इसमें प्रमाण वृद्धों की कारिका है। जैसे—(गताऽब्दा जन्मलग्ने योजयित्वा ततः परम् । द्वादशेनैव विभजेच्छेषं मुन्थां वदेत्सुधीः) अर्थात् गतवर्षों को जन्म लग्न में जोड़कर बारह का भाग लेने से जो शेष रहता है उसी को पण्डित मुन्थहा कहते हैं ॥ ६६ ॥

उदाहरण।

जैसे—जन्मलग्न राशि ५ अंश १० कला ५३ विकला ५० है। इसमें गत वर्ष ३७ को जोड़ दिया तो ४२। १०। ५३। ५० हुए फिर बारह का भाग लेने से शेष अङ्क प्रमाणवाली राश्यादि मुन्थहा ६। १०। ५३। ५०

हुई अर्थात् कन्या गत तुला के १० अंश ५३ कला ५० विकला में स्थित मुन्थहा को जानो ॥

राहु के मुख, पृष्ठ और पुच्छ के लक्षण।

भोग्याराहोर्लवास्तस्य मुखं पृष्ठं गतालवाः।
ततःसप्तमभं पुच्छं विमृश्येति फलं वदेत् ॥ ६७ ॥

अब राहु के मुख, पीठ और पूँछ के लक्षण को कहते हैं। जिस राशि में राहु स्थित हो उसके भोग्य अंश मुख संज्ञक होते हैं और जो भुक्त अंश हों वह पृष्ठ संज्ञक कहे जाते हैं तथा उस राहु से सातवीं राशि पूँछ संज्ञक है। यह विचारकर मुन्थहा के फल को कहे ॥ ६७ ॥

अब उक्त प्रकार से वर्षेश का निर्णय करते हैं कि आदि में जन्मलग्न का स्वामी बुध, वर्ष लग्न का स्वामी मंगल, मुन्थहा का स्वामी शुक्र, त्रिराशिप का स्वामी सूर्य और दिन का स्वामी शनैश्चर है। इन पाँचों अधिकारियों के मध्य में अतिशय बलवाला शनैश्चर पूर्ण दृष्टि से लग्न को देखता है इस कारण से वर्षेश शनैश्चर हुआ—

श्रीगर्गान्वयभूषणो गणितविच्चिन्तामणिस्तत्सुतोऽ-
नन्तोनन्तमतिर्व्यधात्खलमतध्वस्त्यै जनुः पद्धतिम्।
तत्सूनुः खलु नीलकण्ठविबुधो विद्वच्छिवानुज्ञया
सत्तुष्टयै व्यदधद्ग्रहप्रकरणं सञ्ज्ञाविवेकेऽमलम् ॥ ६८ ॥

लक्ष्मी से युक्त, गर्गवंश में श्रेष्ठ, गणित शास्त्र के जाननेवाले चिन्तामणि नामक विद्वान् हुए हैं। उनका पुत्र अनन्त गुणों से सम्पन्न मतिवाला, अनन्तनामक पंडित हुआ। उसने दुष्टों का मत दूर करने के लिए जातक-शास्त्र को रचा था। उन्हीं के पुत्र विशेष विद्यावाले नीलकण्ठनामक विद्वान् ने शिवजी की आज्ञा से गुणग्राहकों के संतोष के लिए सञ्ज्ञा विचार में शुद्ध ग्रह प्रकरण विरचित किया ॥ ६८ ॥

सो०। करि कछु वर्ष विचार, टीकाकर्ता शक्तिधर।
शक्तिभक्ति उरधार, ग्रहप्रकरण पूरण किया ॥

इति श्रीशक्तिधरविरचितायां नीलकण्ठीभाषाटीकायां
ग्रहप्रकरणं प्रथमम् ॥ १ ॥

द्वितीयं प्रकरणम् ।
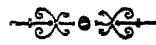
ग्रहों का स्वरूप ।

सूर्य का स्वरूप ।

सूर्यो नृपो ना चतुरस्रमध्यं
दिनेन्द्रदिक् स्वर्णचतुष्पदोग्रः ।
सत्त्वं स्थिरस्तिक्तपशुक्षितिस्तु
पित्तं जरन्पाटलमूलवन्यः ॥ १ ॥

दो०—रूप जाति गुण ग्रहन के, सोलह योग विचार ।
पुनि चारो हर्षदन को, कह्यों यहाँ विस्तार ॥

अब ग्रहों के स्वरूपों को कहते हैं । पहले सूर्य के स्वरूप का वर्णन करते हैं । पुरुषसञ्ज्ञक, राजा (क्षत्रियवर्ण), चारकोण के स्वरूपवाला, मध्याह्न काल में बली, पूर्व दिशा का स्वामी, सुवर्ण धातु का ईश, चौपायों (घोड़े हाथी आदिकों) का प्रभु, क्रूर, सतोगुणवाला, स्थिर स्वभाव, तीखा रस प्रिय, पशु भूमि में विचरनेवाला, पित्तप्रकृति, वृद्धावस्था, सफ़ेद मिला लाल वर्ण, मूल से उत्पन्न द्रव्यों का स्वामी और वनचारी ऐसा सूर्य का स्वरूप जानना चाहिए ॥ १ ॥

चन्द्रमा का स्वरूप ।

वैश्यः शशी स्त्री जलभूस्तपस्वी
गौरोऽपराह्णाम्बुगधातुसत्त्वम् ।
वायव्यदिक्श्लेष्मभुजङ्गरूप्य
स्थूलो युवाक्षारशुभः सिताभः ॥ २ ॥

चन्द्रमा का स्वरूप कहते हैं । वैश्य जातिवाला, स्त्रियों का प्यारा, सजल भूमि में गमन करनेवाला, तपस्वी, गौरवर्ण, अपराह्न काल में बली, जलचारी, कांसी व गेरू आदि धातुओं का मालिक, सतोगुणी, वायव्य दिशा का स्वामा, श्लेष्मप्रकृति, सर्पों का प्रभु, चाँदी आदि द्रव्यों

का स्वामी, पुष्टशरीरवाला जवान अवस्थावाला, लवण रस का स्वामी, शुभ ग्रह और सफ़ेद वर्णवाला चन्द्रमा का स्वरूप जानना चाहिए ॥ २ ॥

भौम का स्वरूप ।

भौमस्तमः पित्तयुवोग्रवन्यो
मध्याह्नधातुर्यमदिक् चतुष्पात् ।
ना राट् चतुष्कोणसुवर्णकारो
दग्धावनी व्यङ्गकटुश्च रक्तः ॥ ३ ॥

मंगल का स्वरूप कहते हैं। तमोगुणवाला, पित्त प्रकृति, जवान अवस्थावाला, क्रूर, वन में विचरनेवाला, मध्याह्न काल में बली, गेरू आदि धातुओं का स्वामी, दक्षिण दिशा का मालिक, चौपायों (घोड़े, हाथी आदिकों) का प्रभु, पुरुषसञ्ज्ञक, राजा (क्षत्रियवर्ण), चारकोण का स्वरूप, सुनारों का स्वामी, जली हुई भूमि में गमन करनेवाला, कुछेक अङ्ग रहित, कडुआ रस प्यारा और लाल द्रव्यों का अधिपति ऐसा मङ्गल का स्वरूप जानना चाहिए ॥ ३ ॥

बुध का स्वरूप ।

ग्राम्यः शुभो नीलसुवर्णवृत्तः
शिशिवष्टकोच्चः समधातुजीवः ।
श्मशानयोषोत्तरदिग्प्रभातं
शूद्रः खगः सर्वरसो रजोज्ञः ॥ ४ ॥

बुध का स्वरूप कहते हैं। ग्राम में रहनेवाला, सौम्य स्वभाववाला, नीलवर्ण, सुवर्ण आदि द्रव्यों का स्वामी, गोल आकारवाला, बालकरूप, ईंटों की ऊँची भूमि में विचरनेवाला, समधातु (वात, पित्त, कफ धातुवाला), मनुष्य आदि जीवों का प्रभु, श्मशानचारी, स्त्रीसञ्ज्ञक, उत्तर दिशा का स्वामी, प्रातःकाल में बली, शूद्रवर्ण, पक्षियों का स्वामी, कटु आदि सब रसों का अधिपति और रजोगुणवाला बुध का स्वरूप जानना चाहिए ४॥

गुरु का स्वरूप ।

गुरुः प्रभाते नृशुभेशदिग्द्विजः पीतो द्विपाद् ग्राम्यसुवृत्तजीवः।

वाणिज्यमाधुर्य्यसुरालयेशो वृद्धः सुरत्नं समधातुसत्त्वम् ॥ ५

बृहस्पति का स्वरूप कहते हैं। प्रातःकाल में बली, पुरुषसंज्ञक, शुभग्रह, ईशान दिशा का स्वामी, ब्राह्मण जाति, पीले वर्णवाला, दो पैरोंवाला, ग्राम में विचरनेवाला, गोल आकारवाला, मनुष्य आदि जीवों का अधिपति, वाणिज्य करनेवाला, मधुर प्रिय, देवताओं के गृहों का स्वामी, बूढ़ा, अच्छे रत्नों का स्वामी तथा वात, पित्त और कफ प्रकृति एवं सतोगुणवाला बृहस्पति का स्वरूप जानना चाहिए॥ ५ ॥

शुक्र का स्वरूप ।

शुक्रः शुभः स्त्री जलगोऽपराह्णः
श्वेतःकफी रूप्यरजोऽम्लमूलम् ।
विप्रोऽग्निदिङ्मध्यवयोरतीशो
जलावनी स्निग्धरुचिर्द्विपाच्च ॥ ६ ॥

शुक्र का स्वरूप कहते हैं। शुभ ग्रह, स्त्रीसञ्ज्ञक, जल में विचरनेवाला, अपराह्णकाल में प्रबल, सफेद वर्ण, कफ प्रकृति, चाँदी आदि द्रव्यों का स्वामी, रजोगुणवाला, खट्टे रसों का अधिपति, मूल से उत्पन्न धान्य आदिकों का स्वामी, ब्राह्मण जाति, आग्नेय दिशा का स्वामी, युवा अवस्था, क्रीड़ारसप्रिय, सजल भूमि में रहनेवाला, सचिक्कण कांतिवाला तथा द्विपद (मनुष्य) जाति ऐसा शुक्र का स्वरूप जानना चाहिए ६॥

शनैश्चर का स्वरूप ।

शनिर्विहङ्गोनिलवन्यसन्ध्या
शूद्राङ्गना धातुसमः स्थिरश्च ।
क्रूरः प्रतीची तुवरोऽतिवृद्धो-
त्करक्षितीट्दीर्घसुनीललोहम् ॥ ७ ॥

शनैश्चर का स्वरूप कहते हैं। पक्षियों का स्वामी, वायुचारी, वन में रहनेवाला, सन्ध्याकाल में बली, शूद्र जाति, स्त्रीसञ्ज्ञक ग्रह, वात, पित्त और कफ प्रकृति, स्थिर स्वभाव, क्रूर प्रकृति, पश्चिम दिशा का स्वामी, कषायरसप्रिय, अत्यन्त बूढ़ा, ऊसर भूमि का प्रभु, लम्बे आकारवाला, नीले वर्णवाला और लोहे का स्वामी ऐसा शनैश्चर का स्वरूप जानना चाहिए ७॥

ग्रहों का वर्णादिचक्र ।

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
वर्ण	क्षत्रि.	वैश्य	क्षत्रि.	शूद्र	ब्राह्मण	ब्राह्मण	शूद्र निषाद	निषाद	निषाद
पुं-स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	स्त्री	पुरुष	पुरुष
आकार	चतुरस्र	वर्तुल स्थूल	चतुष्कोण	वृत्त	वृत्त	दीर्घ	दीर्घ	दीर्घ	पुच्छ
समय	मध्याह्न	अपरा.	मध्याह्न	प्रभात	प्रभात	अपराह्न	अपराह्न	अपराह्न	अपराह्न
दिशा	पूर्व	वायव्य	दक्षिण	उत्तर	ईशान	आग्नेय	पश्चिम	नैर्ऋत्य	नैर्ऋत्य
धातु	सुवर्ण	रौप्य	सुवर्ण	कां.मि. धा.	हीरा सुवर्ण	रौप्य	लोह	लोह	लोह
पाद	चतुष्पाद	बहु पाद	चतुष्पाद	द्विपाद	द्विपाद	द्विपाद	भुजंग अपाद	अपाद	अपाद
सौम्यादि	उग्र	सौम्य	उग्र	शुभ	शुभ	शुभ	पाप	पाप	पाप
गुण	सत्त्व	स व	तम	रज	सत्त्व	रज	तम	तम	तम
चरादि	स्थिर	चर	चर	द्विस्व भा.	स्थिर	चर	पक्षी स्थिर	चर	पक्षी
रस	तिक्त	क्षार	कटुक	सर्वरस	मधुर	अम्ल	कषाय क्वाथ	कषाय	कषाय
भूमि	पशु प्राय	जङ्गभू	दग्ध	श्मशान	वाणि सुराल	जल भू	उत्कर	ऊसर	ऊसर
पित्तादिधातु	पित्त	श्लेष्म	पित्त	समधातु	समधातु	कफ शुक्र	वायु	वायुस्पद	वायु
अवस्था	वृद्ध	युवा	युवा	युवा	वृद्ध	युवा	अ. वृद्ध	वृद्ध	वृद्ध
वर्ण	पाटल	गौर श्वेत	रक्त	नील	पीत	श्वेत	नील	नील	धूम्र
धात्वादि	मूल	जीव	धातु	जीव	जीव	मूल	मूल	धातु	धातु
स्थान	वन	जल	वन	ग्राम	ग्राम	ग्राम	संधि	विवर	विवर

राहु का स्वरूप ।

राहुस्वरूपं शनिवन्निषादजातिर्भुजङ्गोऽस्थिपनैर्ऋतीशः ।

राहु का स्वरूप शनि के समान है । परन्तु कुछ विशेष है उसको कहते हैं । चाण्डाल जाति, सर्पों का स्वामी, हाड़ों का स्वामी और नैर्ऋत्य दिशा का मालिक ऐसा राहु का स्वरूप जानना चाहिए ।

केतु का स्वरूप ।

केतुः शिखीतद्वदनेकरूपः खगस्वरूपात्फलमूह्यमित्थम् ॥ ८ ॥

केतु का स्वरूप कहते हैं । केतु का स्वरूप शनैश्चर के समान है परन्तु इतना ही विशेष है कि शिखावाला और नाना प्रकार के स्वरूपवाला केतु है । इस प्रकार ग्रहों के स्वरूप से फल का विचार करना चाहिए ॥ ८ ॥

ग्रहों की चतुर्विधादृष्टि ।

दृष्टिः स्यान्नवपञ्चमे बलवती प्रत्यक्षतः स्नेहदा
पादोनाखिलकार्यसाधनकरी मेलापकाख्योच्यते ।
गुप्तस्नेहकरी तृतीयभवभे कार्यस्य संसिद्धिदा
त्र्यंशोना कथिता तृतीयभवने षड्भागदृष्टिर्भवे ९॥

ग्रहों की दृष्टि चार प्रकार की होती है । पहली प्रत्यक्षस्नेहा, दूसरी गुप्त स्नेहा, तीसरी गुप्त वैरा और चौथी प्रत्यक्ष वैरा । पहले स्नेहदृष्टि कहते हैं । कुण्डली में जिस स्थान में ग्रह बैठा हो उस स्थान से नवें, पाँचवें स्थान में स्थित ग्रह को जिस दृष्टि से देखता है वह दृष्टि बलयुक्त, प्रत्यक्ष प्रीति की देनेवाली और चतुर्थांश से न्यून अर्थात् पैंतालीस कलावाली, सम्पूर्ण कार्यों की सिद्धि करनेवाली, मेलापक नामवाली अर्थात् परस्पर प्रीति की करनेवाली कही जाती है । यह पहली दृष्टि है । अब दूसरी दृष्टि कहते हैं । जिस स्थान में ग्रह बैठा है उस स्थान से तीसरे और ग्यारहवें स्थान में स्थित ग्रह को जिस दृष्टि से देखता है वह दृष्टि छिपे हुए स्नेह की करनेवाली और कार्यों की सिद्धि देनेवाली है । तीसरे और ग्यारहवें भवन में तिहाई से कम अर्थात् चालीस कलावाली दृष्टि कही है और यही दृष्टि ग्यारहवें घर में दशअंशोवाली भी होती है ॥ ९ ॥

ग्रहों की शत्रुदृष्टि ।

दृष्टिः पादमिता चतुर्थदशमे गुप्तारिभावा स्मृता-
ऽन्योन्यं सप्तमभे तथैकभवने प्रत्यक्षवैराखिला ।
दुष्टं दृक् त्रितयं क्षुताह्वयमिदं कार्यस्य विध्वंसदं
संग्रामादिकलिप्रदं दृश इमाः स्युर्द्वादशांशान्तरे ॥

ग्रहों की शत्रुदृष्टि कहते हैं । जिस स्थान में ग्रह बैठा है उस स्थान से चौथे स्थान और दशवें स्थान में स्थित ग्रह को जिस दृष्टि से देखता है वह दृष्टि छिपे हुए वैरभाव की करनेवाली तथा पन्द्रह कलावाली कही है और परस्पर सातवें घर में तथा एक ही घर में स्थित ग्रह जिस ग्रह को देखता है, वह दृष्टि प्रत्यक्ष वैर करनेवाली साठ कला की होती है । यह दृष्टियों का दुष्टतृतय सम्पूर्ण शुभ कामों का नाशक, वाञ्छित कार्यों का विध्वंस करनेवाला, संग्राम आदि युद्ध कारक और क्लेशों का देनेवाला है । यदि द्रष्टा और दृश्य का अन्तर बारह भागों से ज़्यादा न हो तो ये दृष्टियाँ जैसा फल कहा है उसकी देनेवाली होती हैं, अन्यथा द्रष्टा और दृश्य का अन्तर यदि बारह भागों से ज़्यादह होगा तो ये दृष्टियाँ यथोक्तफल की देनेवाली नहीं होंगी । यह सिद्धान्त जानना चाहिए ॥ १० ॥

गणितागत दृष्टिसाधन ।

अपास्यपश्यं निजदृश्यखेटा-
देकादिशेषे ध्रुवलिप्तिकाः स्युः ।
पूर्णं खवेदास्तिथयोऽक्षवेदाः
खंषष्टिरभ्रंशरवेदसंख्या ॥ ११ ॥
तिथ्यः खचन्द्रा वियदभ्रतर्काः
शेषाङ्कयातैष्यविशेषघातात् ।
लब्धं खरामैरधिकोनकैष्ये
स्वर्णं भवेत्स्फुटदृष्टिलिप्ताः ॥ १२ ॥

अब गणित से आई हुई दृष्टि का साधन कहते हैं । जो ग्रह देखता है वह द्रष्टा होता है, और जिसको देखता है वह दृश्य कहा जाता है ।

यह देखकर द्रष्टा ग्रह को अपने दृश्य ग्रह से शोधन करने से जो राश्यादि शेष रहता है, उस एक आदि शेष में पूर्ण इत्यादिक ध्रुव अर्थात् स्थिर दृष्टि कला होती हैं अर्थात् द्रष्टा से रहित दृश्य ग्रह के राशि स्थान में एक के शेष होते हुए शून्य दृष्टि कला होती है और दो शेष बचें तो चालीस, तीन शेष बचें तो पन्द्रह, चार शेष बचें तो पैंतालीस, पाँच शेष बचें तो शून्य, छः शेष बचें तो साठ, सात शेष बचें तो शून्य, आठ शेष बचें तो पैंतालीस, नव शेष बचें तो पंद्रह, दश शेष बचें तो दश, ग्यारह शेष बचें तो शून्य, बारह शेष बचें अथवा शून्य ही शेष बचे तो साठ दृष्टि कला होती हैं और शेष बचे हुए अंक को यात और एष्य के अन्तर से गुणा करे अर्थात् द्रष्टा से रहित दृश्य ग्रह के राशि स्थान में जो अंक प्राप्त हो उसका स्थापन करना चाहिए फिर गत और गम्य का अन्तर करे अर्थात् राशि के स्थान में जो अंक प्राप्त हुआ है वह यातसंज्ञक होता है और उसके अगाड़ी अंक को एष्यसंज्ञक कहते हैं इन दोनों का अन्तर करे। उसी अन्तर से शेष बचे हुए अंशों को गुणा करे, फिर तीस का भाग लेने से जो लब्ध कलादिक हों उनको राशिस्थान में प्राप्त हुए अंक में धन और ऋण करे। कब करे इस आशङ्का में कहते हैं कि जब अगाड़ी का ध्रुवा पहले ध्रुवा से अधिक हो तब धन करे अर्थात् जोड़ देवे और जब अगाड़ी का ध्रुवा कम हो तब ऋण करे अर्थात् घटा देवे। ऐसे होते हुए स्पष्ट दृष्टिलिप्ता अर्थात् कलाएँ होती हैं ॥ ११ । १२ ॥

सान्तर दृष्टिध्रुवांक ।

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	राशि
०	४०	१५	४५	०	६०	०	४५	१५	१०	०	६०	ध्रुव
४०	२५	३०	४५	६०	६०	४५	३०	५	१०	६०	६०	अंतर
धन	ऋण	धन	ऋण	धन	ऋण	धन	ऋण	धन	ऋण	धन	ऋण	

उदाहरण ।

जैसे द्रष्टा चन्द्रमा ५ । २२ । ६ । ४७ यह है और दृश्य सूर्य ६ । ७ । ३० । ६ यह है । इसमें द्रष्टा को घटाया तो ३ । १५ । २० । १६ यह द्रष्टा से रहित दृश्य हुआ। इसके राशिस्थान में तीन का अंक है अतः तीन के नीचे पन्द्रह १५ ध्रुवांक प्राप्त हुए और इसके आगे का ध्रुवांक पैंतालीस ४५ है । इसमें १५ को घटाया तो तीस ३० हुए। इसी से शेष अंशों १५ । २० । १६ को गुणा किया तो ४६० । ६ । ३० यह गुणनफल हुआ । इसमें ३० का भाग देने से १५ । २० । १६ यह लब्ध हुआ । इसको अग्रिम अंक एष्य के अधिक होने से पन्द्रह के मध्य में जोड़ दिया तो सूर्य के ऊपर ३० । २० । १६ यह चन्द्रमा की कलात्मिका दृष्टि हुई । इसी प्रकार संपूर्ण ग्रहों की भी स्पष्ट कलात्मिका दृष्टि जानना चाहिए ।

ग्रहमैत्री ।

पश्यन्मित्रदृशा सुहृद्रिपुदृशा शत्रुसमस्त्वन्यथा
तिथ्यर्काष्टनगाङ्कशैलखचराः सूर्यादिदीप्तांशकाः ।
चक्रे वामदृगुच्यते बलवती मध्याद्यथा वेश्मनी-
त्येकर्क्षेऽपि दृगुच्यतेऽर्थजननीत्येके विदुः सूरयः १३ ॥

अब ग्रहों की मित्रता, शत्रुता और समता कहते हैं । जो ग्रह जिस ग्रह को मित्र (नवीं, पाँचवीं, तीसरी और ग्यारहवीं) दृष्टि से देखता है वह ग्रह उसका मित्र जानना चाहिए और जो ग्रह शत्रु दृष्टि से (अर्थात् चौथी, दशवीं, पहली और सातवीं दृष्टि से) जिस ग्रह को देखता है वह उसका शत्रु जानना चाहिए अन्यथा मित्र तथा शत्रु दृष्टि के अभाव में परिशेष से दूसरे, छठे, आठवें और बारहवें इन स्थानों में समता होती है । यहाँ रोमक नाम आचार्य ने हिल्लाज के मत से इसी पर संमति प्रकट की है अर्थात् जैसा ऊपर अर्थ कहा गया है उसी को माना है ।

यहाँ मित्र, सम और शत्रु इनके विचार में नवम, पंचम आदि स्थानों में ही दृष्टि ग्रहण करना योग्य है । यद्यपि संपूर्ण स्थानों में गणितागत दृष्टि आती है तो भी वह ग्रहण नहीं करना चाहिए क्योंकि दृष्टि के अभाव से समता कही है । गणितागत दृष्टि के होते हुए समता का अभाव ही हो जायगा । यह कितनेक आचार्य कहते हैं ।

वास्तव में यहाँ एक, पाँच, सात और ग्यारह इनके अन्त तुल्य अंश कलादि अवयवोंवाले ग्रहों की गणितागत दृष्टि का अभाव है तो समता हो नहीं सक्ती। जैसे–द्रष्टा १। ३। २०। ५० यह चन्द्रमा है और ८। ३। २०। ५० यह दृश्य बुध है। इन दोनों का अन्तर किया तो केवल ७ राशि ही शेष रही। सात के नीचे शून्य ध्रुवा का अंक प्राप्त हुआ। परन्तु ऐसा सम्भव कभी नहीं हो सक्ता जोकि अंश, कला, विकलाओं से तुल्य दृश्य और द्रष्टा ये दोनों मिलें, इस कारण से समदृष्टि का अभाव स्वयं सिद्ध है और दूसरे ग्रन्थ में समता कही भी नहीं है।

अब सूर्य आदि ग्रहों के दीप्तांशों को कहते हैं—जैसे सूर्य के दीप्तांश १५, चन्द्रमा के १२, मंगल के ८, बुध के ७, बृहस्पति के ६, शुक्र के ७, और शनैश्चर के ६ दीप्तांश हैं। यह सूर्यादि ग्रहों के दीप्तांश जानो।

अब दृष्टि में कुछ विशेष कहते हैं। लग्न आदि बारह राशियों के चक्र में दक्षिण दृष्टि की अपेक्षा वाम दृष्टि बलवाली होती है अर्थात् वाम स्थान में स्थित ग्रह की दृष्टि वाम दृष्टि कही जाती है। यहाँ मध्यम पदलोपी समास जानना। वाम भागस्थ ग्रह की दक्षिण भागस्थ ग्रह के ऊपर जो दृष्टि है वह बलवाली कही है। लग्न से छठे पर्यंत दक्षिण विभाग कहा जाता है और सप्तम से बारहवें पर्यंत वाम विभाग है। यह बृहज्जातक आदि ग्रन्थों में स्पष्ट लिखा है। अब (चक्रे वामदृगुच्यते) यहाँ कुछ उदाहरण कहते हैं। जैसे दशवें स्थान में स्थित ग्रह की चौथे स्थान में स्थित ग्रह के ऊपर जो दृष्टि है वह बलवाली होती है। और चौथे स्थान में स्थित ग्रह की दशवें स्थान में स्थित ग्रह के ऊपर जो दृष्टि है वह निर्बल है। यह अर्थ ही से सूचित होता है। और सातवें आदि बारहें पर्यंत स्थानों में स्थित ग्रहों की लग्न आदि छठे पर्यंत स्थानों में स्थित ग्रहों के ऊपर जो दृष्टि है, वह बलवाली है। यह निर्दिष्ट अर्थ समझना चाहिए। ऐसा ही अर्थ समरसिंह ने भी कहा है कि (वामदृष्टिः) इस पद में सप्तमी तत्पुरुष समास है। वाम में दृष्टि वामदृष्टि, दक्षिण में दृष्टि दक्षिणदृष्टि अर्थात् दक्षिण भाग में स्थित ग्रहों की जो वामभाग में स्थित ग्रहों के ऊपर दृष्टि है उसकी अपेक्षा से वामभाग में स्थित ग्रहों की दक्षिण भाग में स्थित ग्रहों के ऊपर जो दृष्टि है वह बलवाली होती है।

उदाहरण । जैसे—("भूकेन्द्रोपरिदृष्टिर्मध्यात्सबलेतिसर्वतोऽप्यूह्यम्") दशवें स्थान से चौथे स्थान पर जो दृष्टि है उसको बलवती कहते हैं। एवं सप्तम आदि द्वादशपर्यंत स्थानों में स्थित ग्रहों की लग्न आदि षष्ठ पर्यन्त स्थानों में स्थित ग्रहों पर जो दृष्टि है वह बलवाली कही है। यह विद्वज्जनों द्वारा विचारणीय है। केशव दैवज्ञ का भी यही मत है। जैसे-(परार्द्धखगदृक् प्राग्जार्द्धदृक्कोऽधिका) लग्न आदि षष्ठपर्यन्त पूर्वार्द्ध, सप्तम आदि द्वादशपर्यंत परार्द्ध है। पूर्वार्द्धदृष्टि से परार्द्ध दृष्टि बलवाली कही है। अब एकस्थान दृष्टि में मतान्तर को कहते हैं कि एक राशि में स्थित द्रष्टा व दृश्य, इन दोनों की जो परस्पर दृष्टि है वह अत्यन्त लाभ-पूर्वक शुभ फलों की देनेवाली है। यह ताजिकशास्त्र वेत्ता पण्डित कहते हैं ॥ १३ ॥

पूर्वोक्त दीप्तांशों का प्रयोजन।

पुरः पृष्ठे स्वदीप्तांशैर्विशिष्टं दृक्फलं ग्रहः।
दद्यादतिक्रमे तेषां मध्यमं दृक्फलं विदुः ॥ १४ ॥

पूर्वोक्त दीप्तांशों का प्रयोजन यह है कि नवम आदि स्थानों में दृष्टि के होते हुए देखनेवाला ग्रह अपने दीप्तांशों से अगाड़ी वा पिछाड़ी स्थित होवे तो वह उत्कृष्ट नवम आदि स्थानों में स्थित दृष्टिफल को देता है। और यदि दीप्तांशों को उल्लंघ्य जावे तो वह साधारण दृष्टिफल को देता है। यह सिद्धांत जानना चाहिए ॥ १४ ॥

षोडशयोग और उनके नाम।

प्रागिक्कवालोऽपरइन्दुवारस्तथेत्थशालोऽपरईसराफः।
नक्तं ततः स्याद्यमया मणाऊ कम्बूलतो गैरिकम्बूलमुक्तम् १५
खल्लासरं रद्दमथो दुफालिकुत्थं च दुत्थोत्थदिवीरनामा।
तम्बीरकुत्थौ दुरफश्च योगाः स्युः षोडशैषां कथयामि लक्ष्म॥

अब सोलह योगों को कहते हैं—पहिला योग इक्कबाल १, इन्दुवार २, इत्थशाल ३, ईसराफ ४, नक्त ५, यमया ६, मणाऊ ७, कम्बूल ८, गैरि-कम्बूल ९, खल्लासर १०, रद्द ११, दुफालिकुत्थ १२, दुत्थोत्थदिवीर १३, तम्बीर १४, कुत्थ १५ और दुरफ १६ ये सोलह योग हैं। अब इन सब के लक्षण कहता हूँ ॥ १५ । १६ ॥

इक्कवाल और इन्दुवार के लक्षण।

चेत्कण्टके पणफरे च खगाः समस्ताः
स्यादिक्कवाल इति राज्यसुखाप्तिहेतुः।
आपोक्लिमे यदि खगाः सकलेन्दुवारो
न स्याच्छुभः क्वचन ताजिकशास्त्रगीतः १७॥

लग्न, चौथा, सातवाँ और दशवाँ इन स्थानों को कण्टक, केन्द्र और चतुष्टय कहते हैं। दूसरा, पाँचवाँ, आठवाँ और ग्यारहवाँ इन स्थानों को पणफर तथा तीसरा, छठा, नवाँ और बारहवाँ इन स्थानों को आपोक्लिम कहते हैं। यदि सम्पूर्ण ग्रह केन्द्र या पणफर में हों तो इकवाल (इक़बाल) योग होता है यह राज्य और सुख की प्राप्ति का हेतु है। और यदि आपोक्लिम में सम्पूर्ण ग्रह हों तो ताजिकशास्त्र में कहा हुआ इन्दुवार (अदबार[1]) नामक योग होता है। यह निश्चय करके कहीं भी वर्षप्रवेश या मासप्रवेशादिकों में शुभदायक नहीं होता है ॥ १७ ॥

मुथशिल योग का लक्षण।

शीघ्रोल्पभागैर्घनभागमन्देऽग्रस्थे निजं तेज उपाददीत।
स्यादित्थशालो यमथोविलिप्ता लिप्तार्द्धहीनो यदि पूर्णमेतत्॥

अब मुथशिल योग के लक्षण कहते हैं। जिन दो ग्रहों का मुथशिल योग विचार करना हो उन ग्रहों के मध्य में जिसकी अधिक गति हो वह शीघ्र गतिवाला ग्रह होता है और जिसकी अल्प गति हो वह मन्दगतिवाला ग्रह कहा जाता है। शीघ्रगतिवाले (जल्द चलनेवाले) ग्रह के कम अंश हों और मन्दगतिवाले ग्रह के बहुत अंश हों और शीघ्र गतिवाले ग्रह से मन्दगतिवाला ग्रह अगाड़ी स्थित हो अर्थात् शीघ्र गतिवाले ग्रह के अंशों की अपेक्षा मन्दगतिवाले ग्रह के अधिक अंश हों तब शीघ्रगतिवाला ग्रह अपने तेज (सामर्थ्य) को मन्दगतिवाले ग्रह के लिये देता है तभी यह इत्थशाल नामक योग होता है और इसीका दूसरा नाम मुथशिल है। शीघ्र गतिवाले ग्रह से वा शीघ्र गतिवाले ग्रह के दीप्तांशों से मन्दगतिवाले ग्रह को अधिक रहते हुए मुथशिल योग होता है यह

१—'अदबार' घटने का नाम है।

सिद्धान्त जानना चाहिए । अब पूर्ण मुथशिल योग कहते हैं—यदि शीघ्र-गतिवाला ग्रह मन्दगतिवाले ग्रह से एक विकलामात्र न्यून हो अथवा आधी विकला से हीन हो तब यह पूर्ण बीस बिस्वाओंवाला मुथशिल योग होता है । और जब दोनों ग्रहों की विकला पर्यन्त अवयवों से समानता हो तब पूर्ण मुथशिल होता है । यह अर्थ से ही सिद्ध हुआ ॥ १८॥

दृष्टिरहित मुथशिलयोग के लक्षण ।

शीघ्रो यदाभान्त्यलवस्थितः सन्
मन्देऽन्यभस्थे निदधाति तेजः ।
स्यादित्थशालोऽयमथैष शीघ्रो
दीप्तांशकांशैरिह मन्दपृष्ठे ॥ १९ ॥
तदा भविष्यद्गणनीयमित्थ-
शालं त्रिधैवं मुथशीलमाहुः ।
लग्नेशकार्याधिपयोर्यथैष
योगस्तथा कार्यमुशन्ति सन्तः ॥ २० ॥

अब दृष्टिरहित मुथशिल योग के लक्षण कहते हैं । जब शीघ्र गतिवाला ग्रह राशि के अन्तिम अंश (तीसवें अंश) में स्थित होकर अग्रिम राशि में स्थित मन्दगतिवाले ग्रह के लिये अपने तेज (सामर्थ्य) को देता है—अर्थात् शीघ्र गतिवाला ग्रह राशि के आखिरी अंश में स्थित हो और मन्दगतिवाला ग्रह शीघ्र गतिवाले ग्रह के दीप्तांशावधि अंशों में होकर आगे की राशि में स्थित हो तब शीघ्रगतिवाला ग्रह मन्द गतिवाले ग्रह में अपने तेज को स्थापित करता है, तभी यह इत्थशाल नामक योग होता है ।

अब भविष्य (होनेवाला) मुथशिल योग कहते हैं । यह शीघ्र गतिवाला ग्रह अपने दीप्तांशों से अधिक अंशों से मन्दगतिवाले ग्रह से पीछे स्थित होकर जब मन्दगतिवाले ग्रह के लिये अपने तेज देने की कामना करता है तब भविष्यत् (आगे होनेवाला) इत्थशाल नामक योग होता है यह जानना चाहिए । ऐसा तीन प्रकार का इत्थशाल (मुथशिल) योग आचार्यों ने दिखलाया है ।

अब मुथशिल योग का फल कहते हैं। लग्न का स्वामी और जिस भाव का प्रश्न किया जावे उस भाव का स्वामी (कार्याऽधिप) इन दोनों का जैसा मुथशिल योग है वैसा कार्य सन्तों ने कहा है। जैसे–कोई प्रश्न कर्ता पूछे कि हे गुरो! मुझे स्त्री, पुत्र या राज्य का लाभ अथवा अनेक प्रकार के सुखों की प्राप्ति होगी या नहीं? इस अवस्था में जिस समय प्रश्न करे उस समय के लग्न का स्वामी और जिस जिस भाव का प्रश्न करे उस उस भाव का स्वामी (कार्याऽधिप) इन दोनों के इत्थशाल का विचार करके शुभ व अशुभ फल कहना चाहिए। वर्ष प्रवेश में जो लग्न आवे उसी से सम्पूर्ण कार्यों का विचार करे। जैसे पुत्रप्राप्ति की चिन्ता हो तो पाँचवें भाव से, स्त्रीप्राप्ति की चिन्ता हो तो सातवें भाव से, राज्य-प्राप्ति की चिन्ता हो तो दशवें भाव से, और लाभ की चिन्ता हो तो ग्यारहवें घर से विचार करना चाहिए। इसी प्रकार सब भावों का विचार करना चाहिए। लग्न का स्वामी और राज्य आदि अभीष्ट कार्यों का स्वामी इन दोनों का जैसा मुथशिल योग हो वैसी ही उस भाव की प्राप्ति कहनी चाहिए। यदि लग्नेश और कार्येश इन दोनों का वर्तमान मुथशिल योग हो तो उस भाव सम्बन्धी सुख इसी समय वर्तमान है यह कहना चाहिए और यदि लग्नेश और कार्येश इनका पूर्ण मुथशिल योग हो तो उस भावसंबंधी पूर्ण सुख कहना चाहिए यदि भविष्य (होनेवाला) मुथशिल योग हो तो आगे उस भाव का सौख्य होगा यह कहना चाहिए॥ १९। २०॥

दृष्टिद्वारा मुथशिल विचार।

लग्नेशकार्याधिपतत्सहाया यत्र स्युरस्मिन्पतिसौम्यदृष्टे।
तदा बलाढ्यं कथयन्ति योगं विशेषतः स्नेहदृशापि सन्तः॥

अब दृष्टिद्वारा मुथशिल योग का विचार कहते हैं। लग्न का स्वामी और कार्य का स्वामी तथा इन दोनों के सहायक अर्थात् लग्नेश का मित्र और कार्येश का मित्र ये चारों जिस राशि में हों और वह राशि अपने स्वामी और शुभ ग्रह इन दोनों से देखी जाती हो तो पूर्व उत्पन्न मुथ-शिल (इत्थशाल) योग उत्तम फल का देनेवाला होता है ऐसा सन्त जनों ने कहा है। लग्नेश, कार्येश, लग्नेश का मित्र और कार्येश का मित्र–ये चारों जिस राशि में हों और वह राशि अपने स्वामी और

शुभग्रहों से स्नेहदृष्टि (मित्रदृष्टि) करके देखी जाती हो तो यह मुथशिल योग विशेष कर बलसमेत उत्तम फल का देनेवाला होता है। यह ताजिक शास्त्र के वेत्ता महात्मा लोगों ने कहा है ॥ २१ ॥

अन्य फलों का विचार ।

स्वर्क्षादिसत्स्थानगतः शुभैश्चेद्युतेक्षितोभूद्भविताथवास्ते ।
तदा शुभं प्रागभवत्सुपूर्णमग्रे भविष्यत्यथ वर्तते च ॥२२॥

अब अन्य भी फलों का विचार कहते हैं। लग्न का स्वामी और कार्य का स्वामी ये दोनों अपनी राशि, अपने उच्च, अपने हद्दा, अपने त्रैराशिप या अपने नवांश में रहे हों अथवा शुभग्रहों के स्थानों में प्राप्त या शुभ ग्रहों से युक्त अथवा शुभग्रहों से देखे गये हों तो पूर्व ही पूर्ण शुभ फल हुआ था यह कहना चाहिए और जब लग्न का स्वामी और कार्य का स्वामी ये दोनों अपने घर, अपने उच्च, अपने हद्दा, अपने त्रैराशिप या अपने नवांश में जानेवाले हों अथवा शुभ ग्रहों के स्थानों में चलनेवाले हों, शुभग्रहों से युक्त होनेवाले हों अथवा शुभ ग्रहों से देखे जावेंगे तो शुभ फल आगे होगा यह कहना चाहिए—और जब लग्न का स्वामी और कार्य का स्वामी ये दोनों अपनी राशि, अपने उच्च, अपने हद्दा, अपने त्रैराशिप और अपने नवांश में हों अथवा शुभग्रहों के स्थानों में प्राप्त हों या शुभग्रहों से युक्त अथवा देखे जाते हों तो शुभ फल इसी समय हो रहा है यह कहना चाहिए ॥ २२ ॥

अशुभ फल कहते हैं ।

व्यत्यस्तमस्माद्विपरीतभावेऽथेष्टर्क्षतोऽनिष्टगृहं प्रपन्नः ।
अभूच्छुभं प्रागशुभं त्विदानीं संयातुकामेन च भावि वाच्यम् ॥

अब अशुभ फल कहते हैं। पूर्वोक्त अर्थ से विपरीत भाव के होते हुए अशुभ फल कहना चाहिए अर्थात् जैसे लग्न का स्वामी और कार्य का स्वामी ये दोनों अपने शत्रु के घर में जा चुके हों अथवा अपने नीच घर में, अपने शत्रु के हद्दा में, अपने शत्रु के नवांश में या पाप ग्रहों के स्थान में प्राप्त होकर पाप ग्रहों से युक्त या देखे गये हों तो पूर्व अशुभ फल हुआ था और जब लग्न का स्वामी और कार्य का स्वामी—ये दोनों दुष्ट स्थानों

में प्राप्त होकर पापग्रहों से युक्त अथवा देखे जाते हों तो इसी समय अशुभ फल हो रहा है यह कहना चाहिए।

अब तीसरे मुथशिल योग का विशेष विचार कहते हैं। जब लग्नेश और कार्येश ये दोनों मित्र की राशि से शत्रु के घर में प्राप्त हो जावें तो पूर्व ही शुभ फल हो चुका है और इस समय अशुभ फल वर्तमान है यह कहना चाहिए और लग्न या कार्येश ये दोनों मित्र के घर में वर्तमान हैं और कुछ दिनों के बाद शत्रु के घर में आवेंगे तो भावि अशुभ फल कहना चाहिए॥ २३॥

ईसराफयोग का लक्षण।

> शीघ्रो यदा मन्दगतेरथैक-
> मप्यंशमभ्येति तदेसराफः।
> कार्यक्षयो मूसरिफे खलोत्थे
> सौम्येन हिल्लाजमतेन चिन्त्यम्॥ २४॥

अब ईसराफयोग का लक्षण कहते हैं। जब शीघ्र गतिवाला ग्रह मन्दगतिवाले ग्रह के एक भी अंश को अतिक्रम्य (उल्लंघन कर) आगे जावे तब ईसराफ नामक योग होता है और इसी का दूसरा नाम मूसरीफ भी कहते हैं। शीघ्र गतिवाला ग्रह और मन्द गतिवाला ग्रह ये दोनों पापी हों और इन्हीं के सम्बन्ध से ईसराफ (मूसरीफ) योग हो तो वाञ्छित कार्यों का नाश होता है। और यही ईसराफ योग शुभ ग्रहों से उत्पन्न हो तो वाञ्छित कार्यों का नाश नहीं करता है अर्थात् शीघ्र गतिवाला ग्रह और मन्द गतिवाला ग्रह ये दोनों शुभ हों और इन्हीं के संबंध से मूसरीफ योग हो तो अभिमत कार्यों का नाश नहीं होता है। यह फल हिल्लाज नामा आचार्य के मत से समझना चाहिए॥ २४॥

नक्तयोग का लक्षण।

> लग्नेशकार्याधिपयोर्न दृष्टि-
> र्मिथोऽथ तन्मध्यगतोऽपि शीघ्रः।

१—ईसराफ, खर्च को कहते हैं।

आदाय तेजो यदि पृष्ठसंस्था-
न्न्यसेदथान्यत्र हि नक्तमेतत् ॥ २५ ॥

अब नक्तयोग का लक्षण कहते हैं। लग्नेश और कार्येश इन दोनों की की परस्पर दृष्टि न हो और यदि उन्हीं दोनों (लग्नेश व कार्येश) के बीच में जो कोई अन्य शीघ्र गतिवाला ग्रह बैठा हो और वह बीच में रहनेवाला ग्रह पीछे बैठे हुए शीघ्र गतिवाले ग्रह से तेज (सामर्थ्य) को लेकर आगे टिके हुए मन्द गतिवाले ग्रह में अर्पण करता (देता) है तब यह नक्तनामक योग होता है ॥ २५ ॥

नक्तयोग का उदाहरण ।

स्त्रीलाभपृच्छातनुरस्ति कन्या
स्वामी बुधः सिंहगतो दशांशैः ।
सूर्यांशकैर्देवगुरुः कलत्रे
दृष्टिस्तयोर्नास्ति मिथोऽथ चन्द्रः ॥ २६ ॥
चापे वृषे चोभयदृश्यमूर्तिः
शीघ्रोऽष्टभागैरथवा भवांशैः ।
आदाय तेजो बुधतो ददौ य-
ज्जीवाय लाभः परतः स्त्रियः स्यात् ॥ २७॥

अब इस नक्तयोग का उदाहरण कहते हैं। जैसे—किसी पूछनेवाले ने जिस समय में आकर प्रश्न किया कि मुझे स्त्री की प्राप्ति होगी या नहीं ? उस समय कन्या लग्न थी, उसका स्वामी बुध दश अंशों करके सिंहराशि का होकर बारहवें घर में बैठा था और कार्य के मालिक बृहस्पतिजी बारह अंशों से उपलक्षित होकर सातवें घर में विराजमान थे और उन दोनों (बुध, बृहस्पति) की आपस में छठे आठवें घर पर बैठने से दृष्टि नहीं है अर्थात् बुध से आठवें स्थान में बृहस्पति और बृहस्पति से छठे स्थान में बुध ये दोनों आपस में नहीं देखते हैं और शीघ्र गतिवाला चन्द्रमा बुध और बृहस्पति के बीच में प्राप्त होकर धनराशि में अथवा वृष राशि में बैठा है और वह चन्द्रमा लग्नेश बुध और कार्येश बृहस्पति इनसे

देखा जाता है, फिर आठ अंशों से अथवा ग्यारह अंशों से उपलक्षित चन्द्रमा ने पीठ पर बैठे हुए बुध से तेज (सामर्थ्य) को लेकर बृहस्पति को दे दिया, उस लग्न स्वामी बुध का तेज हरने से यत्न करके भी स्त्री की प्राप्ति नहीं होगी यह कहना चाहिए, क्योंकि बीच में बैठनेवाला तीसरा शीघ्र गतिवाला ग्रह चन्द्रमा ने लग्न के स्वामी का तेज हरकर मन्द गति-वाले ग्रह (बृहस्पति) के लिये दे दिया इस कारण किसी बिचमानी से स्त्री का लाभ होगा यह कहना चाहिए । यह नक्तयोग के उदाहरण का स्वरूप जानना चाहिए ॥ २६ । २७ ॥

नक्तयोगचक्र ।
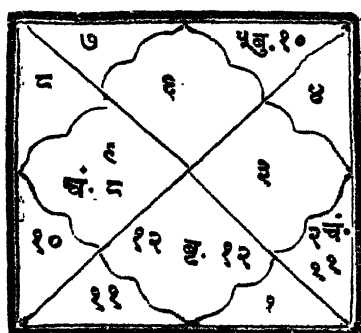
यमयायोग का लक्षण ।

अन्तः स्थितो मन्दगतिस्तु पश्ये-
दीप्तांशकैर्द्वावथ शीघ्रतस्तु ।
नीत्वा महोयच्छति मन्दगाय
कार्यस्य सिद्ध्यै यमया प्रदिष्टः ॥ २८ ॥

अब यमयायोग का लक्षण कहते हैं । लग्न का स्वामी और कार्य का स्वामी इन दोनों की आपस में दृष्टि नहीं हो अर्थात् लग्नेश कार्येश को और कार्येश लग्नेश को नहीं देखता हो और लग्नेश व कार्येश इनके बीच में बैठा हुआ मन्द गतिवाला ग्रह अपने दीप्तांशों से लग्न के स्वामी और कार्य के स्वामी को स्थानदृष्टि[1] से देखता हो और वह मन्द गतिवाला ग्रह लग्नेश और कार्येशों में से जो शीघ्र गतिवाला ग्रह हो उससे तेज को

1—स्थानदृष्टि (दृष्टिस्त्र्यशममंचमे) इत्यादि श्लोकों से विचारणीय है ।

लेकर मन्द गतिवाले ग्रह के लिये देता है अर्थात् लग्न का स्वामी और कार्य का स्वामी इनमें से जो मन्दगामी ग्रह हो उसी के लिये महः (तेज) को देता है इसलिए पूर्व के आचार्यों ने वाञ्छित कार्यों की सिद्धि के वास्ते इसको यमया नामक योग कहा है। यह योग विचारे हुए कार्यों को सिद्ध करता है ॥ २८ ॥

यमयायोग का उदाहरण।

राज्याप्तिपृच्छातुललग्ननाथो
मेषे सितस्त्वष्टलवैर्वृषस्थः।
चन्द्रो रसांशैर्यदि राज्यनाथो
दृष्टिस्तयोर्नास्ति गुरुस्तु मन्दः ॥ २९ ॥
दिगंशकः कर्कगतस्तु पश्य-
न्नुभौ महोदीप्तलवैः सचान्द्रम्।
ददौ सितायेति पदस्य लाभो-
ऽमात्येन भावीति विमृश्य वाच्यम् ॥ ३० ॥

अब यमयायोग का उदाहरण कहते हैं। जिस समय किसी पूछनेवाले ने आकर प्रश्न किया कि मुझे राज्य की प्राप्ति होगी या नहीं? उस समय तुला लग्न का स्वामी शुक्र आठ अंशों से युक्त सातवें स्थान मेषराशि में बैठा हो तथा राज्यनाथ (दशवें भवन का मालिक) छः अंशों से युक्त आठवें स्थान वृषराशि में विराजमान हो और लग्नेश तथा कार्याधिपों की आपस में दृष्टि न हो, अर्थात् लग्न का मालिक दशमेश को और दशमेश लग्नेश को न देखता हो क्योंकि दूसरे तथा बारहवें स्थान में स्थित होने से दृष्टि नहीं होती और मन्द गतिवाला ग्रह दश अंशों से युक्त बृहस्पति दशवें स्थान कर्क राशि में प्राप्त होकर लग्नेश व कार्येश को स्थानदृष्टि से देखता हो तो चन्द्र तथा शुक्र से अधिक अपने दीप्तांशों करके चन्द्रमा से तेज (बल) को लेकर मन्द गतिवाले शुक्र के लिये देता है। इस कारण राज्य का लाभ मन्त्री के द्वारा होनेवाला है। यह विचारकर कहना चाहिए। यह यमयायोग है ॥ २९ । ३० ॥

थम्भयायोग का चक्र ।
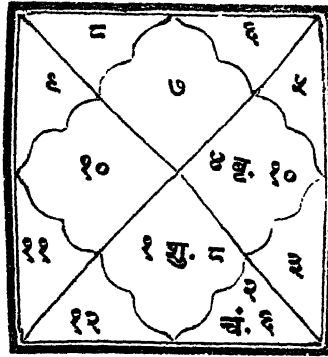
मणऊयोग का लक्षण ।

वक्रः शनिर्वा यदि शीघ्रखेटा-
त्पश्चात्पुरस्तिष्ठति तुर्यदृष्ट्या ।
एकर्क्षसप्तर्क्षभुवा दृशा वा
पश्यन्नथांशैरधिकोनकैश्चेत् ॥ २१ ॥
तेजो हरेत्कार्यपदेत्थशाली
स्थितोपि वासौ मणऊ शुभो न ।

अब मणऊयोग का लक्षण कहते हैं—इस मणऊयोग में लग्नाधीश तथा कार्याधीश की आपस में स्थान दृष्टि होना चाहिए क्योंकि लग्नेश तथा कार्येश—इन दोनों की परस्पर स्थान दृष्टि को पूर्वाचार्यों ने माना है। यदि शीघ्र गतिवाले ग्रह से मंगल तथा शनैश्चर ये दोनों पीछे या आगे स्थित हों अर्थात् लग्नेश और कार्येश इनमें से जो शीघ्र गतिवाला ग्रह हो, उसके जो अंशादि हों, उनसे पूर्व[1] या आगे के अंशों में ही मंगल तथा शनैश्चर स्थित हो। मंगल और शनैश्चर चतुर्थ स्थान दृष्टि से अथवा एक स्थान दृष्टि से तथा सातवें स्थान दृष्टि से अधिक अंशों करके या कम अंशों करके शीघ्र गतिवाले ग्रह को देखता हुआ शीघ्र गतिवाले ग्रह के तेज (बल) को हरता है अर्थात् मंगल-शनैश्चर इनमें से कोई ग्रह पहली, चौथी और सातवीं दृष्टि से शीघ्र गतिवाले ग्रह को देखे और शीघ्र गति-

१—यहाँ पर अंशों से ही पूर्व पर लेना चाहिए, राशि से नहीं।

वाले ग्रह के जितने अंश हों उनसे मंगल या शनैश्चर के अंश अधिक या कम हों (शीघ्र गतिवाले ग्रह के जितने दीप्तांश हों उनके बीच ही में मंगल या शनैश्चर के अंश हों यह किसी आचार्य का मत है) और मंगल या शनैश्चर इनमें से कोई ग्रह शीघ्र गतिवाले ग्रह के (बल) को हर लेवे और यदि बलरहित (अपनी सामर्थ्य से हीन) शीघ्र गतिवाला ग्रह वाञ्छित कार्याधीश के साथ इत्थशाल (मुथशिल) योग को भी करता हो तो 'मणऊयोग' होता है । यह शुभकार्यों का नाशक है ॥३१॥

मणऊयोग का उदाहरण ।

स्त्रीलाभपृच्छा तनुरस्ति कन्या-
ऽत्र ज्ञो दिगंशैस्तिथिभिस्सुरेज्यः ॥ ३२ ॥
कलत्रगः खेऽवनिजो भवांशैः
पूर्वं बुधो भौमहृतस्वतेजाः ।
जीवेन पश्चान्मिलतीति लाभो
नार्यास्तु नो पृष्ठगतेऽथवास्मिन् ॥ ३३ ॥

अब मणऊयोग का उदाहरण कहते हैं । जिस समय किसी पृच्छक ने आकर पूछा कि मुझे स्त्री की प्राप्ति होगी या नहीं ? उस समय प्रश्न में कन्या लग्न का स्वामी बुध दश अंशों से युक्त कन्या लग्न में बैठा है तथा पंद्रह अंशों से युक्त बृहस्पति सातवें मीन राशि में बैठा है और ग्यारह अंशों से युक्त मंगल दशवें घर में विद्यमान होकर चौथी स्थान-दृष्टि से शीघ्र गतिवाले बुध ग्रह को देखता है, बुध से एक अंश आगे स्थित मंगल ने बुध के तेज (बल) को हर लिया है, इससे बुध निर्बल होकर शीघ्र गति के कारण पीछे से कार्याधीश बृहस्पति के साथ आकर मिला, इस कारण स्त्री का लाभ नहीं होगा । यह कहना चाहिए । यह एक योग हुआ । अब अपर योग को कहते हैं कि जैसा पूर्व योग कहा गया है उसे उसी रूप से स्थित रहते हुए बुध के अंशों की अपेक्षा कम अंशों से युक्त मंगल पीछे हो तो इसके पृष्ठगत होने से यह मणऊ नामक योग वाञ्छित कार्यों का नाश करनेवाला होता है । अब इसी के चक्रों को लिखते हैं ॥ ३२ । ३३ ॥

मणऊयोगचक्र। मणऊयोगचक्र।

मणऊयोग का भेद।

यदीत्थशालोऽस्त्युभयोः स्वदीप्त-
हीनाधिकांशैः शनिभूसुतौ चेत्।
एकर्क्षगौ लग्नपकार्यपौस्त-
स्तेजोहरौ कार्यहरौ निरुक्तौ॥ ३४॥

अब मणऊयोग का भेद कहते हैं—यदि लग्नेश तथा कार्येश का इत्थशाल (मुथशिल) योग हो और लग्नाधीश तथा कार्याधीश इनमें से किसी एक के साथ शनैश्चर और मंगल ये दोनों एक राशि में बैठे हों तथा लग्नेश और कार्येश इनके दीप्तांशों की अपेक्षा शनैश्चर तथा मंगल के अंश कम या अधिक हों और शनैश्चर तथा मंगल के अंश दीप्तांशों के बीच में हों और उन्हीं से शनैश्चर व मंगल ये दोनों लग्नेश व कार्येश के तेज (बल) को हरते हैं अतः ये वाञ्छित कार्य के नाश करनेवाले मुनियों ने कहे हैं॥ ३४॥

इसका उदाहरण।

राज्याप्तिपृच्छातुललग्ननाथः कर्के सितोंशैस्तिथिभिर्दिगंशैः।
वृषे शशी भूपलवैः कुजश्च हरन्द्वयोर्भां हरते च राज्यम्॥ ३५॥

अब फिर मणऊ योग का उदाहरण कहते हैं—जिस समय किसी ने आकर पूछा कि मुझे राज्य की प्राप्ति होगी या नहीं ? उस समय तुला लग्न उसका स्वामी शुक्र पन्द्रह अंशों से युक्त कर्क राशि में बैठा है, और राज्यभवन का मालिक चन्द्रमा दश अंशों से युक्त आठवें भवन वृष राशि में विराजमान है और सोलह अंशों से युक्त मंगल वृष राशि में बैठा हुआ

लग्नेश और कार्येश इन दोनों के तेज (बल) को हरकर राज्य को नाश करता है और च शब्द के बल से शनैश्चर भी सोलह अंशों समेत आठवें भवन वृष राशि में टिका हुआ लग्नेश तथा कार्येश के बल को हरकर राज्य को हरता है। इस उदाहरण में लग्नेश तथा कार्येश (दशम घर का मालिक) इन दोनों का मुथशिल योग है और कार्येश के साथ मंगल तथा शनैश्चर अधिक अंशों से युक्त वृष राशि में बैठे हैं इस कारण से इन दोनों ने लग्नाधीश और कार्याधीश के पराक्रम को हरकर राज्य को हर लिया है ॥ ३५ ॥ योग चक्र में देखना चाहिए।

मणऊभेद का चक्र।

कम्बूलयोग का लक्षण।

लग्नकार्येशयोरित्थशालेऽत्रेन्द्वित्थशालतः।
कम्बूलं श्रेष्ठमध्यादिभेदैर्नानाविधं स्मृतम् ॥ ३६ ॥

अनेक प्रकार से भिन्न कम्बूल योग कहते हैं। लग्नाधीश तथा कार्याधीश का आपस में मुथशिल योग हो और इनमें से किसी एक के साथ चन्द्रमा इत्थशाल करता हो तो वह कम्बूल नामक योग होता है। लग्नेश तथा कार्येश इनमें से किसी एक के साथ चन्द्रमा का मुथशिल योग हो तो भी कम्बूल योग होता है। ऐसा ही ताजिकभूषण में भी कहा है। यह पूर्ण, मध्यम और अधम इन भेदों से तीन प्रकार का है। और श्रेष्ठ, मध्यम, आदि शब्द से अधम इन भेदों से भी नाना प्रकार का कंबूल योग कहा है। लग्नेश, कार्येश, चन्द्रमा इनके चार प्रकार के आकार भेद से सोलह प्रकार का है। जैसे—उत्तमोत्तम १, उत्तममध्यम २, उत्तम ३, उत्तमाधम ४, मध्यमोत्तम ५, मध्यममध्यम ६, मध्यम ७, मध्यमाधम ८, उत्तम ९, मध्यम १०, मध्यममध्यम ११, अधम १२, अधमोत्तम १३,

अधममध्य १४, अधम १५ और अधमाधम १६ ये सोलह भेद हैं। इनमें से ३।७।६।१०।११।१२।१५ इतने भेदों में (सम) शब्द को छोड़ दिया है क्योंकि, उत्तमादि और सम की एकता है इसलिये (सम) शब्द को छोड़कर सोलह रूपों को प्रकाशित किया है। यहाँ अपने गृह तथा अपने उच्च का अधिकार उत्तम जानना चाहिए। और अपने हद्दा, अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश का अधिकार मध्यम कहा है। अपने शत्रु और अपने नीच का अधिकार अधम जानना चाहिए। इन तीनों[1] स्थानों से रहित सम अधिकार समझना चाहिए। मनुष्य जातक में समरसिंह ने भी कहा है कि लग्नेश और कार्येश इन दोनों का इत्थशाल हो और यदि चन्द्रमा इनमें से किसी एक के साथ इत्थशाल योग का विधान करता हो तब कम्बूल योग होता है जिसे यामिनी भाषा में (क़बूल) कहते हैं और वह अपने घर तथा अपनी उच्च गति में प्रधान होता है और (त्रिकाद्ये) अपने हद्दा, अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश में मध्यम होता है और अपने शत्रु घर तथा अपने नीच घर में अधम जानना चाहिए॥ ३६॥

षोडशप्रकार का कम्बूलयोगचक्र।

चन्द्रः	लग्नाधीश कार्याधीशौ,	लग्नेशकार्येशौ	लग्नेशकार्येशौ,	लग्नेशकार्येशौ,
उत्तमाधिकारश्चन्द्रः	उत्तमाधिकारस्थौ, १	मध्यमाधिकारस्थौ, २	समाधिकारस्थौ, ३	अधमाधिकारस्थौ, ४
मध्यमाधिकारश्चन्द्रः	उत्तमाधिकारस्थौ, ५	मध्यमाधिकारस्थौ, ६	समाधिकारस्थौ, ७	अधमाधिकारस्थौ ८
समाधिकारश्चन्द्रः	उत्तमाधिकारस्थौ, ६	मध्यमाधिकारस्थौ, १०	समाधिकारस्थौ, ११	अधमाधिकारस्थौ, १२
अधमाधिकारश्चन्द्रः	उत्तमाधिकारस्थौ, १३	मध्यमाधिकारस्थौ, १४	समाधिकारस्थौ, १५	अधमाधिकारस्थौ, १६

१—कम्बूलमेतद् द्वितयेत्थशाले चन्द्रोऽपि चेन्मूथशिलं विधत्ते।
मिथः स्वगेहोच्चगतौ प्रधानं मध्यं त्रिकाद्ये त्वधमं परर्क्षमिति॥ १॥

उत्तमोत्तम कम्बूलयोग का लक्षण।

यदीन्दुः स्वगृहोच्चस्थस्तादृशौ लग्नकार्यपौ।
तदेत्थशाली कम्बूलमुत्तमोत्तममुच्यते ॥ ३७ ॥

यदि चन्द्रमा अपनी राशि या अपने उच्च में बैठा हो और लग्नेश तथा कार्येश ये भी दोनों अपने घर तथा अपने उच्च में स्थित होकर परस्पर इत्थशाल करते हों और यदि चन्द्रमा भी इनमें से किसी एक के साथ इत्थशाल योग करता हो तो वह कम्बूल नामक उत्तमोत्तम योग कहा जाता है। क्योंकि तीनों को उत्तम अधिकार प्राप्त है इसलिये पंडितों ने उत्तमोत्तम कहा है। यह पहला भेद है ॥ ३७ ॥

संतानप्रश्न में उत्तमोत्तम कम्बूलयोगचक्र।

उत्तम-मध्यम और केवल उत्तम कम्बूलयोग का लक्षण।

स्वीयहद्दादृकाणाङ्कभागस्थेनेत्थशालतः।
मध्यमोत्तमकम्बूलं हीनाधिक्रातिनोत्तमम् ॥ ३८ ॥

अपने हद्दा, अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांशों में लग्नाधिप तथा कार्याधिप होवें और आपस में इत्थशाल करते हों तथा चन्द्रमा अपने घर या अपने उच्च में विराजमान होकर लग्नेश या कार्येश में से किसी एक के साथ मुथशिल योग को करता हो तो उत्तम-मध्यम नामक कम्बूल योग होता है। क्योंकि चन्द्रमा को उत्तम अधिकार प्राप्त है और लग्नेश तथा कार्येश को मध्यम अधिकार प्राप्त है इसलिये उत्तम-मध्यम कहा है। ग्रंथकर्ता ने तो छन्दोभङ्ग के भय से 'मध्यमोत्तम' कहा है।

उदाहरण।

जैसे—किसी ने आकर पूछा कि मेरे भाग्य की वृद्धि होगी या नहीं, यदि होगी तो कब होगी? उस समय प्रश्न लग्न में तुला लग्न उसका स्वामी शुक्र दश अंशों से युक्त होकर दशवें भवन अपने हद्दा में बैठा है और भाग्येश बुध साढ़े चौदह अंशों से युक्त सातवें भवन अपने हद्दा में विराजमान है और इन दोनों का परस्पर मुथशिल योग भी देखा जाता है तथा चन्द्रमा चौदह अंशों से युक्त अपने घर कर्कराशि में विद्यमान होकर कार्येश के साथ मुथशिल योग करता है, इसलिये यह उत्तम-मध्यम नामक कम्बूल हुआ। इसी से प्रथम भाग्य की वृद्धि अधिक, फिर मध्यम कहनी चाहिए। यह दूसरा भेद है। अब इसका चक्र लिखते हैं।

उत्तम-मध्यम कम्बूलयोगचक्र।
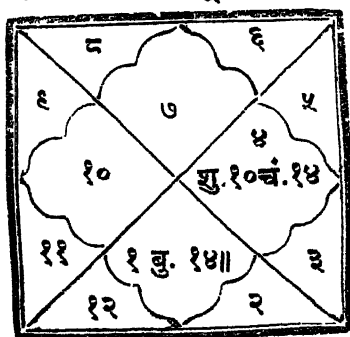
हीनाधिकृतिनोत्तमम्। उत्तम, मध्यम और अधम अधिकार से हीन लग्नाधीश तथा कार्याधीश का परस्पर मुथशिल योग हो और चन्द्रमा अपने घर या अपने उच्च में बैठकर मुथशिल योग करे तो उत्तम ही कम्बूलयोग होता है। क्योंकि केवल चन्द्रमा को उत्तम अधिकार प्राप्त है और अन्य लग्नेश तथा कार्येश का सम अधिकार है इससे यह उत्तम नामक कम्बूल योग कहा जाता है।

उदाहरण।

जैसे—किसी ने आकर पूछा कि मुझे राज्य की प्राप्ति होगी या नहीं? उस समय मिथुन लग्न का स्वामी बुध सम घर में स्थित है और राज्य-भवन का स्वामी बृहस्पति समघर कन्या राशि में बैठा है और चन्द्रमा अपने उच्च वृष राशि में विद्यमान है। इस प्रकार तीनों ग्रहों के परस्पर मुथशिल योग के होने से उत्तम नामक कम्बूल योग हुआ। इसी से उत्तम राज्य की प्राप्ति कहनी चाहिए। यह तीसरा भेद है॥ ३८॥

उत्तमकम्बूलचक्र ।

उत्तमाधम कम्बूल के लक्षण ।

उत्तमाधमतानीचरिपुगेहस्थितेन चेत् ।

आधे श्लोक से उत्तमाधम नामक कम्बूल योग का लक्षण कहते हैं। लग्नाधीश और कार्याधीश ये दोनों अपने नीचराशि या अपने शत्रु के घर में प्राप्त होकर आपस में इत्थशाल करें और चन्द्रमा अपने घर या अपनी उच्चराशि में प्राप्त होकर लग्नेश और कार्येश में से किसी एक के साथ मुथशिल करता हो तो उत्तमाधमनामक कम्बूल योग होता है। क्योंकि चन्द्रमा को उत्तम अधिकार प्राप्त है और लग्नेश तथा कार्येश को अधम अधिकार प्राप्त है इसलिये यह उत्तमाधम कहा है।

उदाहरण ।

जैसे–किसी पृच्छक ने आकर पूछा कि मुझे स्त्री की प्राप्ति होगी या नहीं ? उस समय तुला लग्न का स्वामी शुक्र दश अंशों से युक्त होकर अपने नीच कन्या राशि में बैठा है, और स्त्री भवन का स्वामी मंगल पंद्रह अंशों समेत अपने नीच कर्क राशि में विद्यमान है तथा चन्द्रमा भी बारह अंशों से युक्त होकर अपने घर (कर्कराशि) में विराजमान है और इनका परस्पर मुथशिल योग है अतः उत्तमाऽधम नामक कम्बूलयोग हुआ। इस कारण थोड़े प्रयास से स्त्री की प्राप्ति होगी। यह चौथा भेद है।

उत्तमाधम कम्बूलचक्र ।
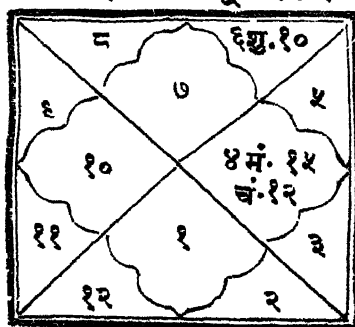
मध्यमोत्तम कम्बूलयोग के लक्षण ।

स्वहद्दादिगतश्चन्द्रः स्वभोच्चस्थेत्थशालकृत् ॥ ३९ ॥
मध्यमोत्तममेतच्च पूर्वस्मान्न विशिष्यते ।

अब मध्योमोत्तम नामक कम्बूल योग का लक्षण कहते हैं। चन्द्रमा अपने हद्दा आदि में हो परन्तु हद्दाचक्र में चन्द्रमा का अधिकार नहीं है किन्तु भौम आदि पाँच ग्रहों का ही अधिकार वर्तमान है इसलिये आदि शब्द से चन्द्रमा अपने द्रेष्काण या अपने नवांश में स्थित होकर अपने घर या अपने उच्चराशि में प्राप्त हो लग्नाधीश तथा कार्याधीश के साथ मुथशिल योग करे तो यह मध्यमोत्तम नामक कम्बूल योग होता है। क्योंकि चन्द्रमा को मध्यम अधिकार प्राप्त है और लग्नेश तथा कार्येश को उत्तम अधिकार प्राप्त है इसलिये यह मध्यमोत्तम नामक कम्बूलयोग हुआ। यह पूर्व कहे हुए उत्तम-मध्यम कम्बूल से विशेष फल देनेवाला नहीं है ॥३९॥

उदाहरण ।

जैसे किसी ने आकर पूछा कि मुझे स्त्री की प्राप्ति होगी या नहीं? उस समय तुला लग्न का स्वामी शुक्र चौबीस अंशों से युक्त होकर अपने घर लग्न में ही विराजमान है और भार्याभवन का स्वामी मंगल अट्ठाईस अंशों समेत अपने घर मेषराशि में विद्यमान है तथा चन्द्रमा वृष और कर्क को छोड़कर बाईस अंशों से युक्त अपने नवांश मकर राशि में बैठा है अतः इनका आपस में मुथशिल योग होने से मध्यमोत्तम नामक कम्बूलयोग हुआ इसलिये स्त्री की प्राप्ति उत्तमता से होगी। यह पाँचवाँ भेद है।

मध्यमोत्तम कम्बूलयोगचक्र ।

मध्यम-मध्यम कम्बूल के लक्षण ।

स्वहद्दादिपदस्थेन कम्बूलं मध्यमध्यमम् ॥ ४० ॥

अब मध्यम-मध्यम नामक कम्बूल योग का लक्षण कहते हैं । अपने हद्दा, अपने द्रेष्काण या अपने नवांश में बैठे हुए आपस में मुथशिल योग के करनेवाले लग्नाधीश तथा कार्याधीश के साथ अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश में स्थित हुआ चन्द्रमा यदि मुथशिल (इत्थशाल) योग करे तो मध्यम-मध्यम नामक कम्बूल योग होता है । क्योंकि लग्नाधिप, कार्याधिप और चन्द्रमा इन सबों का मध्यम अधिकार प्राप्त है इसलिये यह मध्यम-मध्यम नामक कम्बूल योग हुआ ॥ ४० ॥

उदाहरण ।

जैसे—किसी ने आकर पूछा कि मुझे सन्तान (लड़का व लड़की) की कबतक प्राप्ति होगी ? इस प्रश्न में मिथुन लग्न उसका स्वामी बुध तुलाराशि में आठ अंशों से युक्त होकर अपने हद्दा में विराजमान है और पुत्र भवन का स्वामी शुक्र आठ अंशों समेत मिथुन राशि के अपने हद्दा में विद्यमान है और चन्द्रमा तीन अंशों से युक्त होकर कर्कराशि के पहले द्रेष्काण में तथा अपने नवांश में है । यहाँ लग्नेश बुध, कार्याधिप शुक्र और चन्द्रमा इन तीनों का परस्पर मुथशिल योग है, इस कारण मध्यम-मध्यम नामक कम्बूल योग हुआ, इससे सन्तान की मध्यम प्राप्ति (बड़े यत्न से) होगी । यह छठा भेद है ।

मध्य-मध्यमकम्बूलयोगचक्र ।
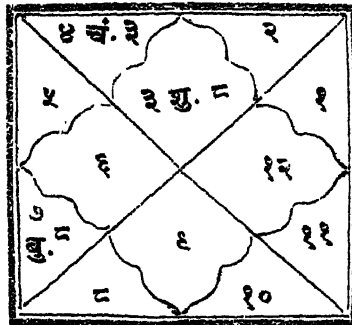
मध्यम कम्बूल के लक्षण ।

स्यान्मध्यमं मकम्बूलं हीनाधिकृतिखेटजम् ॥

अब मध्य नामक कम्बूल योग का लक्षण कहते हैं। हीन अधिकार-वाले ग्रहों से उत्पन्न मध्यम नामक कम्बूल योग होता है अर्थात् अपने उत्तम तथा मध्यम अधिकारों से रहित, सम अधिकार को प्राप्त परस्पर मुथशिलकारी लग्नाधीश तथा कार्याधीश के साथ अपने मध्यम अधिकार में स्थित होकर यदि चन्द्रमा मुथशिल (इत्थशाल) करे तो मध्यम नामक कम्बूल योग होता है, क्योंकि चन्द्रमा को मध्यम अधिकार प्राप्त है और लग्नेश तथा कार्येश को सम अधिकार प्राप्त है इसलिये यह मध्यमनामक कम्बूल योग सिद्ध हुआ। मकरुबूल कम्बूल का पर्यायवाची है।

उदाहरण।

जैसे—किसी ने आकर पूछा कि मुझे सन्तान की प्राप्ति होगी या नहीं? उस समय प्रश्न में वृष लग्न है उसका स्वामी शुक्र चार अंशों से युक्त मकर राशि में सम बुध के हद्दा में विद्यमान है और पाँचवें भवन का स्वामी बुध पाँच अंशों से युक्त तुला राशि सम हद्दा में बैठा है और चन्द्रमा तीन अंशों से युक्त कर्क राशि के अपने नवांश में विराजमान है तथा लग्नेश, कार्येश और चन्द्रमा इन सबका परस्पर मुथशिल योग है अतः मध्यम नामक कम्बूल योग हुआ। इसलिये सन्तति की प्राप्ति अति प्रयास से होगी। यह सातवाँ भेद है।

मध्यमकम्बूलयोगचक्र।
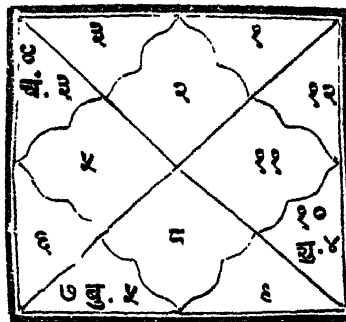
मध्यमाधम कम्बूलयोग के लक्षण।

मध्यमाऽधमकम्बूलं नीचारिभगखेटजम्॥ ४१॥

नीचघर तथा अपने शत्रु के घर में स्थित परस्पर मुथशिल योग के करनेवाले लग्नाधीश और कार्याधीश के साथ चन्द्रमा अपने द्रेष्काण में

या अपने नवांश में स्थित होकर यदि मुथशिल योग करे तो मध्यमाऽधम नामक कम्बूल योग होता है। क्योंकि चन्द्रमा मध्यम अधिकार को प्राप्त है और लग्नेश तथा कार्येश ये दोनों अधम अधिकार को प्राप्त हैं इसलिये यह मध्यमाऽधमनामक कम्बूल योग सिद्ध हुआ ॥ ४१ ॥

उदाहरण ।

जैसे—किसी ने आकर पूछा कि मेरे भाग्य की वृद्धि होगी या नहीं ? उस समय प्रश्न लग्न में मेष लग्न का स्वामी मङ्गल नीच कर्कराशि में बैठा है और भाग्यभवन का स्वामी बृहस्पति नीच मकरराशि में विराजमान है तथा चन्द्रमा कर्क राशि अपने द्रेष्काण में विद्यमान है और लग्नेश, कार्येश तथा चन्द्रमा—इन सबका परस्पर मुथशिल योग है इसलिये यह मध्यमाऽधम नामक कम्बूल योग हुआ। इससे भाग्य की वृद्धि परिश्रम से होगी। यह आठवाँ भेद है।

मध्यमाधमकम्बूलचक्र ।

द्वितीय उत्तम कम्बूलयोग का लक्षण ।

इन्दुः पदोनः स्वर्क्षोच्चस्थितेनाप्युत्तमन्तु तत् ॥

चन्द्रमा अपने स्वगृह उच्चादि अधिकारों से रहित समगृह आदि में स्थित हो अपनी राशि तथा अपने उच्च में प्राप्त आपस में मुथशिलयोग करते हुए लग्नाधीश तथा कार्याधीश के साथ यदि मुथशिल योग करे तो उत्तम कम्बूलयोग होता है। क्योंकि चन्द्रमा अधिकारों से शून्य है और लग्नेश तथा कार्येश ये दोनों उत्तम अधिकार को प्राप्त हैं इसलिये यह उत्तम नामक कम्बूल योग कहा है।

उदाहरण ।

जैसे—किसी ने आकर पूछा कि मुझे धन का लाभ होगा या नहीं ? उस समय प्रश्न में तुला लग्न का स्वामी शुक्र अपने घर तुला लग्न में ही

बैठा है और धन भवन का स्वामी मङ्गल अपने उच्च मकरराशि में स्थित है तथा चन्द्रमा समद्रेष्काण में मिथुनलग्न में स्थित है और लग्नेश, कार्येश तथा चन्द्रमा इन सबका परस्पर मुथशिल योग है अतः उत्तम नामक कम्बूल योग हुआ। इसी को पूर्वाचार्यों ने समोत्तम भी कहा है। इससे धन का लाभ अति उत्तमता से होगा। यह नववां भेद है।

समोत्तमकम्बूलयोग चक्र।
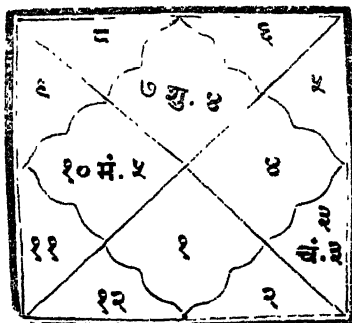
अन्य मध्यम कम्बूलयोग के लक्षण।

स्वहद्दादिगतेनापि पूर्ववन्मध्यमुच्यते ॥ ४२ ॥

अपने हद्दा, अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश में बैठे परस्पर मुथशिल करते हुए लग्नाधीश और कार्याधीश के साथ, समअधिकार में स्थित चन्द्रमा, यदि मुथशिल योग करे तो मध्यम नामक कम्बूल योग होता है। क्योंकि चन्द्रमा अधिकारों से शून्य है और लग्नेश तथा कार्येश ये दोनों मध्यम अधिकार में प्राप्त हैं इसलिये मध्यम नामक कम्बूल योग हुआ। यह पर्व कहे हुए मध्यम कम्बूल के समान फल का देनेवाला है ॥ ४२ ॥

उदाहरण।

जैसे-किसी ने आकर प्रश्न किया कि मुझे धन का लाभ होगा या नहीं? उस समय तुला लग्न का स्वामी शुक्र दश अंशों से युक्त सिंहलग्न में अपने हद्दा में बैठा है और धन भवन का स्वामी मंगल बाईस अंशों से युक्त धनराशि में अपने हद्दा में स्थित है और चन्द्रमा दश अंशों से युक्त मिथुन राशि में अपने मध्यम द्रेष्काण में बैठा है तथा लग्नेश शुक्र, कार्येश मंगल और चन्द्रमा इन सबका परस्पर मुथशिल (इत्थशाल) योग है अतः यह मध्यमनामक कम्बूलयोग है। इससे धन का लाभ मध्यम होगा। यह दशवाँ भेद है।

मध्यमकम्बूलयोगचक्र ।
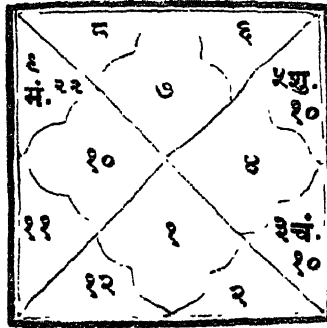
पुनः प्रकारान्तर से मध्यम कम्बूलयोग के लक्षण ।

पदोनेनापि मध्यं स्यादिति युक्तं प्रतीयते ।

दूसरे प्रकार के मध्यमनामक कम्बूलयोग का लक्षण कहते हैं-पदों से (उत्तम तथा मध्यम अधिकारों से) हीन परस्पर मुथशिल (मिलाप) को करते हुए लग्नाधीश तथा कार्याधीश के साथ, समअधिकार में बैठा हुआ चन्द्रमा यदि मुथशिल करे तो मध्यम नामक कम्बूलयोग होता है। यह हमको युक्तिसहित प्रतीत होता है। क्योंकि लग्नेश, कार्येश और चन्द्रमा इन सबको सम अधिकार प्राप्त है। इसलिये यह मध्यम (समसम) नामक कम्बूलयोग निष्पन्न हुआ।

उदाहरण ।

जैसे-धनलाभ के प्रश्न में मेषलग्न है और उसका स्वामी मंगल दश अंशों से युक्त सिंहराशि में बैठा है तथा धनभाव का स्वामी शुक्र दशअंशों समेत कुम्भराशि में स्थित है और चन्द्रमा दशअंशों से युक्त तुलाराशि में विराजमान है अतः इनका परस्पर मुथशिलयोग होने से मध्यम नामक कंबूलयोग हुआ। इससे धन की मध्यम प्राप्ति होगी। यह ग्यारहवां भेद है।

पुनः मध्यमकम्बूलयोगचक्र ।
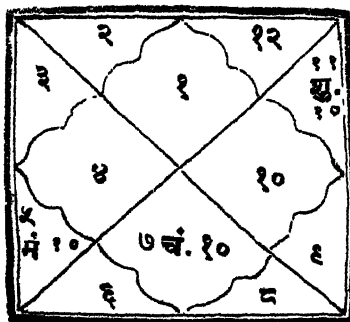
अधम कम्बूलयोग के लक्षण ।

नीचारिस्थेनेत्थशालेऽधमकम्बूलमुच्यते ॥ ४३ ॥

अपने नीच तथा अपने शत्रु की राशि में प्राप्त परस्पर मुथशिल योग करते हुए लग्नाधीश तथा कार्याधीश के साथ, सम अधिकार में बैठा हुआ चन्द्रमा यदि इत्थशाल (मिलाप) करे, तो अधम नामक कम्बूल योग होता है । क्योंकि चन्द्रमा को सम अधिकार प्राप्त है और लग्नेश तथा कार्येश इन दोनों को अधम अधिकार प्राप्त है । इसलिये यह अधम-नामक कम्बूल योग सिद्ध हुआ ॥ ४३ ॥

उदाहरण ।

जैसे—पुत्र प्राप्ति के प्रश्न में मिथुन लग्न है, उसका स्वामी बुध अपने नीच मीन राशि में बैठा है और पुत्र भवन का स्वामी शुक्र अपने नीच कन्याराशि में विराजमान है तथा चन्द्रमा अपने सम धनराशि अथवा मीन राशि में विद्यमान है और लग्नेश, कार्येश और चन्द्रमा इन तीनों का आपस में इत्थशाल है इससे यह अधम नामक कम्बूलयोग निष्पन्न हुआ । इससे पुत्र की प्राप्ति अधम (कष्टसाध्य) है । यह बारहवां भेद है ।

अधमकम्बूलयोगचक्र ।
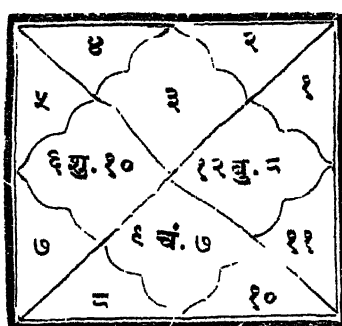
अधमोत्तम कम्बूलयोग के लक्षण ।

नीचशत्रुभगश्चन्द्रः स्वभोच्चस्थेत्थशालकृत् ।
अधमोत्तमकम्बूलं पूर्वतुल्यफलप्रदम् ॥ ४४ ॥

यदि चन्द्रमा अपने नीच घर में तथा शत्रु के घर में प्राप्त होकर अपने घर तथा अपने उच्च में बैठे आपस में इत्थशाल (मिलाप) करते हुए लग्नाधीश तथा कार्याधीश के साथ इत्थशाल करे तो अधमोत्तम नामक

कम्बूलयोग होता है क्योंकि चन्द्रमा का अधम अधिकार है और लग्नेश तथा कार्येश को उत्तम अधिकार प्राप्त है, इससे यह अधमोत्तम कहा जाता है । यह पूर्व कहे हुए कम्बूलयोग के समान फल का देनेवाला है ॥ ४४ ॥

उदाहरण ।

जैसे—सुख की प्राप्ति के प्रश्न में सिंह लग्न का स्वामी सूर्य अपने उच्च मेष राशि में बैठा है और सुखभवन (चौथे घर) का स्वामी मंगल अपने उच्च मकरराशि में स्थित है, तथा चन्द्रमा अपने नीच वृश्चिकराशि में बैठा है । इन तीनों का परस्पर मुथशिल योग होने से अधमोत्तम नामक कंबूल योग होता है । इससे सुख की प्राप्ति कुछ मेहनत करने से होगी । यह तेरहवां भेद है ।

अधमोत्तमकम्बूलयोगचक्र ।
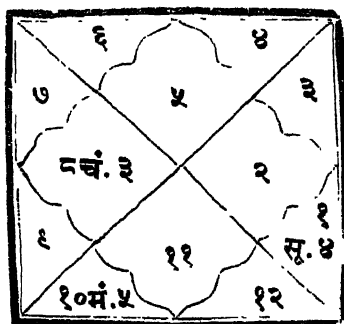
अधम-मध्यम कम्बूलयोग के लक्षण ।

चन्द्रो नीचारिगेहस्थः स्वहद्दादिगतेन चेत् ।
तदेत्थशालीकम्बूलमुच्यतेऽधममध्यमम् ॥ ४५ ॥

यदि चन्द्रमा अपने नीच घर में प्राप्त होकर अपने शत्रु के घर या अपने हद्दा या अपने द्रेष्काण अथवा अपने नवांश में स्थित आपस में मुथशिल करते हुए लग्नाधीश तथा कार्याधीश के साथ मुथशिल करे तो अधममध्यम नामक कंबूलयोग कहा जाता है । क्योंकि चन्द्रमा का अधम अधिकार है और लग्नेश तथा कार्येश इन दोनों को मध्यम अधिकार प्राप्त है । इस-लिये इसको अधममध्यम कहते हैं ॥ ४५ ॥

उदाहरण ।

जैसे—पुत्र की प्राप्ति के प्रश्न में कन्या लग्न का स्वामी बुध तीन अंशों से युक्त होकर अपने हद्दा मकर राशि में बैठा है तथा पुत्रभवन का स्वामी

शनैश्चर उन्तीस अंशों से युक्त होकर अपने हद्दा मीन राशि में विराजमान है और चन्द्रमा तीन अंशों से युक्त होकर अपने नीच वृश्चिक राशि में बैठा है अतः इन तीनों का परस्पर मुथशिल योग के होने से अधम-मध्यम नामक कम्बूल योग होता है। इससे संतति की प्राप्ति अत्यन्त प्रयास से होगी। यह चौदहवां भेद है।

अधम-मध्यमकम्बूलयोगचक्र।

अन्य अधमकम्बूलयोग के लक्षण।

इन्दुर्नीचारिगेहस्थः पदोनेनेत्थशालकृत्।
कम्बूलमधमं ज्ञेयं पूर्वतुल्यफलप्रदम्॥ ४६॥

यदि चन्द्रमा अपने नीच राशि व अपने शत्रु की राशि में स्थित हो तथा उत्तम, मध्यम और अधम अधिकारों से रहित परस्पर मुथशिल (मिलाप) को करते हुए लग्नाधीश तथा कार्याधीश के साथ मुथशिल योग करे, तो अधमनामक कम्बूलयोग होता है। क्योंकि चन्द्रमा को अधम अधिकार प्राप्त है और लग्नेश तथा कार्येश को सम अधिकार प्राप्त है, इससे अधमनामक कम्बूल कहा है। यह पूर्व कहे हुए कम्बूल योग के तुल्य फल को देता है।

उदाहरण।

जैसे—राज्य-प्राप्ति के प्रश्न में वृष लग्न का स्वामी शुक्र छः अंशों से युक्त सिंहराशि में बैठा है और राज्यभवन का स्वामी शनैश्चर दश अंशों से युक्त वृषराशि में स्थित है तथा तीन अंशों समेत चन्द्रमा अपने नीच वृश्चिक राशि में विद्यमान है। (लग्नेश शुक्र व राज्येश शनैचर

और चन्द्रमा) इन सबका परस्पर मुथशिलयोग होने से अधमकम्बूल योग होता है इससे राज्य की प्राप्ति बड़े कष्ट से होगी। यह पन्द्रहवां भेद हुआ ॥ ४६ ॥

अधम कम्बूलयोग का चक्र ।

अधमाधम कम्बूलयोग के लक्षण ।

नीचारिभस्थखेटेन नीचारिभगतः शशी ।
तदेत्थशाली कम्बूलमधमाधममुच्यते ॥ ४७ ॥

यदि चन्द्रमा अपनी नीचराशि या अपने शत्रु की राशि में स्थित होकर अपने नीच तथा अपने शत्रु की राशि में प्राप्त आपस में मुथशिल (मिलाप) करते हुए लग्नाधीश तथा कार्याधीश के साथ मुथशिल योग करे तो अधमाधम नामक कम्बूल योग कहा जाता है। क्योंकि चन्द्रमा और लग्नेश तथा कार्येश इन सबको अधम अधिकार प्राप्त है इसलिये यह अधमाधम नामक कम्बूल हुआ ॥ ४७ ॥

उदाहरण ।

जैसे—पुत्रलाभ के प्रश्न में धनलग्न का स्वामी बृहस्पति अपने नीच मकरराशि में स्थित है और पुत्रभवन का स्वामी मंगल अपने नीच कर्क-राशि में बैठा है और चन्द्रमा भी अपने नीच वृश्चिक राशि में स्थित है। और लग्नेश, कार्येश तथा चन्द्रमा इन तीनों का परस्पर मुथशिल योग देख पड़ता है अतः पूर्वोक्त इन तीनों के नीच होने से यह अधमाधम नामक कम्बूल योग हुआ। इससे सन्तति का लाभ नहीं होगा। ऐसा कहना चाहिए। यह सोलहवां भेद हुआ।

अधमाधम कम्बूलयोग का चक्र।
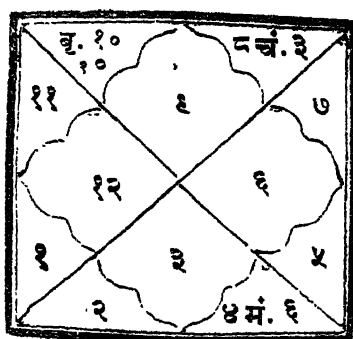
पूर्वोक्त षोडश कम्बूल भेदों में से उत्तमोत्तम कम्बूलयोग का उदाहरण।

मेषे रविः कुजो वापि वृषे कर्केऽथवा शशी।
तत्रेत्थशाली कम्बूलमुत्तमोत्तमकार्यकृत्॥ ४८॥

पुत्र प्राप्ति के प्रश्न में मेष लग्न है, उसका स्वामी मंगल अपने घर मेष राशि में वर्तमान है और पाँचवें भवन का स्वामी सूर्य अपने उच्च मेषराशि में विद्यमान है। अतः लग्नेश तथा कार्येश इन दोनों का परस्पर मुथशिल योग है। यदि चन्द्रमा अपने उच्च वृषराशि में या अपने घर कर्कराशि में से कहीं विद्यमान होकर पूर्वोक्त दोनों से मुथशिल (इत्थशाल) करे तो उत्तमोत्तम नामक कम्बूल योग होता है। यह उत्तम कार्यों (वांछितकार्यों) के फलों का देनेवाला होता है॥ ४८॥

उदाहरण।

जैसे—पुत्रलाभ के प्रश्न में मेषलग्न है उसका स्वामी मंगल मेष ही में ठा है और कार्येश सूर्य अपने उच्च मेष राशि में विद्यमान है तथा चन्द्रमा ी कर्क राशि में स्थित है। यहाँ लग्नेश, कार्येश और चन्द्रमा ये तीनों त्तम अधिकार में स्थित होकर आपस में मुथशिल (मिलाप) को करते । इस कारण से उत्तमोत्तम नामक कम्बूल योग निष्पन्न हुआ। इससे ुत्र का लाभ होगा यह कहना चाहिए।

उत्तमोत्तम कम्बूलयोग का चक्र ।

अन्तिम अधमाधम नामक कम्बूलयोग का उदाहरण ।

वृश्चिकस्थः शशी भौमः कर्के तत्रेत्थशालतः ।
अधमाधमकम्बूलं कार्यविध्वंसदुःखदम् ॥ ४६ ॥

पुत्रलाभ के प्रश्न में धन लग्न है, उसका स्वामी बृहस्पति अपने नीच मकर राशि में विद्यमान है और पुत्रभाव का स्वामी मङ्गल अपने नीच कर्क राशि में विराजमान है तथा चन्द्रमा अपने नीच वृश्चिक राशि में स्थित है । यहाँ चन्द्रमा तथा मङ्गल का इत्थशाल योग है और बृहस्पति तथा मंगल का भी आपस में मुथशिल (मिलाप) है इससे अधमाधम नामक कम्बूल योग होता है । यह अभीष्ट कार्यों का नाश करनेवाला तथा अनेक दुःखों का देनेवाला जानना चाहिए ॥ ४६ ॥

उदाहरण ।

जैसे—पुत्रलाभ के प्रश्न में धन लग्न का स्वामी बृहस्पति अपने नीच मकरराशि में स्थित है तथा पंचमेश मंगल अपने नीच कर्कराशि में विराजमान है और चन्द्रमा अपने नीच वृश्चिक राशि में बैठा है । यहाँ लग्नेश, कार्येश और चन्द्रमा ये तीनों अधम अधिकार में स्थित होकर आपस में इत्थशाल (मिलाप) करते हैं । इसलिये यह अधमाधमनामक कम्बूलयोग हुआ । इससे पुत्र का लाभ नहीं होगा । यह सोलहवाँ भेद हुआ ।

अधमाधम कम्बूलयोग का चक्र।

एवम्पूर्वोक्तभेदानामुदाहरणयोजना।
उक्तलक्षणसम्बन्धादूहनीया विचक्षणैः॥ ५० ॥

इस प्रकार पूर्व कहे हुए भेदों के उदाहरणों की योजना पंडितों को विचारनी चाहिए। क्योंकि लक्षण वाक्यों का स्पष्ट अर्थ है इसलिये ग्रंथकार ने पृथक् उदाहरण नहीं कहे हैं॥ ५० ॥

किसी के मत से एक राशि में स्थित शीघ्र गतिवाले तथा
मन्द गतिवाले ग्रहों का मुथशिलयोग।

मेषस्थेऽब्जे शनीत्यादि दृष्टान्तान्मन्दशीघ्रयोः।
एकर्क्षावस्थितादित्थशालादीनपरे जगुः॥ ५१ ॥

मेष राशि में चन्द्रमा बैठा हो और उसी में स्थित शनैश्चर के साथ यदि मुथशिल योग करे तो वह अधमाधमनामक कम्बूल योग होता है-इत्यादि दृष्टान्तों से शीघ्र गतिवाले और मन्द गतिवाले ग्रहों का ही मुथशिल (मिलाप) होता है, क्योंकि ये दोनों एक राशि में स्थित हैं इसलिये यह अधमाधम नामक कंबूल योग सिद्ध हुआ। इसी प्रकार अन्य आचार्य आदि शब्द से एक राशि में स्थित शीघ्र गतिवाले ग्रह और मन्दगतिवाले ग्रहों के ही ईसराफ आदि योगों को कहते हैं। ऐसे ही समरसिंह भी कहते हैं कि—

(मेषस्थेऽब्जे शनिना कर्कस्थे भूभुवा स्त्रियां कविना।
मकरस्थे गुरुणा सह मीनस्थेऽज्ञेन न शुभं च॥)

मेषराशि में चन्द्रमा बैठा हो क्योंकि दूसरा स्थान कहा नहीं है इससे अन्य आचार्यों ने कहा है कि मेष ही राशि में चन्द्रमा विराजमान हो

और उसी में बैठे हुए शनैश्चर के साथ यदि परस्पर मुथशिल (मिलाप) करे तो मध्यमाधम नामक कंबूल योग होता है। क्योंकि वहां चन्द्रमा मेष राशि में अपने घर तथा अपने उच्च अधिकार में नहीं है और अपने द्रेष्काण में भी नहीं है किन्तु अपने नवांश में विद्यमान है, और शनैश्चर अपने नीच घर में ही विद्यमान है इसलिये यह मध्यमाधम नामक कम्बूल कहा जाता है।

ऐसे ही कर्क राशि में चन्द्रमा स्थित हो और उसी अपने नीच घर कर्क राशि में बैठे हुए मंगल के साथ यदि परस्पर मुथशिल (इत्थशाल) योग करे तो उत्तमाधम नामक कम्बूल योग होता है। क्योंकि यहाँ चन्द्रमा अपने घर में बैठा है और मंगल अपने नीच में स्थित है इससे उत्तमाधम नामक कंबूल योग सिद्ध हुआ।

इसी प्रकार कन्याराशि में चन्द्रमा स्थित हो और उसी अपने नीच घर कन्या राशि में बैठे हुए शुक्र के साथ यदि इत्थशाल करे तो मध्यमाधमनामक कंबूलयोग होता है, क्योंकि चन्द्रमा अपने नवांश में विद्यमान है और शुक्र अपने नीच घर में स्थित है इससे मध्यमाधमनामक कंबूलयोग सिद्ध हुआ। इस उदाहरण में भी चन्द्रमा के द्रेष्काण का संभव नहीं है।

इसी प्रकार मकर राशि में चन्द्रमा बैठा हो और उसी अपने नीच घर मकर राशि में स्थित हुए बृहस्पति के साथ यदि मुथशिल करे तो मध्यमाधम कंबूल होता है। क्योंकि यहाँ चन्द्रमा अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश में है और बृहस्पति अपने नीच में है इसलिये अधमाधम नामक कंबूल कहा है। इस उदाहरण में भी बृहस्पति के द्रेष्काण का सम्भव नहीं होता है, तथा मीनराशि में चन्द्रमा विद्यमान हो और उसी अपने नीच घर मीन राशि में स्थित बुध के साथ यदि इत्थशाल (मिलाप) करे तो मध्यमाधम नामक कंबूल योग होता है। क्योंकि यहाँ चन्द्रमा अपने द्रेष्काण तथा अपने नवांश में है और बुध अपने नीच में विद्यमान है इससे मध्यमाधम नामक कंबूल कहा जाता है। यह पाँच उदाहरण शुभ फलों के देनेवाले नहीं होते हैं। यह समरसिंह का सिद्धांत है ॥५१॥

पूर्वोक्त आचार्यों के मत का खण्डन।

तदयुक्तं नीचगस्य नीचेन रिपुणा रिपोः।
इत्थशालं कार्यनाशीत्युक्तं तत्र यतः स्फुटम् ॥ ५२ ॥

एक राशि में स्थित शीघ्र गतिवाले ग्रह और मन्द गतिवाले ग्रहों के ही मुथशिल आदि योग विचारने चाहिए। यह जो कुछ आचार्यों का मत है वह अयुक्त है। इसका कोई प्रमाण नहीं पाया जाता है। क्योंकि लग्नाधीश तथा कार्याधीश इनमें से अपने नीचराशि में प्राप्त किसी एक ग्रह से दूसरे ग्रह का यदि इत्थशाल (मुथशिल) योग हो तो वह कार्यों (वांछित मनोरथों) का नाश करनेवाला होता है। ऐसा कहा गया दो ग्रहों का एक नीच स्थान होता नहीं है इससे उनका मत अप्रामाणिक है। इसी प्रकार लग्नेश तथा कार्येश का आपस में वैर रहने जो मुथशिलयोग होता है वह कार्यों का नाश करनेवाला होता है। यह समरसिंह के बनाये हुए ताजिकसञ्ज्ञातन्त्र में प्रकट अर्थ कहा है। उन्हीं का वाक्य यह है कि यदि नीच नीच के साथ मुथशिल (मिलाप) करे तथा शत्रु शत्रु के साथ मिलाप करे तो वह कंबूल वांछित कार्यों का देनेवाला नहीं होता है। इस योग में चन्द्रमा भी विनाशकारी होता है। यहाँ एक राशि में स्थित ग्रहों के दूसरे योग का अर्थात् (रिपुणा रिपोः) इस योग का संभव हो सक्ता है परन्तु (नीचगस्य नीचेन) इस योग का संभव किसी प्रकार से नहीं दीख पड़ता है और जो ग्रन्थकर्ता (नीलकण्ठ महाराजजी) ने लिखा है सो तो प्रतिष्ठित महात्माओं के बनाये हुए ग्रन्थों के लेख को अवलोकन कर लिख दिया है ॥ ५२ ॥

प्रकारान्तर से फलोत्पत्तिज्ञानार्थ कम्बूलयोग का भेद।

लग्नकार्यपयोरित्थशाले चैकोस्ति नीचगः।
स्वर्क्षादिपदहीनोन्योऽत्रेन्दुः कम्बूलयोगकृत् ॥ ५३ ॥

पूर्व अभिन्न अधिकार में (एक अधिकार में) बैठे हुए लग्नाधीश तथा कार्याधीश का चन्द्रमा के साथ मुथशिल योग के रहते कंबूलयोग कहा गया है। अब इस समय उन्हीं लग्नेश और कार्येश के अधिकार-भेद को कहते हैं। जहाँ लग्नेश तथा कार्येश का मुथशिल योग विचारना हो वहाँ उन्हीं लग्नेश तथा कार्येश में से एक अपने नीच राशि में बैठा हो और दूसरा ("स्वर्क्ष आदि पदों से हीन हो") अर्थात् अपने घर, अपने उच्च, अपने द्रेष्काण, अपने हद्दा, अपने नवांश, अपने नीच अथवा अपने शत्रु के घर में न हो किंतु सम अधिकार में बैठा हो और इसी

सम अधिकार में विद्यमान होकर चन्द्रमा यदि मुथशिल (मिलाप) को करे तो कंबूल नामक योग होता है ॥ ५३ ॥

दृष्टान्त समेत कम्बूलयोग का फल ।

तत्र कार्याल्पता ज्ञेया यथा जात्यन्यमर्थयन् ।
अन्यजातिः पुमानर्थं तथैतत्कवयो विदुः ॥ ५४ ॥

उस कंबूलयोग में कार्यों (वांछित कार्यों) की अल्पता जाननी चाहिए अर्थात् यह कंबूलयोग थोड़े फलों का देनेवाला होता है। दृष्टान्त-जैसे अन्य जातिवाला पुरुष विजातीय से जब याचना करता है तब थोड़े धन को पाता है। ऐसे ही यह कंबूलयोग थोड़े फलों का देनेवाला होता है। बराबर जातिवाला पुरुष अपने सदृश जातिवाले पुरुष से जब याचना करता है तब वह उसके लिये लज्जावश कभी कभी बहुत कुछ दे देता है। ऐसा ही इस योग को भी समझना चाहिए ॥ ५४ ॥

गैरिकम्बूल के कहने की इच्छा से शून्य मार्गग्रह का लक्षण ।

यस्याधिकारः स्वर्क्षादिः शुभो नाप्यशुभोऽपि च ।
केनाप्यदृश्यमूर्तिश्च सशून्याध्वग इष्यते ॥ ५५ ॥

जिस ग्रह का स्वर्क्ष आदि अधिकार अर्थात् अपना घर, अपना उच्च, अपना हद्दा, अपना द्रेष्काण या अपना नवांशावाला शुभ फलों का देने-वाला अधिकार नहीं दीख पड़े और अशुभ भी अधिकार न हो, अपना नीच घर तथा अपना शत्रुघरवाला अशुभ फलों का देनेवाला भी अधिकार न हो और किसी शुभग्रह से अथवा पापग्रह से देखा भी न जावे तो वह शून्याध्वग (शून्यमार्गगामी) कहा जाता है। इस अर्थ में प्रमाण वाक्य कोई नहीं दीख पड़ता है क्योंकि समरसिंह आदिक आचार्यों ने नहीं कहा है। इस कारण से इसे प्रमाणरहित समझना चाहिए ॥ ५५ ॥

शून्यमार्ग के लक्षण कहकर गैरिकम्बूल का लक्षण कहते हैं।

लग्नकार्येशयोरित्थशाले शून्याध्वगः शशी ।
उच्चादिपदशून्यत्वान्नेत्थशालोऽस्य केनचित् ॥ ५६ ॥
यद्यन्यर्क्षम्प्रविश्यैष स्वर्क्षोच्चस्थेत्थशालवान् ।
गैरिकम्बूलमेतत्तु पदोनेनाशुभं स्मृतम् ॥ ५७ ॥

लग्नाधीश तथा कार्याधीश का परस्पर मुथशिल (इत्थशाल) योग हो और वहाँ यदि चन्द्रमा शून्यमार्गगामी हो और उच्च आदि पदों से शून्य हो (अर्थात् अपने उच्च, अपने घर, अपने हद्दा, अपने द्रेष्काण, अपने नवांश, अपने नीच घर और अपने शत्रुघर इन स्थानों से रहित होने से चन्द्रमा शून्यमार्गगामी होता है)। ऐसे चंद्रमा के साथ यदि लग्नाधीश तथा कार्याधीश इनमें से किसी एक के साथ मुथशिल योग नहीं हो और ऐसा चन्द्रमा यदि राशि के अन्त में वर्तमान होकर आगे की राशि में प्रवेश करे और जिस राशि में प्रवेश किया हो वह राशि जिस ग्रह का अपना घर या अपना उच्च हो वह ग्रह इसी राशि में यदि बैठा हो और उसी ग्रह के साथ चन्द्रमा यदि मुथशिल (इत्थशाल) योग करे तो वह गैरिकंबूलसंज्ञक योग होता है । यह गैरिकंबूल पूर्व कहे हुए कंबूलभेदों के तुल्य फलों का देनेवाला होता है । यह विशेष जानना चाहिए । और यदि अन्य राशि में बैठा हुआ चन्द्रमा उसी राशि में स्थित स्वगृह आदि अधिकारों से रहित ग्रह के साथ मुथशिल (मिलाप) करे तो यह गैरिकम्बूल अशुभ फलों का देनेवाला होता है ॥ ५६ । ५७ ॥

गैरिकम्बूल का उदाहरण ।

लप्स्ये सुखमिति प्रश्ने सिंहलग्ने रविः क्रिये ।
अष्टांशैः सुखपः कुम्भे भौमोऽशै रविभिस्तयोः ॥ ५८ ॥
इत्थशालोऽस्ति तत्रेन्दुः कन्यायां चरमेंशके ।
स्वर्क्षादिपदहीनस्य नेत्थशालोऽस्ति केनचित् ॥ ५९ ॥
सस्वोच्चगेन शनिनान्यर्क्षस्थेनेत्थशालकृत् ।
गैरिकम्बूलमन्येन सहायाल्लाभदायकम् ॥ ६० ॥

जैसे किसी ने आकर पूछा कि मुझे सुख का लाभ होगा या नहीं ? उस समय सिंह लग्न का स्वामी सूर्य आठ अंशों से युक्त होकर मेष राशि में बैठा है और सुख भवन (चौथे घर) वृश्चिक का स्वामी मंगल बारह अंशों से युक्त होकर कुम्भ राशि में विद्यमान है, अतः इन लग्नाधीश तथा कार्याधीशों (रवि, भौम) का परस्पर मुथशिल (इत्थशाल) योग है । यहाँ इस योग के रहते चन्द्रमा कन्या राशि के चरम अंश (तीसवें अंश)

में वर्तमान शुभ अधिकार से हीन हुआ लग्नाधीश तथा कार्याधीश में से किसी के साथ मुथशिल को नहीं करता है, परन्तु तुला राशि में जानेवाला है । वह तुला राशि शनैश्चर का उच्च है उसी में बैठे हुए शनैश्चर के साथ शीघ्रगामित्व से तुला राशि में प्राप्त होकर चन्द्रमा मुथशिल योग करता है इससे यह गैरिकंबूल नामक योग हुआ । इसका फल यह है कि किसी तीसरे के सहाय से सुख का लाभ होगा । अब इसी कहे हुए योग में तुला राशि में बुध आदि ग्रह स्थित हो और उसका शुभ वा अशुभ अधिकार कोई नहीं हो और वहाँ बैठा हुआ चन्द्रमा यदि बुध के साथ मुथशिल (मिलाप) करे तो यह गैरिकंबूल योग अशुभ फलों का देनेवाला होता है, यह जानना चाहिए । इस उदाहरण में कोई प्रमाण वाक्य नहीं दीख पड़ता है, क्योंकि समरसिंह आदिकों ने नहीं कहा है । इस लिये इसे प्रमाणरहित समझना चाहिए ॥ ५८-६० ॥

गैरिकम्बूलयोग का चक्र ।

खल्लासरयोग के लक्षण ।

शून्येऽध्वनीन्दुरुभयोर्नेत्थशालो न वा युतिः ।
खल्लासरो न शुभदः कम्बूलफलनाशनः ॥ ६१ ॥

जो शून्यमार्गगामी चन्द्रमा लग्नाधीश या कार्याधीश के साथ मुथशिल योग नहीं करे अथवा वह चन्द्रमा लग्नाधीश तथा कार्याधीश से युक्त नहीं हो तो वह खल्लासरनामक योग होता है । यह कंबूलयोग के फल को नाश करता हुआ शुभ फलों (वांछितकार्यों) का देनेवाला नहीं होता है । यहाँ 'केनचिदेकेन' इस पद का अध्याहार करना चाहिए क्योंकि समरसिंह आदिकों ने कहा है इसलिए 'लग्नाधीश तथा कार्याधीश का

परस्पर मुथशिल योग हो और पूर्वोक्त लक्षण से चन्द्रमा शून्यमार्ग में बैठा हो तथा लग्नेश या कार्येश इनमें से किसी एक के साथ मुथशिल (मिलाप) नहीं करता हो अथवा लग्नेश या कार्येश से युक्त भी नहीं हो तो वह खल्लासरनामक योग जानना योग्य है । यह कंबूलयोग के फल को नाश करके शुभफलों का देनेवाला नहीं होता है । मुथशिलयोग के रहते अथवा केवल योग के विद्यमान रहते पूर्ण कंबूलयोग होता है परन्तु यहाँ किसी के भी साथ मुथशिलयोग नहीं है और न किसी से युक्त है इसलिये कंबूल के फल को नाश करता है । यह सिद्धांत जानना चाहिए॥६१॥

रद्दयोग का लक्षण ।

अस्तनीचरिपुवक्रहीनभा दुर्बलो मुथशिलं करोति चेत् ।
नेतुमेष न विभुर्यतो महोऽन्ते मुखेऽपि न स कार्यसाधकः ६२

जो ग्रह अस्त हो गया हो अथवा नीच घर में बैठा हो या शत्रु घर में स्थित हो अथवा वक्री हो या तेजोरहित हो ऐसा ग्रह दुर्बल जानना चाहिए । यदि दुर्बल (बलहीन) ग्रह किसी भाव के स्वामी के साथ मुथशिल (मिलाप) करे तो वह ग्रह अन्त में और आदि में भी उस भाव के कार्यों का साधक नहीं होता है क्योंकि यह ग्रह तेज लेने को समर्थ नहीं होता है ॥ ६२ ॥

रद्दयोगकारक निर्बलग्रह का स्थानविशेष से तथा समयविशेष से फलपाक ।

केन्द्रस्थ आपोक्लिमगं युनक्ति भूत्वादितो नश्यति कार्यमन्ते ।
आपोक्लिमस्थो यदि केन्द्रयातं विनश्य पूर्वं भवतीह पश्चात् ॥

यदि कार्याधीश दुर्बल हो और केन्द्र १ । ४ । ७ । १० स्थान में स्थित होकर आपोक्लिम ३ । ६ । ९ । १२ स्थान में बैठे हुए लग्नाधीश के साथ मुथशिल (मिलाप) करे तो आदि में विशेष कार्य होकर अन्त में नाश हो जाता है और यदि बलहीन कार्याधीश आपोक्लिम में स्थित होकर केन्द्र में टिके हुए लग्नाधीश के साथ मुथशिल योग करे तो पहले विशेष कार्य नाश को प्राप्त होकर पश्चात् सिद्धावस्था को पहुँचता है यह कहना चाहिए ॥ ६३ ॥

रद्दयोग का उदाहरण ।

लग्नेश मंगल, भाग्येश बृहस्पति तथा सूर्य और शनि कन्या के १०-१० अंश में हैं । यहाँ लग्नेश और कार्येश अस्तंगत और पापयुक्त छठे स्थान में होने से रद्द योग हुआ । यह भाग्यनाशक है ।
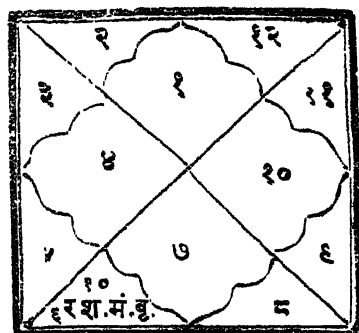
दूसरा उदाहरण ।

लग्नेश बारहवें स्थान में दुर्बल है और भाग्येश बृहस्पति मकर में नीच का दश अंश में है । यहाँ शीघ्र गति मङ्गल आपोक्लिम १२ में बैठकर केन्द्रस्थित मन्द गति गुरु के साथ इत्थशाली होने से यह रद्दयोग पहले अशुभ होकर पीछे शुभ देता है ।

अथ दुफालिकुत्थयोग का लक्षण ।

मन्दः स्वभोच्चादिपदे स्थितश्चे-
त्पदोनशीघ्रेण कृतेत्थशालः ।
तत्रापि कार्यं भवतीति वाच्यं
वक्रादिनिर्वीर्यपदेन चेत्स्यात् ॥ ६४ ॥

मन्द गतिवाला ग्रह अपने घर, अपने उच्च, अपने द्रेष्काण, अपने हद्दा या अपने नवांश में स्थित हो और शुभ अधिकार से रहित शीघ्र गति-वाले ग्रह के साथ मुथशिल योग करता हो तो अभीष्ट कार्य होता है, यह कहना चाहिए । यदि शीघ्र गतिवाला ग्रह अस्त हो अथवा अपने नीच घर या शत्रु घर में स्थित हो अथवा वक्री हो तो वांछित कार्य की सिद्धि नहीं होती है । यह दुफालीकुत्थयोग है ॥ ६४ ॥

उदाहरण ।

दुफालीकुत्थयोगचक्र ।

सुख के प्रश्न में लग्नेश मङ्गल मेष के १२ अंश पर है और सुखस्थान का मालिक चन्द्रमा कुम्भ के दश अंश पर इत्थशाल करता है । यहाँ मङ्गल पदयुक्त है तथा चन्द्रमा पदहीन है अतः यह दुफालीकुत्थ योग सुखप्राप्ति यत्न से करता है ।
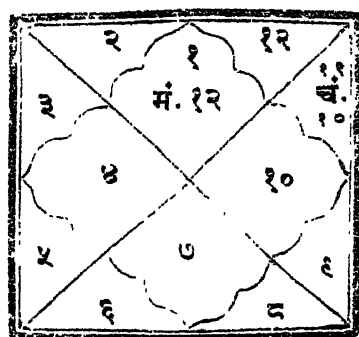
दुत्थोत्थदिवीरयोग के लक्षण ।

वीर्योनितौ कार्यविलग्ननाथौ
स्वर्क्षादिगेनान्यतरो युनक्ति ।
अन्यौ यदा द्वौ बलिनौ तदान्य-
साहाय्यतः कार्यमुशन्ति सन्तः ॥ ६५ ॥

लग्नाधीश तथा कार्याधीश ये दोनों बलहीन हों अर्थात् अस्तंगत हों अथवा अपने नीच घर या अपने शत्रु के स्थान में विद्यमान हों अथवा वक्री होकर तेजोरहित हों इत्यादि उक्त रीति से निर्बल हों और उन लग्नेश कार्येशों में से कोई एक, अपने घर या अपने उच्च, अपने द्रेष्काण, अपने हद्दा अथवा अपने नवांश में बैठे हुए तीसरे के साथ मुथशिल (मिलाप) करे तो अन्य किसी की सहायता से वांछित कार्य का लाभ होगा ऐसा सन्तजनों ने कहा है । अथवा जब दो अन्य ग्रह अपने घर, अपने उच्च, अपने हद्दा आदि अधिकारों में प्राप्त होकर बलिष्ठ होवें और लग्नाधीश तथा कार्याधीश इनमें से किसी एक के साथ मुथशिल (मिलाप) करते हों तो भी किसी अन्य की सहायता से कार्य का लाभ होगा । ऐसा महात्माजनों ने दुत्थोत्थदिवारयोग कहा है ॥ ६५ ॥

दुत्थोत्थदिवीर का उदाहरण। दुत्थोत्थदिवीरयोगचक्र।

किसी ने पूछा मुझे स्त्री का लाभ होगा या नहीं ? यहाँ लग्नेश सूर्य अपने नीच तुला में है और स्त्री-भावेश शनि अपने नीच मेष में बलवान् स्वगृही मङ्गल के साथ बैठा है अतः लग्नेश कार्येश के निर्बल होने पर भी बलवान् मङ्गल के योग से दूसरे की सहायता से स्त्री की प्राप्ति होगी।
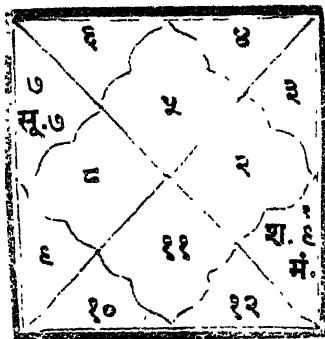
द्वितीयदुत्थोत्थदिवीरयोगचक्र।

अथवा

दो शीघ्र गतिग्रह मङ्गल और सूर्य अपने गृह में तथा उच्च में होने से बलवान् हैं तथा कार्येश शनि के साथ इत्थशाल करते हैं अतः दूसरे की सहायता से स्त्री की प्राप्ति होगी।
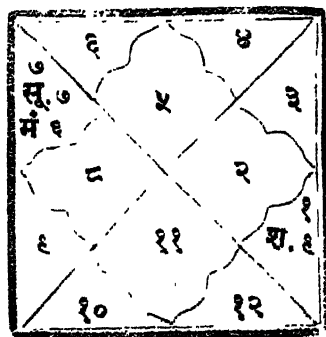
तम्बीरयोग का लक्षण।

बली राश्यन्तगोऽन्यर्क्षगामी दीप्तांशकैर्महः।
दत्तेऽन्यस्मै कार्यकरस्तम्बीरो लग्नकार्ययोः॥ ६६॥

जब लग्नेश और कार्येश का परस्पर मुथशिल योग न हो, इनमें से कोई बलवान् ग्रह राशि के अन्तिम (तीसवें) अंश में वर्तमान होकर अगली राशि में जानेवाला हो तो वह ग्रह अगली राशि में टिके हुए ग्रह के लिये (महः) तेज को देता है इसलिये वह तम्बीर नामक योग होता है। इसे यवन भाषा में तदबीर कहते हैं। यदि अगली राशि में गमन करनेवाला ग्रह अपने घर, अपने उच्च, अपने हद्दा या अपने द्रेष्काण आदि बलों से युक्त हो तो वह योग वांछित कार्यों का देनेवाला तम्बीर योग होता है॥ ६६॥

उदाहरण।

लम्बीरयोग चक्र।

जैसे किसी ने पूछा मुझे सुख मिलेगा या नहीं? उस समय लग्नेश शुक्र कर्क के १० अंश पर है और कार्येश शनि कुम्भ के २६ अंश पर है अतः इनका परस्पर इत्थशाल नहीं है परन्तु शनि मीन राशि में जानेवाला है, वहाँ मीन के ५ अंश पर गुरु वर्तमान है अतः शनि-गुरु का इत्थशाल होने से शनि गुरु को अपना तेज देता है। इसलिए सुखप्राप्ति होगी।
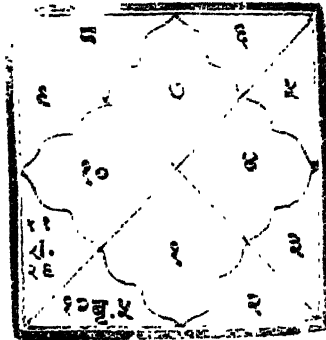
कुत्थयोग के लक्षण।

लग्नेऽथ केन्द्रे निकटेऽपि वास्य
विलग्नदर्शी स्वगृहोच्चहृके।
मुसल्लहे स्वे निजहद्दगो वा
बली ग्रहो मध्यगतिस्त्वशीघ्रः॥ ६७॥

यहाँ कुत्थ शब्द से यवन भाषा में बली ग्रह कहा जाता है। बल अनेक प्रकार का होता है। उनमें से कुछ भेदों को कहते हैं। सब स्थानों की अपेक्षा लग्न में बैठा हुआ रव्यादि ग्रह बली होता है। उसके अभाव में चौथे, सातवें, दशवें स्थान में स्थित ग्रह बलिष्ठ होता है। परन्तु लग्न में बैठे हुए ग्रह की अपेक्षा अन्य केन्द्रस्थ न्यूनबली होता है। केन्द्र के अभाव में उसके समीप पणफर (दूसरे, पाँचवें, ग्यारहवें) स्थान में बैठा हुआ ग्रह बली होता है परंतु केन्द्रस्थ की अपेक्षा इसको न्यूनबली जानना। पणफर के अभाव में जो ग्रह लग्न को देखता है वह बली कहा जाता है। अर्थात् तीसरे या नवें स्थान में बैठा हुआ ग्रह बलिष्ठ होता है अथवा इस केन्द्र के समीप पणफर अथवा आपोक्लिम में स्थित होकर लग्न को देखनेवाला ग्रह बलवान् होता है। (तीसरे, पाँचवें, नवें या ग्यारहवें स्थान में स्थित लग्न को देखता हुआ ग्रह बली होता है)। अन्य ग्रंथों में छठे, आठवें और बारहवें स्थानों को छोड़कर पणफर आपोक्लिमों का निकट पद से संग्रह किया है। इस ग्रन्थ में छठे आदि घरों में भी

गणितागत दृष्टि के रहते कथंचित् ग्रह बली होता है, ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है। तथा जो ग्रह अपने घर, अपने उच्च, अपने द्रेष्काण, अपने नवांश और अपने हद्दा में वर्त्तमान है वह बली होता है तथा मध्य गति-वाला अर्थात् ५९ कला और पाँच ५ विकलावाला ग्रह और अल्प गति-वाला ग्रह बली होता है ॥ ६७ ॥

कुत्थ के अन्य प्रकार।

कृतोदयो मार्गगतिः शुभेन युतेक्षितः क्रूरखगस्य दृष्ट्या।
क्षुताख्ययानाधिगतो न युक्तः क्रूरेण सायं च सितेन्दुभौमाः॥
यदोदयन्तेऽपररात्रिभागे जीवार्कजावह्नि नराः सवीर्याः।
अन्ये निशीनस्य नवैकभागे स्थिताः स्थिरर्क्षे च बलेन युक्ताः॥

जिस ग्रह ने उदय किया है वह बली होता है। जो ग्रह मार्गी हो तथा शुभ ग्रहों से युक्त वा देखा जाता हो उसको बली कहते हैं। तथा जो पापग्रहों की क्षुताख्या (चौथी, दशवीं, सातवीं या पहली) दृष्टि से नहीं देखा जाता हो वह ग्रह बली होता है। जो ग्रह क्रूर ग्रहों से युक्त नहीं हो वह बली कहा जाता है। इस प्रकार सामान्यता से ग्रहों के बल को कहकर 'समयबल' को कहते हैं। शुक्र, चन्द्रमा और मंगल ये तीनों ग्रह जब सायंकाल में उदय होते हैं तब बली होते हैं। बृहस्पति और शनैश्चर ये दोनों ग्रह आधी रात्रि के उपरान्त बली कहे जाते हैं तथा पुरुष संज्ञक सूर्य, मंगल और बृहस्पति ये दिन में बली होते हैं। इनसे अन्य ग्रह चन्द्रमा, बुध, शुक्र, शनैश्चर ये चारों रात्रि में बली होते हैं। सूर्य जिस नवांश में बैठा हो उसी राशि में यदि अन्य ग्रह स्थित हों तो बली होते हैं। इसी से (अन्ये निशीनस्य नवैकभागे स्थिताः) ऐसा पाठ साधु है और (अन्ये निशीनस्य तथैकभागे) ऐसा भी पाठ कितनेक आचार्य पढ़ते हैं क्योंकि समरसिंह ने भी कहा है—

(सूर्यस्य नैकभागे स्थिरराशौ वा तदा च ते बलिनः) अर्थात् सूर्य जिस राशि के नवांश में विद्यमान हो उसी राशि के नवांश में यदि ग्रह हों तो भी बली होते हैं अथवा स्थिर राशि में ग्रह स्थित हों तो वे भी बली कहाते हैं। ऐसा समरसिंह का मत है। कहीं (सूर्यस्य चैकभागे) ऐसे पाठ को धरकर 'एकभाग' अर्थात् जिस एक राशि नवांश में सूर्य

हो और अन्य ग्रह भी उसी में विद्यमान हों तो बली होते हैं। ऐसी व्याख्याकारों ने व्याख्या की है सो ठीक नहीं है, क्योंकि ऐसी व्याख्या में अस्तंगत ग्रह का ही संभव होता है परन्तु अस्तंगत ग्रह किसी ग्रन्थ में बली नहीं सुना गया है प्रत्युत इस ग्रन्थ में ही निर्बल सुना जाता है। इसी से (सूर्यस्य नैकभागे) ऐसा युक्त (शुद्ध) पाठ जानना चाहिए। यह अनेक आचार्यों की व्याख्या है। इसमें भी अस्तंगत ग्रह का ही सर्वथा संभव दीख पड़ता है इससे इस पाठ को भी ठीक नहीं समझना चाहिए। वास्तव में (अन्ये निशानस्य नवैकराशौ स्थिताः) ऐसा पाठ होना चाहिए। जैसे कि कन्या राशि में सूर्य है और बीस अंशों पर विराजमान होकर मिथुन के नवांश में स्थित है। यदि इसी मिथुन में ग्रह विद्यमान हों तो उन्हें बलवान् जानना चाहिए। तथा स्थिर राशियाँ वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ में बैठे हुए ग्रह बलिष्ठ कहे जाते हैं ॥ ६८ । ६९ ॥

अन्य भेद ।

स्त्रियश्चतुर्थात्पुरुषा वियद्वा-
द्रूषट्कगा ओजभगाः पुमांसः ।
समे परे स्युर्बलिनो विमृश्य
विशेषमेतेषु फलं निगद्यम् ॥ ७० ॥

स्त्रीसंज्ञक ग्रह चौथे से ले के नवम पर्यन्त बली होते हैं और पुरुषसंज्ञक ग्रह दशवें से लेकर तीसरे स्थान पर्यन्त बली कहे जाते हैं तथा विषम राशि में बैठे हुए पुरुष ग्रह अतिशय बलवाले होते हैं और अपर स्त्रीसंज्ञक ग्रह समराशि में विद्यमान हों तो बली होते हैं। इन पूर्वोक्त अनेक बल भेदों में विशेष शुभ अधिकार को विचारकर शुभ फल कहना चाहिए ॥ ७० ॥

दुरफयोग के लक्षण ।

लग्नात्षष्ठाष्टमेऽन्त्येऽनृजुररिगृहगो नीचगो वक्रगामी
क्रूरैर्युक्तोऽस्तगो वा यदि च मुथशिली क्रूरनीचारिभस्थैः ॥
क्षुद्दृष्ट्या क्रूरदृष्टो व्ययरिपुमृतिगैरित्थशालं विधित्सुः
कुर्वन्वा निर्बलो यः स्वगृहनगभगो राहुपुच्छास्यवर्ती ॥ ७१ ॥

यहाँ दुरफ निर्बल को कहते हैं। वह निर्बलत्व अनेक प्रकार का है। इसी के कुछ भेद ये हैं। वर्षलग्न, मासलग्न, दिनलग्न या प्रश्नलग्न से जो कोई ग्रह छठे, आठवें अथवा बारहवें स्थान में विद्यमान हो तो वह निर्बल होता है। ऐसे ही वक्रगतिवाला शत्रुघर में बैठा हुआ तथा नीच राशि में बैठा हुआ ग्रह निर्बल होता है। तथा वक्राभिलाषी और क्रूर-ग्रहों से युक्त ग्रह निर्बल होता है। अथवा पापग्रहों या शत्रुराशि में बैठे हुए ग्रहों या नीचराशि में स्थित हुए ग्रहों के साथ जो ग्रह मुथशिल करता है वह निर्बल होता है। और यदि पापग्रहों से क्षुतदृष्टि (पहले, चौथे, सातवें, दशवें स्थानगत दृष्टि) करके जो ग्रह देखा जाता है वह भी बलहीन होता है। जो ग्रह बारहवें, छठे या सातवें स्थान में बैठे हुए ग्रहों के साथ इत्थशाल करने की इच्छा करे अथवा करता ही हो तो भी उसे निर्बल कहते हैं। अथवा अपने घर से सातवीं राशि में जो ग्रह बैठा हो वह निर्बल होता है। जैसे—मङ्गल का मेष स्थान है, इससे सातवीं तुला राशि हुई। यदि इसमें कोई ग्रह बैठा हो तो उसे निर्बल कहते हैं। और राहु की पूंछ या मुख में जो ग्रह वर्तमान हो तो वह बली नहीं होता है। 'राहु के भुक्त अंश पूँछ और भोग्य अंश मुख जानना चाहिए' वहाँ जो ग्रह बैठा हो तो उसे बलहीन समझना चाहिए ॥ ७१ ॥

अन्य शुभ प्रकार कहते हैं।

अनीक्षमाणस्तनुमस्तभागस्थितः स्वभोच्चादिपदैश्च शून्यः।
क्रूरेसराफी न स वीर्ययुक्तः कार्यं विधातुं न विभुर्यतोऽसौ॥७२॥

जो ग्रह लग्न को नहीं देखता है वह निर्बल होता है। और जो ग्रह अस्त भाग में बैठा हो अर्थात् सूर्य जिस राशिनवांश में हो उससे सातवें नवांश में बैठा हो वह ग्रह निर्बल होता है। क्योंकि समरसिंह ने कहा है कि (सूर्यास्तभागसस्थः) सूर्य जिस राशि के नवांश में हो उससे सातवें नवांश में स्थित ग्रह बलहीन जानना चाहिए। तथा जो ग्रह अपने घर, अपने उच्च, अपने द्रेष्काण या अपने नवांश आदि अधिकारों से शून्य हो तो वह भी निर्बल होता है और जो ग्रह पापग्रहों के साथ ईसराफ योग करे, वह वीर्ययुक्त नहीं होता है। बल से हीन होने से ग्रह वांछितकार्यों का करने के लिये समर्थ नहीं होता है। इसलिए आचार्यों ने उस ग्रह को निर्बल कहा है ॥ ७२ ॥

चन्द्रमा का निर्बलत्व दुरफयोग ।

चन्द्रस्सूर्याद्द्वादशो वृश्चिकाद्ये
खण्डे नेष्टोऽन्त्ये तुलायां विशेषात् ।
राशीशेनादृष्टमूर्तिर्न सर्वै-
र्दृष्टो ज्ञेयः शून्यमार्गी पदोनः ॥ ७३ ॥

सूर्य जिस राशि में बैठा हो उससे बारहवें स्थान में यदि चन्द्रमा स्थित हो तो उसे निर्बल कहते हैं । ऐसे ही वृश्चिक के पहले खण्ड (पूर्वार्द्ध) में चन्द्रमा स्थित हो तो वह अशुभ फलों का देनेवाला होता है । और तुला राशि के अन्त्यखंड (उत्तरार्द्ध) में बैठा हुआ चन्द्रमा विशेष करके इष्टफलों का देनेवाला नहीं होता है । जिस राशि में चन्द्रमा स्थित हो उसी राशि के स्वामी से यदि देखा न जावे तो वह निर्बल होता है । अथवा संपूर्ण ग्रहों से नहीं देखा जाता हो तो भी निर्बल समझना चाहिए । यदि चन्द्रमा कहे हुए शून्यमार्ग में टिका हो तो उसे निर्बल जानना चाहिए अर्थात् शून्यमार्ग में बैठा हुआ चन्द्रमा अधिकारहीन होने से अशुभ फलों का देनेवाला होता है ॥ ७३ ॥

चन्द्रमा का अन्य दुरफयोग ।

क्षीणो भान्त्ये नो शुभो जन्मकाले
पृच्छायां वा चन्द्र एवं विचिन्त्यः ।
शुक्ले भौमः कृष्णपक्षेऽर्कसूनुः
सुदृष्ट्येन्दुं वीक्षते नो शुभोऽसौ ॥ ७४ ॥

क्षीण चन्द्रमा निर्बल होता है । कृष्णपक्ष की अष्टमी से शुक्लपक्ष की अष्टमी पर्यन्त चन्द्रमा क्षीण रहता है । अथवा कृष्णपक्ष की एकादशी से शुक्लपंचमी पर्यन्त क्षीण चन्द्रमा होता है । यह किसी आचार्यों का मत है । ऐसे ही राशि के अन्तिम अंश में वर्तमान चन्द्रमा को निर्बल कहते हैं अर्थात् राशि के अन्तिम नवांश में वर्तमान चन्द्रमा शुभफलों का देनेवाला नहीं होता है । इसी प्रकार जन्म लग्न में तथा प्रश्नलग्न में चन्द्रमा विचिन्त्य है । व शुक्लपक्ष में मंगल और कृष्णपक्ष में शनैश्चर तेजोयुक्त नहीं होते हैं । यदि ये दोनों चन्द्रमा को सुत (४, ७, १०, १)

दृष्टि से देखते हों तो वह चन्द्रमा शुभ फलों को नहीं देता है । यह सिद्धांत जानना चाहिए ॥ ७४ ॥

योगविशेष से शुभ चन्द्रमा की दोषाल्पता ।

शुक्ले दिवा नृगृहगोऽर्कसुतः शशाङ्कं
कृष्णे कुजो निशि समर्क्षगतः प्रपश्येत् ।
दोषाल्पतां वितनुतेऽपरथा बहुत्वं
प्रश्नेऽथवा जनुषि बुद्धिमतोहनीयम् ॥ ७५ ॥

शुक्लपक्ष में दिन के समय पुरुष राशि मेष, मिथुन, सिंह आदिकों में स्थित शनैश्चर यदि चन्द्रमा को देखता हो तो अल्प दुरफयोग होता है, अन्यथा यदि शनैश्चर चन्द्रमा को न देखता हो तो दुरफयोग की बहुलता होती है । तथा कृष्णपक्ष में रात्रि के समय समराशि वृष, कर्क, कन्या आदिकों में स्थित मंगल यदि चन्द्रमा को देखता हो तो दुरफयोग की न्यूनता होती है । यदि मंगल चन्द्रमा को न देखता हो तो बहुत दोषों को प्रकट करता है । यह प्रश्नलग्न, जन्मलग्न अथवा वर्षलग्न से बुद्धिमान् पंडितों को विचारना चाहिए । ये सोलह योग समाप्त हुए ॥ ७५ ॥

सब ग्रहों के चार हर्षस्थानों का वर्णन करते हैं ।

नन्दात्रिषट्लग्नभवर्क्षपुत्र-
व्यया इनाद्धर्षपदं स्वभोचम् ।
त्रिभं त्रिभं लग्नभतः क्रमेण
स्त्रीणां नृणां रात्रिदिने च तेषाम् ॥ ७६ ॥

पहले हर्षस्थान कहते हैं । सूर्य आदि संपूर्ण ग्रहों के नवम आदि घर क्रम से हर्षद होते हैं । जैसे लग्न से नवें स्थान में स्थित सूर्य हर्षित होता है । तीसरे चंद्रमा, छठे मङ्गल, लग्न में बुध, ग्यारहवें बृहस्पति, पाँचवें शुक्र और बारहवें स्थान में स्थित शनैश्चर हर्षित होता है ।

अब दूसरे हर्ष स्थान दिखाते हैं—जब ग्रह अपने घर या अपने उच्च में बैठा हो तो उसे हर्षित जानना चाहिए । जो बल अपने घर में कहा है वही बल अपने उच्च में भी जानना । दोनों में पाँच बिस्वा का बल होता है दोगुना बल आचार्यों ने नहीं कहा है ।

अब तीसरे हर्ष स्थान को कहते हैं कि लग्न से तीन-तीन राशियाँ क्रम से स्त्रीसंज्ञक ग्रहों और पुरुषसंज्ञक ग्रहों का हर्षपद होता है अर्थात् लग्न से दूसरी या तीसरी राशि में बैठे हुए स्त्रीसंज्ञक ग्रह हर्षित होते हैं और उससे तीन राशियों (चौथे, पाँचवें और छठे स्थान) में टिके हुए पुरुषसंज्ञक ग्रह हर्षद होते हैं। पुनः सातवें, आठवें और नवें स्थान में विद्यमान स्त्रीसंज्ञक ग्रह हर्षित होते हैं। पुनः दशवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थान में स्थित पुरुषसंज्ञक ग्रह हर्षित होते हैं।

अब चौथे हर्षस्थान को कहते हैं कि स्त्रीसंज्ञक ग्रह और पुरुषसंज्ञक ग्रह ये दोनों क्रम से रात्रि तथा दिन में हर्षद होते हैं। अर्थात् जब रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो स्त्रीसंज्ञक ग्रह हर्षद कहे जाते हैं और जो दिन में वर्षप्रवेश हो तो पुरुषसंज्ञक ग्रह हर्षद होते हैं। पूर्वोक्त इन चारों स्थानों में स्थित ग्रह बली होते हैं। इस ताजिकग्रंथ में चंद्रमा, शनैश्चर, शुक्र और बुध इन चारों को स्त्रीसंज्ञक ग्रह कहते हैं और सूर्य, मङ्गल तथा बृहस्पति इन तीनों को पुरुषग्रह कहते हैं। यहाँ नपुंसक कोई नहीं है। यहाँ बीस बिस्वा का परम बल है। यहाँ चार हर्ष स्थान हैं इस कारण चार से भाग लिया तो पाँच बिस्वा लब्ध हुए। एवं चारो हर्ष स्थानों में प्रत्येक पाँच बिस्वा का बल जानकर स्थापन करना चाहिए॥ ७६॥

उदाहरण।

जैसे कि सूर्यादि ग्रह लग्न से नवम आदि स्थानों में नहीं हैं इससे पहला हर्षपद नहीं प्राप्त हुआ और यहाँ बृहस्पति अपने घर में विद्यमान है और शनैश्चर अपने उच्च में बैठा है इस कारण दूसरा हर्षपद प्राप्त हुआ। इसमें पाँच बिस्वा का बल जानना। लग्न से सातवें और आठवें और नवें स्थान में स्थित स्त्रीसंज्ञक ग्रह शनैश्चर, शुक्र और बुध ये हैं और दशवें स्थान में पुरुष ग्रह सूर्य बैठा है इससे तीसरा हर्षपद प्राप्त हुआ। यहाँ भी पाँच बिस्वा का बल जानना। दिन में वर्षप्रवेश हुआ इससे पुरुष ग्रह रवि, मंगल तथा बृहस्पति इनका चौथा हर्षपद प्राप्त हुआ। यहाँ भी पाँच बिस्वा का बल जानना। इस प्रकार संपूर्ण ग्रहों के हर्षस्थान तथा उनमें प्रत्येक बलों को इकट्ठा लिखते हैं।

हर्षस्थानबलचक्र ।

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
स्थान	०	०	०	०	०	०	०
उच्च-स्वगृह	०	०	०	०	५	०	५
स्त्री-पुरुष	५	०	०	५	०	५	५
रात्रि-दिन	५	०	५	०	५	०	०
योग	१०	०	५	५	१०	५	१०

श्रीगर्गान्वयभूषणो गणितविच्चिन्तामणिस्तत्सुतो-
ऽनन्तोनन्तमतिर्व्यधात् खलमतध्वस्त्यै जनुः पद्धतिम् ।
तत्सूनुः खलु नीलकण्ठविबुधो विद्वच्छिवानुज्ञया
योगान्षोडशहर्षभानि च तथा संज्ञाविवेकेऽभ्यधात् ॥७७॥

श्रीयुत गर्गवंश में श्रेष्ठ, गणितशास्त्र का जाननेवाला चिन्तामणि नामक कोई विद्वान् हुआ। उसके पुत्र अनन्त गुणों से सम्पन्न मतिवाले, अनन्तनामक विद्वान् ने दुष्टमतों को दूर करने के लिये जातकशास्त्र की रचना की। उसके पुत्र विद्वान् नीलकण्ठ ने शिवजी महाराज की आज्ञा से संज्ञाविचार प्रकरण में षोडशयोगों और चारों हर्षद स्थानों की रचना की॥ ७७॥

सो० । करि भाषाविस्तार, पण्डितवर श्रीशक्तिधर ।
भये प्रकरणहिं पार, इकबालादिक योग जहँ ॥

इति श्रीपं०शक्तिधरविरचितायां नीलकण्ठीभाषाव्याख्यायां ग्रहाणां रूपजातिमुखषोडशयोगादिवर्णनन्नाम द्वितीयं प्रकरणम् ॥२॥

तृतीयं प्रकरणम्।

सहमों के नाम।
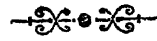
पुण्यं गुरुर्ज्ञानयशोऽथ मित्रं माहात्म्यमाशा च समर्थता च।
भ्राता ततो गौरवराजतातमाता सुतो जीवितमम्बुकर्म ॥१॥
मान्द्यं च मन्मथकलीपरतः क्षमोक्तं
शास्त्रं सबन्धुसहमं त्वथ वन्दकञ्च।
मृत्योश्च सद्मपरदेशधनान्यदारा
स्यादन्यकर्मसवणिक् त्वथ कार्यसिद्धिः ॥ २ ॥
उद्वाहसूतिसन्तापाः श्रद्धा प्रीतिर्बलं तनुः।
जाड्यव्यापारसहमे पानीयपतनं रिपुः ॥ ३ ॥
शौर्योपायदरिद्रत्वं गुरुताम्बुपथाभिधम्।
बन्धनं दुहिताश्वश्च पञ्चाशत्सहमानि हि ॥ ४ ॥

दो० पुण्यआदि पंचाश ये, सहम सहित फललेश।
हीनांशादि दशादि अब, कहौं मासपरवेश ॥

सहमों के नाम। पुण्य १ गुरु २ ज्ञान (विद्या) ३, यश ४, मित्र ५, माहात्म्य ६, आशा ७, सामर्थ्य ८, भ्राता ९, गौरव १०, राज ११, तात १२, माता १३, सुत १४, जीवित १५, अम्बु १६, कर्म १७, मान्द्य (रोग) १८, मदन १९, कलि २०, क्षमा २१, शास्त्र २२, बन्धु २३, वन्दक २४, मृत्यु २५, परदेश २६, धन २७, अन्यदारा २८, अन्यकर्म २९, वणिक् ३०, कार्यसिद्धि ३१, विवाह ३२, प्रसूति ३३, सन्ताप ३४, श्रद्धा ३५, प्रीति ३६, बल ३७, देह ३८, जाड्य ३९, व्यापार ४०, पानीयपतन ४१, शत्रु ४२, शौर्य ४३, उपाय ४४, दरिद्रत्व ४५, गुरुता ४६, अम्बुपथ ४७, बन्धन ४८, दुहिता ४९ और अश्व ५० यह पचास सहम हैं ॥ १-४ ॥

पुण्यसहम का साधन ।

सूर्योनचन्द्रान्वितमाह्नि लग्नं वीन्द्वर्कयुक्तं निशिपुण्यसंज्ञम् ।
शोध्यर्चशुद्ध्याश्रयभान्तराले लग्नं न चेत्सैकभमेतदुक्तम् ॥५॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रमा में सूर्य को घटाना चाहिए । यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो सूर्य में चन्द्रमा को घटाना चाहिए । तद-नन्तर शेष में लग्न को जोड़ना चाहिए । अब सब कहीं सहम लाने में विशेष संस्कार कहते हैं कि शोध्यराशि और शुध्याश्रयराशि इन दोनों के बीच में यदि लग्न न हो तो सहम में एक राशि को जोड़ना चाहिए— अर्थात् जो ग्रह न्यून (कम) किया जाता है उसे शोध्य कहते हैं और जिस शोध्य ग्रह में जो ग्रह घटाया जावे उसे शुद्ध्याश्रय (शोधक) कहते हैं । इन दोनों ग्रहों की राशियों के बीच में यदि लग्न न हो तो कहे हुए राश्यादि पुण्यसहम में और एकराशि को जोड़ना चाहिए । यदि शोध्य और शोधक के बीच में लग्न हो तो एक राशि नहीं जोड़ना चाहिए यह अर्थ ही से सिद्ध हुआ । (शोध्यर्चशुध्याश्रयभ) यह उपलक्षणमात्र है इससे भाव सहम में भी जानना चाहिए क्योंकि आगे कहा है कि (वित्तपमर्थभावात्) अर्थात् दूसरे भाव से वित्तप को शोधना चाहिए और (पुण्याद्भौममिति) पुण्यसहम से मंगल को शोधना चाहिए । क्षेत्र गृह, ऋक्ष, भ और भवन ये राशिपर्याय हैं और लग्न यह योज्य (जोड़ने के योग्य) अंक का उपलक्षक जानना चाहिए ॥ ५ ॥

पुण्यसहम साधन का उदाहरण ।

जैसे ५ । २२ । ६ । ४७ यह शोध्य चन्द्रमा है, इसमें ६ । ७ । ३० । ६ शोधक सूर्य को घटाया तो ८ । १४ । ३६ । ४१ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो १० । २ । ४६ । ५७ यह पुण्यसहम सिद्ध हुआ । इस उदाहरण में शोध्य चन्द्रमा और शोधक सूर्य है, इसलिए चन्द्रमा की कन्याराशि से सूर्य की मकर राशि तक गिना तो शोध्य शोधक के बीच में मेष राशि नहीं आई इससे १ राशि को जोड़ दिया यह सिद्धांत जानना चाहिए ।

गुरु, विद्या और यशसहम का साधन ।

व्यत्यस्तमस्माद्गुरुविद्ययोस्तु
संसाधनं पुण्यवियुक्सुरेज्यः ।
दिवा विलोमं निशि पूर्ववत्तु
यशोभिधं तत्सहमं वदन्ति ॥ ६ ॥

इस पुण्यसहम के साधन से गुरुसहम और विद्यासहम का साधन विपरीत करना चाहिए । जैसे कि दिन में यदि वर्षप्रवेश हो तो सूर्य में चन्द्रमा को घटाना चाहिए । तदनन्तर शेष में लग्न को जोड़ देवे और यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रमा में सूर्य को घटाना चाहिए । फिर शेष में लग्न को जोड़ना चाहिए तदनन्तर एक अन्य राशि के जोड़ने अथवा न जोड़ने से गुरुसहम और विद्यासहम ये दोनों सिद्ध होते हैं । 'अब यशस्सहम का साधन कहते हैं' कि दिन में पुण्यसहम को बृहस्पति में घटाना चाहिए और रात्रि में पुण्यसहम में बृहस्पति को घटावे । फिर पूर्व के ही समान लग्न का योग और (शोध्यर्त्तेत्यादि) संस्कार करने से बुधजन उसको यशःसहम कहते हैं ॥ ६ ॥

उदाहरण ।

जैसे कि ६ । ७ । ३० । ६ यह शोध्य सूर्य है । इसमें ५ । २२ । ६ । ४७ शोधक चन्द्रमा को घटाया तो ३ । १५ । २० । १६ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न को जोड़ दिया तो ४ । ३ । ३० । ३५ यह ध्रुवांक हुआ । इस उदाहरण में शोध्य और शोधक के बीच में लग्न मौजूद है इससे एक अन्य राशि नहीं जोड़ी गई अतः ४ । ३ । ३० । ३५ यह गुरुसहम सिद्ध हुआ । इसी ४ । ३ । ३० । ३५ को विद्यासहम भी कहते हैं । अब यशःसहम के उदाहरण को कहते हैं । जैसे कि ८ । १६ । ३४ । १३ यह शोध्य बृहस्पति है । इसमें १० । २ । ४६ । ५७ शोधक पुण्यसहम को घटाया तो १० । १६ । ४४ । १६ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न को जोड़ दिया तो ११ । ४ । ५४ । ३२ यह ध्रुवाङ्क हुआ । तदनन्तर शोध्य बृहस्पति की धनराशि और शोधक पुण्य सहम का राशि कुम्भ है, इनके मध्य में वर्षलग्न नहीं है

अतः यहाँ एक अन्य राशि को जोड़ दिया तो ० । ४ । ५४ । ३२ यह यशःसहम निष्पन्न हुआ ।

मित्रसहम का साधन ।

पुण्यसद्म गुरुसद्मतस्त्यजेद्
व्यस्ययो निशि सितान्वितं च तत् ।
सैकता तनुवदुक्तरीतितो
मित्रनाम सहमं विदुर्बुधाः ॥ ७ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो तो गुरुसहम में पुण्यसहम को घटावे । यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो विपरीत साधन करे अर्थात् पुण्यसहम में गुरुसहम को घटावे । तदनन्तर शेष में शुक्र को जोड़ देवे । यहाँ लग्न का योग नहीं करना चाहिए क्योंकि लग्न की जगह शुक्र को जोड़ दिया है इससे लग्न का योग नहीं होगा । और कही हुई रीति से एक राशि को जोड़ देवे । जैसे शोध्य राशि और शोधक राशि इन दोनों के मध्य में यदि शुक्र न हो तो एक अन्य राशि को जोड़ देवे उसे बुधजन मित्रसहम कहते हैं ॥ ७ ॥

उदाहरण ।

जैसे ५ । ३ । ३० । ३५ यह शोध्य गुरुसहम है । इसमें शोधक पुण्यसहम १० । २ । ४९ । ५७ को घटाया तो । ७ । ० । ४० । ३८ यह शेष रहा । इसमें ७ । १५ । ३१ । ४८ शुक्र को जोड़ा तो २ । १६ । १२ । २६ यह हुआ । इसमें एक और राशि को जोड़ा तो ३ । १६ । १२ । २६ यह मित्र नामक सहम सिद्ध हुआ ।

माहात्म्य और आशा सहम का साधन ।

पुण्याद्भौमं शोधयेदुक्तवत्स्या-
न्माहात्म्यं तन्नक्तमस्माद्विलोमम् ।
शुक्रं मन्दादह्नि नक्तं विलोम-
माशाख्यं स्यादुक्तवच्छेषमूह्यम् ॥ ८ ॥

दिन में वर्षप्रवेश हो तो पुण्यसहम में मंगल को घटावे तदनन्तर शेष में कहे हुए लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देना चाहिए। यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो मंगल में पुण्यसहम को घटा देवे फिर पूर्वोक्त लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो वह माहात्म्य सहम होता है। अब आशा सहम का साधन कहते हैं कि यदि दिन में वर्ष-प्रवेश हो तो शनैश्चर में शुक्र को घटावे और रात्रि में शुक्र में शनैश्चर को घटावे, तदनन्तर शेष में कही हुई रीति से लग्न और अन्य एक राशि के युक्त करने से वह आशासहम (इच्छा सहम) होती है ॥ ८ ॥

उदाहरण ।

जैसे १० । २ । ४६ । ५७ यह शोध्य पुण्यसहम है। इसमें ८ । २२ । ३६ । १ शोधक मंगल को घटाया तो १ । १० । १३ । ५६ यह शेष रहा। इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न को जोड़ दिया तो १।२८। २४। १२ यह अंक हुआ। इसमें अन्य एक राशि नहीं जोड़ी जायगी अतः १ । २८ । २४ । १२ यह माहात्म्यसहम सिद्ध हुआ । आशासहम का उदाहरण । जैसे ६ । २२ । २४ । ३६ यह शोध्य शनैश्चर है। इसमें ७ । १५ ३१ । ४८ शोधक शुक्र को घटाया तो ११ । ६ । ५२ । ४८ यह शेष रहा। इनमें लग्न ० । १८ । १० । १६ और अन्य एक १ राशि को जोड़ दिया तो ० । २५ । ३ । ४ यह आशासहम सिद्ध हुआ। इस उदाहरण में सैकता किया है, क्योंकि शोध्य शोधक के बीच में लग्न नहीं है इस कारण अन्य एक राशि को जोड़ा है।

सामर्थ्य और भ्रातृसहम का साधन ।

सामर्थ्यमारात्तनुपं विशोध्य नक्तं विलोमं तनुपे कुजे तु ।
जीवाद्विशुध्येत्सततं पुरावद्भ्रातार्किहीनाद् गुरुतःसदोह्यः ९॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो तो मंगल में लग्नस्वामी को घटावे और रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो लग्नस्वामी में मंगल को घटावे और पूर्व के समान लग्न और अन्य एक राशि के जोड़ देने से वह सामर्थ्य सहम होता है। अब यह आशंका होती है कि यदि लग्न का स्वामी मंगल ही हो तो क्या करना चाहिए ? इसका समाधान करते हैं कि दिन अथवा रात्रि में

(सदा) लग्नस्वामी मङ्गल को बृहस्पति में घटा देवे और पूर्वोक्त क्रिया करने से सामर्थ्य सहम होता है । अब भ्रातृ सहम का साधन दिखाते हैं कि चाहे दिन में वर्षप्रवेश हो अथवा रात्रि में हो सदा बृहस्पति में शनैश्चर को घटावे और पूर्व के समान लग्न और अन्य एक राशि के जोड़ देने से वह भ्रातृ सहम कहा जाता है ॥ ६ ॥

उदाहरण ।

जैसे—८ । १६ । ३४ । १३ यह शोध्य बृहस्पति है । इसमें ८ । २२ । ३६ । १ शोधक मंगल को घटाया तो ११ । २६ । ५८ । १२ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न को जोड़ा तो ० । १५ । ८ । २८ यह हुआ । इसमें अन्य एक राशि का योग किया तो १ । १५ । ८ । २८ यह सामर्थ्य सहम निष्पन्न हुआ । इस उदाहरण में (भौमात्तनुपं विशोध्य) ऐसा कहा है । यहाँ लग्न का स्वामी मंगल है, इस कारण बृहस्पति में लग्न के स्वामी मंगल को घटाया है ।

भ्रातृ सहम का उदाहरण । जैसे ८ । १६ । ३४ । १३ यह शोध्य बृहस्पति है । इसमें ६ । २२ । २४ । ३६ शोधक शनैश्चर को घटाया तो १ । २७ । ६ । ३७ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न को जोड़ दिया तो २ । १५ । १६ । ५३ यह भ्रातृ सहम हुआ । यहाँ शोध्य शोधक के मध्य में लग्न है अतः अन्य एक राशि नहीं जोड़ी गई ।

गौरव, राज और तातसहम का साधन ।

दिने गुरोश्चन्द्रमपास्य नक्तं रविं क्रमादर्कविधू च देयौ ।
रीत्योक्तया गौरवमर्कमार्केरपास्य वामं निशि राजतातौ ॥ १० ॥

दिन में वर्षप्रवेश हो तो बृहस्पति में चन्द्रमा को घटावे और शेष में सूर्य को युक्त करे । रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो बृहस्पति में सूर्य को घटा कर चन्द्रमा के जोड़ देने पर कही हुई रीति से गौरव सहम होता है । यदि शोध्य राशि और शोधक राशियों के बीच में क्रम से दिन या रात्रि के समय सूर्य और चन्द्रमा नहीं हों तो अन्य एक राशि को जोड़ देवे अर्थात् दिन में यदि शोध्य राशि और शुद्धाश्रयराशियों के मध्य में

सूर्य न हो तो सैकता करनी चाहिए–और रात्रि में शोध्य राशि और शोधक राशियों के बीच में चन्द्रमा न हो तो सैकता करनी चाहिए। कदाचित् शोध्य राशि और शोधक राशि इन दोनों के मध्य में सूर्य या चन्द्रमा हो तो सैकता नहीं करे, यह सिद्धान्त जानना चाहिए। अब राज सहम और तात सहम का साधन दिखाते हैं कि जैसे–दिन में वर्ष-प्रवेश के रहते शनैश्चर में सूर्य को घटावे और रात्रिके समय सूर्य में शनैश्चर को घटावे। फिर लग्न और अन्य एक राशि के जोड़ देने से राज सहम और तात सहम निष्पन्न होते हैं ॥ १० ॥

उदाहरण।

जैसे ८। १६ । ३४। १३ यह शोध्य बृहस्पति है। इसमें ५। २२। ६ ।४७ शोधक चन्द्रमा को घटाया तो २। २७। २४। २६ यह शेष रहा। इसमें ९ । ७। ३०। ६ सूर्य को जोड़ा तो ० । ४। ५४। ३२ यह ध्रुवाङ्क भया। इसमें अन्य एक राशि के जोड़ देने से १। ४। ५४। ३२ यह गौरव सहम सिद्ध हुआ।

राज और तातसहम का उदाहरण। जैसे ६। २२। २४। ३६ यह शोध्य शनैश्चर है। इसमें ९। ७। ३०। ६ सूर्यको शोधन किया तो ९। १४। ५४। ३० यह शेष रहा। इसमें ० । १८। १०। १६ लग्न और एक १ राशि को जोड़ दिया तो ११। ३। ४। ४६ यह राज सहम सिद्ध हुआ। इस उदाहरण में शोध्य और शोधक राशियों के बीच में लग्न नहीं है इसलिये अन्य एक राशि को युक्त किया यह सिद्धान्त जानना चाहिए और इसी राजसहम के समान तातसहम का भी साधन जानिए। यह ११। ३। ४। ४६ तातसहम है।

मातृ, सुत, जीवित और अम्बुसहम का साधन।

मातेन्दुतोऽपास्य सितं विलोमं
नक्तं सुतोऽहर्निशामिन्दुमीज्यात्।
स्याज्जीविताख्यं गुरुमार्कितोऽह्नि
वामं निशीदं सममम्बयाम्बु ॥ ११ ॥

यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमा में शुक्र को घटावे और रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो शुक्र में चन्द्रमा को घटावे। तदनन्तर लग्न और अन्य एक राशि के जोड़ देने से वह मातृसहम होता है। दिन अथवा रात्रि में वर्षप्रवेश के रहते बृहस्पति में चन्द्रमा को घटावे फिर लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो वह पुत्रसहम होता है। दिन में वर्षप्रवेश हो तो बृहस्पति को शनैश्चर में घटावे और रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो बृहस्पति में शनैश्चर को घटावे तदनन्तर लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो जीवित नामक सहम होता है। और मातृसहम के समान (अम्बुसहम) का साधन करे फिर पूर्ववत् क्रिया करने से अम्बुसहम सिद्ध होता है॥ ११॥

उदाहरण।

जैसे ५। २२। ६। ४७ यह शोध्य चन्द्रमा है। इसमें ७। १४। ३१। ४८ शोधक शुक्र को घटाया तो १०। ७। ३७। ५६ यह शेष रहा। इसमें ०। १८। १०। १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ११। २५। ४८। १५ यह मातृसहम सिद्ध हुआ।

पुत्रसहम का उदाहरण। जैसे—८। १६। ३४। १३ यह शोध्य बृहस्पति है। इसमें ५। २२। ६। ४७ शोधक चन्द्रमा को घटाया तो २। २७। २४। २६ यह शेष रहा। इसमें ०। १८। १०। १६ लग्न को युक्त किया तो ३। १५। ३४। ४२ यह पुत्रसहम सिद्ध हुआ।

जीवितनामक सहम का उदाहरण। जैसे—६। २२। २४। ३६ यह शोध्य शनैश्चर है। इसमें ८। १६। ३४। १३ शोधक बृहस्पति को घटाया तो १०। २। ५०। २३ यह शेष रहा। इसमें ०। १८। १०। १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ११। २१। ०। ३६ यह जीवित सहम सिद्ध हुआ। और अम्बुसहम का साधन मातृसहम के समान होता है। जैसे ५। २२। ६। ४७ यह शोध्य चन्द्रमा है। इसमें ७। १५। ३१। ४८ शोधक शुक्र को घटाया तो १०। ६। ३७। ५६ यह शेष रहा। इसमें ०। १८। १०। १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ११। २६। ४८। १५ यह अम्बुसहम सिद्ध हुआ।

कर्म, रोग और मन्मथसहम का साधन ।

कर्मज्ञमाराम्निशिवामसुक्कं
रोगाख्यमिन्दुं तनुतः सदैव ।
स्यान्मन्मथो लग्नपमिन्दुतोऽह्नि
वामं निशीन्दुं तनुपं सदार्कात् ॥ १२ ॥

दिन में वर्षप्रवेश हो तो मंगल में बुध को घटा देवे और जो रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो बुध में मंगल को घटावे । तदनन्तर लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो वह कर्म सहम होता है। रात्रि में वर्षप्रवेश हो चाहे दिन में वर्षप्रवेश हो परन्तु सदा लग्न में चन्द्रमा को घटाकर लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देने से रोगसहम होता है । दिन में वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रमा में लग्नस्वामी को घटावे, और रात्रि में लग्नस्वामी में चन्द्रमा को घटावे फिर लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो वह मन्मथसहम (कामदेवसहम) होता है । यदि लग्न का स्वामा भी चन्द्रमा ही हो तो सदा सूर्य में लग्ननाथ चन्द्रमा को घटाकर लग्न और अन्य एक राशि के जोड़ देने से मन्मथसहम होता है ॥ १२ ॥

उदाहरण ।

जैसे—८ । २२ । ३६ । १ यह शोध्य मंगल है । इसमें ८ । १२ । १६ । ६ शोधक बुध को घटाया तो ० । १० । १६ । ५२ यह शेष रहा । इसमें लग्न ० । १८ । १० । १६ को जोड़ दिया तो ० । २८ । ३० । ८ यह ध्रुवांक हुआ । इसमें अन्य १ राशि के जोड़ देने से १ । २८ । ३० । ८ यह कर्म सहम सिद्ध हुआ ।

रोग सहम का उदाहरण । जैसे—० । १८ । १० । १६ यह शोध्य लग्न है । इसमें ५ । २२ । ६ । ४७ शोधक चन्द्रमा को घटाया तो ६ । २६ । ० २६ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और १ अन्य राशि के जोड़ देने से ८ । १४ । १० । ४५ यह रोग सहम सिद्ध हुआ । यद्यपि इस उदाहरण में टीकाकार विश्वनाथ महाराजजी ने सैकता नहीं किया सोतो विचारणीय है । क्योंकि शोध्यराशि और शोधक राशि इन दोनों के बीच में लग्न नहीं हो तो अन्य १ राशि को जोड़ देवे सो यहाँ शोध्य

राशि और शुद्ध्याश्रय राशि इन दोनों के मध्य में लग्न नहीं है। यह जानकर १ राशि को जोड़ दिया है।

मदनसहम का उदाहरण। जैसे—५।२२।६।४७ यह शोध्य चंद्रमा है। इसमें ८।२२।३६।१ शोधक लग्ननाथ मंगल को घटाया तो ८।२६।३१।४६ यह शेष रहा। इसमें ०।१८।१०।१६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो १०।१७।४४।२ यह मदन सहम सिद्ध हुआ।

कलि, क्षमा और शास्त्रसहम का साधन।

कलिक्षमेऽस्तो गुरुतो विशुध्ये-
स्कुजो विलोमं निशि पूर्वरीत्या।
शास्त्रं दिने सौरिमपास्य जीवा-
द्वामं निशिज्ञस्य युतिः पुरावत्॥ १३॥

दिन में वर्षप्रवेश हो तो बृहस्पति में मङ्गल को घटावे और यदि रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो मंगल में बृहस्पति को घटा देवे। तदनन्तर पूर्वोक्त रीति से लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ देवे तो वह कलिसहम और क्षमासहम होता है। दिन हो तो बृहस्पति में शनैश्चर को घटावे और रात्रि हो तो शनैश्चर में बृहस्पति को घटावे। फिर शेष में बुध को जोड़ देवे और पूर्व के समान यदि शोध्य और शोधक राशियों के बीच में बुध न हो तो एक राशि जोड़ने से शास्त्रसहम होता है॥ १३॥

उदाहरण।

जैसे—८।१६।३४।१३ यह शोध्य बृहस्पति है। इसमें ८।२२।३६।१ शोधक मंगल को घटाया तो ११।२६।५८।१२ यह शेष रहा। इसमें ०।१८।१०।१६ लग्न को जोड़ दिया तो ०।१५।८।२८ यह ध्रुवांक हुआ। इसमें अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो १।१५।८।२८ यह कलिसहम तथा क्षमा सहम सिद्ध हुआ।

शास्त्रसहम का उदाहरण। जैसे ८।१६।३४।१३ यह शोध्य बृहस्पति है। इसमें ६।२२।२४।३६ शोधक शनैश्चर को घटाया तो

१।२७।९।३७ यह शेष रहा। इसमें बुध ८।१२।१६।९ को जोड़ दिया तो १०।९।२५।४६ यह ध्रुवांक हुआ। इसमें अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ११।९।२५।४६ यह शास्त्रसहम सिद्ध हुआ।

बन्धु, बन्दक और मृत्युसहम का साधन।

दिवानिशं ज्ञाच्छशिनं विशोध्य
बन्ध्वाख्यमेतन्निशिबन्दकं स्यात्।
वामं दिवैतन्मृतिरष्टमर्क्षा-
दिन्दुं विशोध्योक्तवदार्कियोगात् ॥ १४ ॥

चाहे दिन में वर्षप्रवेश हो चाहे रात्रि में हो परन्तु सदा बुध में चंद्रमा को घटावे। तदनन्तर लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ देवे तो बन्धु-सहम होता है। यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो बुध में चन्द्रमा को घटा देवे और दिन में वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रमा में बुध को घटा देवे फिर लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो बन्दकसहम होता है और दिन या रात्रि में वर्षप्रवेश के रहते आठवें भाव में चन्द्रमा को घटा देवे फिर शनैश्चर और अन्य एक राशि को युक्त करे तो वह मृत्यु (मौत) सहम होता है ॥ १४ ॥

उदाहरण।

जैसे–८।१२।१६।९ यह शोध्य बुध है। इसमें ५।२२।९।४७ शोधक चन्द्रमा का घटाया तो २।२०।६।२२ यह शेष रहा। इसमें ०।१८।१०।१६ लग्न को जोड़ दिया तो ३।८।१६।३८ यह बन्धुसहम सिद्ध हुआ।

बन्दक सहम का उदाहरण। जैसे ५।२२।९।४७ यह शोध्य चन्द्रमा है। इसमें ८।१२।१६।९ शोधक बुध को घटाया तो ९।९।५३।३८ यह शेष रहा। इसमें लग्न ०।१८।१०।१६ और अन्य एक राशि को जोड़ दिया तो १०।२७।३।५४ यह बन्दक सहम सिद्ध हुआ।

मृत्युसहम का उदाहरण। जैसे–७।१३।४९।३० यह शोध्य अष्टम भाव है। इसमें ५।२२।९।४७ शोधक चन्द्रमा को घटाया तो १।

२१ । ३६ । ४३ यह शेष रहा । इसमें ६ । २२ । २४ । ३६ शनैश्चर और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ६ । १४ । ४ । १६ यह मृत्यु सहम उत्पन्न हुआ ।

देशान्तर और अर्थ सहम का साधन ।

देशान्तराख्यं नवमाद्विशोध्य
धर्मेश्वरं संततमुक्तवत्स्यात् ।
अहर्निशं वित्तपमर्थभावा-
द्विशोध्य पूर्वोक्तवदर्थसद्म ॥ १५ ॥

दिन में वर्षप्रवेश हो चाहे रात्रि में वर्षप्रवेश हो परन्तु सदा नवमभाव में नवमभाव के स्वामी को घटा देवे । तदनन्तर लग्न और अन्य एकराशि को जोड़ देवे तो देशान्तर नामक सहम होता है । दिन अथवा रात्रि के वर्षप्रवेश में दूसरे घर में दूसरे भाव के स्वामी को घटा देवे फिर पूर्व कथित रीति से लग्न और अन्य एक राशि के जोड़ने से अर्थसहम होता है ॥१५॥

उदाहरण ।

जैसे—८ । ६ । २८ । ४४ यह नवमभाव शोध्य है । इसमें ८ । १६ । ३४ । १३ शोधक नवमभाव के स्वामी बृहस्पति को घटाया तो ११ । १६ । ५४ । ३१ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो १ । ८ । ४ । ४७ यह देशान्तरनामक सहम सिद्ध हुआ । अर्थसहम का उदाहरण । जैसे १ । १३ । ४६ । ३० यह शोध्य दूसरा भाव है । इसमें ७ । १५ । ३१ । ४८ शोधक दूसरे भाव के स्वामी शुक्र को घटाया तो ५ । २८ । १७ । ४२ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ७ । १६ । २७ । ५८ यह अर्थ सहम सिद्ध हुआ ।

परदारा, अन्यकर्म और वणिक्सहम का साधन ।

सितादपास्यार्कमथान्यदारा-
ह्वयं सदा प्राग्वदथान्यकर्म ।
चन्द्राच्छनिं वाममथो निशायां
शश्वद्वणिज्यं दिनवन्दकोक्त्या ॥ १६ ॥

दिन में वर्षप्रवेश हो या रात्रि में हो परन्तु सर्वदा शुक्र में सूर्य को घटा देवे और उसमें लग्न और अन्य एक राशि को पर्वोक्त रीति से जोड़ देवे तो अन्यदारा (परस्त्री) नामक सहम होता है । यदि दिन में वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रमा में शनैश्चर को घटा देवे और यदि रात्रि में वर्ष-प्रवेश हो तो शनैश्चर में चन्द्रमा को घटावे फिर लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो अन्यकर्म (परकार्यकारी) नामक सहम होता है । दिन या रात्रि के वर्षप्रवेश में वन्दक सहम की रीति से चन्द्रमा में बुध को घटावे तदनन्तर उसमें लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो वाणिज्य सहम होता है ॥ १६ ॥

उदाहरण ।

जैसे ७ । १५ । ३१ । ४८ यह शोध्य शुक्र है । इसमें ६ । ७ । ३० । ६ शोधक सूर्य को घटाया तो १० । ८ । १ । ४२ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ११ । २६ । ११ । ५८ यह अन्यदारा (परस्त्री) सहम सिद्ध हुआ ।

अन्यकर्म सहम का उदाहरण । जैसे ५ । २२ । ६ । ४७ यह शोध्य चन्द्रमा है । इसमें ६ । २२ । २४ । ३६ शोधक शनैश्चर को घटा दिया तो १० । २९ । ४५ । ११ यह शेष रहा । इसमें लग्न ० । १८ । १० । १६ और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ० । १७ । ५५ । २७ यह अन्य कर्म नामक सहम सिद्ध हुआ ।

वाणिज्य सहम का साधन । जैसे ५ । २२ । ६ । ४७ यह शोध्य चन्द्रमा है । इसमें ८ । १२ । १६ । ९ शोधक बुध को घटाया तो ९ । ९ । ५३ । ३८ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो १० । २८ । ३ । ५४ यह वाणिज्य सहम सिद्ध हुआ ।

कार्यसिद्धि और विवाहसहम का साधन ।

शनैर्दिवार्के निशि चन्द्रमार्के-
विशोध्य सूर्येन्दुभनाथयोगात् ।
स्यात्कार्यसिद्धिः सततं विशोध्य
मन्दं सितात्स्यात्तु विवाहसद्म ॥ १७ ॥

यदि दिन में वर्षप्रवेश हो तो शनैश्चर में सूर्य को घटाकर सूर्य जिस राशि में बैठा हो उस राशि के स्वामी को जोड़ देवे और रात्रि में वर्ष-प्रवेश हो तो शनैश्चर में चन्द्रमा को घटा देवे और चन्द्रमा जिस राशि में विद्यमान हो उस राशि के स्वामी को जोड़ देवे तदनन्तर अन्य एक राशि को जोड़ दे तो वह कार्यसिद्धि सहम होता है। दिन में वर्ष प्रवेश हो चाहे रात्रि में हो परन्तु सदा शुक्र में शनैश्चर को घटावे। फिर लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो वह विवाहसहम होता है १७

उदाहरण।

जैसे ६ । २२ । २४ । ३६ यह शोध्य शनैश्चर है। इसमें ६ । ७ । ३० । ६ इस शोधक सूर्य को घटाया तो ६ । १४ । ५४ । ३० यह शेष रहा। इसमें सूर्य की राशि के स्वामी शनैश्चर ६ । २२ । २४ । ३६ और अन्य एक राशि को जोड़ दिया तो ५ । ७ । १६ । ६ यह कार्य-सिद्धि सहम सिद्ध हुआ।

विवाहसहम का उदाहरण। जैसे ७ । १५ । ३१ । ४८ यह शोध्य शुक्र है। इसमें ६ । २२ । २४ । ३६ इस शोधक शनैश्चर को घटाया तो ० । २३ । ७ । १२ यह शेष रहा। इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और १ राशि को जोड़ दिया तो २ । ११ । १७ । २८ यह विवाहसहम सिद्ध हुआ।

प्रसव और सन्ताप सहम का साधन।

गुरोर्बुधं प्रोह्य भवेत्प्रसूति-
र्यामं निशीन्दुं शनितो विशोध्य।
षष्ठं क्षिपेदुक्तदिशा सदैव
सन्तापसद्मारमपास्य शुक्रात्॥ १८॥

दिन में वर्षप्रवेश हो तो बृहस्पति में बुध को घटावे। उसमें लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ देवे तो वह प्रसव (प्रसूति) सहम होता है। दिन में अथवा रात्रि में सदा शनैश्चर में चन्द्रमा को घटा देवे और उसमें राश्यात्मक छठे भाव को जोड़ देवे। तदनन्तर पूर्व कही हुई रीति से अन्य

एक राशि को जोड़े तो वह सन्ताप नामक सहम होता है। (आरमपास्य शुक्रात्) इसका सम्बन्ध आगे के श्लोक से है॥ १८॥

उदाहरण।

जैसे ८। १६। ३४। १३ यह शोध्य बृहस्पति है। इसमें ८। १२। १६। ६ शोधक बुध को घटाया तो ०। ७। १८। ४ यह शेष रहा। इसमें ०। १। १०। १६ लग्न को जोड़ दिया तो ०। २५। २८। २० यह ध्रुवांक हुआ। इसमें अन्य एक राशि के जोड़ देने से १। २५। २८। २० यह प्रसव (प्रसूति) नामक सहम सिद्ध हुआ।

सन्ताप सहम का उदाहरण। जैसे ६। २२। २४। ३६ यह शोध्य शनैश्चर है। इसमें ५। २२। ६। ४७ इस शोधक चन्द्रमा को घटाया तो १। ०। १४। ४६ यह शेष रहा। इसमें ५। १३। ४६। ३२ छठे भाव को जोड़ दिया तो ६। १४। ४। २१ हुआ। इसमें एक और जोड़ दिया तो ७। १४। ४। २१ यह संताप सहम सिद्ध हुआ।

श्रद्धा, प्रीति, बल और देह सहम का साधन।

श्रद्धा सदा प्रोक्तदिशाथ पुण्यं
विद्याख्यतः प्रोह्य सदा पुरोक्त्या।
प्रीत्याख्यमुक्तं बलदेहसञ्ज्ञे
यशःसमे जाड्यमपास्य भौमात्॥ १६॥

वर्ष प्रवेश दिन में हो चाहे रात्रि में हो परन्तु सर्वदा शुक्र में मंगल को घटावे और पूर्व कही हुई रीति से लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो श्रद्धा (आस्तिक्य बुद्धि) नामक सहम होता है और सदा दिन अथवा रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो विद्या सहम में पुण्य सहम को घटा कर पूर्वोक्त रीति से लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो वह प्रीति नामक सहम होता है और बल सहम और देह सहमों को यशःसहम के तुल्य साधन करे। और (जाड्यमपास्य भौमात्) यह पाठ आगे के श्लोक से सम्बन्ध रखता है॥ १६॥

उदाहरण।

जैसे ७। १५। ३१। ४८ यह शोध्य शुक्र है। इसमें ८। २२। ३६। १

शोधक मङ्गल को घटाया तो १० । २२ । ५५ । ४७ यह शेष रहा। इसमें लग्न ० । १८ । १० । १६ और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ० । ११ । ६ । ३ यह श्रद्धा (आस्तिक्य बुद्धि) सहम सिद्ध हुआ ।

प्रीति सहम का उदाहरण । जैसे ५ । ३ । ३० । ३५ यह विद्या सहम है । इसमें १० । २ । ४६ । ५७ पुण्य सहम को घटाया तो ७ । ० । ४० । ३८ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ८ । १८ । ५० । ५४ यह प्रीति सहम सिद्ध हुआ ।

बलसहम का उदाहरण । जैसे ६ । १६ । ३४ । १३ यह शोध्य बृहस्पति है । इसमें १० । २ । ४६ । ५७ शोधक पुण्य सहम को घटाया तो १० । १६ । ४४ । १६ यह शेष रहा । इसमें वर्ष ० । १८ । १० । १६ लग्न तथा अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ० । ४ । ५४ । ३२ यह बल सहम सिद्ध हुआ । इसी ० । ४ । ५४ । ३२ को देहसहम भी जानना चाहिए ।

जाड्य, व्यापार और पानीयपतन सहम का साधन ।

शनिर्विलोमं निशि चान्द्रियोगाद्
　　व्यापारआराज्ज्ञमपास्य शश्वत् ।
पानीयपातः शशिनं विशोध्य
　　सौरेर्विलोमं निशि पूर्ववत्स्यात् ॥ २० ॥

दिन में वर्षप्रवेश के रहते मंगल में शनैश्चर को घटावे और रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो शनैश्चर में मंगल को घटा देवे तदनन्तर राश्यात्मक बुध को जोड़ कर अन्य एक राशि को युक्त करे तो वह जाड्यसहम होता है। और दिन में वर्षप्रवेश हो चाहे रात्रि में हो परंतु सदा मंगल में बुध को घटावे फिर लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ देवे तो वह व्यापार सहम होता है। यदि दिन में वर्षप्रवेश हो तो शनैश्चर में चन्द्रमा को घटावे और यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो चन्द्रमा में शनैश्चर को घटा कर लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो पानीयपतन (जल में बह जाना) सहम होता है॥ २० ॥

उदाहरण ।

जैसे ८ । २२ । ३६ । १ यह शोध्य मंगल है । इसमें ६ । २२ । २४ । ३६ शोधक शनैश्चर को घटाया तो २ । ० । ११ । २५ यह शेष रहा ।

इसमें ८ । १२ । १६ । ९ बुध को और अन्य एक राशि को जोड़ दिया तो ११ । १२ । २७ । ३४ यह जाड्यसहम सिद्ध हुआ ।

व्यापारसहम का उदाहरण । जैसे ८ । २२ । ३६ । १ यह शोध्य मङ्गल है । इसमें ८ । १२ । १६ । ९ शोधक बुध को घटाया तो ० । १० । १९ । ५२ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न को और अन्य १ राशि का जोड़ दिया तो १ । २८ । ३० । ८ यह व्यापार सहम सिद्ध हुआ ।

पानीयपतन सहम का उदाहरण । जैसे ६ । २२ । २४ । ३६ यह शोध्य शनैश्चर है । इसमें ५ । २२ । ९ । ४७ शोधक चन्द्रमा को घटाया तो १ । ० । १४ । ४९ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और १ राशि को जोड़ा तो २ । १८ । २५ । ५ यह पानीयपतन सहम सिद्ध हुआ ।

शत्रु और शौर्य सहम का साधन ।

मन्दं कुजात्प्रोह्य रिपुर्विलोमं
रात्रौ भवेद्भौमविहीनपुण्यात् ।
शौर्यं विलोमं निशि पूर्ववत्स्या-
दुपाय ईज्यं शनितो विशोध्य ॥ २१ ॥

दिन में वर्षप्रवेश हो तो मङ्गल में शनैश्चर को घटावे और रात्रि में शनैश्चर में मंगल को घटावे । तदनन्तर लग्न और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो वह रिपु (वैरी) नामक सहम होता है । यदि दिन में वर्षप्रवेश हो तो पुण्यसहम में मंगल को घटावे और रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो मङ्गल में पुण्यसहम को घटावे । तदनन्तर पूर्ववत् शेष में लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ देवे तो वह शौर्य (वीरत्व) सहम होता है । और (उपाय ईज्यं शनितो विशोध्य) इसका सम्बन्ध आगे के श्लोकसे है ॥२१॥

उदाहरण ।

जैसे कि ८ । २२ । ३६ । १ यह शोध्य मङ्गल है । इसमें ६ । २२ । २४ । ३६ शोधक शनैश्चर को घटाया तो २ । ० । ११ । २५ यह शेष

रहा। इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और १ राशि को जोड़ दिया तो ३ । १८ । २१ । ४१ यह शत्रु (वैरी) नामक सहम सिद्ध हुआ।

शौर्य सहम का उदाहरण। जैसे १० । २ । ४६ । ५७ यह शोध्य पुण्यसहम है। इसमें ८ । २२ । ३६ । १ शोधक मङ्गल को घटाया तो १ । १० । १३ । ५६ यह शेष रहा। इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और १ राशि को जोड़ दिया तो २ । २८ । २४ । १२ यह शौर्य (वीरत्व) नामक सहम सिद्ध हुआ।

उपाय, दरिद्र और गुरुतासहम का साधन।

वामं निशि ज्ञं तु विशोध्य पुण्या-
ज्ज्ञयुग्विलोमं निशि तद्दरिद्रम्।
सूर्योच्चतः सूर्यमपास्य नक्तं
चन्द्रं तदुच्चाद्गुरुता पुरोक्त्या ॥ २२ ॥

दिन में वर्षप्रवेश के रहते शनैश्चर में बृहस्पति को घटावे और रात्रि में वर्षप्रवेश के रहते बृहस्पति में शनैश्चर को घटावे, फिर शेष में लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ देवे तो वह उपाय (यत्न करना) नामक सहम होता है। और दिन में वर्षप्रवेश के रहते पुण्यसहम में बुध को घटावे, आर रात्रि के समय बुध में पुण्यसहम को घटाकर बुध और अन्य एक राशि को जोड़ देवे तो वह दरिद्रनामक सहम होता है। दिन में सूर्य के ० । १० इस परमोच्च में सूर्य को घटा देवे और रात्रि में चन्द्रमा के १ । ३ इस परमोच्च में चन्द्रमा को घटावे फिर शेष में पूर्व कही रीति से लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ देवे तो वह गुरुतानामक सहम होता है ॥ २२ ॥

उदाहरण।

जैसे ६ । २२ । २४ । ३६ यह शोध्य शनैश्चर है। इसमें ८ । १९ । ३४ । १३ शोधक बृहस्पति को घटाया तो १० । २ । ५० । २३ यह शेष रहा। इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ दिया तो ११ । २१ । ० । ३९ यह उपाय नामक सहम सिद्ध हुआ।

दरिद्रसहम का उदाहरण। जैसे कि १० । २ । ४६ । ५७ यह शोध्य पुण्यसहम है। इसमें ८ । १२ । १६ । ६ शोधक बुध को घटाया तो १ २० । ३३ । ४८ यह शेष रहा। इसमें ८ । १२ । १६ । ६ बुध और १ राशि को जोड़ दिया तो ११ । २ । ४६ । ५७ यह दरिद्रसहम सिद्ध हुआ।

गुरुतासहम का उदाहरण। जैसे कि ० । १० । ० । ० यह सूर्य का उच्च है। इसमें ६ । ७ । ३० । ६ शोधक सूर्य को घटाया तो ३ । २ । २६ । ५४ यह शेष रहा। इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न को और १ अन्य राशि को जोड़ने से ४।२०।४०। १० यह गुरुतासहम सिद्ध हुआ।

जलपथ और बन्धनसहम का साधन।

कर्कार्द्धतः ३ । १५ प्रोह्य शार्निं स्याज्जलाध्वान्यथा निशि।
पुण्याच्छर्निं विशोध्याऽहनि वामं निशि तु बन्धनम् ॥ २३ ॥

दिन में वर्षप्रवेश के रहते कर्क के आधे ३ । १५ में शनैश्चर को घटावे। और यदि रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो साढ़े तीन ३ । १५ राशियों को शनैश्चर में घटाकर लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ देवे तो वह जलपथ सहम होता है। दिन में वर्षप्रवेश हो तो पुण्यसहम में शनैश्चर को घटावे और रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो शनैश्चर में पुण्यसहम को घटावे। तदनन्तर लग्न और अन्य १ राशि के जोड़ देने से बन्धनसहम होता है॥२३॥

उदाहरण।

जैसे कि ३ । १५ । ० । ० यह शोध्य कर्कार्ध है। इसमें ६ । २२ । २४ । ३६ शोधक शनैश्चर को घटाया तो ८ । २२ । ३५ । २४ यह शेष रहा। इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ा तो १० । १० । ४५ । ४० यह जलपथ नामक सहम सिद्ध हुआ।

बन्धन सहम का उदाहरण। जैसे कि १० । २ । ४६ । ५७ यह शोध्य पुण्यसहम है। इसमें ६ । २२ । २४ । ३६ शोधक शनैश्चर को घटाया तो ३ । १० । २५ । २१ यह शेष रहा। इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और १ राशि को जोड़ दिया तो यह ४ । २८ । ३५ । ३७ बन्धन सहम सिद्ध हुआ।

कन्या और अश्वसहम का साधन ।

चन्द्रं सितादपास्योक्तं सदा कन्याख्यमुक्तवत् ।
पुण्यादर्कमपास्यायययोगादश्वोऽन्यथा निशि ॥ २४ ॥

दिन में वर्षप्रवेश हो अथवा रात्रि में हो परन्तु सदा शुक्र में चन्द्रमा को घटावे । फिर कही हुई रीति से लग्न और अन्य १ राशि को जोड़ देवे तो वह कन्या (पुत्री) नामक सहम होता है । और यदि दिन में वर्ष-प्रवेश हो तो पुण्यसहम में सूर्य को घटावे और रात्रि में वर्षप्रवेश हो तो सूर्य में पुण्य सहम को घटा कर शेष में ग्यारहवें भाव को जोड़ देवे फिर अन्य एक राशि के जोड़ देने से अश्व (घोड़ा) नामक सहम कहा जाता है । इन दोनों सहमों को बहुत से आचार्यों ने नहीं कहा है इससे प्रमाणवाक्य कोई नहीं दीख पड़ता है । इस संज्ञातन्त्र में शोध्य, शोधक इन दोनों के बीच में यदि लग्न नहीं हो तो सहम में एक राशि को जोड़ देवे ऐसा कहा है परन्तु इस अर्थ में सम्मति वाक्य कहीं नहीं मिला और यवनों के मत में भी अन्य एक राशि को नहीं जोड़ा है । यह सिद्धान्त जानना चाहिए । और इसका बहुतसा विस्तार समरसिंह, यवनताजिक और मनुष्य ताजिक में द्रष्टव्य है । यहाँ ग्रंथ के विस्तार के भय से नहीं लिखा गया ॥ २४ ॥

उदाहरण ।

जैसे कि ७ । १४ । ३१ । ४८ यह शोध्य शुक्र है । इसमें ५ । २२ ९ । ४७ शोधक चन्द्रमा को घटाया तो १ । २२ । २२ । १ यह शेष रहा । इसमें ० । १८ । १० । १६ लग्न और १ राशि को जोड़ा तो ३ । १० । ३२ । १७ यह कन्या (पुत्री) नामक सहम सिद्ध हुआ ।

अश्वसहम का उदाहरण । जैसे कि १० । २ । ४९ । ५७ यह शोध्य पुण्यसहम है । इसमें ९ । ७ । ३० । ६ शोधक सूर्य को घटाया तो ० । २५ । १९ । ५१ यह शेष रहा । इसमें १० । ९ । २८ । ४६ ग्यारहवें भाव को जोड़ दिया तो ११ । ४ । ४८ । ३७ यह हुआ । इसमें १ राशि जोड़ने से ० । ४ । ४८ । ३७ यह अश्व (घोड़ा) नामक सहम सिद्ध हुआ ।

दो० । पण्डितवर श्रीशक्तिधर, वर्णन कीन समास ।
पुण्यादिक अश्वान्त ये, पूरण सहम पचास ॥

सिद्धसहमकुण्डली ।

सं०	सहम	राशि	अंश	कला	विकला
१	पुण्य	१०	२	४१	५७
२	गुरु	४	३	३०	३५
३	विद्या	४	३	३०	३५
४	यश	०	४	५४	३२
५	मित्र	३	१६	१२	२६
६	माहात्म्य	१	२८	२४	१२
७	आशा	००	२५	३	४
८	सामर्थ्य	१	१५	८	२८
९	भ्रातृ	२	१५	१९	५३
१०	गौरव	१	४	५४	३२
११	राज	११	३	४	४६
१२	तात	११	३	४	४६
१३	माता	११	२५	४८	१५
१४	सुत	३	१५	३४	४२
१५	जीवित	११	२२	००	३९
१६	अम्बु	११	२६	४८	१५
१७	कर्म	१	१८	३०	८
१८	रोग	८	१४	१०	४५
१९	मन्मथ	१०	१७	४४	२
२०	कलि	१	१५	८	२८
२१	क्षमा	१	१५	८	२८
२२	शास्त्र	११	९	२५	४६
२३	बन्धु	३	८	१६	३८
२४	बन्धक	१०	२७	३	५४
२५	मृत्यु	९	१४	४	१९
२६	देशान्तर	१	८	४	४७
२७	अर्थ	७	१६	२७	२८
२८	परदारा	११	२६	११	५८
२९	अन्यकर्म	०	१७	५५	२७
३०	वाणिज्य	१०	२८	३	५४
३१	कार्यसिद्धि	५	७	१९	६
३२	विवाह	२	११	१७	२८
३३	प्रसव	१	२५	२८	२०
३४	संताप	७	१४	४	२१
३५	श्रद्धाश्रित-क्यबुद्धि	०	११	६	३
३६	प्रीति	८	१८	५०	५४
३७	बल	०	४	५४	३२
३८	देह	०	४	५४	३२
३९	जाड्य	११	१२	२७	३४
४०	व्यापार	१	२८	३०	८
४१	पानीयपतन	३	१८	२५	५
४२	शत्रु	३	१८	२१	४१
४३	शौर्य	२	२८	२४	१२
४४	उपाय	११	२१	०	३९
४५	दरिद्र	११	२	४९	५७
४६	गुरु	४	२०	४०	१०
४७	जलपथ	१०	१०	४५	४०
४८	बंधन	४	२८	३५	३७
४९	कन्या	३	१०	३२	१७
५०	अश्व	०	४	४८	३७

सहमों का फल ।

स्वोच्चादिसत्पदगतो यदि लग्नदर्शी
वीर्यान्वितः सहमपो यदि नेक्षतेऽङ्गम् ।
नासौ बली रविशशिश्रितभेशदर्श-
पूर्णान्तलग्नपबलस्य विचारणेत्थम् ॥ २५ ॥

सहम राशि का स्वामी अपने उच्च, अपने घर, अपने हद्दा, अपने त्रैराशिक अथवा अपने नवांश में बैठा हो अथवा शुभ ग्रहों के स्थान में स्थित होकर यदि लग्न को देखता हो तो वह बली कहा जाता है। और यदि सहम का मालिक अपने उच्च आदि पदों में प्राप्त होकर लग्न को न देखता हो तो उसे निर्बल कहते हैं। और सूर्य या चन्द्रमा जिस राशि पर हों उनके स्वामी और अमावास्या अथवा पौर्णमासी के समीप साधी हुई लग्न के स्वामी इन सबका भी इसी प्रकार विचार है। अर्थात् जन्मकाल में सूर्य जिस राशि में बैठा हो उसका स्वामी और चन्द्रमा जिस राशि में बैठा हो उसका स्वामी और जन्मसमय से जितनी अमावास्या हो उस समय तात्कालिक सूर्य से साधी हुई जो लग्न है उसका स्वामी तथा जन्मसमय पूर्णमासी के समीप साधी हुई जो लग्न है उसका स्वामी इन चारों के बलों का विचार हिल्लाज में और मनुष्यजातक में आयुर्दाया-नयन में किया है। यद्यपि प्रकृत में इन बलों के विचार का उपयोग नहीं है तो भी प्रसंगवश से यहाँ कहा है ॥ २५ ॥

निर्बल और सबल का लक्षण ।

पञ्चवर्गीबलेनोनो न हर्षस्थानमाश्रितः ।
अबलोऽयं लग्नादर्शी बली स्वल्पेऽस्ति चेत्पदे ॥ २६ ॥

पूर्व कहे हुए पंचवर्गी के बल से हीन और पूर्वोक्त चारो हर्षदस्थानों से रहित जो ग्रह लग्न को न देखता हो तो उसे निर्बल जानना चाहिए। यदि ग्रह स्वल्पपद (छोटे अधिकार) में हो तो उसे बली कहते हैं। जैसे अपने घर या अपने उच्च में ग्रह हो तो महा अधिकार में और अपने हद्दा में ग्रह हो तो मध्यम अधिकार में होता है। तथा अपने त्रैराशिक या अपने नवांश में ग्रह हो तो स्वल्प (छोटा) अधिकार में होता है। इसी प्रकार बल का तारतम्य कहा है। (त्रिंशत्स्वभे विंशतिरात्मतुङ्गे) अर्थात् अपने राशि में ग्रह हो तो तीस विश्वा बल लेना चाहिए और अपने उच्च में हो तो बीस विश्वा बलों का ग्रहण किया जाता है इत्यादि अनेक बलों का तारतम्य प्रकट किया है। एवं जो ग्रह स्वल्प पद (अपने त्रैराशिक या अपने नवांश) में स्थित होकर लग्न को देखता हो तो उसे बली जानना चाहिए ॥ २६ ॥

सहमाधिप का वृद्धि और ह्रास।

स्वस्वामिना शुभखगैः सहितं च दृष्टं
स्वामी बली च यदि तत्सहमस्य वृद्धिः।
चेत्स्वामिना शुभखगैश्च न युक्तदृष्टं
तत्सम्भवो नहि भवेदिति चिन्त्यमादौ ॥२७॥

जो सहम अपने स्वामी से युक्त हो अथवा देखा जाता हो या शुभग्रहों के सहित हो अथवा शुभग्रह उसे देखते हों और यदि पूर्व कहे हुए प्रकार से सहम का स्वामी बली हो तो उस सहम की वृद्धि होगी। अर्थात् फल देने में समर्थ होगी यह जानना चाहिए। अब यह आशंका करते हैं कि सहम का फल कब होगा ? यह ग्रंथकर्ता ने नहीं कहा है इसलिए गणक-चक्रचूड़ामणि श्रीकेशव नामक पंडित कहते हैं कि जो सहम वर्षेश्वर से अथवा राशीश से युक्त हो अथवा अपने ही स्वामी से देखा जाता हो या शुभग्रहों से युत अथवा दृष्ट हो तो उसी के स्वामी की दशा में फल होगा यह जानना चाहिए। और जो सहम अपने स्वामी से अथवा शुभग्रहों से युक्त न हो और न देखा जाता हो तो उस सहम का सम्भव नहीं होगा अर्थात् जैसा नाम कहा है उसके समान फल नहीं देगा। इत्यादि पहले ही से विचार करना चाहिए ॥ २७ ॥

अन्य सहम के असम्भव का लक्षण।

अष्टमाधिपतिना युतेक्षितं पापदृग्युतमथेत्थशालितैः।
संभवेऽपि विलयं प्रयाति तत्तेन जन्मनि पुरेदमीक्ष्यताम् २८

जो सहम वर्षलग्न से आठवीं राशि के स्वामी से युक्त हो अथवा देखा जाता हो अथवा पापग्रहों से युत या दृष्ट हो अथवा उन अष्टमराशि-स्वामी और पापग्रहों के साथ मुथशिल (मिलाप) करता हो तो वह अपने स्वामी अथवा शुभग्रहों करके सहित फल की प्राप्ति के संभव को भी नाश कर देता है अर्थात् जैसा सहम का फल कहा है उसको नहीं कर सक्ता है। इसी से पहले जन्मकाल में सहम के बल और अबल को जानकर विचार करे ॥ २८ ॥

बलिष्ठसहम का साधन और निर्बल का निराकरण ।

आदौ जन्मनि सर्वेषां सहमानां बलाबलम् ।
विमृश्य सम्भवो येषां तानि वर्षे विचिन्तयेत् ॥ २९ ॥

पहिले जन्म समय में पचास सहमों के बल और अबल को जान कर जिन सहमों के फल की प्राप्ति का सम्भव दीख पड़े उन्हीं को वर्ष में चिन्तवन करे और जिन सहमों के फल की प्राप्ति का सम्भव न दीख पड़े उनको वर्ष में कभी न विचारे ॥ २९ ॥

पुण्यसहम का फल ।

सबले पुण्यसहमे धर्मसिद्धिर्धनागमः ।
शुभस्वामीक्षितयुते व्यत्यये व्यत्ययं विदुः ॥ ३० ॥

अब संपूर्ण सहमों के फलों को कहते हैं । पहले पुण्य सहम के फल दिखाते हैं । बल समेत पुण्यसहम हो और शुभग्रह या अपने स्वामी से युक्त हो अथवा देखा जाता हो तो धर्म की सिद्धि और धन की प्राप्ति होगी यह कहना चाहिए । और जो निर्बल होकर पुण्यसहम पापग्रहों से युक्त या देखा जाता हो तो धर्म की सिद्धि नहीं होगी और उस वर्ष में जोड़े हुए धन का नाश होगा । ऐसा फल कहना चाहिए ॥ ३० ॥

पुण्यसहम का अशुभ फल ।

लग्नात्षष्ठाष्टरिष्फस्थं धर्मभाग्ययशोहरम् ।
शुभस्वामिदृशाप्रान्ते सुखधर्मादिसम्भवः ॥ ३१ ॥

जब वर्ष लग्न से छठें, आठवें और बारहवें इन स्थानों में स्थित पुण्यसहम हो तो संपूर्ण वर्ष भर धर्म, भाग्य और यश का नाश करनेवाला होता है । और जो पुण्यसहम पूर्वोक्त स्थानों में स्थित होकर शुभग्रहों या अपने स्वामी से देखा जाता हो तो वर्ष के अन्त में सुख तथा धर्म आदिकों की प्राप्ति होगी अर्थात् वर्ष के पूर्वार्द्ध में अशुभ फलों का देनेवाला होगा और अन्त में शुभ फलों का करनेवाला होगा ॥ ३१ ॥

पापग्रह और शुभग्रह के सम्बन्ध से फल ।

पापयुक्शुभदृष्टं चेदशुभं प्राक्ततः शुभम् ।

शुभयुक्तं पापदृष्टमादौ शुभमसत्परे॥ ३२ ॥

यदि पुण्यसहम पापग्रहों से युक्त और शुभग्रहों से देखा जाता हो तो वर्ष के पूर्वार्द्ध में अशुभ और उत्तरार्द्ध में शुभ होता है। और जब पुण्यसहम शुभग्रहों से युक्त और पापग्रहों से देखा जाता हो तो वर्ष के पूर्वार्धं में शुभ और उत्तरार्द्ध में अशुभ फल होता है यह कहना चाहिए। और जब पापग्रहों से युक्त या दृष्ट होगा तो सम्पूर्ण वर्षपर्यन्त अशुभ फल होता है और जब शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो सम्पूर्ण वर्ष भर शुभ ही फल होता है। यह अर्थ से ही सिद्ध है॥ ३२ ॥

पुण्यसहम की प्रशंसा।

यत्राब्दे पुण्यसहमं शुभं सोऽत्र शुभावहः।
अनिष्टेऽस्मिञ्शुभो नेति पुण्यमादौ विचारयेत्॥ ३३ ॥

जिस वर्ष में पुण्यसहम शुभफलकारी हो वह वर्ष अच्छे फलों का देने वाला होता है और जिस वर्ष में पुण्यसहम अनिष्ट हो तो वह वर्षपर्यन्त शुभ फलों को नहीं देता है, किन्तु अशुभ ही फलों को देता है। इस कारण आदि में पुण्यसहम को विचारना चाहिए॥ ३३ ॥

जन्मलग्न से अनिष्ट स्थान में स्थित पुण्यसहम का अशुभ फल।

सूतौ षष्ठाष्टरिष्फस्थमब्दे पापहतं पुनः।
पुण्यं धर्मार्थसौख्यघ्नं पत्यौ दग्धे फलं तथा॥ ३४ ॥

जन्मसमय में लग्न से यदि छठे, आठवें और बारहवें स्थान में पुण्यसहम स्थित हो और वर्ष में पुण्यसहम पापग्रहों से युक्त अथवा देखा जाता हो तो वह धर्म, अर्थ और सौख्य का नाश करनेवाला होता है इसी प्रकार वर्ष में जो पुण्यसहम का स्वामी दग्ध (अस्त) हुआ हो तो भी धर्म आदिकों का नाश करनेवाला होता है॥ ३४ ॥

सहमान्यखिलानीत्थं सूतौ वर्षे च चिन्तयेत्।
मान्द्यारिकलिमृत्यूनां व्यत्ययादादिशेत्फलम्॥ ३५ ॥

इस प्रकार जन्मकाल और वर्ष में सम्पूर्ण सहमों का विचार करना चाहिए। उनमें से रोग, शत्रु, कलह, मृत्यु और दरिद्र इन सहमों का

फल पुण्यसहम से विपरीत कहे। इसी से ग्रन्थकार नीलकण्ठजी आगे कहेंगे कि जैसे (दारिद्र्यमृतिमान्द्यारिकलिषूक्तो विपर्ययः) अर्थात् दारिद्र्य, मृत्यु, रोग, शत्रु और कलह इन सहमों में विपर्यय कहा गया है। जैसे पुण्यसहम की नाईं (स्वोच्चादिसत्पदगतो यदि लग्नदर्शी) इस श्लोक से लेकर (सूतौ षष्ठाष्टरिष्फस्थं) इस पर्यन्त विचार करने में यदि रोग, शत्रु, कलह, मृत्यु और दरिद्र अशुभ होने से इन सहमों का शुभ फल आया हो तो अशुभ फल कहना और अशुभ फल आया हो तो शुभ फल कहना चाहिए॥ ३५॥

कार्यसिद्धि सहम का शुभाऽशुभ फल।

कार्यसिद्धिसहमं युतं शुभैर्दृष्टमूथशिलगं जयप्रदम्।
संगरेऽथ शुभपापदृष्टियुक्क्लेशतो जय उदीरितो बुधैः ३६॥

यदि कार्यसिद्धिसहम शुभग्रहों से युक्त हो अथवा देखा जाता हो तथा शुभग्रहों से मुथशिल (मिलाप) करता हो तो संग्राम में जय का देनेवाला होता है। अथवा वह कार्यसिद्धि सहम शुभग्रहों से तथा पापग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो बड़े कष्ट के साथ जय मिलता है। ऐसा फल पण्डितों ने कहा है॥ ३६॥

कलिसहम का शुभाशुभ फल।

कलिसद्मिमिश्रखगदृष्टसंयुतं
यदि पापमुथशिलगं कलेर्मृतिम्।
अथ तत्र सौम्यसहितावलोकिते
जयमेति मिश्रदृशितः कलिव्यथे॥ ३७॥

जिसके वर्षकाल में कलहसहम शुभग्रहों या पापग्रहों से दृष्ट हो अथवा संयुत हो और यदि पापग्रहों के साथ मुथशिल (मिलाप) करता हो तो वह मनुष्य लड़ाई के प्रसङ्ग से मृत्यु को प्राप्त होता है। और जिस मनुष्य के वर्षकाल में कलहसहम शुभग्रहों से युक्त अथवा देखा जाता हो तो वह प्राणी लड़ाई में जय को पाता है। अथवा यदि पूर्वोक्त सहम को शुभग्रह और पापग्रह ये दोनों देखते हों तो उस मनुष्य को कलह तथा दुःख ये दोनों होते हैं॥ ३७॥

विवाहसहम का शुभाशुभ फल।

विवाहसद्माधिपसौम्यदृष्टं युतं शुभैर्मूथशिलं शुभाप्तिम्।
कुर्याद्विदामिश्रसमेतदृष्टं कष्टादथ क्रूरमृतीश्वरैर्न ॥ ३८ ॥

जिस मनुष्य के वर्षकाल में विवाहसहम अपने स्वामी से युत अथवा दृष्ट हो तथा अन्य शुभग्रहों से युक्त हो अथवा देखा जाता हो या शुभग्रहों से मुथशिल (मिलाप) करता हो तो उस प्राणी का विवाह होता है और यदि शुभग्रह और पापग्रहों से युक्त हो अथवा देखा जाता हो तो बड़े कष्ट से ब्याह होता है। अथवा विवाह सहम पाप ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो और मुथशिल योग हो अथवा वर्षलग्न वा विवाहसहम से अष्टम स्थान के स्वामी करके युक्त, दृष्ट अथवा इत्थशाल हो तो उस वर्ष में विवाह नहीं होगा। यह कहना चाहिए ॥ ३८ ॥

यशस्सहम का अशुभ फल।

यशोधिपे नैधनगे खलेन
युतेक्षिते सद्यशसो विनाशः।
पापार्जितस्यायशसोऽस्ति लाभो
नष्टौजसि स्यात्कुलकीर्तिनाशः ॥ ३९ ॥

जिसके वर्षकाल में यशस्सहम का स्वामी आठवें स्थान में प्राप्त होकर पापग्रहों से युक्त अथवा देखा जाता हो तो उस प्राणी के उत्तम यशों का नाश होता है और पाप सम्बन्ध से बटोरे हुए अयश का लाभ होता है और वह यशस्सहम का स्वामी आठवें स्थान में स्थित होकर अस्त हो जावे तो उसके कुल की कीर्ति का नाश होता है ॥ ३९ ॥

पुनः यशस्सहम का शुभाशुभ फल।

शुभेत्थशाले शुभदृग्युते वा बलान्विते स्याद्यशसोऽभिवृद्धिः।
युद्धे जयो वाहनशस्त्रलाभः पापेसराफादयशोऽर्थनाशः ४० ॥

जिसके वर्षकाल में यशःसहम का स्वामी शुभग्रहों के साथ मुथशिल (मिलाप) करता हो अथवा शुभग्रहों से दृष्ट या युक्त होकर बलसमेत हो तो उसके यश की बढ़ती और युद्ध में जय होगी। तथा वाहनों और शस्त्रों

का लाभ होता है। ऐसे ही जिसके वर्षकाल में यशस्सहम का स्वामी पापग्रहों के साथ 'ईसराफ़' योग करे तो उस मनुष्य के यश की हानि और धन का नाश होता है ॥ ४० ॥

आशासहम का शुभाशुभ फल।

आशा तदीशश्च षडष्टरिष्फविवर्जितः सौम्ययुतेक्षितश्च।
स्याद्वाञ्छितार्थाम्बरवाहनादिलाभः खलेक्षायुतितोऽतिदुःखम्

जिसके वर्षकाल में आशासहम लग्न से छठे, आठवें या बारहवें इन स्थानों को छोड़कर अन्य स्थानों में स्थित हो अथवा आशासहम का स्वामी भी लग्न से छठे, आठवें और बारहवें इन स्थानों से रहित होकर अन्य स्थानों में टिका हो और आशासहम तथा आशासहम का स्वामी ये दोनों शुभ ग्रहों से युक्त अथवा देखे जाते हों तो उसको वाञ्छित मनोरथ, सुवर्णादि द्रव्य, वस्त्र और वाहन आदि का लाभ होता है। और जो आशासहम या उसका स्वामी ये दोनों पाप ग्रहों से युक्त अथवा देखे जाते हों तो उस मनुष्य को बड़े दुःखों से वाञ्छित मनोरथों की सिद्धि होती है ॥ ४१ ॥

रोगसहम का अशुभ फल।

मान्द्याधिपः पापयुतेक्षितश्च पापः स्वयं रोगकरो विचिन्त्यः।
चेदित्थशालो मृतिपेन मृत्युस्तदा भवेद्धीनबलेतिकष्टात् ॥४२॥

जिस मनुष्य के वर्ष काल में रोग सहम का स्वामी स्वयं पापी होकर पापग्रहों से युक्त अथवा देखा जाता हो तो वह उस मनुष्य को रोगकारी होता है। और यदि रोग सहम का स्वामी लग्न से आठवें स्थान के स्वामी के साथ मुथशिल (मिलाप) करे तो उस प्राणी का मरण होता है और यदि रोगसहम का स्वामी बलरहित हो तो बड़े कष्ट से उस प्राणी का मरण होता है ॥ ४२ ॥

मान्द्यसहम का शुभाशुभ फल।

स्वस्वामिसौम्येक्षणभाजि मान्द्ये नाथे सवीर्येऽष्टषडन्त्यवर्जे।
रोगस्तदा नैव भवेद्विमिश्रयुतेक्षिते रुग्भयमस्ति किञ्चित् ४३

जिस मनुष्य के वर्ष काल में रोगसहम, अपने स्वामी या शुभग्रहों से

युक्त हो या देखा जाता हो अथवा रोगसहम का स्वामी लग्न से छठे, आठवें, और बारहवें इन स्थानों को छोड़ कर अन्य स्थानों में स्थित हो और पूर्व कही हुई रीति से बलयुक्त हो तो उस मनुष्य के किसी प्रकार का रोग नहीं होता है। और जब रोग सहम का स्वामी शुभ ग्रहों तथा पापग्रहों से युक्त अथवा देखा जाता हो तो उस मनुष्य को कुछ रोग का भय होता है। यह जानना चाहिए॥ ४३॥

अर्थसहम का शुभाशुभ फल।

अर्थाख्यं शुभनाथदृष्टसहितं द्रव्यागमात्सौख्यदं
पापैर्दृष्टयुते ग्रहैश्च विलयं कुर्यादथो पापयुक्।
सदृष्टं च शुभेत्थशालि यदि तत्पूर्वं धनं नाशयेत्
पश्चादर्थसमुद्भवं च ससुखं व्यत्यासतो व्यत्ययः॥ ४४॥

जिस मनुष्य के वर्षकाल में अर्थ (धन) नामक सहम शुभग्रह या अपने स्वामी से दृष्ट अथवा युक्त हो तो वह उस मनुष्य के लिये द्रव्य की प्राप्ति से सुख देता है और यदि पापग्रहों से दृष्ट या युक्त हो तो उस मनुष्य के धन का नाश करता है अथवा यदि अर्थसहम पापग्रहों से युक्त होकर शुभग्रहों से देखा जाता हो तथा शुभग्रहों के हा साथ मुथशिल (मिलाप) करता हो तो पूर्वसंचित धन का नाश करता है फिर पीछे कुछ कालान्तर में सुखसमेत धन को देता है और यदि अर्थसहम शुभग्रह या पापग्रहों से देखा जाता हो तथा शुभग्रह या पापग्रहों के साथ मुथशिल (मिलाप) करता हो तो शुभ फल होता है॥ ४४॥

शत्रुमित्रदृष्टि का फल।

रिपुदृष्ट्या रिपोर्भीतिस्तस्करादेर्धनक्षयः।
मित्रदृष्ट्या मित्रयोगाद्धनं मानं यशः सुखम्॥ ४५॥

वर्ष काल में जो सहम शुभ ग्रह या पापग्रह करके शत्रुदृष्टि से देखा जाता हो अर्थात् शुभ ग्रह व पापग्रह जिस सहम को वैरिदृष्टि से देखता हो उस मनुष्य को शत्रुओंसे भय होता है और चोरों से धन का क्षय होता है। और जिस सहम को शुभ ग्रह और पापग्रह मित्रदृष्टि से देखता हो तो वह उस मनुष्य को मित्र के योग से धन, मान, यश और सुख को देता है॥ ४५॥

पुत्रसहम का शुभाशुभ फल ।

सत्स्वामिदृष्टं युतमात्मजस्य लाभं सुखं यच्छति पुत्रसद्म ।
पापान्वितं सौम्यखगेत्थशालि प्राग्दुःखदं पुत्रसुखाय पश्चात्

पुत्रनामक सहम शुभग्रहों या अपने स्वामी से देखा जाता हो अथवा उन से युक्त हो तो वह पुत्र का लाभ और अनेक सुखों को देता है और यदि पापग्रहों समेत पुत्रसहम शुभग्रहों के साथ मुथशिल (मिलाप) करता हो तो पहले पुत्रसम्बन्धी दुःख और पीछे से पुत्र का सुख देता है अर्थात् पहले मनुष्यों के लिये पुत्र का वियोग कर पीछे से पुत्र को देता है ॥ ४६ ॥

पुनः सुतसहम का शुभाशुभ फल ।

पापान्वितं पापकृतेसराफं नाशाय पुत्रस्य गतौजसीशे ।
सूतौ सुतेशः सहमेश्वरोऽब्दे पुत्रस्य लब्ध्यै शुभमित्रदृष्टः ॥४७॥

यदि पुत्रसहम पापग्रहों से युक्त होकर पापग्रहों के साथ ईसराफयोग को करे और उसका स्वामी निर्बल हो अथवा अस्तंगत हो तो पुत्र का नाश करता है और वर्ष प्रवेश के समय में पुत्रसहम का स्वामी जन्म समय में पाँचवें भाव का स्वामी हो और फिर शुभग्रहों से तथा मित्रों करके देखा जाता हो तो पुत्र को देता है ॥ ४७ ॥

पितृसहम का शुभाशुभ फल ।

पित्र्यं सदीक्षितयुतं पतियुक्तदृष्टं
तातस्य यच्छति धनाम्बरमानसौख्यम् ।
पत्यौ गतौजसि मृतौ खलमूसराफे
नाशः पितुश्चरगृहे परदेशयानात् ॥ ४८ ॥

जिसके वर्षकाल में पितृ सहम शुभग्रहों से युक्त वा देखा जाता हो अथवा अपने स्वामी ही करके युक्त वा दृष्ट हो तो वह उस मनुष्य के पिता के लिये धन, वस्त्र, मान अथवा सुख को देता है और यदि पितृसहम का स्वामी निर्बल हो अथवा अस्तंगत हो या वर्ष लग्न से आठवें स्थान में स्थित होकर पापग्रहों के साथ मूसरीफ योग करे और चरराशि मेष, कर्क, तुला और मकर राशियों में से किसी राशि में बैठा हो तो उस

प्राणी का पिता परदेश की यात्रा करते हुए मृत्यु को पावेगा अर्थात् परदेश में जाकर मरेगा ॥ ४८ ॥

पुनः पितृसहम का शुभाशुभ फल ।

शुभेत्थशाले खलखेटयोगे गदप्रकोपः प्रथमं महान्स्यात् ।
पश्चात्सुखं विन्दति पूर्णवीर्ये नाथे नृपान्मानयशोऽभिवृद्धिः ४६

यदि पितृसहम शुभग्रहों के साथ इत्थशाल (मुथशिल) योग करे और पापग्रहों से युक्त हो तो वर्ष के पूर्वार्द्ध में रोग का बड़ा कोप होगा। फिर पीछे वर्ष के उत्तरार्द्ध में उस प्राणी का बाप सुख को पावेगा अर्थात् रोगरहित हो आनन्द पावेगा। यदि पितृसहम का स्वामी (पञ्चवर्गी में कहे हुए प्रकार से) पूर्ण बली हो तो उस मनुष्य का बाप राजा के घर से मान, यश और द्रव्य को पावेगा ॥ ४६ ॥

बन्धनसहम का शुभाशुभ फल ।

बन्धनाख्यसहमं युतेक्षितं स्वामिना नहि तदास्ति बन्धनम् ।
पापवीक्षितयुतेऽस्ति बन्धनं पापजे मुथशिले विशेषतः ॥५०॥

यदि बन्धन सहम अपने स्वामी से युक्त अथवा देखा जाता हो तो बन्धन नहीं होगा अर्थात् जेलखाना में नहीं जायगा। और यदि वह बन्धन सहम पापग्रह से देखा जाता हो अथवा युक्त हो तो बन्धन होगा पुनः यदि बंधनसहम और उसका स्वामी ये दोनों पापग्रहों से मुथशिल (मिलाप) करते हों तो विशेष बन्धन होगा ॥ ५० ॥

गौरवसहम का शुभाशुभ फल ।

गौरवाख्यसहमं युतेक्षितं स्वामिना शुभखगैः सुखाप्तये ।
राजगौरवयशोऽम्बराप्तये पापवीक्षितयुते पदक्षतिः ॥ ५१ ॥

जिस मनुष्य के वर्षकाल में गौरव नामक सहम अपने स्वामी अथवा शुभ ग्रहों से युक्त या देखा जाता हो तो वह उस मनुष्य के लिये सुख, राज-गौरव, यश और वस्त्रों को देता है। और यदि गौरव सहम पापग्रहों से दृष्ट वा युत हो तो जिस अधिकार में मनुष्य बैठा हो उस अधिकार से च्युत (बेरोजगार) हो जाता है ॥ ५१ ॥

पुनः गौरवसहम का शुभफल ।

शुभाशुभैर्दृष्टयुतं खलैश्चेत्कृतेत्थशालं धनमाननाशम् ।
पूर्वं विधत्ते चरमे शुभेत्थशाले सुखं वाहनशस्त्रलाभम् ॥ ५२ ॥

यदि गौरव सहम शुभ ग्रह या पापग्रहों करके देखा जाता हो या युक्त हो पापग्रहों के साथ मुथशिल (मिलाप) योग हो तो वह वर्ष के पूर्वार्द्ध में धन और मान को नाश करता है। और यदि गौरव सहम केवल शुभ ग्रहों के ही साथ मुथशिल करे तो वह वर्ष के उत्तरार्द्ध (आखिरी) में सुख, वाहन और शस्त्रों का लाभ कराता है ॥ ५२ ॥

कर्मसहम का शुभाशुभ फल ।

कर्मभावसहमाधिपाश्शुभैः स्वामिना मुथशिला बलान्विताः ।
हेमवाजिगजभूमिलाभदाः पापदृष्टियुतितोऽशुभप्रदाः ॥ ५३ ॥

कर्मभाव, कर्मसहम, कर्मभाव का स्वामी और कर्मसहम का स्वामी ये चारो बलवान होकर शुभ ग्रहों या अपने स्वामी के साथ मुथशिल योग करते हों तो ये सोना, घोड़ा, हाथी, पृथ्वी का लाभ कराते हैं और यदि यह चारों पापग्रहों करके देखे जाते हों अथवा युक्त हों तो वे पूर्वोक्त लाभ को नहीं देते हैं ॥ ५३ ॥

पुनः कर्मभाव और कर्मसहम के स्वामियों का शुभ फल ।

दग्धा वक्राः कर्मवैकल्यदास्ते युक्ता दृष्टाः सौरिणा ते विशेषात् ।
राज्यभ्रंशः कर्मनाशश्च राजकर्मेशौ चेन्मूसरीफौ खलेन ॥ ५४ ॥

कर्मभाव का स्वामी और कर्मसहम का स्वामी ये दोनों अस्तंगत हों अथवा वक्री हों तो कार्य की सिद्धि को नहीं देते हैं और यदि कर्मभावनाथ, कर्मसहमनाथ ये दोनों शनैश्चर करके देखे जाते हों अथवा युक्त हों तो यह विशेष कार्य्य की सिद्धि को नहीं देते हैं। यदि राजसहम का स्वामी और कर्मभाव का स्वामी ये दोनों पाप ग्रहों से देखे जावें अथवा युक्त हों तो राज्य और कर्म का नाश होता है अर्थात् प्रारब्ध के शुभकार्य का नाश होता है ॥ ५४ ॥

संदिग्ध अर्थवाली सहमों का अर्थ ।

उपदेष्टा गुरुर्ज्ञानं विद्या शास्त्रं श्रुतिस्मृती ।

मोहोजाड्यं बलं सैन्यमङ्गं देहो जलं द्युतिः ॥ ५५ ॥

गुरुसहम में या गुरुशब्द से उपदेश करनेवाला, विद्या शब्द से ज्ञान, शास्त्र शब्द से श्रुति-स्मृतियाँ, जाड्य शब्द से मोह, बल शब्द से सैन्य, देह शब्द से अंग अर्थात् शरीर और जल शब्द से द्युति (कांति) को ग्रहण करना चाहिए ॥ ५५ ॥

गुरु और गौरव सहम का भेद ।

गुरुतामण्डलेशत्वं गौरवं मानशालिता ।
निग्रहानुग्रहविभू राजा छत्रादिलिङ्गभाक् ॥ ५६ ॥

गुरुताशब्द से देशों के स्वामीपना का और गौरव शब्द से अधिक प्रतिष्ठा होने का ग्रहण है । चन्द्रमा, क्षत्रिय, भूपाल इनमें राजशब्द प्रसिद्ध है । अतः राजशब्द से पृथ्वीश्वर कहा जाता है । वह बाँधने और अनुग्रह करने में समर्थ तथा छत्र, चामर आदि चिह्नों का धारनेवाला होता है ॥ ५६ ॥

माहात्म्य, सामर्थ्य और शौर्य शब्दों का अर्थ ।

माहात्म्यं मन्त्रगाम्भीर्यं धृतिबुद्ध्यादिशालिता ।
सामर्थ्यं देहजा शक्तिः शौर्यं यत्नोरिनिग्रहे ॥ ५७ ॥

माहात्म्य का अर्थ (महत्त्व) है । वह मंत्र के गाम्भीर्य, धैर्य और परिणामजा बुद्धि आदि में कहा जाता है । सामर्थ्य शब्द से देह से पैदा हुई शक्ति को और शौर्य शब्द से शत्रु के पकड़ने के यत्न को कहते हैं ॥५७॥

आशा, श्रद्धा, बन्दक और पानीयपतनशब्दों का अर्थ ।

आशेच्छोक्तामतिर्धर्म्या श्रद्धा बन्दः पराश्रयः ।
पानीयपतनं वृष्टिर्जलेऽकस्माच्च मज्जनम् ॥ ५८ ॥

आशा शब्द से इच्छा, श्रद्धा शब्द से धर्मयुक्त मति, बन्द शब्द से पराधीनता और पानीयपतन शब्द से वृष्टि अथवा अकस्मात् जल में गिरने (बूड़ने) को कहते हैं ॥ ५८ ॥

ताप, मान्द्य, बन्धु, वणिक् और प्रसव शब्द का अर्थ ।

आधिव्याधी तापमान्द्ये सपिण्डा बान्धवाः स्मृताः ।
सत्यालीकं वणिग्वृत्तिराधानं प्रसवः स्मृतः ॥ ५९ ॥

ताप शब्द से आधि (मानसिक दुःख) मान्द्य शब्द से शरीर को पीड़ित करनेवाली व्याधि, बन्धु शब्द से सपिण्ड बांधव कहे जाते हैं। वणिक् शब्द से सत्य और असत्य जीविकावाला और प्रसव शब्द से पैदा होना कहा जाता है ॥ ५९ ॥

परकर्म सहम का अर्थ ।

दासत्वं परकर्मोक्तमन्यत्स्पष्टं स्वनामतः ।
निरूप्याणि यथायोग्यं कुलजातिस्वरूपतः ॥ ६० ॥

परकर्म शब्द से दासपना कहा है । इसके अतिरिक्त अन्य सहम अपने नाम ही से स्पष्ट हैं। उनका कुल, जाति और स्वरूप से यथायोग्य निरूपण करना चाहिए ॥ ६० ॥

सहमों का शुभाशुभ फल ।

शुभयोगेक्षणात्सौख्यं पत्युर्वीर्यानुसारतः ।
दारिद्र्यमतिमान्द्यारिकलिषूक्तो विपर्ययः ॥ ६१ ॥

जो सहम शुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो सहमस्वामी के बल के अनुसार सुख होता है अर्थात् सहम का स्वामी पूर्ण बली हो तो बड़ा सुख, मध्यम बली हो तो मध्यम सुख और जब हीन बली हो तो सुख नहीं होता है। दारिद्र्य, अतिमान्द्य, अरि और कलि इन सहमों का उलटा फल कहना चाहिए—अर्थात् इन सहमों का यदि शुभ फल आया हो तो अशुभ जानना चाहिए और यदि शुभ फल आया हो तो अशुभ फल कहना चाहिए ॥ ६१ ॥

प्रश्न से सहमों का विचार ।

प्रश्नकालेऽपि सहमं विचार्यं प्रष्टुरिच्छया ।
सर्वेषामुपयोगोऽत्र चित्रं पृच्छन्ति यज्जनाः ॥ ६२ ॥

प्रश्नकाल में पूछनेवाले की इच्छा से पुण्यादि सहमों का विचार करना चाहिए। यहाँ सम्पूर्ण सहमों का प्रयोजन है क्योंकि मनुष्य चित्र विचित्र बातों को पूँछा करते हैं ॥ ६२ ॥

दशाओं का साधन-प्रकार ।

स्पष्टान्सलग्नान् खचरान् विधाय

राशीन्विनात्यल्पलवं तु पूर्वम् ।
निवेश्य तस्मादधिकाधिकांशं
क्रमादयं स्यात्तु दशाक्रमोऽब्दे ॥ ६३ ॥

प्रथम कृशांशों का साधन कहते हैं—वर्षप्रवेश के समय राशि रहित लग्न समेत अंशादि युक्त स्पष्टग्रहों को स्थापित करे परन्तु पहले सब ग्रहों में से जो कम अंशवाला ग्रह हो उसे स्थापन करे । फिर उस कम अंशवाले ग्रह से जो अधिक अंशवाला ग्रह हो उसको स्थापन करे । इसीप्रकार क्रम से अधिक अधिक अंशवाले ग्रहों को स्थापन करता जावे । वर्षप्रवेश में यह दशा का क्रम होता है ॥ ६३ ॥

पात्यांशसाधन ।

ऊनं विशोध्याधिकतः क्रमेण
शोध्यं विशुद्धांशकशेषकैक्यम् ।
सर्वाधिकांशोन्मितमेव तत्स्या-
दनेन वर्षस्य मितिस्तु भाज्या ॥ ६४ ॥

विशेष शोधने के योग्य अधिक अंशादि वाले ग्रह से ऊन (कम) अंशवाले ग्रह को शोधन करे अर्थात् पहले स्वल्प अंशादिकों को ही स्थापन करे फिर उसको दूसरे में घटा कर शेष को स्थापित करे । इसी प्रकार दूसरे को तीसरे में घटा कर शेष को स्थापन करे और तीसरे को चौथे में घटा २ कर क्रम से शेष को स्थापित करता जावे तदन्तर विशुद्धांशक शेषों का ऐक्य करे अर्थात् परस्पर शोधन करते हुए जो बचे हुए अंश हैं उनका ऐक्य करे । वह ऐक्य यदि सबों में अधिक अंशवाले अन्तिम (आखिरी) ग्रह के बराबर हो जावे तो ठीक है, यह समझना चाहिए । पीछे इसी शेषांश योग से सौरी ३६० वा सावनी ३६५ । १५ । ३१ । ३० वर्ष प्रमाण में भाग लेने से जो लब्ध मिले वह ध्रुवांक होता है ॥ ६४ ॥

दशा के दिनों का साधन ।

शुद्धांशकांस्तान्गुणयेदनेन लब्धध्रुवाङ्केन भवेद्दशायाः ।

मानं दिनाद्यं खलु तद्ग्रहस्य फलान्यथासां निगदेत्तु शास्त्रात् ॥

इस लब्ध हुए ध्रुवाङ्क से सर्व शुद्धांशों को गुणना चाहिए। ऐसे करते हुए उस २ ग्रह के दिनादिक दशा का मान होता है। ऐसे ही दशा के दिन आदिकों को लाकर इन दशाओं के शुभ तथा अशुभ फलों को ज्योतिःशास्त्र से कहे ॥ ६५ ॥

अंशों की समता में निर्णय।

शुद्धांशसाम्ये बलिनो दशाद्या
बलस्य साम्येऽल्पगतेस्तु पूर्वा।
साम्ये विलग्नस्य खगेन चिन्त्या
बलादिका लग्नपतेर्विचिन्त्या ॥ ६६ ॥

दोनों ग्रहों के शुद्ध अंश बराबर हों तो पञ्चवर्गी में जिसका बल अधिक हो उसी की पहिले दशा होती है अर्थात् शोध्य और शोधक दोनों ग्रहों के अंश बराबर हों तो उन दोनों में से जिसका पञ्चवर्गी में बल अधिक दीख पड़े उसी की पहिले दशा कही जावेगी।

बल के बराबर रहते अर्थात् पञ्चवर्गी में जिन ग्रहों का बल बराबर हो तो उनमें से अल्पगतिवाले ग्रह की पहले दशा होगी।

लग्न और ग्रह के अंश बराबर हों तो किस की आदि में दशा होगी? इसपर कहते हैं कि ग्रह और लग्न इन के अंशादि समान हों तो लग्नपति की दशा जाननी चाहिए।

सौरदशा में वर्ष प्रवेश के समय में ही पहले सौर दशा का प्रवेश होगा। उसके नीचे वर्ष प्रवेशकालीन स्पष्ट सूर्य को लिखना चाहिए। पहले दशा के दिनादिकों को वर्ष प्रवेशकालीन स्पष्ट सूर्य में जोड़ना चाहिए। जैसे कि सूर्य के अंश में दिन जोड़ देवे, कला में घटियों को जोड़े, विकला में पलों को जोड़ना चाहिए। यदि साठ से अधिक हो

नोट—अब यहाँ यह विचार करना चाहिए कि (शुद्धांशसाम्ये) यह अपपाठ है, क्योंकि इस पाठ में किसी आचार्य का प्रमाण वाक्य नहीं दीख पड़ता है इस कारण (हीनांशसाम्ये) ऐसा पाठ साधन करना चाहिए। इस पाठ में सब आचार्यों का सम्मत भी है, इसलिए पण्डितों को यह पाठ युक्तियुक्त समझना चाहिए—और यहाँ दशा का क्रम पहले हीनांश से ही होता है।

हो जावें तो साठ का भाग देकर लब्ध को कला में जोड़े और कला में ६० का भाग लगाकर लब्ध को अंशों में जोड़ देवे । यदि अंश तीस से अधिक होजावें तो तीस का भाग देकर लब्ध को राशि में जोड़ देवे । यदि राशिगण बारह से अधिक हो जावें तो बारह का भाग देवे । भाग देने से जो लब्ध मिले उसको त्याग देवे । शेष राशियाँ होंगी और उसी सूर्य में (दूसरी दशा प्रवेशकालीन सूर्य में) दूसरी दशा के दिनादिकों को जोड़ देना चाहिए तो उस सूर्य में दूसरी दशा का प्रवेश होगा । ऐसे ही उस सूर्य में सम्पूर्ण दशा के दिनादिकों को क्रम से जोड़ कर वर्ष कालीन सूर्य के बराबर आखिरीवाला सूर्य हो तो सौरदशा का क्रम शुद्ध है अन्यथा अशुद्ध समझना चाहिए ।

अब सावनमान से दशा का क्रम दिखलाते हैं । वर्ष प्रवेश के समय में सावन प्रथम दशा का प्रवेश होता है उसके उपरान्त वर्ष प्रवेश के वारादिकों अर्थात् जिस वार, घटी और पल में लगा हो उसी में पहले सावन दशा के दिनादि जोड़ना चाहिए । उस महीने में उसी वारादि में दूसरी दशा का प्रवेश होगा । ऐसे ही दूसरी दशा के प्रवेश वारादि में दूसरी दशा के दिन जोड़ना चाहिए । उस महीने में उतने संख्या के वारादिकों में तीसरी दशा का प्रवेश होगा, ऐसे ही अगाड़ी भी जोड़ता चला जावे । इस प्रकार जोड़ते-जोड़ते जब आखिरी के वारादिक पहले के वारादिकों के तुल्य आजावें तो दशा का क्रम शुद्ध जानो अन्यथा अशुद्ध समझना चाहिए ॥ ६६ ॥

उदाहरण ।

जैसे कि सब ग्रहों की अपेक्षा न्यून अंशवाला शनैश्चर है इस कारण राशि को छोड़कर पहले शनैश्चर ६ । ४८ । ५४ को स्थापित किया । फिर सूर्य ७ । ३० । ६ को, फिर बुध १२ । १६ । ८ को, फिर भौम १४ । ३२ । ३६ को, फिर लग्न १८ । ३ । ५४ को, फिर चन्द्रमा २२ । ६ । ४७ को, फिर शुक्र २४ । ३१ । ४८ को फिर बृहस्पति २६ । ३५ । १३ को स्थापन किया । ये हीनांश हुए । अब पहले यथास्थित शनैश्चर के पात्यांशों को धरे ६ । ४८ । ५४ फिर इनको सूर्य में घटा कर शेष ० । ४१ । १२ बचे हुए सूर्य के पात्यांश हुए, ऐसे ही पूर्वांशों को अगाड़ी में शोधने से सबों के पात्यांश होंगे । जैसे सूर्य के अंशादिकों को बुध में घटाया तो ४ । ४६ । २ ये बुध के पात्यांश हुए । बुध के अंशादिकों को मङ्गल में घटाया तो २ । १६ । २८ ये मङ्गल के पात्यांश हुए । मङ्गल के हीनांशों

को लग्न में शोधन किया तो ३।३१।१८ ये लग्न के पात्यांश हुए। लग्न के हीनांशों को चन्द्रमा में घटाया तो ४।५।५३ ये चन्द्रमा के पात्यांश हुए। चन्द्रमा के हीनांशों को शुक्र में घटाया तो २।२२।१ ये शुक्र के पात्यांश हुए। शुक्र के हीनांशों को बृहस्पति में घटाया तो ५।३।२५ ये बृहस्पति के पात्यांश हुए। अब इन पात्यांशों का योग किया तो २९।३५।१३ यह योग सम्पूर्ण हीनांशों के अंत में स्थित गुरु के तुल्य है इस से ठीक हुआ।

दशा के दिनादि लाने की विधि यह है कि पूर्वोक्त से वर्ष प्रमाण में भाग लेवे। जैसे २९।३५।१३ यह योग है। इसके अंशों को ६० से गुण दिया तो १७४० यह ध्रुवांक आया फिर इसमें ३५ कलाओं को जोड़ दिया तो १७७५ हुए। फिर इसको ६० से गुण दिया तो १०६५०० हुआ। इसमें १३ विकलाओं को जोड़ दिया तो १०६५१३ यह भाजक हुआ। अब वर्ष प्रमाण ३६० को साठ से गुण दिया तो २१६०० हुए। फिर इसको ६० से गुणा किया तो १२९६००० यह भाज्य हुआ। इसमें योगरूप भाजक का भाग देने से १२।१०।३ यह ध्रुवांक उत्पन्न हुआ। इससे शनैश्चर के ६।४८।५४ पात्यांशों को गुण दिया तो ८२।५५।१७ ये शनैश्चर की दशा के दिनादि हुए। इसी प्रकार अन्य पात्यांशों को इस ध्रुवांक १२।१०।३ से गुण देवे तो सबको दशा के दिनादि आ जावेंगे।

सौरमान से हीनांशा-पात्यांशादशा।

	श.	सूर्य	बुध	मंगल	लग्न	चंद्र	शुक्र	गुरु	योगाः
हीनांशा	६ ४८ ५४	७ ३० ६	१२ १६ ८	१४ ३२ ३६	१८ ३ ५४	२२ ९ ४७	२४ ३१ ४८	२९ ३५ १३	,, ,, ,,
पात्यांशा	६ ४८ ५४	० ४१ १२	४ ४६ २	२ १६ २८	३ ३१ १८	४ ५ ५३	२ २२ १	५ ३ २५	२९ ३५ १३
दशादि के दिनादि	८२ ५५ १७	८ २१ १८	५९ ०० १९	२७ ४० २७	४२ ५० ५९	४९ ५१ ४७	२८ ४७ ५९	६१ ३१ ५४	३६० ०० ००
दशाप्रवेश सूय	९ ७ ३० ६	०० ०० २५ २३	०० ८ ४६ ४१	२ ६ ४७ ००	३ ४ २७ २७	४ १७ १८ २६	६ ७ १० १३	७ ५ ५८ १२	९ ७ ३० ६

अब सावनमान से दशा का क्रम दिखलाते हैं कि पूर्वरीति से पहले हीनांशों को स्थापन करे फिर सब में से जो अधिक हीनांश हो उसको यथास्थित रूप से स्थापन करे । तदनन्तर पूर्वांशों को आगे के अंशों में शोधन करके सबके पात्यांशों को धरे । फिर इन पात्यांशों का योग करे । यह योग यदि अन्त्य हीनांशों के बराबर हो जावे तो ठीक समझना चाहिए ।

उदाहरण ।

जैसे २९ । ३५ । १३ यह सब का योग है । इसी योग के २९ अंशों को साठ से गुण दिया तो १७४० हुए । फिर इसमें ३५ कलाओं को जोड़ दिया तो १७७५ हुए । तदनन्तर साठ से कलाओं को गुण कर १३ विकलाओं को जोड़ दिया तो १०६५१३ यह योगरूप भाजक हुआ । अब वर्षप्रमाण ३६५ । १५ । ३१ यह हैं । इसको भी दो बार साठ से गुणा किया तो १३१४९३१ यह भाज्य हुआ । इसमें १०६५१३ से भाग दिया तो १२ । २० । ४२ यह गुणक उत्पन्न हुआ । इसी करके शनैश्चर के पात्यांशों ६ । ४८ । ५४ को गुण दिया तो ८४ । ७ । ५२ यह शनैश्चर की दशा के दिनादि हुए । ऐसे ही अन्य ग्रहों के भी दशादिनादि आ जावेंगे । अब खुलाशा समझने के लिए चक्र को लिखते हैं ।

सावनमान से कृशांशा पात्यांशादशा ।

	शनि	सूर्य	बुध	मंगल	लग्न	चन्द्र	शुक्र	गुरु	योग
हीनांशा	६ ४८ ५४	७ ३० ६	१२ १६ ८	१४ ३२ ३६	१८ ३ ५४	२२ ६ ४७	२४ ३१ ४८	२९ ३५ १३	००० ००० ०००
पात्यांशा	६ ४८ ५४	० ४१ १२	४ ४६ २	२ १६ २८	३ ३१ १८	४ ५ ५३	२ २२ १	५ ३ २५	२९ ३५ १३
दशा के दिनादि	८४ ७ ५२	८ २८ ३७	५८ ५१ १५	२८ ४ ४१	४३ २८ ३०	५० ३५ २६	२९ १३ १२	६२ २५ २८	३६५ १५ ३१
दशाप्रवेश वारादि	२ १२ १८ ३०								

अन्तर्दशा-साधन।

दशामानं समामानं प्रकल्प्योक्तेन वर्त्मना।
अन्तर्दशा साधनीया प्राक्पात्यांशवशेन तु॥
आदावन्तर्दशा पाकपतेस्तत्क्रमतोऽपरा॥ ६७॥

अन्तर्दशा के लाने की विधि कहते हैं कि, जिस ग्रह की दशा में अन्तर्दशा करनी हो उस दशा के दिन घटी, पलात्मक मान को समामान कल्पन करे अर्थात् दशा के दिन, घटी, पलों को ही वर्षमान जाने। फिर कहे हुए मार्ग से अन्तर्दशा के दिन, घटी, पल को दोबार साठ से गुणा करे अर्थात् सबको पलात्मक करे फिर जो अंक आवे उसको भाज्य समझे। तदनन्तर पात्यांशों के योगरूप भाजक से भाग लेने पर गुणक होगा। फिर उस गुणक से पात्यांशों को गुण देवे तो अन्तर्दशा के दिन घटी पल आवेंगे। अन्तर्दशा का क्रम यह है कि महादशा में जिसकी दशा पहले आवे उसी की आदि में अन्तर्दशा होगी फिर उसी क्रम से अपरों की होगी यह सिद्धान्त जानना चाहिए॥ ६७॥

उदाहरण।

जैसे शनैश्चर की दशा के ८२। ५५। १७ यह दिनादि हैं। इनको साठसे दो बार गुण दिया तो २९८५१७ यह भाज्य हुआ। इसमें पात्यांश के योगरूप १०६५१३ भाजक से भाग लिया तो २। ४८। ९ यह गुणक हुआ। इससे शनैश्चर के पात्यांशों ६। ४८। ५४। को गुण दिया तो १९। ५। ५७ यह शनैश्चर की अन्तर्दशा के दिन, घटी, पल हुए। ऐसे ही शनैश्चर की दशा के मध्य में सबोंकी अन्तर्दशा बना कर लिखे।

यद्यपि नीलकंठजी को हीनांशा पात्यांशा दशा ही उपयुक्त समझ पड़ी है तथापि वर्ष में कई एक दशाएँ मिलती हैं परन्तु आजकल प्रायः मुद्दा-दशा ही ज्योतिषी लोग वर्षपत्र में लिखते हैं जोकि विंशोत्तरी दशा से निकाली गई है। फल भी अधिकतर इसी का मिलता है। अतः सब के ज्ञानार्थ यहाँ ग्रन्थान्तर से मुद्दादशा उद्धृत करते हैं।

मुद्दादशा की विधि।

(जन्मर्क्षसंख्यासहिता गताब्दा
दृगूनिता नन्दहृतावशेषाः।

आ.चं.कु.रा.जी.श.बु.के.शु. पूर्वा
भवन्ति मुद्दादशिकाक्रमोऽयम् ॥)

जन्म नक्षत्र की संख्या में गतवर्षों को जोड़े और उनमें से २ घटावे। फिर उसमें ६ का भाग देवे। जो शेष बचे उसे सूर्यादि की दशा जाने अर्थात् १ बचे तो सूर्य, २ चन्द्र, ३ मंगल, ४ राहु, ५ गुरु, ६ शनि, ७ बुध, ८ केतु और ६ बचे तो शुक्र की दशा जानना चाहिए। विंशोत्तरी दशा के वर्षों को ३ से गुण देवे तो मुद्दादशा के दिन होते हैं। जैसे सूर्य की दशा ६ वर्ष की है। इसे ३ से गुण दिया तो १८ हुए। वर्ष में सूर्य १८ दिन रहता है। इसीप्रकार सब ग्रहों की दशा समझना।

मुद्दादशाचक्र।

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	दशास्वामी
०	१	०	१	१	१	१	०	२	मास
१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	दिन

मुद्दा दशा में अन्तर निकालने की यह रीति है कि जिस ग्रह की दशा में अन्तर निकालना हो उस ग्रह की दशा को इन ध्रुवाङ्कों से गुण दे।

ध्रुवाङ्क।

(वेदा नागाः शराः सप्त दिक् रसाङ्कशरा रसाः।
सूर्यादीनां च गुणकास्तैर्निघ्ना स्वदशामिति ॥ १ ॥
षष्ट्याप्तान्तर्दशा तस्य जायतेऽतिपरिस्फुटा।
यस्य वर्षे भवेत्तस्य प्रथमान्तर्दशा भवेत् ॥ २ ॥
अन्यास्तदग्रिमस्थानाज्जायन्तेऽन्तर्दशा अपि।)

सूर्य के ४, चन्द्रमा के ८, भौम के ५, बुध के ७, गुरु के १०, शुक्र के ६, शनि के ६, राहु के ५ और केतु के ६ ध्रुवाङ्क होते हैं।

इन सूर्यादि के ध्रुवांकों से दशा को गुण कर साठ से भाग देने से अन्तर्दशा के दिनादि होते हैं। जैसे सूर्य के १८ दिनों को ४ से गुणा तो

७२ हुए । ६० का भाग दिया तो १ दिन १२ घटी सूर्य में सूर्य का अन्तर हुआ । सूर्य के १८ दिनों को चन्द्रमा के ध्रुवाङ्क ८ से गुणा तो १४४ हुआ । ६० का भाग दिया तो २ दिन २४ घटी सूर्य की दशा में चन्द्रमा का अन्तर हुआ । इसीप्रकार भौमादि का अन्तर जानना ।

मुद्दादशान्तर्गत शन्यन्तर्दशाचक्र ।

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ग्रहदशा
८	६	५	५	३	७	४	४	६	दिन
३३	३६	४२	४२	४८	३६	४५	४५	३०	घटी

मुद्दादशान्तर्गतबुधान्तर्दशाचक्र ।

बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	ग्रहदशा
५	५	५	३	६	४	४	८	७	दिन
५७	०६	०६	२४	४८	१५	१५	३०	३६	घटी

मुद्दादशान्तर्गत केत्वन्तर्दशाचक्र ।

के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	ग्रहदशा
२	२	१	२	१	१	३	३	२	दिन
६	६	२४	४८	४५	४५	३०	६	२७	घटी

मुद्दादशान्तर्गत शुक्रान्तर्दशाचक्र ।

शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ग्रहदशा
६	४	८	५	५	१०	९	७	६	दिन
००	००	००	००	००	००	००	००	००	घटी

मुद्दादशान्तर्गत सूर्यान्तर्दशाचक्र ।

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्रहदशा
१	२	१	१	३	२	२	१	१	दिन
१२	२४	३०	३०	००	४२	६	४८	४८	घटी

मुद्दादशान्तर्गतचन्द्रान्तर्दशाचक्र ।

चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ग्रहदशा
४	२	२	५	४	३	३	२	२	दिन
०	३०	३०	००	३०	३०	००	००	००	घटी

मुद्दादशान्तर्गतभौमान्तर्दशाचक्र ।

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	ग्रहदशा
१	१	३	३	२	२	२	१	२	दिन
४५	४५	३०	६	२७	०६	०६	२४	४८	घटी

मुद्दादशान्तर्गतराह्वन्तर्दशाचक्र ।

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	ग्रहदशा
४	९	८	६	५	५	३	७	३	दिन
३०	००	६	१८	२४	२४	३६	१२	३०	घटी

मुद्दादशान्तर्गतगुर्वन्तर्दशाचक्र ।

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	ग्रहदशा
८	७	५	४	४	३	६	४	४	दिन
००	१२	३६	४८	४८	१२	२४	००	००	घटी

मासप्रवेश और दिनप्रवेश लाने की विधि ।

एकैकराशिवृध्द्या चेत्तुल्यौंशाद्यैर्यदा रविः ।
तदा मासप्रवेशो द्युप्रवेशश्चेत्कलासमः ॥ ६८ ॥

जन्मकालीन सूर्य जितनी राशिसंख्यावाला हो उसको ग्यारह स्थानों में रखना चाहिए। जिस मास घटी पलात्मक काल में एकादि राशिवृद्धि से युक्त होकर यथावस्थित अंशादि के बराबर सूर्य हो तो उतनी संख्या वाला मासप्रवेश जानना चाहिए अर्थात् वर्ष प्रवेश के समय में ही पहले मास का प्रवेश होता है। वहाँ जन्मकालीन सूर्य के समान सूर्य रहते हैं। यदि दूसरे मास का प्रवेश करना हो तो एक राशि को जोड़

देवे उसी से अंश कला विकलाओं का समत्व रहेगा । राशि के युक्त होने पर उस पूर्वके बराबर सूर्य जिस समय में हो तभी दूसरे मास का प्रवेश होता है । ऐसाही अगाड़ी भी जानो । यदि दिन प्रवेश करना हो तो अंशों में एक २ जोड़ता जावे उसीसे कला विकलाओं का समत्व जिस समय में हो तभी दिन का प्रवेश होता है ॥ ६८ ॥

पञ्चांग से मासप्रवेश की घटिका आदि का साधन ।

मासार्कस्य तदासन्नापङ्क्त्यर्केण सहान्तरम् ।
कलीकृत्वार्कगत्याप्तं दिनाद्येन युतोनितम् ॥ ६९ ॥
तत्पङ्क्तिस्थं वारपूर्वं मासार्केऽधिकहीनके ।
तद्वाराद्ये मासवेशोऽप्येवमेव च द्युक्रिया ॥ ७० ॥

एक-एक राशि के योग से मासप्रवेश का सूर्य होता है । इसी के समीपवर्ति पञ्चांग में स्थित जो अवधि का सूर्य और मासप्रवेश का सूर्य है इन दोनों का अन्तर करे । फिर उसकी कला करे । तदनन्तर अवधिस्थ सूर्य की गति से भाग लेने से बार, घटी, पल मिलेंगे । इनको अवधिस्थ वारादि में युक्त करे अथवा घटा देवे—अर्थात् अवधिस्थ सूर्य से जब मासप्रवेश का सूर्य अधिक हो तो अवधिस्थ वारादि में युक्त करना चाहिए और यदि मासप्रवेश के सूर्य से अवधिस्थ सूर्य अधिक हो तो अर्कगति से भाग लेनेपर जो लब्ध हुआ बारादि है उसको अवधिस्थ वारादि में घटा देवे । फिर उस बाक़ी बचे हुए वारादि अर्थात् वार, घटी, पलात्मक काल में मासका प्रवेश होगा । इसी रीति से दिन का प्रवेश जानना चाहिए । यहाँ अवधिस्थ वारादि के स्थान पर पण्डित विश्वनाथ ने रामविनोदस्थ पञ्चाङ्ग अथवा मकरन्द के पञ्चाङ्ग से (अब्दप बनाया है) उसीमें ऋण चालक को घटाते तथा धनचालक को जोड़ते हैं । परन्तु यह आशय ग्रन्थकार का नहीं है । इसलिए अब्दप का प्रकार ग्रन्थ के विस्तार के भय से नहीं लिखा गया ॥ ७० ॥

उदाहरण ।

जैसे स्पष्ट सूर्य ९ । ७ । ३० । ६ यह है । इसकी राशि में १ जोड़ दिया तो दूसरे मास के प्रवेश का सूर्य १० । ७ । ३० । ६ यह हुआ ।

इसके समीपवर्ति फाल्गुन कृष्ण ९ नवमी भृगुवार की अवधि में स्थित सूर्य १० । १० । १ । ३८ यह है। इन दोनों का अन्तर किया तो यह २ । ३१ । ३२ हुआ। अब २ अंशों को ६० से गुणा कर कला किया तो यह १२० हुआ। इसमें ३१ कला को जोड़ दिया तो यह १५१ हुआ। इसको भी साठ से गुणा किया तो यह ९०६० हुआ। इसमें ३२ विकलाओं को जोड़ दिया तो ९०९२ यह भाज्य हुआ। अवधिस्थ सूर्य की गति ६० विगति ३१ है। इसकी गति ६० को ६० से गुणा किया तो यह ३६०० हुआ। इसमें ३१ विगति को जोड़ दिया तो ३६३१ यह भाजक हुआ। इसी से भाज्य ९०९२ में भाग लिया तो २ लब्ध हुए। इनको वार समझो। फिर शेष १८२९ को ६० से गुण दिया तो १०९७४० यह भाज्य हुआ। इसमें ३६३१ भाजक से दोबार भाग लिया तो ३० लब्ध हुए। इनको घटी जानो। फिर शेष ८१० को साठ ६० से गुण दिया तो यह ४८६०० हुआ। इसमें ३६३१ भाजक से दोबार भाग लिया तो १३ लब्ध हुए। इसको पल समझना चाहिए। अब यह विचार करो कि मासप्रवेश के सूर्य से अवधिस्थ सूर्य अधिक है इसलिए २ । ३० । १३ इसको ऋणचालक जानकर इन वारादि को अवधिस्थ वारादि ६ । ०० । ०० में घटाया तो ३ । २९ । ४७ यह वार घटी पल हुए। इसप्रकार फाल्गुन कृष्ण पंचमी भोमवार २९ घटी ४७ पलपर द्वितीय मासका प्रवेश सिद्ध हुआ। इसी प्रकार अन्य मासों के प्रवेश का क्रम समझकर बनाना चाहिए। इसी रीति से दिन का प्रवेश साधना चाहिए। मास तथा दिन प्रवेश काल में ग्रह भावों को साधन करे और पञ्चवर्गी व द्वादशवर्गी के बलाबलों का विचार करे॥ ७० ॥

सूर्यमास का स्पष्टप्रकार—जिस राशि के जितने अंश पर वर्ष प्रवेश का इष्ट वार घटी पल हों उसमें सारिणी पर से उसी राशि अंश के कोष्ठक में जो वार, घटी, पल है उसको जोड़ देने ही से आगे के मास प्रवेश का इष्टकाल होता है ।

मासप्रवेश-सारिणी ।

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
वा.	२	२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
०	५६	५८	५९	०	१	२	३	४	५	७	८	८	९	१०	११
मे.	५३	२८	४१	५४	३१	३१	२७	२५	५५	७	१९	५४	४८	४२	३६
वा.	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
१	२६	२६	२७	२७	२८	२९	३०	३०	३१	३१	३२	३२	३३	३३	३४
वृ.	३	१४	७	५०	३१	१७	३	४९	३	३५	७	३५	१२	२०	१६
वा.	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
२	३८	३८	३८	३८	३८	३८	३८	३८	३७	३७	३७	३७	३७	३६	३६
मि.	२८	१८	१९	२०	२६	२५	२२	७	५५	४३	३१	२३	६	४८	१८
वा.	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
३	२७	२७	२६	२५	२५	२४	२३	२२	२१	२१	२०	१९	१८	१७	१६
क.	५८	१५	३२	५६	१३	२५	२५	४०	५२	४	१६	१७	२०	३३	२२
वा.	३	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
४	०	५९	५४	५७	५६	५४	५३	५२	५१	५०	४९	४८	४७	४६	४४
सिं.	२५	२८	४१	१०	५७	५२	५४	३९	३४	१९	१५	९	३	५७	३८
वा.	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
५	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	१०	९
कं.	५८	२७	३६	२४	२२	२०	५०	३३	२२	२१	२०	१९	१८	५९	४०

अंश	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
वा.	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
०	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२०	२१	२२	२३	२४	२५
मे.	५०	५५	००	४०	१८	३६	१७	१६	१३	५७	४३	३१	१९	१९	९
वा.	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
१	३४	३५	३५	३५	३६	३६	३६	३७	३७	३७	३७	३८	३८	३८	३८
वृ.	४३	९	३५	५४	२०	४६	४९	१४	३१	४८	५३	५	१७	२७	३०
वा.	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
२	३६	३५	३५	३४	३४	३४	३३	३२	३२	३१	३१	३०	३०	२९	२८
मि.	१८	३०	१२	५२	२६	०	२३	४६	९	३२	३१	३१	३१	२५	३९
वा.	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३०
३	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	८	७	६	२	२	२	१
क.	४१	५३	५	५५	५५	४५	५१	५७	३	९	१	४९	३३	२१	३३
वा.	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
४	४३	४२	४०	३९	३८	३७	३६	३५	३४	३२	३१	३०	२९	२८	२७
सिं.	१७	५६	५७	५७	५३	४८	४५	३४	१	४१	३५	३२	३१	२२	७
वा.	२	२	२	२	२	२	२	२	२	१	१	१	१	१	१
५	८	७	६	५	४	२	१	०	०	५८	५७	५६	५५	५४	५३
कं.	३४	३०	२६	२२	१८	५७	४६	५५	०	५	१०	१५	४०	३१	३४

रा. ६ तु.	१ ५२ ३३	१ ५१ ५६	१ ५१ १	१ ५० ७	१ ४९ ५६	१ ४९ २	१ ४८ २	१ ४७ ११	१ ४६ २९	१ ४५ २९	१ ४४ ३८	१ ४३ ५०	१ ४२ २१	१ ४१ १८	१ ४० ३६	१ ३९ ४२	१ ३९ २	१ ३८ २०	१ ३७ ५२	१ ३६ ६	१ ३५ ३०	१ ३४ ३६	१ ३४ १	१ ३३ ३६	१ ३२ ३८	१ ३१ ३१	१ ३० ३९	१ ३० २७	१ २९ ४६	१ २९ ११
रा. ७ वृ.	१ २८ २५	१ २७ १७	१ २६ २४	१ २६ १८	१ २६ १०	१ २५ ४१	१ २५ १२	१ २४ ४३	१ २४ १४	१ २३ ४५	१ २३ ५	१ २२ २८	१ २२ ५	१ २२ ४१	१ २१ २७	१ २० ५३	१ २० १६	१ २० ५	१ १९ ४१	१ १९ २८	१ १९ १५	१ १९ ११	१ १९ ७	१ १८ ५१	१ १८ ४७	१ १८ ४३	१ १८ ४२	१ १८ ३९	१ १८ ३५	१ १८ ३०
रा. ८ ध.	१ १८ १९	१ १८ २५	१ १८ ३६	१ १८ ४१	१ १८ ५१	१ १८ ५४	१ १८ ५७	१ १९ ३	१ १९ १३	१ १९ ३३	१ १९ ४६	१ १९ ४९	१ २० २	१ २० १५	१ २० १८	१ २० ४७	१ २१ १५	१ २१ ३६	१ २१ ५१	१ २१ ५५	१ २१ ५९	१ २२ ७	१ २२ ५७	१ २३ १३	१ २४ ८	१ २४ ३४	१ २५ २	१ २५ २९	१ २५ ५६	१ २६ २३
रा. ९ म.	१ २६ ५६	१ २७ ३६	१ २८ ३	१ २८ ३०	१ २८ ५३	१ २९ ४८	१ २९ ५१	१ २९ ५५	१ ३० ५५	१ ३१ ५४	१ ३२ २४	१ ३३ ७	१ ३४ ४४	१ ३४ ५४	१ ३५ ५७	१ ३६ ३१	१ ३६ ५६	१ ३७ ५०	१ ३८ ३४	१ ३९ ८	१ ४० २	१ ४१ ४७	१ ४२ ६	१ ४३ ५१	१ ४४ ४१	१ ४५ ४१	१ ४६ ३१	१ ४७ ११	१ ४८ १७	१ ४९ २३
रा. १० कुं.	१ ५० २५	१ ५१ १८	१ ५२ १२	१ ५३ ६	१ ५४ ०	१ ५५ ०	१ ५६ ०	१ ५७ ११	१ ५८ १५	१ ५९ १४	२ ० १३	२ १ १२	२ २ २०	२ ३ ४१	२ ४ २२	२ ५ ३३	२ ६ ३५	२ ७ ३१	२ ८ ३९	२ १० २	२ ११ २६	२ १२ १२	२ १३ १४	२ १४ १६	२ १५ १८	२ १६ ३०	२ १७ ३७	२ १९ १२	२ २० २४	२ २१ २९
रा. ११ मी.	२ २२ ३४	२ २३ २२	२ २४ ३४	२ २५ ४९	२ २७ ३०	२ २८ ३०	२ २९ ४१	२ ३० ४५	२ ३१ ४८	२ ३२ ५३	२ ३३ ५७	२ ३५ ३८	२ ३६ ४४	२ ३७ ५१	२ ३८ ५८	२ ४० ५०	२ ४१ १२	२ ४२ १९	२ ४३ ५१	२ ४४ ५७	२ ४५ ५६	२ ४७ ५	२ ४८ १४	२ ४९ २३	२ ५१ १७	२ ५२ ५०	२ ५३ २३	२ ५३ ५८	२ ५४ ३४	२ ५५ ५३

नोट—जिस देश के अक्षांश पर सूर्य स्पष्ट पंचांग से लिया हो उसी देश के पंचांग में मास इष्ट बनाने में कुछ भी अन्तर नहीं प्रतीत होवेगा। अन्य देश के पंचांगों में परस्पर कुछ न कुछ अन्तर अवश्य ही आता है।

ग्रन्थकर्ता का वंशपरिचय।

आसीदसीमगुणमण्डितपण्डिताग्र्यो व्याख्यद्भुजङ्गपगवीः श्रुतिवित्सुवृत्तः।
साहित्यरीतिनिपुणो गणितागमज्ञश्चिन्तामणिर्विपुलगर्गकुलावतंसः॥ ७१॥

अनन्त गुणों से भूषित, विद्वानों में श्रेष्ठ, महाभाष्य को पढ़ानेवाला, वेदों का ज्ञाता, सुन्दर आचरणोंवाला, साहित्य-अलंकार के ज्ञान में निपुण और ज्योतिःशास्त्र का जाननेवाला विपुलगर्गकुल का भूषणरूप चिन्तामणि नामक विद्वान् हुआ ॥ ७१ ॥

तदात्मजोऽनन्तगुणस्त्वनन्तो योधोक् तदुक्तीः किल कामधेनुम्
सत्तुष्टये जातकपद्धतिं च न्यरूपयद्दुष्टमतं निरस्य ॥ ७२ ॥

उन चिन्तामणि नामक दैवज्ञ का पुत्र अनन्तगुणों से भूषित अनन्त नामक पृथिवी में प्रसिद्ध हुआ । उसने सज्जनों के आनन्दार्थ ज्योतिःशास्त्र में प्रकट कामधेनु नामक ग्रंथ के ऊपर टीका रची । तथा दुष्ट मत को दूर करके जातकशास्त्र के मार्ग को निरूपण किया जिससे उत्पन्न बालकों के जन्मपत्र में शुभ तथा अशुभ फलों का निरूपण होता है ॥ ७२ ॥

पद्माम्बयासावि ततो विपश्चिच्छ्रीनीलकण्ठःश्रुतिशास्त्रनिष्ठः ।
विद्वच्छिवप्रीतिकरं व्यधात्तं सञ्ज्ञाविवेकं सहमावतंसम् ॥७३॥

इति श्रीनीलकण्ठविरचितताजिकनीलकण्ठ्यां संज्ञातन्त्रं समाप्तम् ।

उन अनन्त दैवज्ञ से पद्मानाम माता ने पाण्डित्यादि शोभायुत नीलकण्ठरूपी पुत्र को पैदा किया जोकि सम्पूर्ण विद्याओं का ज्ञाता और वेदविहित कर्मों का करनेवाला नीलकण्ठ नामक था । उसने संज्ञातन्त्र को रचकर उसमें अच्छीतरह से सहमों का निरूपण किया । जा विद्वान् रूप शिवजी के लिए ही प्रीति को देता है ॥ ७३ ॥

दो० रचना वर्षप्रवेश की प्राप्त होत जहँ आप्त ।
सञ्ज्ञातन्त्रविवेक सो इतते भयो समाप्त ॥

इति श्रीशक्तिधरविरचितायां नीलण्ठीभाषाव्याख्यायां
सहमादिनिरूपणं नाम तृतीयं प्रकरणम् ॥ ३ ॥

श्रीगणेशाय नमः ।

ताजिकनीलकण्ठी

भाषाटीकासहिता ।

वर्षतन्त्रं प्रारभ्यते ।

प्रथमं प्रकरणम् ।
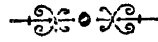
मंगलाचरणम् ।

स्वस्वाभिलाषं नहि लब्धुमीशा निर्विघ्नमीशानमुखाः सुरौघाः ।
विना प्रसादं किल यस्य नौमि तं ढुंढिराजं मतिलाभहेतुम् १ ॥

नत्वा मृडानीतनयं द्विपास्यं सद्बुद्धिवर्धनविधावपि सुद्ध्युपास्यम् ।
श्रीनीलकण्ठोक्तशुभाब्दतन्त्रे टीकां प्रवक्ष्ये सुगमां मनोज्ञाम् ॥ १ ॥

दो० विघ्नहरण गिरिजासुवन करिगुरु को परणाम ।
वर्षतन्त्रभाषा रचौं सूरिजनन के काम ॥

अब वर्षतन्त्र के आरम्भ में ग्रन्थकर्ता निर्विघ्नपरि समाप्ति के लिए मंगलाचरण करते हैं कि जिसमें शिष्य तथा प्रशिष्यों द्वारा ग्रन्थ के आदि, मध्य और अन्त में मंगलाचरण होता रहे क्योंकि (ग्रन्थादौ ग्रन्थमध्ये च ग्रथान्ते मंगलमाचरणीयम्) यह शिष्टाचार है । मैं नीलकण्ठनामक आचार्य उन बुद्धिदेनेवाले ढुण्ढिराज (गणपति) को प्रणाम करता हूँ कि जिनकी कृपाकटाक्ष के विना महादेव आदिक देवसमूह भी अपने-अपने मनोरथों को निर्विघ्न पाने को समर्थ नहीं होते हैं । यह श्रुत्यादिकों में सुना जाता है इसीलिए गणेशजी की स्तुति अवश्य ही करनी चाहिए ॥ १ ॥

सप्रयोजन वर्षफल का प्रारंभ ।

जातकोदितदशाफलं च यत् स्थूलकालफलदं स्फुटं नृणाम् ।
तत्र न स्फुरति दैवविन्मतिस्तद्ब्रुवेऽब्दफलमादिताजकात् २ ॥

जातकशास्त्र में कहे हुए शुभ या अशुभ फल मनुष्यों को बहुत काल में फलदायी होते हैं यह प्रकट है। क्योंकि जातकशास्त्र में ग्रहों की वर्ष समूहवाली दशाएँ गणित करने से आती हैं। उस फल में पण्डितों की बुद्धि काम नहीं देती हैं कि किस समय क्या फल होगा। इसलिए मैं पूर्वताजिक ग्रन्थों से वर्ष के शुभ तथा अशुभ फल को कहता हूँ ॥ २ ॥

गताः समाः पादयुताः प्रकृतिघ्नसभागणात्।
खवेदाप्तघटीयुक्ता जन्मवारादिसंयुताः ॥ ३ ॥
अब्दप्रवेशे वारादि सप्ततष्टेऽत्र निर्दिशेत्।
शिवोघ्नोऽब्दः स्वखाद्रीन्दुलवाढ्यः खाग्निशेषितः ॥ ४ ॥
जन्मतिथ्यन्वितस्तत्र तिथावब्दप्रवेशनम्।
तत्कालेऽर्को जन्मकालरविणा स्याद्यतः समः ॥ ५ ॥
एकैकराशिवृद्ध्या चेत्तुल्यांशाद्यैर्यदा रविः।
तदा मासप्रवेशो द्युप्रवेशश्चेत्कलासमः ॥ ६ ॥

'गताः समाः' इत्यादि चार श्लोकों का अर्थ पहले संज्ञातंत्र में वर्णन हो चुका है। इसलिए यहाँ कहने की आवश्यकता नहीं है ॥ ३ । ६ ॥

तत्कालिकास्तु खचराः सुधिया विधेयाः
स्पष्टा विलग्नमुखभावगणो विधेयः।
वीर्यं तथोक्तविधिना निखिलग्रहाणा-
मब्दाधिपस्य विधये कथयामि युक्तिम् ॥ ७ ॥

पण्डित जनों को चाहिए कि प्रथम गतिसमेत रव्यादि ग्रहों को स्पष्ट करें तदनन्तर तन्वादि बारह भावों को साधें, फिर कही हुई रीति से पंचवर्गी और द्वादशवर्गी के द्वारा सम्पूर्ण ग्रहों के बलाबल का विचार करें जिनके द्वारा मैं वर्षेश की विधि जानने के लिए युक्ति को कहता हूँ ॥ ७ ॥

वर्षेश्वरनिर्णय।

जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो मुन्थहाधिप इतस्त्रिराशिपः।
सूर्यराशिपतिरह्नि चन्द्रमाधीश्वरो निशि विमृश्य पञ्चकम् ८ ॥

बलीय एषां तनुमीक्षमाणः स वर्षपो लग्नमनीक्षमाणः।
नैवाब्दपो दृष्ट्यतिरेकतस्स्याद् बलस्य साम्ये विदुरेवमाद्याः ॥ ९ ॥
दृगादिसाम्येऽप्यथ निर्बलत्वे वर्षाधिपः स्यान्मुथहेश्वरस्तु।
पञ्चापि नो चेत्तनुमीक्षमाणा वीर्याधिकोऽब्दस्य विभुर्विचिन्त्यः।
बलादिसाम्ये रविराशिपो ह्नि निशीन्दुराशीडितिकेचिदाहुः।
येनेत्थशालोब्दविभुश्शशी स वर्षाधिपश्चन्द्रभपोन्यथात्वे॥ ११ ॥

इन ८ से ११ श्लोक तक की व्याख्या संज्ञातन्त्र में लिख आये हैं ॥ ८–११ ॥

वर्षेश्वर की स्थिति से फल।

अब्दाधिपो व्ययषडष्टमभिन्नसंस्थो
लब्धोदयोऽब्दजनुषोः सदृशो बलेन।
निःशेषमुत्तमफलं विदधाति काये
नैरुज्यराज्यबललब्धिरतीव सौख्यम् ॥ १२ ॥

वर्ष का स्वामी ग्रह छठें, आठवें और बारहवें इन स्थानों को छोड़कर अन्य स्थानों में स्थित हो (लग्न को नहीं देखनेवाला ग्रह बलवान् होने से छठें, आठवें और बारहवें इन स्थानों में स्थित भी वर्षेश्वर होता है अतः पूर्वोक्त वाक्य कहा है) और वर्षप्रवेशकाल में या जन्मकाल में उदय को प्राप्त हुआ हो और पञ्चवर्गी के बल से समान बलवाला हो अर्थात् हीनबल न हो ऐसा वर्षेश्वर सम्पूर्ण उत्तम फल को करता है। उसको कहते हैं कि, शरीर में निरोगता, राज्य, बल की प्राप्ति और बड़ा सुख देता है ॥ १२ ॥

बलानुसार वर्षेश्वर का फल।

बलपूर्णेऽब्दपे पूर्णं शुभं मध्ये च मध्यमम्।
अधमे दुःखरोगारिभयानि विविधाः शुचः ॥ १३ ॥

वर्षका स्वामी पूर्णबली हो अर्थात् पञ्चवर्गी में दश बिस्वों से अधिक बलवाला हो तो वर्षभर पूर्ण शुभ फल होता है और जो मध्यम बल हो अर्थात्

दश बिस्वों तक बलवाला हो तो मध्यम शुभ फल होता है । जो अधम (हीन) बल हो अर्थात् पाँच बिस्वों से कम बलवाला हो तो वह दुःख, शरीर में रोग, शत्रुओं से भय तथा बहुत प्रकार के शोकों को करता है ॥ १३ ॥

पूर्णबली वर्षेश्वर सूर्य का फल ।

सूर्येऽब्दपे बलिनि राज्यसुखात्मजार्थ-
लाभः कुलोचितविभुः परिवारसौख्यम् ।
पुष्टं यशो गृहसुखं विविधा प्रतिष्ठा
शत्रुर्विनश्यति फलं जनिखेटयुक्त्या ॥ १४ ॥

जिसके वर्ष काल में सूर्य पूर्ण बली होकर वर्ष का स्वामी हो तो वह राज्यसुख, पुत्र और धन का लाभ, अपने कुलके योग्य बड़प्पन, कुटुम्बियों का सुख, शरीरमें पुष्टता, यश, घर का सुख और अनेक प्रकार की प्रतिष्ठा देता है और शत्रुओं का नाश करता है । परन्तु ऐसा फल तब कहना चाहिए जबकि जन्मकाल में भी वर्षेश्वर ग्रह उत्तम बलवाला हो और यदि मध्यम बलवाला हो तो भी उत्तम फल को देता है और यदि अधम बलवाला हो तो मध्यम फल को देता है । यदि जन्मकाल में वर्षेश ग्रह मध्यमबली होकर वर्षकाल में उत्तम बली हो तो उत्तम ही फल होता है और जो मध्यम हो तो मध्यम फल को देता है और जो अधम बली हो तो अधम फल को देता है । यदि जन्मकाल में वर्षेश ग्रह अधम बली होकर वर्षकाल में उत्तम बली हो तो मध्यम फल को देता है और जो मध्यम बली हो तो अधम फल को देता है और जो अधम बली हो तो अधमाधम फल को देता है । यह फल जो कहा गया है सो जन्मकाल में ग्रहों के विचार से जानना चाहिए ॥ १४ ॥

मध्यमबली वर्षेश्वर सूर्य का फल ।

मध्ये रवौ फलमिदं निखिलं तु मध्यं
स्वल्पं सुखं स्वजनतोऽपि विवादमाहुः ।
स्थानच्युतिर्न च सुखं कृशता शरीरे
भीतिर्नृपान्मुथशिलो न शुभेन चेत्स्यात् ॥ १५ ॥

जिसके वर्षकाल में सूर्य मध्यम बलवाला होकर वर्ष का स्वामी हो तो वह उसके लिए संपूर्ण मध्यम फल को देता है जैसे कि वह प्राणी थोड़े सुखों का भोगनेवाला, अपने कुटुम्बियों से लड़ाई करनेवाला, स्थान से भ्रष्ट होकर सुख को नहीं पाता है और दुबले शरीरवाला होकर राजा से भयभीत होता है। ऐसा अनिष्ट फल तब होता है, जब कि शुभ ग्रहों से वर्षेश का मुथशिल (मिलाप) न हो और जब शुभग्रहों के साथ वर्षेश का इत्थशाल होगा तब अनिष्ट फल नहीं कहना चाहिए ॥ १५ ॥

हीनबली वर्षेश्वर सूर्य का फल ।

सूर्ये बलेन रहितेऽब्दपतौ विदेश-
यानं धनक्षयशुचोऽरिभयं च तन्द्रा ।
लोकापवादभयमुग्ररुजोऽतिदुःखं
पित्रादितोऽपि न सुखं सुतमित्रभीतिः ॥ १६ ॥

जिसके वर्षकाल में सूर्य बलरहित होकर वर्ष का स्वामी हो तो विदेशगमन, धन का नाश, शोक, शत्रुभय, आलस्य, संसार में अपयश, भय, कठिनरोग और अत्यन्त दुःख देता है। उसको माता पिता से भी सुख नहीं होता तथा पुत्र और मित्र से भय होता है ॥ १६ ॥

कम्बूल योग के वश से वर्षेश चन्द्रमा का फल ।

चन्द्रेऽब्दपे मुथशिलो येनासावब्दपोऽस्य चेत् ।
कम्बूलमिन्दुना जन्म निशि वर्षं तदोत्तमम् ॥ १७ ॥

जिसके वर्षकाल में चन्द्रमा वर्ष का स्वामी होकर जिस ग्रह के साथ मुथशिल (मिलाप) करता हो वह वर्षेश्वर होता है। यदि उस वर्षेश का चन्द्रमा से कम्बूल योग हो और चन्द्रमा से भिन्न अन्य किसी ग्रह के साथ इत्थशाल (मिलाप) हो और रात्रि में उस प्राणी का जन्म हुआ हो तो वह वर्ष उत्तम जानना चाहिए ॥ १७ ॥

पूर्णबली वर्षेश चन्द्रमा का फल ।

वीर्यान्विते शशिनि वित्तकलत्रपुत्र-
मित्रालयस्य विविधं सुखमाहुरार्याः ।

स्रग्गन्धमौक्तिकदुकूलसुखानि भूति-
लाभः कुलोचितपदस्य नृपैः सखित्वम् ॥ १८ ॥

जिसके वर्षकाल में चन्द्रमा पूर्णबली होकर वर्ष का स्वामी हो तो वह प्राणी धन, स्त्री, पुत्र, मित्र, घर, नाना प्रकार के सुख, माला, सुगन्धित चन्दन, इतर अर्गजादि, मोती और दुपट्टे आदि से सुख पाता है तथा ऐश्वर्य का लाभ और कुल के उचित पद को प्राप्त होता है तथा राजा का मन्त्री होता है। यह आर्य्य व शिष्टादिकों ने कहा है ॥ १८ ॥

मध्यबली वर्षेश चन्द्रमा का फल।

वर्षाधिपे शशिनि मध्यबले फलानि
मध्यान्यमूनि रिपुता सुतमित्रवर्गे।
स्थानान्तरे गतिरथो कृशता शरीरे
श्लेष्मोद्भवश्च यदि पापकृतेसराफः ॥ १९ ॥

जिसके वर्षकाल में चन्द्रमा मध्यम बली होकर वर्ष का स्वामी हो तो वह प्राणी मध्यम फलों को भोगता हुआ अपने लड़के तथा मित्रवर्गों से शत्रुता करनेवाला, अपने स्थान को त्याग कर दूसरे स्थान को जानेवाला और दुबले शरीरवाला होता है। यदि पापग्रह के साथ चन्द्रमा का ईसराफ योग हो तो वह श्लेष्मा रोग से व्याकुल होकर ज्वर, खांसी आदि रोगों से पीड़ित होता है ॥ १९ ॥

नष्ट तथा हीनबली वर्षेश चन्द्रमा का फल।

नष्टेऽब्दपे शशिनि शीतकफादिरोग-
श्चौर्यादिभीः स्वजनविग्रहमप्युशन्ति।
दूरे गतिः सुतकलत्रसुखाक्षयश्च
स्यान्मृत्युतुल्यमतिहीनबले शशीके ॥ २० ॥

जिसके वर्षकाल में चन्द्रमा नष्ट अर्थात्सूर्य के साथ बैठने से अस्त होकर वर्ष का स्वामी हो तो वह प्राणी शीतज्वर, कफज्वर, खाँसी आदि रोगों से पीड़ित तथा चौर और शत्रु आदिकों से डरता हुआ अपने भाई बन्धुओं से कलह करता है और जिसके वर्ष में चन्द्रमा अत्यन्तहीन

बल होकर वर्ष का स्वामी हो तो वह प्राणी दूर देश का जानेवाला तथा स्त्री पुत्रादिकों से सुख को भोगता हुआ मृत्यु के समान दुःख को पाता है ॥ २० ॥

पूर्णबली वर्षेश मंगल का फल ।

भौमेऽब्दपे बलिनि कीर्तिजयारिनाश-
सेनापतित्वरणनायकता प्रदिष्टा ।
लाभः कुलोचितधनस्य नमस्यता च
लोकेषु मित्रसुतवित्तकलत्रसौख्यम् ॥ २१ ॥

जिसके वर्षकाल में मंगल पूर्णबली होकर वर्ष का स्वामी हो तो वह प्राणी कीर्तिवाला, जयवाला तथा शत्रुओं का नाश करनेवाला होकर सेना का मालिक होता है इसी से वह रण का नायक (संग्राम का मालिक) कहा जाता है और कुल के योग्य धन को पाता है और लोक में जनों से पूजित होकर मित्र, पुत्र, द्रव्य, स्त्री आदि से सुख को प्राप्त होता है ॥ २१ ॥

मध्यबली वर्षेश मंगल का फल ।

मध्येऽब्दपेऽवनिसुते रुधिरस्रुतिश्च
कोपाधिकः शकटशस्त्रहतिक्षतानि ।
स्वामित्वमात्मगणतो बलगौरवं च
मध्यं सुखं निखिलमुक्तफलं विचिन्त्यम् ॥ २२ ॥

जिसके वर्षकाल में मंगल मध्यम बली होकर वर्ष का स्वामी हो तो उस प्राणी के फोड़ा फुनसियों से रुधिर और पीब बहता है और वह अधिक कोपवाला होता है। गाड़ी से गिरकर चोट खा जाता है तथा हथियार से घाव लगता है। अपने गणों का स्वामी, बलवाला और गंभीर स्वभाव तथा मध्यम सुख को प्राप्त होता है। यह कहा हुआ सब फल मध्यम ही होता है ॥ २२ ॥

हीनबली वर्षेश मंगल का फल ।

हीनेऽब्दपेऽसृजि भयं रिपुतस्कराग्नि-
लोकापवादभयमात्मधिया विनाशः ।

कार्यस्य विघ्नमतिरोगभयं विदेश-
यानं क्षयोपनयतो गुरुदृष्ट्यभावे ॥ २३ ॥

जिसके वर्षकाल में हीनबली मंगल वर्षेश हो तो रक्तविकार से भय होता है। शत्रुओं, चोरों तथा अग्नि से डर, लोक के अपवाद से भय और अपनी बुद्धि से विनाश होता है। कार्य में विघ्न, बड़े रोगों से भय और विदेश को गमन होता है। और मंगल पर बृहस्पति की दृष्टि न हो तो उसका अनीति (कुचाल) से क्षय हो जाता है ॥ २३ ॥

उत्तमबली वर्षेश बुध का फल ।

सौम्येऽब्दपे बलवति प्रतिवादलेख्य-
सच्छास्त्रसद्व्यवहृतौ विजयोऽर्थलाभः ।
ज्ञानं कलागणितवैद्यभवं गुरुत्वं
राजाश्रयेण नृपता नृपमन्त्रिता वा ॥ २४ ॥

जिसके वर्षकाल में उत्तम बली बुध वर्ष का स्वामी हो तो वह प्राणी प्रतिवाद (शीघ्र उत्तर देने), लिखने तथा अच्छे वेदान्तादि शास्त्रों में प्रवीण होकर अच्छे व्यवहारों में विजय तथा धन को पाता है। ज्ञानवान्, सम्पूर्ण कलाओं (कारीगरियों) में निपुण, गणित अथवा वैद्यविद्या से बड़प्पन तथा राजा के आश्रय से राजा के समान या राजा का मन्त्री होता है ॥ २४ ॥

मध्यमबली वर्षेश बुध का फल ।

अब्दाधिपे शशिसुते खलु मध्यवीर्ये
स्यान्मध्यमं निखिलमेतदथाध्वयानम् ।
वाणिज्यवर्तनमथात्मजमित्रसौख्यं
सौम्येत्थशालवशतोऽपरथा न सम्यक् ॥ २५ ॥

जिसके वर्षकाल में मध्यम बली बुध वर्षेश हो तो पहले कहा हुआ सब उत्तम फल मध्यम होता है। मार्गगामी हो तो बनियों के कर्म से जीविका करता है। उसी से अपने लड़के तथा मित्रवर्गों को सुख देता है। यह फल बुध का शुभग्रहों के साथ इत्थशाल योग होने से होता है। अन्यथा

जब पापग्रहों के साथ पूर्वोक्त बुध का ईसराफ योग होगा तब उसके लड़के तथा मित्रों को सुख नहीं होता है ॥ २५ ॥

हीनबली वर्षेश बुध का फल ।

सौम्येऽब्दपेऽधमबले बलबुद्धिहानि-
धर्मक्षयः परिभवो निजवाक्यदोषात् ।
विक्षेपतो विपदतीव मृषैव साक्ष्यं
हानिः परव्यवहृतेः सुतवित्तमित्रैः ॥ २६ ॥

जिसके वर्षकाल में अधमबली बुध वर्षेश हो तो उस प्राणी के बल तथा बुद्धि की हानि होती है । धर्म का नाश तथा अपने वाक्यदोष से तिरस्कार होता है । विक्षिप्तता से विपत्तियों को सहता हुआ अत्यन्त झूठी गवाही देता है तथा पराये व्यवहार से अपने लड़के, धन और मित्रों के सुख की हानि को प्राप्त होता है ॥ २६ ॥

उत्तमबली वर्षेश्वर गुरु का फल ।

जीवेऽब्दपे बलयुते परिवारसौख्यं
धर्मो गुणग्रहिलताधनकीर्तिपुत्राः ।
विश्वास्यता जगति सन्मतिविक्रमाप्ति-
र्लाभो निधेर्नृपतिगौरवमप्यरिघ्नम् ॥ २७ ॥

जिसके वर्षकाल में बृहस्पति उत्तम बली होकर वर्ष का स्वामी हो तो वह प्राणी बड़ा धर्मात्मा तथा गुणों का ग्राहक होता है और कीर्ति, धन, पुत्रवाला, लोक में विश्वासी, उत्तम मतिवाला, बलयुक्त तथा निधि (खज़ाना) को प्राप्त होकर राजा का गुरु होता है । एवं शत्रुनाशक होता है ॥ २७ ॥

मध्यमबली वर्षेश्वर बृहस्पति का फल ।

अब्दाधिपे सुरगुरौ किल मध्यवीर्ये
स्यान्मध्यमं फलमिदं नृपसंगमश्च ।
विज्ञानशास्त्रपरताप्यशुभेसराफे
दारिद्र्यमर्थविलयश्च कलत्रपीडा ॥ २८ ॥

जिसके वर्षकाल में बृहस्पति मध्यम बली होकर वर्ष का स्वामी हो तो उस प्राणी के लिए यह पूर्व कहा हुआ सम्पूर्ण फल मध्यम होता है और वह प्राणी विज्ञानी होकर शास्त्रों के अभिप्रायों का ज्ञाता होता है। यदि पूर्वोक्त बृहस्पति पापग्रहों के साथ ईसराफ योग करे तो वह प्राणी दरिद्री होकर अपनी भार्या समेत कष्टित होता है तथा उसके सञ्चित किये हुए धन का नाश होता है ॥ २८ ॥

हीनबली वर्षेश गुरु का फल ।

जीवेऽब्दपेऽधमबले धनधर्मसौख्य-
हानिस्त्यजन्ति सुतमित्रजनाः सभार्याः ।
लोकापवादभयमाकुलतातिकष्टं
वृत्तिस्तनौ कफरुजो रिपुभीः कलिश्च ॥ २९ ॥

जिसके वर्षकाल में बृहस्पति हीनबली होकर वर्ष का स्वामी हो तो उस प्राणी के धन, धर्म और सौख्य की हानि होती है तथा उसको उसके निंद्यकर्मों से भार्यासहित लड़के तथा मित्रजन त्याग देते हैं और लोकापवाद के भय से डरता हुआ बड़े कष्ट को पाता है और उसके शरीर में कफ का रोग होता है। तथा वैरियों का भय और स्वजनों से कलह होता है ॥ २९ ॥

उत्तमबली वर्षेश शुक्र का फल ।

शुक्रेऽब्दपे बलिनि नीरुजताविलास-
सच्छास्त्ररत्नमधुराशनभोगतोषाः ।
क्षेमप्रतापविजयावनिताविलासो
हास्यं नृपाश्रयवशेन धनं सुखं च ॥ ३० ॥

जिसके वर्षकाल में शुक्र उत्तम बली होकर वर्ष का स्वामी हो तो वह प्राणी रोगों से रहित, उत्तम शास्त्र और रत्नों का विलासी, मीठे भोजनों का करनेवाला, भोगों से सन्तुष्ट, कल्याणयुक्त, प्रतापी, शत्रुओं का जीतनेवाला, वनिताओं के हाव, भाव, कटाक्षों से आनन्दित तथा हँसता हुआ अहर्निश प्रसन्न रहता है तथा राजा के आश्रय से धन तथा सुख को पाता है ॥ ३० ॥

मध्यमबली वर्षेश शुक्र का फल।

अब्दाधिपे भृगुसुते खलु मध्यवीर्ये
स्यान्मध्यमं निखिलमेतदथाल्पवृत्तिः।
गुप्तं च दुःखमखिलं मुनिबद्धवृत्तिः
पापारिवीक्षितयुते विपदोऽर्थनाशः॥ ३१॥

जिसके मध्यमबली शुक्र वर्षेश होता है उसको यह सम्पूर्ण कहा हुआ फल मध्यम होता है और थोड़ी आजीविकावाला तथा उसके सब रोग गुप्त ही होते हैं। और बँधी हुई जीविका से अपना निर्वाह करता है। यदि मध्यम बली शुक्र को शत्रुग्रह या पापग्रह देखते हों अथवा शुक्र शत्रुग्रह या पापग्रह से युक्त हो तो उसको विपत्तियाँ घेरती हैं और धन का नाश हो जाता है॥ ३१॥

हीनबली वर्षेश शुक्र का फल।

शुक्रेऽब्दपेऽधमबले मनसोऽतितापो
लोकोपहासविपदो निजवृत्तिनाशः।
द्वेषः कलत्रसुतमित्रजनेषु कष्टा-
दन्नाशनं च विफलक्रियया न सौख्यम्॥ ३२॥

जिसके वर्षकाल में शुक्र अधम बली होकर वर्ष का स्वामी हो तो वह प्राणी मानसी व्याधि से पीड़ित, लोक में उपहास को प्राप्त तथा अनेक विपदाओं को भोगता है। और उस प्राणी की आजीविका का नाश होजाता है। वह अपनी स्त्री, पुत्र तथा मित्रजनों से लड़ाई करता हुआ बड़े कष्ट से भोजन को पाता है। वह जिस क्रिया का आरम्भ करता है वह विफल होती है तथा उसे सुख नहीं होता है॥ ३२॥

उत्तमबली वर्षेश शनि का फल।

मन्देऽब्दपे बलिनि नूतनभूमिवेश्म-
क्षेत्राप्तिरर्थनिचयो यवनावनीशात्।
आरामनिर्मितजलाशयसौख्यमङ्ग-
पुष्टिः कुलोचितपदाप्तिगुणाग्रणीत्वम्॥ ३३॥

जिसके वर्षकाल में शनैश्चर उत्तमबली होकर वर्ष का स्वामी हो तो उस प्राणीको नवीन भूमि, नवीन घर तथा क्षेत्र आदि की प्राप्ति होती है। वह प्राणी किसी म्लेच्छ राजा से बहुतसा धन पाकर उसी से बगीचा, तालाब, कुयें और बावली आदि बनवाता है । तथा सुखयुक्त पुष्टशरीरवाला होता है और अपने कुलके उचित पद को प्राप्त होकर गुणों में अग्रणी होता है ॥ ३३ ॥

मध्यमबली वर्षेश शनि का फल ।

अब्दाधिपे रविसुते खलु मध्यवीर्ये
स्यान्मध्यमं निखिलमन्नभुजिस्तु कष्टात् ।
दासोष्ट्रमाहिषकुलान्यरतेस्तु लाभः
पापं फलं भवति पापयुगीक्षणेन ॥ ३४ ॥

जिसके मध्यमबली शनैश्चर वर्षेश हो तो उस प्राणी के लिये पूर्व कहा हुआ यह संपूर्ण फल मध्यम फलदायी होता है और वह बड़े कष्ट से भोजन पाता है । दास, ऊँट तथा भैंसों के समूहों को प्राप्त होकर अपने कुल से अन्य स्त्रियों में अथवा वेश्यादिकों में रमण करनेवाला होता है । यदि पूर्वोक्त शनैश्चर को पापग्रह देखते हों अथवा उससे युक्त हों तो वह प्राणी पापरूप फल को भोगता है ॥ ३४ ॥

हीनबली वर्षेश शनि का फल ।

मन्दे बलेन रहितेऽब्दपतौ क्रियाणां
बध्यत्वमर्थविलयो विपदोऽरिभीतिः ।
स्त्रीपुत्रमित्रजनवैरकदन्नभुक्तं
सौम्येत्थशालयुजि सौख्यमपीषदाहुः ॥ ३५ ॥

जिसके हीनबली शनैश्चर वर्षेश हो तो उस प्राणी को संपूर्ण क्रियाओं का बाधक होता है । उसके संचित किये हुए धन का नाश, विपत्ति, वैरियों से डर तथा स्त्री, पुत्र और मित्रों से वैर होता है । सामा, कांकुनि आदि अन्नों का भोजन करनेवाला होता है । और पूर्वोक्त शनैश्चर शुभ ग्रहों के साथ इत्थशाल करता हो अथवा शुभग्रहों से युक्त हो तो उसको थोड़ा सा सुख भी मिलता है । ऐसा आचार्यों ने कहा है ॥ ३५ ॥

वर्षेश द्वारा सम्पूर्ण वर्ष का शुभाशुभ फल।

वर्षेश्वरो भवति यः स दशाधिपोऽब्दे
ज्ञेयोऽखिलेऽब्दजनुषोर्बलमस्य चिन्त्यम्।
वीर्यान्वितेऽत्र निखिलं शुभमब्दमाहु-
र्हीने त्वनिष्टफलता समता समत्वे॥ ३६॥

जो ग्रह जिस वर्ष का स्वामी होता है वह उस संपूर्ण वर्ष में दशा का मालिक कहाता है अर्थात् उसी ग्रह की दशा वर्षभर जानो। और जन्माङ्ग तथा वर्षाङ्ग में पञ्चवर्गी में कहे हुए उत्तम, मध्यम और अधम इन भेदों से इस वर्षस्वामी ग्रह के बल का विचार करना चाहिए अर्थात् पूर्वोक्त वर्ष का स्वामी ग्रह जन्मकाल में उत्तम बली होकर वर्षकाल में भी उत्तम बल से संयुक्त हो तो वही उस प्राणी के लिये वर्षपर्यन्त उत्तम फल को देता है और जो वर्षेश ग्रह हीनबली हो तो वह प्राणी अनिष्ट फल को पाता है और जो समबली हो तो उस प्राणी को समफल होता है। इसका आशय यह है कि जिस प्राणी के जन्मते समय जो वर्षेश्वर ग्रह उत्तम बली होकर वर्षप्रवेश काल में मध्यमबली अथवा हीनबली हो अथवा जन्मसमय में मध्यम बली अथवा हीनबली होकर वर्षकाल में बलयुक्त हो वा जन्मते समय मध्यमबली होकर वर्षकाल में हीनबली हो तो वह उत्तम-अधम फल की अपेक्षा वर्ष में मध्यम फल का देनेवाला होता है॥३६॥

इत्थशालद्वारा वर्षेश्वर का फल।

येनेत्थशालोऽब्दपतेर्ग्रहोऽसौ स्वीयस्वभावात्सुफलं ददाति।
शुभेसराफे शुभमस्ति किञ्चिदनिष्टमेवाशुभमूसरीफे॥ ३७॥

जिसका वर्षेश जिस शुभ वा पापग्रह के साथ मुथशिल (मिलाप) करता हो वह मुथशिल करनेवाला ग्रह अपने स्वभाव से अर्थात् पूर्वोक्त संज्ञातन्त्र में कहे हुए अपने स्वरूपवश से उस प्राणी के लिए सुफल (शुभफल) को देता है। वर्षेश शुभग्रहों के साथ (ईसराफ) योग करे तो वह प्राणी सालभर कुछ सुख से रहता है। यदि वर्षेश पाप ग्रहों के साथ मूसरीफ योग को करता हो तो वह उस प्राणी को अनिष्ट फल का देनेवाला होता है अर्थात् सालभर बड़ा दुःखी रहता है॥ ३७॥

हद्दाद्वारा वर्षेश्वर का फल ।

हद्दे यादृशि यः खेट आधत्तेऽत्र च यो महः ।
जन्मन्यब्दे च तादृक् चेत्तदात्मफलदस्त्वसौ ॥ ३८ ॥

जिसका वर्षेश ग्रह जिस शत्रु अथवा मित्रग्रहसम्बन्धी हद्दांश में हो और जो ग्रह अपने मित्र तथा शत्रुरूप ग्रह में अथवा वर्षेश्वर में मित्रदृष्टि या शत्रुदृष्टि से तेज को धारता हो (मुथशिल योग करता हो) और वह जन्मकाल तथा वर्ष प्रवेशकाल में कहे हुए प्रकारों के सदृश हो तो उस समय उस प्राणी के लिये अपने किए शुभ वा अशुभ फल को देता है अर्थात् शुभ ग्रह हो तो शुभ फल और पापग्रह हो तो पापरूप फल को देता है ॥ ३८ ॥

जन्मकालीन शुभाशुभ फलदायक ग्रहद्वारा वर्षेश का फल ।

यो जन्मनि फलं दातुं विभुर्मूसरिफोऽस्य चेत् ।
अब्दलग्नाब्दपभवस्तस्मिन्नब्दे न तत्फलम् ॥ ३९ ॥
व्यत्यासे फलमादेश्यमित्थशाले विशेषतः ।
नोभयं चेत्तदाप्यस्ति जन्माश्रयमिति स्फुटम् ॥ ४० ॥

जन्मकाल में जो ग्रह फल देने को समर्थ हो उस ग्रह के साथ वर्षलग्न के स्वामी और वर्षेश्वर का मूसरीफ योग हो तो उस प्राणी को जन्मकालीन भाव से पैदा हुआ फल नहीं होता अर्थात् उस फल का नाश हो जाता है। और जिसके ईसराफ योग नहीं हो तो उस प्राणी के लिए जन्मकालिक भाव से उत्पन्न हुआ फल कहना चाहिए और जिसके इत्थशाल (मुथशिल) योग हो तो उस प्राणी को विशेष करके वह फल होता है और जिस प्राणी के ईसराफ और मुथशिल ये दोनों नहीं हों तो भी उस प्राणी को जन्मकालीन भाव से पैदा हुआ फल होता है। यह प्रत्यक्ष विदित है। क्योंकि कोई बाधा करनेवाला नहीं है। (व्यत्यासे फलमादेश्यं) इससे पुनरुक्ति दोष का प्रसंग होता है तो भी उसके स्पष्ट अर्थ से ऐसा कहा गया। अन्यथा कहे हुए एक से तीनों व्यर्थ हो जायँगे ॥ ३९ । ४० ॥

प्रथम श्लोक के अर्थ का उदाहरण ।

पुत्राधिपो जन्मनि पुत्रभावं पश्यन्सुतं दातुमसौ समर्थः ।
वर्षे स यत्राब्दपमूसरीफी पुत्रस्य नाशो भवतीह वर्षे ॥ ४१ ॥

जन्मलग्न में पाँचवें भवन का स्वामी ग्रह अपने पाँचवें भाव को देखता हो तो वह पुत्ररूप फल देने को समर्थ होता है परन्तु वह वर्ष में किसी स्थान में स्थित होकर और वर्षेश्वर के साथ ईसराफ योग करता हो तो उस वर्ष में पुत्र का नाश होगा । इसी प्रकार अन्य भावों में जन्मस्थित ग्रह और वर्षेश इन दोनों के साथ ईसराफ योग के रहते उदाहरण बना लेना चाहिए ॥ ४१ ॥

हद्दे याद्दशित्यादि का उदाहरण ।

अब्देश्वरो गुरुर्मित्रहद्दे मित्रदृशा शशी ।
महोत्राधादमूदृक्स वर्षेऽब्दस्तेन शोभनः ॥ ४२ ॥

वर्षस्वामी बृहस्पति जन्मकाल में अपने मित्र के हद्दा में बैठा हो और वर्षकाल में चन्द्रमा उस बृहस्पति को मित्रदृष्टि से देखता हो तो वह उसी में तेज को धारता है अर्थात् चन्द्रमा बृहस्पति के साथ इत्थशाल करता है इसलिए पूरा वर्ष शुभ जानना चाहिए ॥ ४२ ॥

एवमुन्नेयमन्यच्च शुभाशुभफलं बुधैः ।
बलाबलविवेकेन योगत्रयविमर्शतः ॥ ४३ ॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां वर्षतन्त्रे वर्षेशफलनिरूपणं
नाम प्रथमं प्रकरणम् ॥ १ ॥

इसीप्रकार पण्डितों को बलाबल के विचार और मुथशिल, कम्बूल और ईसराफ इन योगों के ज्ञान से अन्य शुभ तथा अशुभ फल जानना चाहिए ॥ ४३ ॥

इति श्रीशक्तिधरविरचितायां नीलकण्ठीभाषाव्याख्यायां वर्षेश्वर-
फलनिरूपणं नाम प्रथमं प्रकरणम् ॥ १ ॥

द्वितीयं प्रकरणम्।

मुंथानिरूपण।

स्वजन्मलग्नात्प्रतिवर्षमेकैकराशिभोगान्मुथहा भ्रमेण।
स्वजन्मलग्नं रवितष्टयातशरद्युतं सा भमुखेन्थिहा स्यात् १॥

अपने जन्मलग्न से प्रतिवर्ष एक-एक राशि की वृद्धि से मुथहा भ्रमती है। यह मुथहा की उत्पत्ति जानिये। अब मुथहा के ल्याने का प्रकार दिखलाते हैं कि, गत वर्षगणों में अपने जन्मलग्न को जोड़ देवे फिर उसमें बारह का भाग देवे। जो शेष बचे उसी प्रमाण राशि में मुन्था होती है॥ १॥

मुंथा की ग्रहों के समान गति।

प्रत्यहं शरलिप्ताभिर्वर्द्धते सानुपाततः।
सार्द्धमंशद्वयं मासे इत्याहुः केऽपि सूरयः॥ २॥

मुन्था प्रतिदिन अनुपात अर्थात् (त्रैराशिक) से पाँच कलाओं करके बढ़ती है। इसी रीति से एक मास में अढ़ाई अंश बढ़ती है। यह कितनेक विद्वानों ने कहा है॥ २॥

स्वामी और सौम्य ग्रहों की दृष्टि से मुन्था का फल।

स्वामिसौम्येक्षणात्सौख्यं क्षुतदृष्ट्या भयं रुजः।
भावालोकनसंयोगात्फलमस्या निरूप्यते॥ ३॥

जिसके वर्षकाल में मुन्था को अपना स्वामी अथवा शुभग्रह देखता हो या शुभग्रहस्वामी देखता हो तो उसको सुख होता है और जिसके वर्षकाल में मुन्था को शुभग्रहस्वामी अथवा पापग्रहस्वामी क्षुतदृष्टि से देखता हो तो उसको रोग से भय होता है। अब द्वादश तन्वादिभावों में स्थित और ग्रहों की दृष्टि के संयोग से मुन्था का फल कहा जाता है॥ ३॥

चतुर्थादिभाव में स्थित मुंथा का फल।

वर्षलग्नात्सुखास्तान्त्यारिपुरन्ध्रेष्वशोभना।
पुण्यकर्मायगा स्वाम्यं दत्तेऽन्यत्रोद्यमाद्धनम्॥ ४॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न से चौथे, सातवें, बारहवें, छठे और आठवें

इन स्थानों में मुन्था स्थित हो तो उसके लिए शुभ फल को देती है। और जिसके नववें, दशवें और ग्यारहवें इन स्थानों में मुन्था स्थित हो तो वह उस को किसी मुहक्मे का मालिक बनाती है। इन उक्त स्थानों में से अन्य स्थानों में स्थित मुन्था उद्यम से धन को देती है ॥ ४ ॥

लग्नस्थ मुंथा का फल।

शत्रुक्षयं मानसुताश्वलाभं प्रतापवृद्धिर्नृपतेः प्रसादम्।
शरीरपुष्टिं विविधोद्यमांश्च ददाति वित्तं मुथहा तनुस्था ॥ ५ ॥

जिसके वर्षलग्न में मुथहा स्थित हो तो उस मनुष्य के लिये मान, पुत्र, घोड़े का लाभ, प्रताप की बढ़ती, राजा की प्रसन्नता, शरीर में पुष्टता, अनेक प्रकार के उद्यम और धन को देती है ॥ ५ ॥

धनस्थ मुंथा का फल।

उत्साहतोऽर्थागमनं यशश्च स्वबन्धुसन्माननृपाश्रयश्च।
मिष्टान्नभोगो बलपुष्टिसौख्यं स्यादर्थभावे मुथहा यदाऽब्दे ॥६॥

जिसके वर्षकाल में मुन्था दूसरे स्थान में बैठा हो तो वह बड़े उत्साह से धनों को पाकर लोक में यशस्वी होता है। अपने भाई-बंधुओं से सन्मान, राजा से आश्रय, मीठे अन्न का भोजन, बल व पुष्टता और सुख को पाता है ॥ ६ ॥

तृतीयस्थ मुंथा का फल।

पराक्रमाद्वित्तयशःसुखानि सौन्दर्यसौख्यं द्विजदेवपूजा।
सर्वोपकारस्तनुपुष्टिकीर्तिर्नृपाश्रयश्चेन्मुथहा तृतीया ॥ ७ ॥

जिसके वर्षकाल में तीसरे स्थान में मुन्था स्थित हो तो वह अपने पराक्रम से धन और यश का सुख तथा सुन्दरता का सुख पाता है तथा ब्राह्मणों और देवताओं का पूजन करनेवाला, सबका उपकार करनेवाला, पुष्टशरीर और कीर्तिमान् होकर राजा के आश्रय होता है ॥ ७ ॥

चतुर्थस्थानस्थित मुंथा का फल।

शरीरपीडा रिपुभीः स्ववर्ग्यवैरं मनस्तापनिरुद्यमत्वे।
स्यान्मुंथहायां सुखभावगायां जनापवादामयवृद्धिदुःखम् ॥ ८ ॥

जिसके वर्षकाल में चौथे स्थान में मुन्था स्थित हो तो उसके शरीर में

पीड़ा होती है और उसे शत्रुओं से डर होता है, अपने भाई-बन्धुओं से वैर होता है। मानसी व्याधि से युक्त उद्योगरहित होता है। लोक में अपवाद (कलंक) से पीड़ित तथा रोगों की वृद्धि से अनेक दुःखों को पाता है ॥ ८ ॥

पञ्चमभावस्थ मुंथा का फल।

यदीन्थिहा पञ्चमगाऽब्दवेशे सद्बुद्धिसौख्यात्मजवित्तलाभः।
प्रतापवृद्धिर्विविधा विलासा देवद्विजार्चा नृपतेः प्रसादः॥ ९ ॥

जिसके वर्ष में वर्षलग्न से पाँचवें भाव में मुन्था हो तो उसको अच्छी बुद्धि, सौख्य, सन्तान और धन का लाभ होता है। उसका प्रताप बढ़ता है। अनेक विलासों से युक्त देवताओं और ब्राह्मणों का पूजक होता है तथा उसके ऊपर राजा की प्रसन्नता होती है ॥ ९ ॥

अरिभावस्थमुंथा का फल।

कृशत्वमङ्गेषु रिपूदयश्च भयं रुजस्तस्करतो नृपाद्वा।
कार्यार्थनाशो मुथहाऽरिगा चेद्दुर्बुद्धिवृद्धिः स्वकृतोऽनुतापः १०

जिसके वर्ष में वर्षलग्न से छठे स्थान में मुन्था विराजमान हो तो वह दुबले शरीरवाला होता है तथा उसके वैरी उत्पन्न होते हैं। रोग, चोर और राजा से डर होता है। कार्य और धन का नाश हो जाता है। और उसकी दुष्ट बुद्धियों की बढ़ती और जिस काम में उद्योग करता है उसमें पछतावा होता है ॥ १० ॥

सप्तमभावस्थ मुंथा का फल।

कलत्रबन्धुव्यसनारिभीतिरुत्साहभङ्गो धनधर्मनाशः।
द्यूनोपगा चेन्मुथहातनोः स्याद् रुजा मनोमोहविरुद्धचेष्टा ११॥

जिसके वर्ष में वर्ष लग्न से सातवें स्थान में मुन्था स्थित हो तो उसको स्त्री, स्वजन, कुटेव और शत्रुओं से डर होता है। उत्साह का भंग तथा धन और धर्म का क्षय हो जाता है। और रोग से मन मोहित होकर विरुद्ध चेष्टाओं को करता है ॥ ११ ॥

अष्टमभावस्थ मुंथा का फल।

भयं रिपोस्तस्करतो विनाशो धर्मार्थयोर्दुर्व्यसनामयश्च।
मृत्युस्थिता चेन्मुथहा नराणां बलक्षयः स्याद्गमनं सुदूरे १२॥

जिन मनुष्यों के वर्ष में वर्षलग्न से आठवें स्थान में मुन्था स्थित हो तो उन मनुष्यों को शत्रु से और चोरों से भय होता है, उनके धर्म और धन का नाश होता है। तथा वे नर बुरे व्यसनों के रोगों से ग्रसित तथा निर्बल शरीरी होकर दूर देश को जाते हैं॥ १२॥

नवमस्थ मुन्था का फल।

स्वामित्वमर्थोपगमो नृपेभ्यो
धर्मोत्सवः पुत्रकलत्रसौख्यम्।
देवद्विजार्चा परमं यशश्च
भाग्योदयो भाग्यगतेन्थिहायाम्॥ १३॥

जिसके वर्ष में वर्षलग्न से भाग्यस्थान में मुन्था स्थित हो तो वह किसी काम का मालिक, राजाओं से धन को पाकर धार्मिक उत्सव करने वाला, पुत्र और स्त्रीजनों से सुख पानेवाला तथा देवताओं और ब्राह्मणों की पूजा करनेवाला, लोक में परमयशस्वी तथा बड़े भाग्यवाला होता है॥१३॥

दशमस्थ मुन्था का फल।

नृपप्रसादं स्वजनोपकारं सत्कर्मसिद्धिं द्विजदेवभक्तिम्।
यशोभिवृद्धिं विविधार्थलाभं दत्तेऽम्बरस्था मुथहा पदाप्तिम् १४

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न से दशवें घर में मुन्था स्थित हो तो वह उस प्राणी के लिये राजा की प्रसन्नता, अपने जनों का उपकार करना या कराना, अच्छे कर्मों की सिद्धि, ब्राह्मणों और देवताओं में भक्ति, यश की बढ़ती, अनेक प्रकार के धनों का लाभ तथा स्थान की प्राप्ति को देती है १४॥

एकादश मुन्था का फल।

यदीन्थिहा लाभगता विलाससौभाग्यनैरुज्यमनःप्रसादाः।
भवन्ति राज्याश्रयतो धनानि सन्मित्रपुत्राभिमतासयश्च १५

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न से ग्यारहवें स्थान में मुन्था स्थित हो तो वह स्त्रियों के विलास से संयुक्त, सुन्दर भाग्यवाला, रोगरहित तथा प्रसन्न मनवाला होता है और उसको राज्य के आश्रय से बहुत धन मिलते हैं

और वह अच्छे मित्रवर्ग, अच्छे लड़के तथा वांछित कार्यों को प्राप्त होकर परम आनन्दित होता है ॥ १५ ॥

व्ययभावस्थ मुन्था का फल ।

व्ययोऽधिको दुष्टजनैश्च संगो रुजा तनौ विक्रमतोऽर्थसिद्धिः ।
धर्मार्थहानिर्मुथहा व्ययस्था यदा तदा स्याज्जनतोपि वैरम् १६

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न से बारहवें घर में मुन्था स्थित हो तो वह अधिक खर्च करनेवाला, दुष्टजनों का संगी, रोगयुक्त शरीर तथा अपने पराक्रम से धन पैदा करता है । धर्म और अर्थ की हानि तथा अन्यजनों से वैर होता है ॥ १६ ॥

क्षुतदृष्ट तथा क्रूरदृष्ट मुन्था का फल ।

क्रूरैर्दृष्टः क्षुतदृशा यो भावो मुथहात्र चेत् ।
शुभं तद्भावजं नश्येदशुभं चापि वर्द्धते ॥ १७ ॥

पापग्रह जिस भाव को क्षुतदृष्टि (अशुभ दृष्टि) से देखता हो और उसी भाव में मुन्था बैठी हो तो उस भाव से पैदा हुआ शुभफल नाश हो जाता है और उस भावसम्बन्धी अशुभ फल बढ़ता है ॥ १७ ॥

शुभयुक्त और शुभदृष्ट मुन्था का फल ।

शुभस्वामियुक्तेक्षिता वीर्ययुक् सेन्थिहा स्वामिसौम्येत्थशालं प्रपन्ना ।
शुभं भावजं पोषयेन्नाशुभं सान्यथात्वेऽन्यथाभाव ऊह्यो विमृश्य

यदि मुन्था शुभग्रह स्वामी से युक्त हो अथवा देखा जाता हो अथवा पंचवर्गी के उत्तमबल से संयुक्त हो अथवा शुभग्रह स्वामी के साथ इत्थशाल करे तो वह उस भावसम्बन्धी शुभ फल को बढ़ाती और अशुभ फल को नाश करती है । अन्यथा जो शुभ स्वामी से युक्त नहीं हो और न शुभ ग्रहों के साथ इत्थशाल करती हो किन्तु पापग्रहों से दृष्ट होकर उन्हीं पापियों के साथ मिलाप करती हो तो वह अपने भावसम्बन्धी अशुभफल को बढ़ाती तथा शुभफल को नाशती है । और जो मुन्था शुभ या पाप ग्रह से दृष्ट होकर शुभ तथा पापग्रह के साथ मिलाप करती हो तो विचार कर शुभ अथवा अशुभ फल जानना चाहिए ॥ १८ ॥

जन्मलग्न से सप्तमादि भावस्थित तथा वर्ष में पापयुक्त मुन्था का फल ।

जनुर्लग्नतोऽस्तान्त्यषण्मृत्युबन्धु-
स्थिताब्दे हता क्रूरखेटैस्तु सा चेत् ।
विनश्येत्सयत्रेन्थिहा भाव एवं
शुभस्वामिदृष्टौ न नाशः शुभं च ॥ १९ ॥

जिसके वर्षकाल में जन्मलग्न से सातवें, बारहवें, छठें, आठवें अथवा चौथे स्थान में मुन्था स्थित हो और वह वर्ष में पापग्रहों से युक्त हो तो वर्ष के जिस भाव में मुन्था बैठा हो उस भाव का नाश होता है और इसी प्रकार पूर्वोक्त मुन्था शुभ ग्रहस्वामी से देखी जाती हो तो उस भाव का नाश नहीं होता है किन्तु वह भाव शुभ फल को देता है ॥ १९ ॥

जन्म और वर्ष में पापशुभयुक्त भावस्थित मुन्था का फल ।

यदोभयत्रापि हताभावो नश्येत्स सर्वथा ।
उभयत्र शुभत्वे तु भावोसौ वर्द्धतेतराम् ॥ २० ॥

जिसके जन्म या वर्ष में लग्न से ४ । ६ । ७ । ८ । १२ इन अनिष्ट स्थानों में स्थित मुन्था पापग्रहों से युक्त हो तो वह मुन्थायुक्तभाव सर्वथा उस प्राणी के लिये बुरे फल को अवश्य ही देता है और जो मुन्था दोनों जगह (जन्मकाल तथा वर्षकाल) में शुभ ग्रहों से युक्त हो तो वह मुन्थायुक्तभाव वृद्धि को प्राप्त होता है अर्थात् उस प्राणी को वह मुन्थायुत भाव अवश्य ही अच्छे फल को देता है ॥ २० ॥

वर्ष में अशुभ गृहस्थ मुन्था का फल ।

वर्षेऽप्यनिष्टगेहस्था यद्भावे जनुषि स्थिता ।
क्रूरोपघातात्तं भावं नाशयेच्छुभयुक्शुभा ॥ २१ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्ष लग्न से मुन्था अनिष्ट स्थानों में स्थित हो अर्थात् वर्ष कुण्डली में लग्न से चौथे, छठें, सातवें, आठवें और बारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हो और (अपि) शब्द से जन्मलग्न से भी इन पूर्वोक्त अनिष्ट स्थानों में बैठी हो और जन्म कुण्डली में जिस भाव में मुन्था स्थित हो यदि वह भाव वर्ष में पापग्रहों से संयुत हो

तो उस जन्मस्थित मुन्थायुक्त भाव को नाशती है और यदि वर्ष में अनिष्ट स्थानस्थ मुन्था शुभग्रहों से युक्त हो तो वह उस प्राणी के लिये शुभ फल की देनेवाली होती है ॥ २१ ॥

उदाहरण।

जनुर्लग्नतस्तुर्यगा सौम्ययुक्ताऽब्दवेशेऽपि द्रव्यस्य लाभं विधत्ते
नृपाद्भीतिदा पापयुक्ताऽतिकष्टाऽष्टमादावपीत्थं विमर्शो विधेयः

जिसके वर्षकाल में जन्मलग्न से चौथे स्थान में स्थित होकर शुभ ग्रहों से युक्त मुन्था हो तो उस प्राणी के लिये द्रव्य का लाभ करती है और जो पूर्वोक्त मुन्था पापग्रहों से युक्त हो तो राजा से भय तथा अत्यन्त कष्ट को देती है। इस प्रकार कही हुई रीति से अष्टम आदि स्थानों में स्थित मुन्था से उक्त भाव के फल का लाभ वा नाश कहना चाहिए २२ ॥

वर्षेश के बलानुसार भावस्थित मुन्था का फल।

यस्मिन्भावे स्वामिसौम्येक्षिता चे-
द्भावो जन्मन्येष यस्तस्य वृद्धिः।
एवं पापैर्नाशउक्तस्तु तस्ये-
त्यूह्यं वीर्याद्वर्षपः सौख्यमेव ॥ २३ ॥

जिसके वर्षकुण्डली में मुन्था जिस भाव में स्थित होकर अपने स्वामी और शुभग्रह से देखी जाती हो और यह वर्षसम्बन्धी भाव राशि जन्मकुण्डली में जिस भाव में हो उस भावसम्बन्धी फल की बढ़ती होती है। ऐसे ही पापग्रहों से दृष्ट हो तो उस जन्मसम्बन्धी भाव का नाश कहा जाता है। यदि वर्षेश बलवान् हो तो मुन्थाकृत अनिष्ट को दूरकर शुभफल देता है ॥ २३ ॥

ग्रहयोग-दृष्टि-राशिस्थित द्वारा मुन्था का फल।

सूर्यस्थानादिगत मुन्था का फल।

यदीन्थिहा सूर्यगृहे युता वा सूर्येण राज्यं नृपसंगमं च।
दत्ते गुणानां परमामवाप्तिं स्थानान्तरस्येति फलं दृशोपि २४॥

जिस मनुष्य के वर्षकाल में मुन्था सिंहराशि में स्थित हो अथवा सूर्य

से युक्त या दृष्ट हो तो वह राज्य या राजा के संगम को देता है । और वह गुणों से युक्त होकर विदेशी होता है ॥ २४ ॥

चन्द्रस्थानादिगत मुन्था का फल ।

चन्द्रेण युक्तेन्दुगृहेऽथ दृष्टेन्दुनापि वा धर्मयशोभिवृद्धिम् ।
नैरुज्यसन्तोषमतिप्रवृद्धिं ददाति पापेक्षणतोऽतिदुःखम् २५ ॥

जिसके वर्षकाल में मुन्था चन्द्रमा से युक्त हो अथवा चन्द्रमा के घर (कर्कराशि) में स्थित हो अथवा चन्द्रमा से दृष्ट हो तो वह उस प्राणी के लिए धर्म और यश की बढ़ती, नीरोगता, सन्तोष और आनन्द को देती है और मुन्था को पाप ग्रह देखते हों तो वह बड़े कष्ट को देती है ॥२५॥

भौमगृहादिगत मुन्था का फल ।

कुजेन युक्ता कुजभे कुजेन दृष्टा च पित्तोष्णरुजं करोति ।
शस्त्राभिघातं रुधिरप्रकोपं सौरीक्षिता सौरिगृहे विशेषात् २६ ॥

जिसके वर्षकाल में मङ्गलयुक्त अथवा मंगल के घर (मेष-वृश्चिक) में स्थित अथवा मङ्गल से दृष्ट मुन्था हो तो उस प्राणी के शरीर में पित्त-ज्वर, हथियार से घाव तथा खून का विकार करती है । और यदि मुन्था को शनैश्चर देखता हो अथवा शनैश्चर के घर (मकर या कुम्भ) में बैठी हुई मुन्था को मङ्गल देखता हो अथवा मङ्गल से संयुक्त हो तो पूर्व कहा हुआ फल उसको विशेषता से होता है ॥ २६ ॥

बुध-शुक्रस्थानादिगत मुन्था का फल ।

बुधेन शुक्रेण युतेक्षिता वा तद्भेऽपि वा स्त्रीमतिलाभसौख्यम् ।
धर्मं यशश्चाप्यतुलं विधत्ते कष्टं च पापेक्षणयोगतः स्यात् २७

जिसके वर्षकाल में बुध अथवा शुक्र से युक्त अथवा दृष्ट या इनके घर (मिथुन, कन्या, वृष, तुला) में स्थित हो तो उसको सुन्दरी स्त्री और ज्ञान का बड़ा लाभ होता है । सुख, धर्म और अतुल यश की प्राप्ति होती है और जिसके वर्षकाल में मुन्था को पापग्रह देखते हों अथवा पापग्रहों से संयुक्त हो तो उसको बड़ा भारी दुःख होता है ॥ २७ ॥

गुरुस्थानादिगत मुन्था का फल ।

युक्तेक्षिता वा गुरुणा गुरोर्भे यदीन्थिहा पुत्रकलत्रसौख्यम् ।

दुदाति हेमाम्बररत्नभोगं शुभेत्थशालादिह राज्यलाभः २८ ॥

जिसके वर्षकाल में बृहस्पति से युक्त अथवा गुरुदृष्ट अथवा बृहस्पति के घर (धन और मीन) में मुन्था स्थित हो तो उसको पुत्र और स्त्री से सुख होता है । तथा सोना, कपड़े और रत्नादि से सुख मिलता है और जिसके पूर्वोक्त मुन्था शुभग्रहों के साथ इत्थशाल करती हो तो वह राज्य का लाभ करती है ॥ २८ ॥

शनिस्थानादिगत मुन्था का फल ।

शनेर्गृहे तेन युतेक्षिता वा यदीन्थिहा वातरुजं विधत्ते ।
मानक्षयं वह्निभयं धनस्य हानिश्च जीवेक्षणतः शुभाप्तिः २९ ॥

जिसके वर्षकाल में मुन्था शनैश्चर के घर (मकर या कुम्भ) में स्थित हो अथवा शनैश्चर से युक्त हो अथवा मुन्था को शनैश्चर देखता हो तो उसको वातरोग, मान का क्षय, अग्नि का भय और धन की हानि होती है और यदि पूर्वोक्त मुन्था को बृहस्पति देखता हो तो वह शुभ फलों को पाता है ॥ २९ ॥

राहुमुखगत मुन्था का फल ।

तमोमुखे चेन्मुथहा धनाप्तिं यशः सुखं धर्मसमुन्नतिं च ।
सितेज्ययोगेक्षणतः पदाप्तिं सुवर्णरत्नाम्बरलब्धयश्च ॥ ३० ॥

जिसके वर्षकाल में यदि मुन्था राहु के मुख में बैठा हो तो वह प्राणी धनवान्, लोक में यशस्वी और सुखी होता है । धर्म की अच्छे प्रकार उन्नति करता है । और जिसके वर्षकाल में पूर्वोक्त मुन्था शुक्र या बृहस्पति से संयुक्त हो अथवा शुक्र या बृहस्पति से दृष्ट हो तो वह प्राणी पद (घर) सुवर्ण, रत्न और वस्त्र इन सबों को प्राप्त होता है ॥ ३० ॥

राहु के मुख, पृष्ठ और पुच्छ का लक्षण ।

भोग्या राहोर्लवास्तस्य मुखं पृष्ठं गता लवाः ।
ततस्सप्तमभं पुच्छं विमृश्येति फलं वदेत् ॥ ३१ ॥

जिस राशि में राहु बैठा है उस राशि के वक्रगति से जो भोग्य अंश हैं उनको मुख कहते हैं और जो भुक्त अंश हैं वे पृष्ठसंज्ञक हैं । तथा जिस राशि में राहु बैठा है उस राशि से सातवीं राशि को पुच्छ कहते हैं ।

जैसे इस समय कन्याराशि में दश अंशों से राहु वक्र है वहाँ आदि के दश अंश मुखसंज्ञक हैं क्योंकि भोग करने को हैं इससे उन अंशों को राहु का मुख जानो और अन्यभुक्त जो बीस अंश हैं वे पृष्ठसंज्ञक हैं। तथा कन्या राशि से सातवीं मीन राशि है उसको पूँछ जानो। मुख, पीठ और पूँछ को विचारकर फल कहना चाहिए ॥ ३१ ॥

पृष्ठ और पुच्छगत मुन्था का फल।

तत्पृष्ठभागेन शुभप्रदा स्यात्तत्पुच्छभागाद्रिपुभीतिकष्टम्।
पापेक्षणादर्थसुखस्य हानिश्चेज्जन्मनीत्थं गृहवित्तनाशः ॥३२॥

जिसके वर्षकाल में राहु की पृष्ठ में मुन्था स्थित हो तो उसको शुभ फल देती है और जिसके राहु की पूँछ में मुन्था बैठा हो तो उसको शत्रु से भय और कष्ट को देती है और जिसके पूर्वोक्त मुन्था को पापग्रह देखते हों तो उसके धन और सुख की हानि होती है और जन्मकाल में ऐसा मुन्था हो तो घर और धन से रहित होता है ॥ ३२ ॥

जन्मकालीन ग्रहों के वश से शुभाशुभ फल।

ये जन्मकाले बलिनोऽब्दकाले चेद्दुर्बलास्तैरशुभं समान्ते।
विपर्यये पूर्वमनिष्टमुक्तं तुल्यं फलं स्यादुभयत्र साम्ये ॥ ३३ ॥

जिसके जन्मकाल में जो ग्रह बली हों और यदि वे ग्रह वर्षकाल में दुर्बल हों तो उन ग्रहों से वर्ष के उत्तरार्द्ध में अशुभ फल कहना चाहिए और वर्ष के पूर्वार्द्ध में उन ग्रहों का शुभ फल होता है। जिसके जन्मकाल में जो ग्रह दुर्बल हों और वे ग्रह वर्षकाल में सबल हो जावें तो वर्ष के पूर्वार्द्ध में अनिष्ट फल करते हैं और वर्ष के उत्तरार्द्ध में शुभ फल करते हैं और जिसके जन्मकाल अथवा वर्षकाल में ग्रहों के बल की समता हो तो तुल्य फल होता है। अर्थात् जन्मकाल और वर्षकाल इन दोनों स्थानों पर जो बलिष्ठ ग्रह होवें तो सम्पूर्ण वर्ष पर्यन्त शुभ फल होता है और जब उभयत्र बलहीन ग्रह होवें तो सालभर अशुभ फल होता है ॥ ३३ ॥

अशुभ मुन्थास्वामी का फल।

षष्ठेऽष्टमेऽन्त्ये भुवि वेन्थिहेशोऽस्तगोऽथ वक्रोऽशुभदृष्टयुक्तः।

क्रूराच्चतुर्थास्तगतश्च भत्र्यो न स्याद्‌शुभं यच्छति वित्तनाशम् ॥

जिसके वर्षकाल में मुन्था का स्वामी छठे, आठवें, बारहवें और चौथे इन अनिष्ट स्थानों में स्थित हो अथवा अस्त हो गया हो अथवा वक्री हो तथा पापग्रहों से दृष्ट वा युक्त हो तथा क्रूरग्रहों के स्थान से चौथे या सातवें स्थान में बैठा हो तो उस प्राणी को शुभ फल नहीं होता है किन्तु वह उस प्राणी के लिये रोग और धन की हानि को देता है ॥ ३४ ॥

मुन्थेश का अशुभ फल।

यद्यष्टमेशेन युथोऽथ दृष्टः क्षुताख्यदृष्ट्या न शुभस्तदापि।
योगद्वये स्यान्निधनं यदैकयोगस्तदा मृत्युसमत्वमाहुः ३५ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न से आठवें स्थान का स्वामी शुभग्रह अथवा पापग्रह से संयुक्त मुन्था का स्वामी हो अथवा क्षुतदृष्टि (अर्थात् चौथी, सातवीं, पहली और दशवीं दृष्टि) से मुन्था का स्वामी देखा जाता हो तो भी शुभकारक नहीं होता है और जिसके ये दोनों योग हों तो उस प्राणी का मरण ही होता है और कदाचित् उन योगों में से जिसके एक ही योग हो तो उसको मृत्युसमान कष्ट होता है। ऐसा आचार्यलोग कहते हैं ॥३५॥

मुन्था और मुन्था के स्वामी का शुभाशुभ फल।

मुथहा तत्पतिर्वापि जन्मनीक्षितयुक्शुभैः।
वर्षारम्भे शुभं दत्तेऽब्दे चेदन्त्येऽन्यथाऽशुभम् ॥ ३६ ॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां मुथहानिरूपणं द्वितीयं प्रकरणम् ॥२॥

जिसके जन्मकुण्डली में मुन्था या मुन्था का स्वामी शुभग्रहों से देखा जाता हो अथवा शुभग्रहों से संयुक्त हो तो वह वर्ष के पूर्वार्द्ध में उसको शुभ फल देता है और यदि वर्षकुण्डली में मुन्था या मुन्था का स्वामी शुभग्रहों से देखा जाता हो अथवा संयुक्त हो तो वह वर्षके अन्त में उसको शुभ फल देता है। अन्यथा जो मुन्था या मुन्था के स्वामी को पापग्रह देखते हों अथवा उन पापग्रहोंसे युक्त हो तो उस प्राणी को क्रम से वर्षके पूर्वार्द्ध अथवा उत्तरार्द्ध में अशुभ फल देता है। यहाँ दृष्टि, शुभग्रह और अशुभग्रह इनके

तारतम्यादि से वर्ष के पूर्वार्द्ध, परार्द्ध अथवा सम्पूर्ण वर्ष के तरतम (छोटे बड़े) आदि भेद बहुत हैं उनको अपनी बुद्धि से विचारना चाहिए ॥३६॥

इति श्रीढुण्ढिराजविरचितायां नीलकण्ठीभाषाव्याख्यायां मुथहाफलनिरूपणं नाम द्वितीयं प्रकरणम् ॥ २ ॥

तृतीयं प्रकरणम्।

वर्षारिष्टविचार।

लग्नेशेऽष्टमगेऽष्टेशे तनुस्थे वा कुजेक्षिते।
ज्ञजीवयोरस्तगयोः शस्त्राघातो विपन्मृतिः ॥ १ ॥

दो०—कहौं तृतीय प्रकरण महँ, वर्षारिष्ट विचार।
ताहि विचारैं सुज्ञजन, करिकै मति विस्तार ॥

यहाँ अरिष्ट योगके रहते वक्ष्यमाण फल वृथा[2] ही है इत्यादि मणित्थ नामक आचार्य कहते हैं। अरिष्ट अध्याय की व्याख्या करते हैं—पहले लग्नेश आदि के अरिष्ट को कहते हैं कि, जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न का स्वामी आठवें स्थान में हो और उसको मंगल देखता हो (यह एक योग हुआ) अथवा आठवें स्थान का स्वामी लग्न में स्थित होकर मंगल से देखा जाता हो (यह दूसरा योग है) अथवा बुध और बृहस्पति अस्त हों (यह तीसरा योग हुआ) इन तीनों योगों में से कोई एक भी योग हो तो उसके देह में किसी हथियार से घाव हो जाता है और वह अनेक विपत्तियों को सहता हुआ मरजाता है। किसी के मत से बुध और शुक्र के अस्त होने पर भी पूर्वोक्त योग होता है ॥ १ ॥

अरिष्टयोग।

अब्दलग्नेशरन्ध्रेशौ व्ययाष्टहिबुकोपगौ।
मुथहासंयुतौ मृत्युप्रदौ तद्धातुकोपतः ॥ २ ॥

१—ज्ञशुक्रयोरिति वा पाठः।

२—वृथाफलं हायनजं हि यस्मान्न जीवनं हायनरिष्टयोगात्। रिष्टानि तस्मात्प्रथमं प्रवक्ष्ये पूर्वैर्विधिज्ञैः कथितानि यानि ॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न का स्वामी और आठवें स्थान का स्वामी ये दोनों बारहवें, आठवें या चौथे इन स्थानोंमें से किसी स्थान में मुन्था के साथ स्थित हों तो उसकी उन ग्रहों के जो धातु वात पित्तादि हैं उनसे उतपन्न विकार से मृत्यु होती है। यहाँ लग्नेश, अष्टमेश और मुन्था इन तीनों को मिलाकर एक ही योग होता है अन्यथा यह योग नहीं होता है ॥ २ ॥

अन्य अरिष्टयोग ।

जन्मलग्नाधिपोऽवीर्यो मृतीशोऽब्देऽस्तगो यदा ।
सूर्यदृष्टो मृतिं दत्ते कुष्ठं कण्डूं तथापदः ॥ ३ ॥

बलरहित जन्मलग्न का स्वामी हो और वर्षलग्न से आठवें घर का मालिक होकर यदि वर्षलग्न से सातवें घर में बैठा हो और उसको सूर्य देखता हो तो वह मृत्यु, कुष्ठ, खाज और आपदा को देता है। यह किसी एक आचार्य का मत है। किसी के मत से (अस्तगो से) बलरहित जन्मलग्नेश वर्ष में अष्टमेश हो और अस्त हो तथा सूर्य से दृष्ट हो तब मृत्यु आदि देता है। परंतु अस्त होने पर सूर्य से दृष्ट नहीं हो सकता क्योंकि सूर्य के साथ होने से अस्त होता है। अतः (अस्तगो) के स्थान पर (लग्नगः) ऐसा पाठ होना चाहिए। इसका ऐसा अर्थ होता है कि जिसके बलरहित जन्मलग्नेश वर्षलग्न से अष्टम स्थान का स्वामी लग्न में प्राप्त होकर सूर्य से देखा जाता हो तो वह उस प्राणी के लिये मृत्यु आदि देता है। मणित्थ[1] नामक आचार्य ने भी यही कहा है, कि जन्मलग्न का स्वामी निर्बल हो तथा आठवें घर का मालिक होकर वर्ष लग्न में बैठा हो और उसको सूर्य देखता हो तो उस प्राणी के शरीर में किशी हथियार से चोट लगती हैं और वह बहुत प्रकार के कष्टों सहता हुआ कोढ़ी होकर मरण के बराबर हो जाता है ॥ ३ ॥

अन्ययोग ।

अस्तगौ मुथहालग्ननाथौ मन्देक्षितौ यदा ।
सर्वनाशो मृतिः कष्टमाधिव्याधी भयं रुजः ॥ ४ ॥

१—"चेज्जन्मनाथो विबलो मृतीशो लग्ने गतो भास्करदृष्टमूर्तिः । शस्त्राभिघातं बहुधा च कष्टं कुष्टं शरीरे मरणेन तुल्यम् ॥"

के बली रहते डालीसमेत पत्तों का साग भोजन में आता है और शुक्र, बृहस्पति और बुध इन्हों के बली रहते नानाप्रकार के व्यञ्जनों का भोजन मिलता है और शनैश्चर के बलिष्ठ रहते भी इसीप्रकार भोजन मिलता है और जो राहु, केतु ये दोनों बल से संयुक्त हों तो मांस समेत व्यञ्जनों का भोजन प्राप्त होता है ॥ १४ ॥

स्वप्नचिन्ता का वर्णन ।

लग्नांशगेऽर्के तनुगेऽपि वास्मिन्
दुःस्वप्नमीक्षेत यथार्कबिम्बम् ।
रक्ताम्बरं वह्निमथापि चन्द्रे
शुभ्राश्वरत्नाम्बरवज्रपुष्पम् ॥ १५ ॥
स्त्रियः सुरूपाश्च कुजे सुवर्ण-
रक्ताम्बरस्रग्मणिविद्रुमाणि ।
बुधे हयस्वर्गतिधर्मवार्ता
गुरौ रतिं धर्मकथां सुरेज्याम् ॥ १६ ॥

यदि सूर्य लग्न के नवांश में अथवा लग्न में ही बैठा हो तो मनुष्य बुरे स्वप्न को देखता है । जैसे कि, सूर्य का बिम्ब, लाल कपड़े तथा अग्नि । और जो चन्द्रमा लग्न के नवांश अथवा लग्न में ही बैठा हो तो स्वप्न में सफ़ेद घोड़ा, रत्न, कपड़े, वज्र, फूल और सुन्दर स्त्रियों को देखता है । और जो मंगल लग्न के नवांश वा लग्न में ही स्थित हो तो स्वप्न में सुवर्ण, लालकपड़े, रक्त फूलों की माला, मणि और मूँगा इन सबों को देखता है । और जो बुध लग्न के नवांश अथवा लग्न में ही बैठा हो तो स्वप्न में घोड़े की सवारी, स्वर्ग में गमन करना और धर्मसम्बन्धी वार्त्ताओं का वर्णन करना इन सबको देखता है । और जो बृहस्पति लग्न के नवांश अथवा लग्न में ही स्थित हो तो स्वप्न में रमण (विषयसौख्य), धर्मसम्बन्धी कथाओं का वर्णन करना और शिवालय, ठाकुरद्वारा आदिकों में देवमूर्तियों का दर्शन तथा सजातीय प्यारे भाइयों का समागम इन सबों को देखता है ॥ १५ । १६ ॥

शुक्र, शनि, राहु और केतुद्वारा स्वप्नदर्शन ।

सद्बन्धुसङ्गश्च सिते जलानां
पारे गतिं देवरतिं विलासम् ।
शनावरण्याद्रिगतिश्च नीचैः
सङ्गश्च राहौ शिखिनीत्थमेवम् ॥ १७ ॥

जो शुक्र लग्न के नवांश अथवा लग्न में ही विराजमान हो तो स्वप्न में जलाशयों के किनारे गमन, देवरति और विलास को देखता है । और जो शनैश्चर लग्न के नवांश में अथवा लग्न में ही बैठा हो तो स्वप्न में वन में घूमना, पहाड़ पर चढ़ना और नीचों की संगति को देखता है । इसी-प्रकार राहु और केतु में भी स्वप्न का दर्शन कहा जाता है ॥ १७ ॥

स्वप्न में चन्द्रद्वारा स्त्रीरमण का विचार ।

सहजधीमदनायरिपुस्थितो यदि शशी गुरुभानुसितेक्षितः ।
नवमकेन्द्रगतेषु शुभग्रहेष्ववलया मनुजो रमते तदा ॥ १८ ॥

तीसरे, पाँचवें, सातवें, ग्यारहवें और छठे इन स्थानों में से किसी स्थान में यदि चन्द्रमा स्थित हो और उस चन्द्रमा को बृहस्पति, सूर्य, शुक्र ये तीनों देखते हों और नवयें, पहिले, चौथे, सातवें और दशवें इन स्थानों में शुभग्रह बैठे हों तो स्वप्न में मनुष्य सुन्दर प्यारी स्त्री के साथ रमता है ॥ १८ ॥

ग्रन्थकार के वंश का वर्णन ।

आसीदसीमगुणमण्डितपण्डिताग्र्यो
व्याख्यद्भुजङ्गपगवीः श्रुतिवित्सुवृत्तः ।
साहित्यरीतिनिपुणो गणितागमज्ञ-
श्चिन्तामणिर्विपुलगर्गकुलावतंसः ॥ १९ ॥

अब ग्रन्थकार के पितामह का वर्णन करते हैं कि अपरिमित गुणगणों से भूषित, पण्डितों में श्रेष्ठ, महाभाष्य के पढ़ानेवाले, वेदविहित कर्मों के जाननेवाले, अच्छे आचरणों के करनेवाले, साहित्यरीति में निपुण, गणित शास्त्र के ज्ञाता, सुन्दर गर्गकुल के भूषणरूप चिन्तामणि नामक पण्डित हुए ॥ १९ ॥

तदात्मजोऽनन्तगुणो ह्यनन्तो योधोक्तदुक्तीः किल कामधेनुम् ।
सत्तुष्टये जातकपद्धतिं च न्यरूपयद्दुष्टमतं निरस्य ॥ २० ॥

उनके पुत्र अनन्तगुणों से युक्त, अनन्तनामक विद्वान् हुए जिन्होंने सज्जनों के आनन्द के लिए ज्योतिःशास्त्र में प्रसिद्ध पञ्चाङ्ग (तिथिपत्र) के साधक कामधेनुनामक ग्रंथ के ऊपर तिलक (टीका) बनाया । और सज्जनों को प्रसन्न करने के लिए दुष्टों के मत को दूर कर जातकपद्धति (जिससे पैदा हुए बालकों और कन्याओं के जन्मपत्र का शुभ व अशुभ फल कहा जाता है) का निरूपण किया ॥ २० ॥

स्ववर्णनपूर्वक वर्षतन्त्र कथन ।

पद्माम्बयासावि ततो विपश्चित् श्रीनीलकण्ठः श्रुतिशास्त्रनिष्ठः ।
विद्वच्छिवप्रीतिकरं व्यधासीत् समाविवेकं मृगयावतंसम् २१॥

उन अनन्त दैवज्ञ से पद्मानाम्नी माता ने विद्वान् वेदवेदाङ्गों का ज्ञाता नीलकण्ठनामक पुत्र उत्पन्न किया । उसने विद्वज्जन और शिवजी को प्रसन्न करनेवाले उस वर्षविचार नामक तंत्र को रचा जिसमें मृगया आदि का भली भाँति वर्णन किया है ॥ २१ ॥

ग्रन्थपूर्ति का समय ।

शाके नन्दाभ्रबाणेन्दुमिते आश्विनमासके ।
शुक्लेऽष्टम्यां समातन्त्रं नीलकण्ठबुधोऽकरोत् ॥ २२ ॥

इति श्रीगर्गवंशोद्भवदैवज्ञानन्तसुतनीलकण्ठ-
विरचितं वर्षतन्त्रं समाप्तम् ॥

शालिवाहन के शाके १५०९ आश्विन शुक्लाष्टमी को श्रीनीलकण्ठजी ने इस वर्षतन्त्र की रचना की थी ॥ २२ ॥

टीकाकार का परिचय ।

पुरे मुरादाबादाख्ये शुक्लवंशोद्भवः सुधीः । आसीद्दुर्गाप्रसादाख्यो बल-भद्रस्तु तत्सुतः १ तस्यात्मजः शक्तिधरो वर्षेऽब्धात्ताङ्कभूमिते । भाद्रे मासि

सिते पक्षे द्वादश्यां भृगुवासरे २ नीलकण्ठकृतेर्व्याख्यां वाचा देवमनुष्ययोः ।
कृतवान्सर्वतोपाय विस्पष्टार्थप्रबोधिनीम् ॥ ३ ॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां श्रीमत्सुकुलबलभद्रसूनुशक्तिधरविरचित-
भावार्थप्रकाशिकायां वर्षतन्त्रं समाप्तिमगात् ॥

दो० । नीलकण्ठकृतताजके मृगयादिकज्ञानाय ।
कृतभाषा श्रीशक्तिधर प्रकरण नवम बनाय ॥ १ ॥

बुद्धिमान्द्यवश जो कछू लिख्यों अशुद्ध बनाय ।
द्वेषभाव को छोड़कर दीजे शुद्ध बनाय ॥ २ ॥
रहौं जिला उन्नावमहँ ग्राम मुरादाबाद ।
सुकुलवंशजनि शक्तिधर कीन्ह्यों यह अनुवाद ॥ ३ ॥
भादौं शुक्लाद्वादशी भार्गववार विशाल ।
श्रीवैक्रमसँव्वत अभ्र, बाणनन्दद्विजपाल ॥ ४ ॥
मुंशी नवलकिशोर की, आज्ञा लहि अभिराम ।
नीलकण्ठिभाषा भयों, पूरकरै सब काम ॥ ५ ॥

ॐतत्सदिति ।

तृतीयं प्रश्नतन्त्रं प्रारभ्यते।

प्रथमं प्रकरणम्।

देवज्ञस्य हि दैवेन सदसत्फलवाञ्छया।
अवश्यं गोचरं मर्त्यः सर्वः समुपनीयते॥ १॥

जो दैवज्ञ दैव (शास्त्र) से शुभ तथा अशुभ फल कहने की इच्छा रखता हो तो वह गोचर अर्थात् ग्रहचार से सम्पूर्ण फल अवश्य कह सकता है॥१॥

ब्रह्मा से प्रश्नशास्त्र का प्रकट होना।

अश्रौषीच्च पुरा विष्णोर्ज्ञानार्थे समुपस्थितः।
वचनं लोकनाथोपि ब्रह्मा प्रश्नादिनिर्णयम्॥ २॥

पहिले समय में ब्रह्माजी को कर्मफल जानने की इच्छा हुई तब वे विष्णुजी के समीप गये। वहाँ विष्णुजी से प्रश्न और स्वरशास्त्र का निर्णय सुनकर ब्रह्माजीने प्रश्नादि को ज्योतिष द्वारा लोक में प्रकट किया॥२॥

किस प्रकार प्रश्न करना चाहिए।

तस्मान्नरः कुसुमरत्नफलाग्रहस्तः
प्रातः प्रणम्य वरयेदपि प्राङ्मुखस्थः।
होराङ्गशास्त्रकुशलान्हितकारिणश्च
संहृत्य दैवगणकान्सकृदेव पृच्छेत्॥ ३॥

इसलिए प्रश्नकर्ता मनुष्य पुष्प, रत्न (द्रव्य) या फल दहिने हाथ में लेकर, पूर्वमुख बैठकर होराशास्त्र में कुशल तथा हितकारी ज्योतिषियों को एकत्र कर उनको प्रणाम करे तथा प्रश्ननिमित्त उनका वरण कर एक बार उनसे प्रश्न करे॥ ३॥

जिसकी वाणी मिथ्या नहीं होती है उसका कथन।

देशभेदं ग्रहगणितं जातकमवलोक्य निरवशेषमपि।
यः कथयति शुभमशुभं तस्य न मिथ्या भवेद्वाणी॥ ४॥

जो विद्वान् देशभेदानुसार गणित करके और संपूर्ण जातक ग्रन्थों का अवलोकन करके शुभाशुभ फल कहता है उसकी वाणी मिथ्या नहीं होती है॥४॥

योग्य और अयोग्य प्रश्नकर्त्ता ।

क्षुद्रपाखण्डधूर्तेषु श्रद्धाहीनोपहासके ।
ज्ञानं न तथ्यतामेति यदि शम्भुः स्वयं वदेत् ॥ ५ ॥
भक्तार्तदीनवदने दैवज्ञो न दिशेद्यदि ।
विफलं भवति ज्ञानं तस्मात्तेभ्यः सदा वदेत् ॥ ६ ॥

क्षुद्र (ओछा, नीच स्वभाव) पाखण्डी, धूर्त (छलिया), श्रद्धाहीन और उपहासक (हँसौवा करने के लिए पूछनेवाला) इन लोगों को बताया हुआ प्रश्न ठीक नहीं होता, चाहे शिवजी ही क्यों न उत्तर देवें अर्थात् पूर्वोक्त पुरुषों को शिवजी भी ठीक नहीं बता सकते हैं । भक्त, दुःखी और दीनवदन, इनको जो ज्योतिषी ठीक नहीं बतलाता है (अर्थात् इन्हें हीन समझ विचार नहीं करता है) तो उसका ज्ञान विफल होजाता है । इसलिए ऐसे मनुष्यों को सदा प्रश्न बताना चाहिए ॥ ५ । ६ ॥

प्रश्नकर्त्ता की परीक्षा ।

ऋजुरयमनृजुर्वा प्रष्टा पूर्वं परीक्ष्य लग्नबलात् ।
गणकेन फलं वाच्यं दैवं तच्चित्तगं स्फुरति ॥ ७ ॥

ज्योतिषी को चाहिए कि पहले लग्नबल से प्रश्नकर्त्ता के स्वभाव की परीक्षा करे कि यह सीधे स्वभाव से प्रश्न करता है या कुटिलता (छल) से प्रश्न करता है । फिर लग्न से प्रश्नकर्त्ता के मन की बात दैवगति से स्फुरण हो आती है, उसको कहना चाहिए ॥ ७ ॥

लग्नस्थे शशिनि शनौ केन्द्रस्थे ज्ञे दिनेशरश्मिगते ।
भौमज्ञयोः समदृशा लग्नगचन्द्रेऽनृजुः प्रष्टा ॥ ८ ॥
लग्ने शुभग्रहयुते सरलः क्रूरान्विते भवेत्कुटिलः ।
लग्नेऽस्ते सौम्यदृशा विधुगुरुदृष्ट्या च सरलोऽयम् ॥ ९ ॥

यदि प्रश्नलग्न में चन्द्रमा हो और केन्द्र (१ । ४ । ७ । १० स्थान) में शनि हो तथा बुध सूर्य के साथ हो (अस्त हो) तथा लग्नगत चन्द्रमा को मङ्गल और बुध समदृष्टि से देखते हों तो प्रश्नकर्त्ता सरलचित्त नहीं है ऐसा जानना चाहिए । यदि लग्न शुभ ग्रहों से युक्त हो तो प्रश्नकर्त्ता को

जिसके वर्षकाल में मुन्था का स्वामी और लग्न का स्वामी ये दोनों सूर्य के सान्निध्य से अस्त होकर शनैश्चर से देखे जाते हों तो उस प्राणी के सर्व अर्थात् स्त्री, लड़के और द्रव्य आदिकों का नाश, मृत्यु, कष्ट व आधि (मानसी दुःख) व्याधि (शरीरव्यथा) भय और रोग ये सब होते हैं॥ ४॥

अन्ययोग।

क्रूरमूसरिफोऽब्देशो जन्मेशः क्रूरितः शुभैः।
कम्बूलेऽपि विपन्मृत्युरित्थमन्याधिकारतः॥ ५॥

वर्ष का स्वामी पापग्रह के साथ ईसराफयोग करता हो और जन्मलग्न का स्वामी अस्तंगत आदि से क्रूरभाव को प्राप्त हो और वर्ष का स्वामी तथा जन्मलग्न का स्वामी इनमें से किसी एक का शुभग्रहों के साथ कम्बूलयोग हो और शुभग्रहों के अथवा जन्मलग्नेश और वर्षेश इन दोनों के या इनमें से किसी एक के साथ यदि चन्द्रमा मुथशिल योग को करता हो तो उस प्राणी की नाना प्रकार के दुःखों से मृत्यु होती है अर्थात् वह प्राणी अनेक क्लेशों को भोगता हुआ पतित होता है फिर शुभकम्बूल योग के अभाव में क्याही कहना है। इसप्रकार कही हुई रीति से जिस प्राणी के वर्षेश के स्थान में मुथहेश आदिक अन्य अधिकारियों को ग्रहण करके जन्मलग्न का स्वामी क्रूर भाव को प्राप्त हो तो वह प्राणी विपत्तियों से ताड़ित होकर पंचत्व को प्राप्त होता है। यहाँ किसी शुभग्रहों से कम्बूल हो अर्थात् वर्षस्वामी और जन्मलग्नस्वामी इन दोनों का मुथशिल हो और चन्द्रमा के समान किसी शुभग्रह से मुथशिल योगरूप कम्बूल योग हो; यह जो व्याख्यान किया गया है सो तो नहीं प्रतिपादन करना चाहिए क्योंकि जन्मलग्न स्वामी और वर्षस्वामी इन दोनों के मुथशिल योग का कहनेवाला कोई शब्द नहीं देखपड़ता है। इसलिये जन्मलग्नेश और वर्षेश इन्हों का परस्पर मुथशिल हो और इन्हीं दोनों के साथ चन्द्रमा मिलाप करता हो क्योंकि चन्द्रमा के ही मुथशिल योग से कम्बूल नामक योग होता है चन्द्रमा से अन्य ग्रह के साथ जब मुथशिल होगा तो उसकी भिन्न सञ्ज्ञा ही होगी ऐसा विचारणीय है॥ ५॥

अन्ययोग।

क्रूरा वीर्याधिकाः सौम्याः निर्बला रिपुरन्ध्रगाः।

तदाधिव्याधिभीतिः स्यात्कलिर्हानिस्तथा विपत् ॥ ६ ॥

जिसके वर्षकाल में पञ्चवर्गी के बल से बलिष्ठ पापग्रह हों और शुभग्रह निर्बल होकर छठे और आठवें स्थान में प्राप्त हों तो उसको मानसी व्याधि तथा रोग से डर होता है । बन्धुओं से कलह, संचित किये हुए धन की हानि तथा अनेक विपत्तियाँ होती हैं ॥ ६ ॥

अन्य योग ।

नीचे शुक्रो गुरुः शत्रुभागे सौख्यलवोऽपि न ।
लग्नेशोऽष्टमगेऽष्टेशे तनौ वा मृतिमादिशेत् ॥ ७ ॥

जिसके वर्षकाल में शुक्र नीचराशि में स्थित हो और बृहस्पति शत्रु के नवांश में विद्यमान हो तो उस प्राणी को लवमात्र भी सुख नहीं होता है । तथा जिसके वर्ष लग्न का स्वामी आठवें स्थान में हो अथवा आठवें स्थान का स्वामी वर्षकालिक लग्न में स्थित हो तो उसकी मृत्यु कहनी चाहिए ॥ ७ ॥

अन्य योग ।

निर्बलौ धर्मवित्तेशौ दुष्टखेटास्तनौ स्थिताः ।
लक्ष्मीश्चिरार्जिता नश्येद्यदि शक्रोऽपि रक्षिता ॥ ८ ॥

जिसके वर्षकाल में नवें और दूसरे स्थान के स्वामी निर्बल (पञ्चवर्गी के बल से हीन) हों और लग्न में पापग्रह स्थित हों तो उसकी बहुत काल से संचित की हुई लक्ष्मी का नाश होता है । यदि इन्द्र भी रक्षा करे तो भी नहीं बच सकती है ॥ ८ ॥

अन्य यो ।

नीचे चन्द्रेऽस्तगाः सौम्या वियोगः स्वजनैः सह ।
शरीरपीडा मृत्युर्वा साधिव्याधिभयं द्रुतम् ॥ ९ ॥

जिसके वर्षकाल में चन्द्रमा नीचराशि में स्थित हो और बुध, बृहस्पति और शुक्र ये शुभग्रह अस्त हो गये हों तो उसको भाई-बन्धुओं से वियोग, शरीर में पीड़ा, मृत्यु, मानसी व्याधि और रोगों से भय होता है ॥ ९ ॥

अन्य योग ।

अब्दलग्नं जन्मलग्नराशिभ्यामष्टमं यदा ।

कष्टं महाव्याधिभयं मृत्युः पापयुतेक्षणात् ॥ १० ॥

जिसके वर्षकाल में जन्मलग्न वा जन्मराशि से वर्षलग्न आठवीं हो तो उसको कष्ट और महाव्याधियों से भय होता है। और वह वर्षलग्न पापग्रहों से युक्त हो अथवा उसको पापग्रह देखते हों तो वह मर जाता है। यह योग अजमाया गया है किसी उपाय से हट नहीं सकता है ॥ १० ॥

अन्य योग ।

जन्मन्यष्टमगः पापो वर्षलग्ने रुगाधिदः ।
चन्द्राब्दलग्नपौ नष्टबलौ चेत्स्यात्तदा मृतिः ॥ ११ ॥

जिसके जन्मलग्न से आठवें स्थान में पापग्रह बैठा हो और वही (पापग्रह) यदि वर्षलग्न में हो तो वह उसको रोग और मानसी व्याधि को देता है। यदि वर्षलग्न में चन्द्रमा और वर्षलग्न का स्वामी ये दोनों पंचवर्गी के बल से हीनबली हों अथवा चन्द्रमा की राशि का स्वामी और वर्षलग्न का स्वामी ये दोनों नष्टबली हों तो उसकी मृत्यु होती है ॥ ११ ॥

अन्य योग ।

जन्माब्दलग्नपौ पापयुक्तौ पतितभस्थितौ ।
रोगाधिदौ मृत्युकरावस्तगौ नेक्षितौ शुभैः ॥ १२ ॥

जिसके वर्षकाल में जन्म लग्नेश और वर्षलग्नेश ये दोनों पापग्रहों से युक्त होकर वर्षलग्न से पतित स्थान (चौथे, छठे, आठवें और बारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान) में स्थित हों तो उसको रोग और मानसी व्याधि को देते हैं। यदि वे दोनों अस्त हों और उनको शुभग्रह नहीं देखते हों तो वे मृत्युकारक होते हैं। यह मृत्युकारक योग है ॥ १२ ॥

अन्य योग ।

व्ययाम्बुनिधनारिस्था जन्मेशाब्दपमुन्थहाः ।
एकर्क्षगास्तदा मृत्युः पापयुतदृशा ध्रुवम् ॥ १३ ॥

जिसके वर्षकाल में एक राशि में प्राप्त हुए जन्मलग्नेश, वर्षेश और मुन्था ये तीनों वर्षलग्न से बारहवें, चौथे, आठवें और छठे इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हों तो उसकी मृत्यु होती है और यदि पूर्वोक्त जन्मलग्नेश, वर्षेश और मुन्था ये तीनों पापग्रहों से युतदृष्टि अर्थात् चौथे,

सातवें, दशवें और पहले इन स्थानों में स्थित दृष्टि करके देखे जावें तो उसकी निश्चय मृत्यु होती है । इस श्लोक की कई आचार्य ऐसी व्याख्या करते हैं कि अब्दप से वर्षलग्न का स्वामी और मुन्था से मुन्था की राशि स्वामी का ग्रहण होना चाहिए ॥ १३ ॥

अन्य योग ।

चन्द्रो व्यये शनियुतः शुभः षष्ठेऽर्थनाशकृत् ।
चित्तवैकल्यमशुभेसराफान्न शुभेक्षणात् ॥ १४ ॥

जिसके वर्षलग्न से बारहवें स्थान में शनैश्चर से युक्त चन्द्रमा स्थित हो और छठे स्थान में शुभग्रह बैठा हो तो उसके धन का नाश करता है और जब पापग्रहों के साथ योगकारक ग्रहों का यथा संभव ईसराफ योग हो तो उसके चित्त की विकलता (बुद्धि का विपर्यास) होती है । यदि वहाँ शुभग्रहों की दृष्टि हो तो धन का नाश और चित्त की विकलता ये दोनों नहीं होते हैं ॥ १४ ॥

अन्य योग ।

चन्द्रोर्कमण्डलगतो रिपुरिष्फाष्टबन्धुगः ।
त्रिदोषतस्तस्य रुजो विविधेज्यदृशा शुभम् ॥ १५ ॥

जिसके वर्षकाल में अस्त हुआ चन्द्रमा छठे, बारहवें, आठवें और चौथे इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हो तो उसके शरीर में वात, पित्त और कफ से पैदा हुए नाना प्रकार के रोग होते हैं । यदि चन्द्रमा को बृहस्पति देखता हो तो वह शुभदायक होता है । इस श्लोक में (रिपुरिष्फाष्टबन्धुगः) के स्थान में (रिपुरिष्फाष्टमस्थितः) ऐसा पाठ युक्त है क्योंकि मणित्थ नामक आचार्य ने भी यही कहा है कि अस्त चन्द्रमा छठे, बारहवें या आठवें हो तो दशा में त्रिदोष से अनेक प्रकार के कष्ट देता है ॥ १५ ॥

अन्य योग ।

हद्दाहायनलग्नेशौ सप्ताष्टान्त्ये खलान्वितौ ।
स्वदशायां निधनदौ शुभदृष्ट्या शुभं वदेत् ॥ १६ ॥

१–उक्तञ्च मणित्थेन—"रात्रीश्वरे भास्करमंडलस्थे षष्ठे व्यये वा मृतिभावसंस्थे ।
त्रिदोषतोऽसौ बहुभिः प्रकारैः करोति कष्टं विविधं दशायाम् ॥

जिसके वर्षलग्न में हद्दा का स्वामी और वर्षलग्न का स्वामी ये दोनों पापग्रहों से युक्त सातवें, आठवें और बारहवें इनमें से किसी स्थान में स्थित हों तो वे अपनी दशा में अथवा अन्तर्दशा में उसको मार डालते हैं और यदि उन हद्देश और लग्नेश पर शुभ ग्रहों की मित्रदृष्टि हो तो वे अपनी दशा या अन्तर्दशा में शुभकारक होते हैं ॥ १६ ॥

अन्य अरिष्टयोग।

अब्दलग्नाद्दृज्वनृजू व्ययार्थस्थौ रुजा तदा।
एवं वर्षाब्दलग्नेशजन्मेशैरपि बन्धनम् ॥ १७ ॥

ऋजु और अनृजु अर्थात् मार्गी ग्रह और वक्री ग्रह ये दोनों वर्षलग्न से बारहवें और दूसरे स्थान में स्थित हों अर्थात् बारहवें स्थान में मार्गी पापग्रह बैठा हो और दूसरे स्थान में वक्री पापग्रह बैठा हो तो ये दोनों रोगकार होते हैं। इसी प्रकार वर्षस्वामी, वर्षलग्नस्वामी और जन्मलग्न-स्वामी ये पापी होकर बारहवें और दूसरे स्थान में विराजमान हों अर्थात् वर्षेश तथा वर्षलग्नेश पापी होकर चाहे दूसरे स्थान में स्थित हों चाहे बारहवें स्थान में बैठे हों और जन्मलग्न का स्वामी पापग्रह दूसरे या बारहवें स्थान में स्थित हो तो यह कर्तरी योग उस प्राणी को कारागार में बंद कराता है ॥ १७ ॥

अन्य योग।

नीचे त्रिराशिपे पापदृष्टे कार्यं विनश्यति।
इन्थिहेशेऽब्दपे वाऽरिभेऽस्तं याते रुजो विपत् ॥ १८ ॥

जिसके वर्षकाल में त्रैराशिक स्वामी यदि नीच राशि में स्थित हो और पापग्रहों से देखा जाता हो तो उसका कार्य नाश हो जाता है। तथा मुन्थेश और वर्षेश अस्त होकर शत्रु राशि में स्थित हों तो रोग और दुःखों को देते हैं ॥ १८ ॥

सापवाद चन्द्रकृत अरिष्ट।

चन्द्रो रिष्फषडष्टमूद्युनगतो दृष्टोऽशुभैर्नो शुभैः
सोऽरिष्टं विदधाति मृत्युमथवा भौमेक्षणादग्निभीः।
शस्त्राद्वा शनिराहुकेतुभिररेर्भीतिं रुजं वायुजां
दारिद्र्यं रविणाशुभं शुभदृशेज्यालोकनादादिशेत् ॥ १९ ॥

जिसके वर्षकाल में बारहवें, छठे, आठवें, पहले और सातवें इन स्थानों में चन्द्रमा प्राप्त हो और उस चन्द्रमा को अशुभ ग्रह (पापग्रह) देखते हों और शुभग्रह नहीं देखते हों तो वह उसको अरिष्ट (बुरे फल) को अथवा मृत्यु को देता है। अर्थात् एक दो पापियों से देखा हुआ चन्द्रमा बुरे फल को और सम्पूर्ण पापग्रहों से देखा हुआ मृत्यु को देता है। यदि पूर्वोक्त चन्द्रमा भौम से देखा जाता हो तो उसको अग्नि का भय अथवा किसी हथियार से भय होता है। शनैश्चर, राहु और केतु से दृष्ट चन्द्रमा शत्रु से भय देता है। और केवल सूर्य से दृष्ट चन्द्रमा वातदोष से पैदा हुए रोगों और दरिद्रता को देता है।

अब कहे हुए चन्द्रमा का अपवाद कहते हैं—कि जिसके पूर्वोक्त चन्द्रमा को बुध, बृहस्पति और शुक्र ये तीनों ग्रह मित्रदृष्टि से देखते हों तो उस को शुभ होता है अथवा चन्द्रमा को केवल बृहस्पति ही देखता हो तो भी शुभ फल कहना चाहिए॥ १९॥

मुन्थाकृत अरिष्टयोग।

क्रूरान्वितेक्षितयुताशनिनेन्थिहाधि-
व्याधिप्रदा जनुषि रिष्फसुखारिरन्ध्रे।
द्यूने च वर्षतनुनैधनगा मृतिं सा
दत्ते खलेक्षितयुतेत्यपि चिन्त्यमार्यैः॥ २०॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यामरिष्टवर्णनं नाम तृतीयं प्रकरणम्॥ ३॥

जिसके वर्षकाल में पापग्रहों से युक्त मुन्था को शनैश्चर देखता हो अथवा शनैश्चर से संयुक्त हो तो वह मानसी व्याधि और रोग को देती है। अथवा जन्मकाल में बारहवें, चौथे, छठे, आठवें और सातवें इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित मुन्था यदि वर्षलग्न से आठवें स्थान में बैठा हो और उसको पापग्रह देखते हों अथवा पापग्रहों से युक्त हो तो वह मुन्था मृत्यु को देती है। यह पण्डितों को विचारना चाहिए॥ २०॥

इति श्रीशक्तिधरविरचितायां नीलकण्ठीभाषाव्याख्यायामरिष्ट-
विचारो नाम तृतीयं प्रकरणम्॥ ३॥

चतुर्थं प्रकरणम्।

अरिष्टभङ्ग वर्णन।

लग्नाधिपो बलयुतः शुभैर्दृष्टो युतोऽपि वा।
केन्द्रत्रिकोणगोऽरिष्टं नाशयेत् सुखवित्तदः॥ १॥

दो०—प्रकरण चौथे महँ कहौं, अरिष्टभंग को ज्ञान।
नाशि लखैं वरषिहिजन, करि कैं सजिक ज्ञान॥ १॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न का स्वामी पंचवर्गी के बल से बलिष्ठ (उत्तम बली) हो और उसको शुभग्रह देखते हों अथवा शुभग्रहों से युक्त होकर नवें या पाँचवें स्थान में स्थित हो अथवा पहिले, चौथे, सातवें और दसवें इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हो तो वह अरिष्ट को दूर कर अपनी दशा में सुख और धन को देता है॥ १॥

अरिष्टभंग योग।

गुरुः केन्द्रे त्रिकोणे वा पापादृष्टः शुभेक्षितः।
लग्नचन्द्रेत्थिहारिष्टं विनाश्यार्थसुखं दिशेत्॥ २॥

जिसके वर्षकाल में बृहस्पति केन्द्र वा त्रिकोण स्थान में स्थित हो और उसको पापग्रह नहीं देखते हों किन्तु शुभग्रह देखते हों तो वह लग्न, चन्द्रमा और इन्थहा से पैदा हुए अरिष्ट को नष्ट करके धन और सुख को देता है॥ २॥

अन्य योग।

सुखं स्वामियुतं चाद्दिष्टं सौख्ययशोऽर्थदम्।
लग्ने तृतीयेऽथ गुरुर्जन्मेशः सौख्यार्थदः सुखे॥ ३॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न से चौथा स्थान अपने स्वामी से युक्त हो अथवा शुभग्रहों से देखा जाता हो तो वह सौख्य, यश, और धन का देनेवाला होता है। यह एक योग हुआ। अथवा बृहस्पति लग्न में हो या तीसरे स्थान में स्थित हो तथा चौथे स्थान में जन्मलग्नेश बैठा हो तो सौख्य और धन का देनेवाला होता है॥ ३॥

अन्य योग।

लग्ने द्युनेशस्तनुगस्सुरेज्यः क्रूरैरदृष्टः शुभमित्रदृष्टः।

रिष्टं निहन्त्यर्थयशःसुखाप्तिं दिशेत्स्वपाके नृपतिप्रसादात् ४॥

जिसके वर्षलग्न से सातवें स्थान का स्वामी लग्न में स्थित हो और उसी में बृहस्पति भी बैठा हो और उन दोनों (सप्तमेश और बृहस्पति) को पापग्रह नहीं देखते हों किन्तु शुभग्रह या मित्रग्रह देखते हों तो वे अरिष्ट को दूर करते हैं और अपनी दशा में राजा की प्रसन्नता से धन, यश और सुखों की प्राप्ति को देते हैं ॥ ४ ॥

अन्य योग ।

बलान्वितौ धर्मधनाधिनाथौ क्रूरैरदृष्टौ तनुगौ यदास्ताम् ।
राज्यं गजाश्वाम्बररत्नपूर्णं रिष्टस्य नाशोप्यतुलं यशश्च ५॥

नवमेश और धनेश ये दोनों पंचवर्गी के बल से बलिष्ठ हों और पापग्रहों से अदृष्ट लग्न में बैठे हों तो अरिष्ट का नाश करते हैं और हाथी, घोड़े, कपड़े और रत्नों से परिपूर्ण राज्य को प्राप्त कराकर लोक में अतुल (तौलरहित) यश को देते हैं ॥ ५ ॥

अन्य योग ।

त्रिषष्ठलाभोपगतैरसौम्यैः केन्द्रत्रिकोणोपगतैश्च सौम्यैः ।
रत्नाम्बरस्वर्णयशस्सुखाप्तिर्नाशोप्यरिष्टस्य तनोश्च पुष्टिः ॥६॥

वर्षलग्न से तीसरे, छठे और ग्यारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में पापग्रह बैठे हों और पहिले, चौथे, सातवें, दशवें, नवें और पाँचवें इन स्थानों में से किसी स्थान में शुभग्रह बैठे हों तो रत्न, कपड़े, सोना, यश और सुख की प्राप्ति होती है तथा अरिष्टों का नाश होता है और शरीर की पुष्टि होती है ॥ ६ ॥

अन्य योग ।

यदा सवीर्यो मुथहाधिनाथो लग्नाधिपो जन्मविलग्नपो वा ।
केन्द्रत्रिकोणायधनस्थितास्ते सुखार्थहेमाम्बरलाभदाः स्युः ७॥

मुन्था का स्वामी, वर्षलग्न का स्वामी तथा जन्मलग्न का स्वामी ये तीनों पंचवर्गी के उत्तम बल से युक्त होकर केन्द्र १ । ४ । ७ । १०, त्रिकोण ९ । ५ ग्यारहवें और दूसरे इन स्थानों में से किसी स्थान में बैठे हों तो सुख, धन, सुवर्ण और वस्त्र का लाभ करते हैं ॥ ७ ॥

धनप्राप्ति योग ।

तुङ्गे शनिर्वा भृगुजो गुरुर्वा शुभेत्थशालाद्यवनाद्धनाप्तिम् ।
बली कुजो वित्तगतो यशोऽर्थतेजांस्यकस्माच्च सुखानि दद्यात्॥

जिसके वर्षकाल में शनैश्चर, शुक्र या बृहस्पति अपने उच्चस्थान में स्थित हों और शुभग्रहों के साथ इत्थशाल करते हों तो उसको मुसलमानों से धन मिलता है। और जो उक्त तीनों ग्रह शुभग्रहों के साथ इत्थशाल करते हुए अपने-अपने उच्च स्थानों में बैठे हों तो बहुत धन की प्राप्ति होती है अथवा बलयुक्त मंगल दूसरे स्थान में स्थित हो तो यश, धन, तेज और अकस्मात् सुख को देता है ॥ ८ ॥

अन्य योग ।

सूर्येज्यशुक्रा मिथ इत्थशालं कुर्युस्तदा राज्ययशस्सुखार्थाः ।
सूर्यः कुजो वोपचये ददाति भद्रं यशोमंगलमिन्थिहायाः ॥ ९ ॥

अन्य अरिष्टभङ्ग योग । जिसके वर्षलग्न में सूर्य, बृहस्पति और शुक्र ये तीनों आपस में इत्थशाल (मिलाप) करते हों तो उसके लिए राज्य, यश, सुख और धन इनको देते हैं। यह एक योग हुआ । अन्य योग को कहते हैं जिसके वर्षसमय जिस स्थान में मुन्था बैठी हो उस स्थान से तीसरे, छठे, दशवें या ग्यारहवें स्थान में सूर्य हो अथवा मंगल बैठा हो तो उसके लिए कल्याण, यश और मंगल को देता है ॥ ९ ॥

अन्य अरिष्टभंग योग ।

शुक्रज्ञचन्द्रा हद्दे स्वे पापास्त्र्यायगता यदि ।
स्वबाहुबलतो हेमसुखकीर्ती नरोऽश्नुते ॥ १० ॥

जिसके वर्षलग्न में शुक्र, बुध और चन्द्रमा ये तीनों अपने हद्दा में हों और सूर्य, मंगल और शनैश्चर ये तीनों तीसरे या ग्यारहवें स्थान में बैठे हों तो वह मनुष्य अपने बाहुबल से सुवर्ण, सुख और कीर्ति का भोगनेवाला होता है ।

इस श्लोक में चन्द्रमा अपने हद्दा में हो, ऐसा कहा है, परन्तु हद्दा चक्र में, इस चन्द्रमा की गिनती ही नहीं है और इस अर्थ में किसी का प्रमाण वाक्य भी नहीं दीख पड़ता है अतः इसका आशय ग्रन्थकारही जानते होंगे । यह विचाराधीन है ॥ १० ॥

अन्य शुभयोग ।

बुधशुक्रौ मूसरिफौ गुरुर्विक्रमभावगः ।
तदा राज्ययशोहेममुक्ताविद्रुमलब्धयः ॥ ११ ॥

जिसके वर्षकुण्डली में बुध, शुक्र ये दोनों मूसरीफ योग करते हों और बृहस्पति वर्ष लग्न से तीसरे भाव में बैठा हो तो उसको राज्य, यश, सुवर्ण, मोती और मूंगों की प्राप्ति होती है ॥ ११ ॥

अन्य शुभयोग ।

भौमोमित्रगृहेऽब्देशः कम्बूलीस्वगृहादिगैः ।
गजाश्वहेमाम्बरभूलाभं दत्ते सुखाधिकम् ॥ १२ ॥

जिसके वर्ष में मंगल वर्ष का मालिक होकर अपने मित्र घर में बैठा हो और अपने घर या अपने उच्च आदि स्थानों में बैठे हुए ग्रहों के साथ मुथशिल (मिलाप) करता हो और चन्द्रमा से कम्बूली हो अर्थात् (अपने घर या अपने उच्चादि घरों में बैठे हुए चन्द्रमा के साथ भी मुथशिल करता हो तभी कम्बूली कहा जाता है) मंगल उसके लिए हाथी, घोड़ा, सोना, कपड़े, पृथ्वी का लाभ और अधिक सुख (जोकि अन्य वर्षों में नहीं हुआ हो) को देता है ॥ १२ ॥

बलाबल विचार से राजयोगसम्बन्धी शुभाशुभ फल ।

इत्थं जन्मनि वर्षे च योगकर्तुर्बलाबलम् ।
विमृश्य कथयेद्राजयोगं तद्भङ्गमेव च ॥ १३ ॥

इस प्रकार जन्मकुण्डली और वर्षकुण्डली में राजयोग करनेवाले ग्रहों के बलाबल का विचार करके (अर्थात् पंचवर्गी में राजयोगकारी अमुक ग्रह अपने घर या अपने उच्च आदि स्थानों में गमन करने से बली है अथवा अपने नीच आदि स्थानों में प्राप्त होकर नष्टबलवाला है यह जानकर) राजयोग अथवा उस राजयोग का भंग होना चाहिए ॥ १३ ॥

राजयोग का भंग ।

अब्देन्थिहेशादिखगाः खलैश्चे-
द्युतेक्षिता अस्तगनीचगा वा ।

सौम्या बलोना नृपयोगभङ्गं
तदा वदेद्वित्तसुखक्षयं च ॥ १४ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्ष का स्वामी, मुन्था का स्वामी और आदि शब्द से वर्षलग्न स्वामी और जन्मलग्नस्वामी ये ग्रह पाप ग्रहों से युक्त अथवा देखेजाते हों और शुभग्रह हीनबली हों तो उस पुरुष के राजयोग का भंग कहे । यह एक योग हुआ । अपर योग कहते हैं पूर्वोक्त वर्षेश आदि ग्रह सूर्य के सामीप्य वश से अस्तंगत हों अथवा नीचराशि में टिके हों और शुभग्रह पञ्चवर्गी के बल से हीन हों तो भी उस पुरुष के लिए राजयोग फलदायी नहीं होता है । इन दोनों योगों में धन तथा सुख का नाश होता है । वास्तव में वर्ष, मुन्था, वर्षलग्न और जन्मलग्न इनके स्वामी हीन बली शुभ ग्रह हों तो उसके राजयोग का भङ्ग होता है और जो पूर्वोक्त वर्षेश आदि सौम्यग्रह हीनबल होकर सूर्य के निकटवर्तित्व से अस्त होजावें अथवा नीचराशि में स्थित हों तो वह उसके राजयोग को नष्ट करते हैं और धन तथा सुख का क्षय होजाता है ।

इसी विषय में मणित्थनामक आचार्य्य ने कहा है कि यदि सौम्यग्रह अपने उच्च या अपने घर आदिकों को प्राप्त होकर केन्द्र १ । ४ । ७ । १०, त्रिकोण ९ । ५ अथवा ग्यारहवें स्थानमें पड़े हों तो वे राजयोग करनेवाले होते हैं । अन्यथा राजयोग को भंग करते हैं ॥ १४ ॥

श्रीगर्गान्वयभूषणोगणितविच्चिन्तामणिस्तत्सुतो-
ऽनन्तोऽनन्तमतिर्व्यधात्खलमतध्वस्त्यै जनुःपद्धतिम् ।
तत्सूनुः खलु नीलकण्ठविबुधो विद्वच्छिवानुज्ञया
वोचद्वर्षपमुन्थहाफलमथारिष्टादिसद्योगयुक् ॥ १५ ॥

इतिश्रीनीलकण्ठ्यामरिष्टभंगवर्णनोनाम चतुर्थप्रकरणम् ॥४॥

गर्गवंश में भूषण, गणितशास्त्र के जाननेवाले चिन्तामणि नामक विद्वान्

१—यदीन्दुसौम्येज्यसुरारिपूज्याः स्वोच्चंगताः स्वांशगता यदि स्युः । त्रिकोणकेन्द्रायगताः स्वमित्रैर्दृष्टाश्च युक्ता निजवर्गसंस्थाः ॥ गजाश्वरत्नाम्बरदेशलाभं स्त्रीपुत्रलाभं विविधं च सौख्यम् । यच्छन्ति खेटाः परमर्दनं च कुर्वन्ति सर्वे बलिनो नराणामिति ॥

हुए । उनका पुत्र अनन्त बुद्धिवाला (बड़ा बुद्धिमान्) अनन्त दैवज्ञ नामक हुआ । उसने दुष्टों के मत को दूर करने के लिये जातकपद्धति की रचना की । उन्हीं का पुत्र नीलकण्ठनामक बड़ा विद्वान् हुआ जिसने विद्वान् शिवजी महाराज की आज्ञा से वर्षेश, मुन्था और मुन्थेश का फल तथा इसके उपरांत अरिष्टयोग और अरिष्टभंग को कहा है ॥ १५ ॥

इति श्रीनीलकण्ठीभाषाव्याख्यायामरिष्टभंगो नाम चतुर्थं प्रकरणम् ॥४॥

द्वादशभावविचारे पञ्चमं प्रकरणम् ।

तनुभावविचार ।

यो भावः स्वामिसौम्याभ्यां दृष्टो युक्तोयमेधते ।
पापदृष्टयुतो नाशो मिश्रैर्मिश्रफलं वदेत् ॥ १ ॥

दो० । पञ्चम प्रकरणमहँ कहौं द्वादशभावविचार ।
तामें पहले भावको फल संयुत विस्तार ॥ १ ॥

अब तनुभाव का विचार कहते हैं । बारह भावों में से जो भाव अपने स्वामी और शुभ ग्रह से देखा जाता हो अथवा संयुक्त हो तो वह भाव वृद्धि को करता है । चाहे उस भाव का स्वामी शुभग्रह अथवा पापग्रह हो इसका कुछ नियम नहीं है । और जो भाव अपने स्वामी अथवा शुभ ग्रहों को छोड़कर अन्य पाप ग्रहों से देखा जाता हो अथवा युक्त हो तो उस भाव का नाश हो जाता है और जो भाव शुभग्रह, पापग्रह इन दोनों से देखा जाता हो अथवा युक्त हो तो उस भाव का मिश्रफल (भला बुरा) होता है यह कहना चाहिए। ऐसे ही गार्गिनामक आचार्य ने भी कहा है ।
"नीचस्थोरिगृहस्थो वा ग्रहो भावविनाशकृत् । उदासीनगृहे मध्यो मित्रर्क्षस्थस्त्रिकोणगः ॥ स्वोच्चगश्च ग्रहोऽवश्यं भाववृद्धिकरस्स्मृतः ।" नीच में स्थित अथवा शत्रु के घर में स्थित ग्रह, भाव का विनाश करता है और जो ग्रह उदासीन (सम) घर में बैठा हो तो वह मध्यमफल का देनेवाला होता है और जो ग्रह मित्र के गृह में हो अथवा त्रिकोण ९ । ५ में बैठा हो अथवा अपने उच्च में स्थित हो तो वह वृद्धि करनेवाला होता है । यहाँ छठे, आठवें और बारहवें भावों का सदा विपरीत फल कहना चाहिए यह श्रीवराहमिहिराचार्य ने कहा है । जैसे (कथयति विपरीतं रिष्फषष्ठाष्टमेषु) ॥१॥

लग्नाधिप का शुभाशुभफल ।

लग्नाधिपे वीर्ययुते सुखानि
नैरुज्यमर्थागमनं विलासः ।
स्यान्मध्यवीर्येऽल्पसुखार्थलाभः
क्लेशाधिकत्वं विपदल्पवीर्ये ॥ २ ॥

जिसके वर्षकाल में लग्न का स्वामी, पञ्चवर्गी के उत्तम बल से संयुक्त हो तो वह उसके लिए अनेक सुख, नीरोगता, धन का लाभ, और सुन्दरियों के विलास को देता है । और जो मध्यवर्त्ती हो तो थोड़े सुख तथा थोड़े धन का लाभ होता है, और जो अल्प वीर्य हो तो वह अधिक क्लेश और विपत्ति को देता है ॥ २ ॥

वर्षाधिकारी नष्टबली ग्रह का विशेष फल ।

जन्माब्दाङ्गपतीन्थिहापतिसमानाथाद्यधीकारवान्
सूर्योनष्टबलस्त्वगक्षिविलयं कुर्यान्निरुत्साहताम् ।
नीचत्वं पितृमातृतोप्यभिभवश्चन्द्रेक्षिकार्यक्षयो
दारिद्र्यं च पराभवो गृहकलिर्व्याध्यादिभीतिस्तदा ॥ ३ ॥

जिसके वर्षकाल में जन्मलग्न का स्वामी, वर्षलग्न का स्वामी, मुथहा-स्वामी, वर्षस्वामी और आदि शब्द से त्रिराशिप तथा दिन रात्रि के स्वामी ग्रहण किये जाते हैं । इन अधिकारियों में से किसी अधिकार को प्राप्त होकर सूर्य नष्टबल (पंचवर्गी में पाँच बिस्वों से अल्पबलवाला) हो तो वह उसकी त्वचा (खाल) और आँखों का नाश करता है (अर्थात् वह प्राणी कोढ़ी होकर आँखों से अन्धा हो जाता है) और उत्साह से रहित, अधम जीविका से जीता हुआ माता पिता से क्लेशित होता है । तथा जिसके पूर्वोक्त अधिकारियों में से किसी अधिकार में बैठा हुआ चन्द्रमा नष्टबल हो तो उसके वाञ्छित कार्यों का नाश होता है और वह दरिद्री होकर जहाँ कहीं जाता है वहाँ तिरस्कृत होता है तथा स्त्रियों से लड़ाई करता है अर्थात् (गेहे शूरः) इस नाम से प्रसिद्ध होता है और मानसी व्याधि व रोगों से भयभीत होता है ॥ ३ ॥

नष्टबल भौम, बुध और गुरु का फल।

भौमे चलत्वं भीरुत्वं बुधे मोहपराभवौ।
जीवे धर्मक्षयः कष्टफलाजीवितक्षयः॥ ४॥

जिसके वर्षकाल में उक्त अधिकारियों में से जिस किसी अधिकार को प्राप्त होकर मंगल नष्ट बली हो तो उसका मन चलायमान (डावाँडोल) रहता है और वह चोर आदि से भयभीत होता है। तथा जिसके उक्त अधिकारियों में बुध नष्टबल हो तो उसको मोह और पराभव होता है और जिसके उक्त अधिकारियों में बृहस्पति नष्टबल हो तो उसके धर्म का क्षय होता है और वह प्राणी बड़े कष्ट से कन्द मूल फलादिकों से जीविका करता है अथवा कष्टरूप फल से ही जीविका का करनेवाला होता है॥ ४॥

नष्टबल शुक्र और शनैश्चर का फल।

शुक्रे विलाससौख्यानां नाशः स्त्रीभिः समं कलिः।
सौरे भृत्यजनाद्दुःखं रुजो वातप्रकोपतः॥ ५॥

जिसके वर्षकाल में उक्त अधिकारों में से जिस किसी अधिकार को प्राप्त होकर बल से रहित शुक्र हो तो उसके विलास और सौख्य का नाश होता है और वह प्राणी स्त्रियों के साथ लड़ाई करनेवाला होता है। ऐसे ही जिसके उक्त अधिकारियों में से किसी अधिकार में वर्तमान होकर शनैश्चर नष्टबल हो तो उसको अपने नौकर से दुःख होता है और वह पुरुष वातिक रोगों से पीड़ित होता है॥ ५॥

लग्न का फल।

लग्नं पापयुतं सौम्यैरदृष्टसहितं नृणाम्।
विवादं वञ्चनां दुष्टमशनं चापि विन्दति॥ ६॥

जिसके वर्षसमय में वर्षलग्न पापग्रहों से युक्त हो और शुभग्रहों से न देखा जाता हो और न युक्त हो तो वह मनुष्यों का विवाद (झगड़ा), चौर आदिकों से ठगा जाना और दुष्ट भोजन (सामा काकुनि आदि कदन्नों के भोजन) को प्राप्त होता है॥ ६॥

बलिष्ठ अधिकारियों का फल।

जन्माब्दाङ्गपरंधूपाब्दमुथहानाथाबलाढ्यास्तदा

रम्यं वर्षमुशन्ति सर्वमतुलं सौख्यं यशोऽर्थागमः।
षष्ठाष्टान्त्यगता न चेदिह पुनस्ते दुःखभीतिप्रदा
निर्वीर्या यदि वर्षमेतदशुभं वाच्यं शुभेक्षां विना॥ ७॥

जिसके वर्षकाल में जन्मलग्न का स्वामी, वर्षलग्न का स्वामी, वर्षलग्न से आठवें स्थान का स्वामी और मुथहा का स्वामी ये बलिष्ठ होकर यदि छठे, आठवें और बारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में न बैठे हों तो उसके लिए संपूर्ण वर्ष रम्य कहा जाता है और वह अतुल सौख्य, यश और धन को पाता है। यदि ये पूर्वोक्त जन्मलग्न आदि के स्वामी बली होकर छठे, आठवें और बारहवें स्थान में बैठे हों तो वे दुःख के देनेवाले होते हैं। यह अर्थ से ही संसिद्ध हुआ फिर चारों बलरहित होकर छठे, आठवें और बारहवें इन स्थानों में स्थित हों तो दुःख या चौरादिकों से भयके देनेवाले होते हैं। यदि ये चारों शुभग्रहों से न देखे जाते हों तो यह सम्पूर्ण वर्ष अशुभ फल का देनेवाला होता है और यदि उक्त चारों को शुभग्रह देखते हों तो पूर्व कहा हुआ सम्पूर्ण फल शुभ कहना चाहिए॥ ७॥

धननाशयोग।

सूतौ धनप्रदः खेटो धनाधीशश्च तौ यदि।
वर्षे नष्टौ वित्तनाशान्यनिक्षेपापवाददौ॥ ८॥

जिसके जन्मकाल में धन की प्राप्ति करनेवाला ग्रह और धनस्थान का स्वामी ये दोनों यदि वर्ष में नष्टबली हों तो वे उस पुरुष के लिए धन का नाश, अन्यनिक्षेप का अपवाद (अर्थात् जिसके पास धरोहर रक्खी हो वह पुरुष बदल जाय कि तुमने मेरे पास नहीं रक्खा है) करते हैं। यदि उक्त दोनों ग्रह बलिष्ठ हों तो धनकी प्राप्ति करनेवाले होते हैं॥ ८॥

अन्य योग।

एवं समस्तभावानां सूतौ नाथाश्च पोषकाः।
अब्दे नष्टबलास्तेषां नाशायोह्या विचक्षणैः॥ ९॥

इसी भाँति जिसके जन्म काल में सम्पूर्ण भावों में से जिन भावों में फल के देनेवाले ग्रह स्थित हों और उन भावों के स्वामी भी फल करने को समर्थ हों यदि वेही वर्ष में बली हों तो उसके लिये अपने भाव सम्बन्धि

फल को देते हैं और जब उक्त ग्रह वर्ष में नष्टबलवाले हों तो उन भावों को नाश करते हैं अर्थात् उन भावों का जैसा फल है उसको नहीं दे सकते हैं। यह पण्डितों को जानना चाहिए ॥ ६ ॥

दो० । नीलकण्ठकृतताजके प्रथम भावफलज्ञान।
भाषारचि पूरण कियों लखि हैं ताहि सुजान ॥ १ ॥

इति प्रथमविचारः ।

धनभावविचार ।

वित्ताधिपो जन्मनि वित्तगोऽब्दे
जीवो यदा लग्नपतीत्थशाली ।
तदा धनाप्तिः सकलेऽपि वर्षे
क्रूरेसराफे धनधान्यहानिः ॥ १ ॥

जिसके जन्मकाल में बृहस्पति धन भाव का स्वामी होकर वर्ष समय दूसरे स्थान में बैठा हो और लग्न के स्वामी के साथ मुथशिल योग करता हो तो उसको वर्षभर धन का लाभ करता है और जो बृहस्पति लग्नस्वामी को छोड़कर अन्य किसी पापग्रह के साथ ईसराफ योग करता हो तो वह सालभर उसके धन की और धान्य की हानि करता है ॥ १ ॥

द्वितीय धनलब्धियोग ।

जन्मन्यर्थावलोकीज्योऽब्देऽब्देशो बलवान्यदा ।
तदा धनाप्तिर्बहुला विनायासेन जायते ॥ २ ॥

जिसके जन्मकाल में बृहस्पति दूसरे स्थान (धनभाव) को देख रहा हो और यदि वर्ष में वर्ष का स्वामी होकर बलवान् हो तो उस वर्ष में उस को बिना मिहनत किये धन का लाभ होता है ॥ २ ॥

पूर्वोक्त अर्थ का सब भावों में विचार ।

एवं यद्भावपो जन्मन्यब्दे तद्भावगो गुरुः ।
लग्नेशेनेत्थशाली चेत्तद्भावजसुखं भवेत् ॥ ३ ॥

जिसके जन्मकाल में बृहस्पति जिस भाव का स्वामी हो यदि वर्षलग्न में भी उसी भाव में बैठा हो और वर्ष लग्न के स्वामी के साथ मुथशिल योग करता हो तो उस प्राणी को उसी भाव का फल मिलता है ॥ ३ ॥

फिर पूर्वयोग ।

तथा जनुषि यं पश्येद्भावमब्देऽब्दपो गुरुः ।
तदा तद्भावजं सौख्यमुक्तं ताजकवेदिभिः ॥ ४ ॥

इसी प्रकार जन्मकाल में बृहस्पति जिस भाव को देख रहा हो और वही यदि वर्षलग्न में वर्ष का स्वामी हो तो उसी भावसम्बन्धी सौख्य होता है। यह ताजक शास्त्र के जाननेवालों ने कहा है ॥ ४ ॥

अल्पधनप्राप्तियोग और दण्डयोग ।

जन्मषष्ठाधिपबुधः षष्ठोऽब्दे स्वल्पलाभदः ।
पापार्दिते गुरौ रन्ध्रेऽर्थे वा दण्डः पतेद्ध्रुवम् ॥ ५ ॥

जिसके जन्मकाल में बुध छठे भाव का स्वामी हो और वर्ष लग्न से छठे भाव में बैठा हो तो वह उसके लिये थोड़े धन का देनेवाला होता है। अब दण्डयोग दिखलाते हैं कि बृहस्पति पापग्रहों से पीड़ित हो और वर्ष लग्न से आठवें भाव में बैठा हो अथवा धनस्थान में बैठा हो तो निश्चय करके उस प्राणी को राजा दंड देता है अर्थात् वह प्राणी किसी मुकद्मे में फँस जाता है और उसपर जुर्माना हो जाता है ॥ ५ ॥

अन्य धनलाभयोग ।

गुरुर्वित्ते शुभैर्दृष्टो युतो वा राज्यसौख्यदः ।
जन्मन्यब्दे च मुथहा राशिं पश्यन्विशेषतः ॥ ६ ॥

जिसके वर्षकाल में बृहस्पति धनस्थान में बैठा हो और उसको शुभग्रह देखते हों अथवा शुभग्रहों से युक्त हो तो वह उस प्राणी के लिये राज्य और सौख्य को देता है। यह एक योग हुआ। अब अन्य योग कहते हैं। जब जन्मलग्न में बृहस्पति बैठा हो और वर्षसमय वर्षलग्न में स्थित होकर जिस राशि में मुन्था हो उस राशि को देखता हो तो विशेष करके राज्य अथवा सौख्य का देनेवाला होता है। अथवा जन्मसमय बृहस्पति शुभग्रहों से दृष्ट या युक्त होकर धनस्थान में बैठा हो और वर्षकाल में भी उक्त स्वरूप से मुथहा को देखता हुआ धनभाव में बैठा हो तो विशेष करके राज्य वा सौख्य को देता है ॥ ६ ॥

शुक्र के योग से धनयोग और उसका नाशयोग।

एवं सितेऽब्दपे भूरिद्रव्यं धान्यं च जायते ॥
वित्तलग्नेशसंयोगो वित्तसौख्यविनाशदः ॥ ७ ॥

पूर्वोक्त प्रकार से शुक्र वर्ष का स्वामी हो और धन स्थान में स्थित हो तथा उसको शुभग्रह देखते हों अथवा शुभ ग्रहों से युक्त हो तो बहुत धन तथा धान्य होता है। ऐसेही जन्मलग्न, वर्षलग्न और मुन्था जिस राशि में स्थित हो उसको शुक्र देखता हो अथवा इनमें से किसी में स्थित हो तो विशेष करके बहुत धन-धान्य को देता है। अब धनक्षय योग दिखाते हैं। जो धनभवन में धनभाव के स्वामी और लग्न के स्वामी का संयोग हो तो धन तथा सौख्य का विनाश होता है। अब यह आशंका करते हैं कि जो धनक्षय का योग कहा गया है वह अयुक्त है क्योंकि धनभाव में धनेश व लग्नेश का संयोग शुभ फल का देनेवाला होता है इसलिए पूर्वोक्त धनविनाश का योग ठीक नहीं है। इसका आशय यह है कि एक राशि का संयोग तीन योगों का करनेवाला होता है। यहाँ मुथशिलकृत योग १, ईसराफकृत योग २, मुथशिल ईसराफ योग के अभाव में केवल राशियोग तीसरा योग। इन योगों में से केवल राशि का योग और मुथशिल योग ये दो ग्रन्थांतर में शुभ फल के देनेवाले कहे हैं और इस ग्रंथ में भी आगे कहेंगे। अब बचा ईसराफ योग, उसके अशुभ होने से यह योग अशुभ कहाता है॥ ७ ॥

अन्य धनप्राप्ति के योग।

एवं बुधे सवीर्ये स्याल्लिपिज्ञानोद्यमैर्धनम्।
जन्मलग्नगताः सौम्याः वर्षेऽर्थे धनलाभदाः ॥ ८ ॥

इसीप्रकार बुध बलिष्ठ होकर वर्ष का स्वामी हो और धनभाव में स्थित हो और उसको शुभ ग्रह देखते हों अथवा शुभग्रहों से युक्त हो तथा ऐसेही जन्मलग्न, वर्षलग्न और मुथहा जिसराशि में स्थित हो इनको अथवा इन में से किसी को बुध देखता हो अथवा ये ही बुध से युक्त हों तो लिखने तथा ज्ञानरूपी (व्याख्यान आदि) उद्यम से धन होता है। यह एक योग हुआ। अब अन्य योग दिखाते हैं। जिसके जन्मलग्न में शुभग्रह बैठे हों और वेही यदि वर्षसमय धनभाव में स्थित हों तो धनलाभ के देनेवाले होते हैं ॥८॥

बहुधनप्राप्तियोग ।

मालसह्मनि वित्ते वा बुधेज्यसितसंयुते ।
तैर्वा दृष्टे धनं भूरि स्वकुले राज्यमाप्नुयात् ॥ ९ ॥

जिसके वर्षकाल में मालसह्म (धनसहम) और धनभवन ये दोनों बुध, बृहस्पति और शुक्र से संयुक्त हों अथवा बुध, गुरु और शुक्र से देखे जाते हों तो वह प्राणी बहुत धन तथा अपने कुल में राज्य को प्राप्त होता है। अब इस श्लोक में यह विचारना चाहिए कि मालशब्द धन का वाचक है। यह यवन भाषा में प्रसिद्ध है और सह्मशब्द से सहम को जानना चाहिए ॥ ९ ॥

अपर धनलब्धियोग ।

अर्थार्थसहमेशौ चेच्छुभैर्मित्रदृशेक्षितौ ।
बलिनौ सुखतो लाभप्रदौ यत्नादरेर्दृशा ॥ १० ॥

जिसके वर्षकाल में धनभवन का स्वामी और धन सहम का स्वामी ये दोनों यदि शुभग्रहों करके मित्रदृष्टि से देखे जाते हों और पंचवर्गी के उत्तम बल से युक्त हों तो वह उस प्राणी के लिये सुखसमेत लाभ को देते हैं और जो पूर्वोक्त अर्थसहम के स्वामी और धनभवन के स्वामी को शत्रुदृष्टि से शुभग्रह देखते हों तो बड़े यत्न से लाभ के देनेवाले होते हैं यह कहना चाहिए ॥ १० ॥

अन्य धनयोग तथा धननाशयोग ।

मित्रदृष्ट्या मुथशिलेऽर्थाङ्गयोः सुखतो धनम् ।
तयोर्मूसरिफे वित्तनाशदुर्नयभीतयः ॥ ११ ॥

जिसके वर्षकाल में धनभाव और वर्षलग्न के स्वामियों का मित्रदृष्टि से मुथशिल योग हो तो उस प्राणी को विना प्रयास धन मिलता है और जो उन धनेश और लग्नेशों का मूसरीफ योग हो तो उस प्राणी के धन का नाश होता है और वह प्राणी बुरी नीति से बर्ताव करता हुआ भयभीत होता है। यह अर्थ पूर्वही प्रकट किया गया है ॥ ११ ॥

अन्य धनयोग ।

जन्मनीज्योऽस्ति यद्राशौ स राशिर्वर्षलग्नगः ।
शुभस्वामीक्षितयुतो नैरुज्यस्वाम्यवित्तदः ॥ १२ ॥

जिस प्राणी के जन्म समय जिस राशि में बृहस्पति बैठा हो यदि वही राशि वर्ष लग्न में हो और शुभग्रहों से अथवा अपने स्वामी से दृष्ट वा युक्त हो तो उस प्राणी को नीरोगता, स्वामित्व और धन प्राप्ति को देता है ॥ १२ ॥

अन्य धनलाभयोग और नाशयोग ।

सूतौ लग्ने रविर्वर्षे धनस्थो धनसौख्यदः ।
शनौ वित्ते कार्यनाशो लाभोऽल्पोऽर्थधनव्ययः ॥ १३ ॥

जिस प्राणी के जन्म समय यदि सूर्य जन्मलग्न में बैठा हो और वर्ष समय धनभाव में स्थित हो तो वह उस प्राणी के लिये धन तथा सुखको देता है । और जो धनभाव में शनैश्चर स्थित हो तो वह उस प्राणी के कार्य को नष्ट कर देता है और थोड़े लाभ को कराकर प्रयोजनवाले धनों का खर्च करा देता है ॥ १३ ॥

शनिदौष्ट्यापवाद और धननाशयोग ।

भ्रातृसौख्यं गुरुयुते भूतयः स्युः शुभेक्षणात् ।
क्रूरयोगेक्षणात्सर्वं विपरीतं फलं भवेत् ॥ १४ ॥

जिसके वर्षसमय धनभाव में स्थित शनैश्चर बृहस्पति से युक्त हो तो उस को अपने भाई-बन्धुओं से सुख होता है और जो धनभाव में स्थित शनैश्चर को शुभ ग्रह देखते हों तो उसको बड़ा ऐश्वर्य प्राप्त होता है । अब धननाशयोग कहते हैं । पूर्व कहे हुए संपूर्ण धनलाभकारक ग्रह, पापग्रहों से युक्त हों अथवा उन योगकारक ग्रहों को पापग्रह देखते हों तो सम्पूर्ण फल विपरीत होता है अर्थात् धन की हानि होती है ॥ १४ ॥

जन्मकाल में धनेश गुरु का वर्ष में भावगत फल ।

वित्तेशो जन्मनि गुरुर्वर्षे वर्षेशतां दधत् ।
यद्भावगस्तमाश्रित्य लाभदो लग्नआत्मनः ॥ १५ ॥
वित्ते सुवर्णरूप्यादेर्भ्रात्रादेः सहजर्क्षगः ।
पितृमातृक्षमादिभ्यो वित्तं सुहृदि पञ्चमे ॥ १६ ॥
सुहृत्तनयतः षष्ठेऽरिवर्गाद्धानिभीतिदः ।
स्त्रीभ्यो द्यूनेऽष्टमे मृत्युरर्थहेतुः पथोङ्कगे ॥ १७ ॥

खे नृपादेर्नृपकुलादाये‍ऽन्त्ये व्ययदो भवेत्।
इत्थं विमृश्य सुधिया वाच्यमित्थं परे जगुः॥ १८॥

यदि जन्मसमय बृहस्पति धनभाव का स्वामी हो और वर्षकाल में वही वर्षेश होकर जिस भाव में बैठता है उसीभाव का फल देता है। पूर्वोक्त बृहस्पति वर्षलग्न में बैठा हो तो शरीर की पुष्टि करता है। धनभाव में स्थित हो तो सोना व चाँदी आदि की वृद्धि करता है। तीसरे स्थान में स्थित हो तो वह भाइयों को सुख देता है अथवा उसके भाई-बन्धुओं को सुख होता है। चौथे स्थान में बैठा हो तो वह पिता, माता, खेती और ग्राम आदि से सुख देता है। पाँचवें भाव में बैठा हो तो वह मित्रों और लड़कों से सुख देता है। छठे भाव में बैठा हो तो वह वैरिवृन्दों से हानि तथा भय को देता है। सातवें भाव में विद्यमान हो तो वह स्त्री से सुख देता है। आठवें भाव में बैठा हो तो वह मृत्युप्रद होता है। नवें घर में स्थित हो तो वह मार्ग से रुपया दिलाता है। दशवें घर में बैठा हो तो वह राजा आदि के घरसे भाग्यवृद्धि कराता है। ग्यारहवें घर में स्थित हो तो वह राजा के कुल से धनवृद्धि कराता है। और जो बारहवें घर में बृहस्पति स्थित हो तो वह बहुत खर्च कराता है। इस प्रकार पण्डितों को विचार कर कहना चाहिए। ऐसा आचार्यों ने कहा है॥ १५। १८॥

दो०। नीलकण्ठकृतताजके द्वितयभावफलज्ञान।
जो भाषा करि मैं कह्यों लखि हैं ताहि सुजान॥ १॥

इति धनभावविचारः।

सहजभावविचारः।

तृतीयभावसम्बन्धी शुभाशुभ फल।

अब्देशोऽर्के सिते वापि सबले पापवर्जिते।
सौख्यं मिथः सोदराणां व्यत्ययाद्व्यत्ययं वदेत्॥ १॥

दो०। पद्मासुत जैसे कह्यो नीलकंठ धीमान।
भाषा करि तिमि मैं कहूँ सहजभावफलज्ञान॥

जिसके वर्षकाल में सूर्य या शुक्र वर्ष का स्वामी हो और पञ्चवर्गी के उत्तमबल से बलिष्ठ होकर पापग्रहों से दृष्ट वा युक्त न हो तो उस प्राणी के सोदर (एकही माता से उत्पन्न हुए) भाइयों के लिए सुख को देता है। और जो सूर्य या शुक्र वर्ष का स्वामी होकर उत्तमबल से रहित हो और उसको पापग्रह देखते हों अथवा पापग्रहों से युक्त हो तो वह परस्पर भाइयों में लड़ाई आदि करा देता है। ऐसा कहना चाहिए॥ १॥

अन्य योग।

दग्धे कलिः सहजपेऽब्दपतौ तयोर्वा
जीवे बलेन रहिते सहजे सहोत्थैः।
वैरं तृतीयभवनाधिपतीसराफे
मान्द्यं कलिं स्वजनसोदरतश्च विन्द्यात्॥ २॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में तीसरे भाव का स्वामी वर्षेश होकर सूर्य के सान्निध्यवश से अस्त हो जावे अथवा दुष्टस्थान में बैठा हो तो वह उस प्राणी को युद्धादि में कलह करता है और उन सूर्य शुक्रों में से कोई एक वर्ष का स्वामी होकर यदि अस्तंगत हो जावे तो भी वह युद्धादि कलह करता है। और जो बृहस्पति अधम बलसे युक्त होकर तीसरे भाव में बैठा तो हो उस प्राणी के सहोदर भाइयों के साथ वैर होता है और जो वर्षस्वामी तीसरे भाव के स्वामी के साथ ईसराफ योग करता हो तो उस प्राणी के शरीर में बड़ाभारी कष्ट होता है। उसी से वह निर्बल होकर अपने मित्रवर्गों से या साक्षात् अपने बन्धुओं से लड़ाई करता है॥ २॥

अन्य योग।

यदेत्थशालः सहजेश्वरेण गुरुस्तृतीये सहजात्सुखाप्तिः।
सारे विधौ स्यात्कलहस्तृतीये दृष्टौ युतौ नो गुरुणा यदा तौ॥

जब वर्षलग्नस्वामी या वर्षेश का तीसरे भाव के स्वामी के साथ इत्थशाल (मिलाप) योग हो तो उस प्राणी को भाइयों से सुख की प्राप्ति होती है। और जो बृहस्पति तीसरे भाव में बैठा हो तो भी भाइयों से सुख मिलता है। यदि तीसरे भाव में मंगल सहित चन्द्रमा बैठा हो और वे दोनों बृहस्पति से नहीं देखे जाते हों अथवा युक्त भी हों तो भाइयों के साथ कलह होता है॥ ३॥

अन्य भ्रातृसौख्ययोग ।

सहजे सहजाधीशेऽधिकारिणि समापतेः ।
लग्नपो वा मुथशिले मिथः सौख्यं सहोत्थयोः ॥ ४ ॥

जिसके वर्षकाल में तीसरे भाव का स्वामी पाँचों अधिकारियों में से किसी अधिकार में विद्यमान होकर तीसरे भाव में बैठा हो और उसी के साथ वर्षस्वामी या वर्षलग्नस्वामी इन दोनों में से किसी एक का मुथशिल (मिलाप) योग हो तो उसके भाइयों को परस्पर सौख्य होता है ॥ ४ ॥

भ्रातृकलहरोगादि ।

क्रूरेसराफे कलहः शनौ भौमर्क्षगे रुजः ।
ज्ञर्क्षे सृज्यनुजे मान्द्यं वदेत्सहजगे स्फुटम् ॥ ५ ॥

जिसके वर्षसमय में तीसरे भाव के स्वामी के साथ पापग्रह का ईसराफ योग हो तो उसके भाइयों में परस्पर कलह होता है । इसीप्रकार शनैश्चर मंगल के घर मेष या वृश्चिक में से किसी राशि में स्थित होकर तीसरे भाव में बैठा हो तो उसके भाई रोग से पीड़ित होते हैं । ऐसेही मंगल बुध के घर (मिथुन या कन्या) में से किसी राशि में स्थित होकर तीसरे स्थान में बैठा हो तो भाइयों को मन्दाग्नि आदि रोग होता है । यह निःशंक होकर कहना चाहिए ॥ ५ ॥

अन्य भ्रातृसौख्ययोग ।

मन्दर्क्षगेऽसृजि बुधे कुजर्क्षे सहजे शुभैः ।
युतेक्षिते सोदराणां मिथःसौख्यं सुखं बहु ॥ ६ ॥

जिसके वर्षकाल में मंगल शनैश्चर की मकर-कुम्भ इन राशियों में से किसी राशि में स्थित होकर तीसरे भाव में बैठा हो और बुध मंगल की मेष-वृश्चिक इन राशियों में से किसी राशि में स्थित होकर तीसरे भाव में बैठा हो तथा इन दोनों योगों में शुभग्रह देखते हों अथवा शुभग्रहों का योग हो तो उसके सगे भाइयों को परस्पर सौख्य होता है अर्थात् आपसमें प्रीति का वर्ताव करते हैं । और उसको बहुत सुख होता है ।

अब यह विचार करना चाहिए कि उक्त श्लोक में कितनेक आचार्यों ने

एकही योग माना है । यह असंगत है, क्योंकि शनैश्चर और मंगल ये दो भिन्नराशियों में स्थित होकर एकभाव में नहीं पड़सक्ते हैं इसलिए दो योगों का कहना सत्यही है ॥ ६ ॥

अन्य दो भ्रातृसौख्ययोग ।

जन्माब्दयोर्बुधसितौ सबलौ तृतीये
सोदर्य्यबन्धुगणसौख्यकरौ गुरुश्च ।
वीर्यान्वितेन्दुगृहगो भृगुजोऽधिकारी
सूत्यब्दयोः सहजबन्धुगणस्य वृद्ध्यै ॥ ७ ॥

जिसके जन्मकाल या वर्षकाल में बुध, शुक्र ये दोनों पञ्चवर्गी के उत्तम बल से बलिष्ठ होकर तीसरे भाव में बैठे हों और ऐसे ही बृहस्पति बली होकर तीसरे भाव में स्थित हो तो वह उसके भाई और बन्धुगणों को सुखकारी होते हैं । यह एकयोग हुआ । वास्तव में अपने घर अथवा अपने हद्दा आदि अधिकारों को प्राप्त होकर बुध जन्मसमय लग्न में बैठा हो और यदि वर्षसमय सहज भाव में स्थित हो तो भाइयों की वृद्धि होती है । और वर्ष समय शुक्र अपने घर अथवा अपने हद्दा, उच्च आदि स्थानों को प्राप्त होकर वर्ष लग्न में बैठा हो तो भी सगे भाइ ों की वृद्धि होती है । इसी से (जन्माब्दयोर्बुधसितौ सबलौ तृतीये) ऐसा पाठ युक्त ही है क्योंकि समरसिंहने[1] भी यही कहा है और योगसुधानिधि[2] में भी ऐसाही कहाहै कि, जन्मसमय या वर्ष समय में बुध अधिकारी होकर वर्ष के तीसरे भाव में बैठा हो तो बन्धुओं की वृद्धि होती है । और जो किसी आचार्य ने (जन्माब्दपाविति) ऐसा पाठ स्वीकार करके जन्मलग्न या वर्षलग्न के स्वामी और बुध तथा शुक्र, ये चारों बली होकर सहज में बैठे हों ऐसी व्याख्या की है सो तो ठीक नहीं है क्योंकि इस अर्थ में किसी आचार्य का प्रमाणवाक्य नहीं मिलता है परन्तु हम ऐसा अर्थ करसक्ते हैं कि जन्मलग्न का स्वामी बुध और वर्ष लग्न का स्वामी शुक्र ये दोनों बलिष्ठ होकर तीसरे भाव में विद्यमान हों तो भाइयों और बन्धुगणों की वृद्धि कही जाती है । अब अन्य योग कहते हैं । जन्मकाल

१—"जन्मनि लग्नेऽथ बुधे त्वधिकारिणि सोदरेषु वृद्धिः स्यात्"।
२—"उभयत्र बुधेऽधिकारयुक्ते सहजस्थेऽप्यथ बन्धुवृद्धिरब्दे ।"

या वर्षकाल में अधिकारी होकर शुक्र बलयुक्त चन्द्रमा के साथ बैठा हो अर्थात् वीर्ययुक्त चन्द्रमा जिस राशि में बैठा हो उस राशि में अधिकारी होकर शुक्र बैठा हो तो भाई-बन्धु-गणों की वृद्धि होती है ॥ ७ ॥

भ्रातृदुःखकारक योग ।

पापान्विते तु सहजे सहमेशभाव-
नाथेक्षणेन रहिते सहजस्य दुःखम् ।
एवं सहोत्थसहमेऽपि वदेत्तदीशौ
दग्धौ यदा सहजनाशकरौ विचिन्त्यौ ॥ ८ ॥

जिसके वर्षकाल में तीसरा भाव पापग्रहों से युक्त हो और उसको सहज सहम का मालिक और सहज भाव का स्वामी ये दोनों नहीं देखते हों तो उसके भाई को दुःख होता है । ऐसेही भ्रातृसहम भी पाप ग्रहों से युक्त हो और उसको उसका स्वामी तथा तीसरेभाव का स्वामी ये दोनों नहीं देखते हों तो भी भाइयों को कष्ट होता है । और भ्रातृसहमेश और भ्रातृभाव का स्वामी ये दोनों अस्तंगत होकर अपने नीच आदि स्थानों में बैठे हों तो वे उसके भाइयों को नष्ट करते हैं । यह पण्डितों को विचार करना चाहिए ॥ ८ ॥

भ्रातृशुभाशुभ योग ।

तृतीयपादब्दपतौ द्युनस्थे
लग्नेश्वरे वा सहजैर्विवादः ।
तृतीयपो जन्मनि तादृगब्दे
शुभेक्षितस्तत्र सहोत्थतुष्टयै ॥ ९ ॥

जिसके वर्षकाल में तीसरे भावके स्वामी से सातवें स्थान में वर्षका स्वामी स्थित हो अथवा लग्न का स्वामी तीसरे घर के स्वामी से सातवें स्थान में बैठा हो तो उसका भाइयों से विवाद होता है । यह अशुभ योग हुआ । जिसके जन्मकाल में तीसरे भाव का स्वामी वर्ष में भी तीसरे भाव में बैठा हो और उसको शुभग्रह देखते हों अथवा यदि वही (तीसरे घर का मालिक) शुभग्रहों से युक्त हो एवं वर्षकाल में भी तीसरे घरका स्वामी

अपने स्थान में बैठा हो और उसको शुभग्रह देखते हों तो उस प्राणी के भाइयों को सन्तोष होता है अर्थात् वे हेलमेल से रहते हैं ॥ ९ ॥

सो० । करिभाषा विस्तार तृतयभाव पूरण कियों ।
जहँ कछु फलनविचार नीलकण्ठ पण्डित कह्यो ॥ १ ॥

इति सहजभावविचारः ।

चतुर्थभावविचारः ।

मातृ-पितृकष्टादि योग ।

तुर्ये रवीन्दू पितृमातृपीडा पापान्वितौ पापनिरीक्षितौ च ।
जन्मस्थसूर्यर्क्षगतेऽर्कपुत्रेऽवमानना वैरकली च पित्रा ॥ १ ॥

दो० । पद्मासुत जैसे भण्यो नीलकण्ठ धीमान ।
भाषाकरि वर्णन करूं तुर्यभावफलज्ञान ॥

जिसके वर्षकाल में सूर्य पापग्रहों से युक्त वा दृष्ट होकर चौथे घर में स्थित हो तो उसके बाप को पीड़ा होती है । ऐसेही चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त या दृष्ट होकर चौथे भाव में बैठा हो तो उसकी माता को पीड़ा होती है और जो कदाचित् सूर्य तथा चन्द्रमा ये दोनों पापग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट होकर चौथे स्थान में बैठे हों तो उसके मा-बाप को क्लेश होता है । यह एक योग हुआ । अब अन्ययोग कहते हैं कि जिस मनुष्य के जन्म समय जिस राशिमें सूर्य स्थित हो और यदि वर्ष समय उसी राशिमें शनैश्चर बैठा हो तो उसके पिता की मानहानि होती है और वहभी पिता के साथ वैर तथा कलह करता है इससे संसार में उपहास होता है ॥ १ ॥

अन्य योग ।

चन्द्रे जनन्यैव मुशन्ति बन्धौ
सुखाधिपे प्रीतिसुखानि पित्रोः ।

तुर्याधिपे लग्नपतीत्थशाले
वीर्यान्विते सौख्यमुशन्ति पित्रोः ॥ २ ॥

इसी प्रकार जन्मसमय जिस राशि में चन्द्रमा बैठा हो वर्षसमय उसी राशि में शनैश्चर बैठा हो तो माता के साथ वैर या कलह होता है और जो चौथे स्थान का स्वामी चौथे घर में बैठा हो तो वह उसके माता-पिता को प्रीति समेत सुख को देता है। और जो चौथे भाव का स्वामी पञ्चवर्गी के उत्तम बल से बलिष्ठ होकर वर्षलग्न के स्वामी के साथ मुथशिल योग करता हो तो वह माता पिता को सुख देता है। यह पण्डितों ने कहा है ॥ २ ॥

माता-पिता के लिए अरिष्ट योग।

सौख्याधिपो जनुषि नष्टबलोऽब्दकाले
पित्रोरनिष्टकृदथो सहमे तयोस्तु।
दग्धे तुरीयगृहगे च यदीन्थिहाया
नाशस्तयोस्सहमयोरपि दग्धयोः स्यात् ॥ ३ ॥

जिसके जन्मकाल और वर्षकाल में चौथे भाव का स्वामी नष्टबली हो तो वह उसके माता पिता को दुःख देता है और जो उन माता पिता का सहम पापग्रहों से पीड़ित हो और मुंथा से चौथे घर में स्थित हो तो उसके माता और पिता का नाश होता है और जो मातृसहम और पितृसहम ये दोनों दग्ध हों अर्थात् अस्त आदि दोषों से युक्त हों तो भी उसके माता पिता का नाश होता है ॥ ३ ॥

मातृ-पितृक्लेश योग।

जन्मन्यम्बुगृहं यच्च तत्पतिस्तत्पदोपगौ।
शन्यारौ क्लेशदौ पित्रोर्न चेत्सौम्यनिरीक्षितौ ॥ ४ ॥

जिसके जन्मकाल में चौथे घर में जो राशि हो उसमें और उस चौथे घर का स्वामी जिस घर में बैठा हो इन दोनों के स्थानों में वर्ष में शनैश्चर और मंगल बैठे हों और यदि वे शुभग्रहों से युक्त वा दृष्ट न हों तो उसके माता-पिता को कष्ट देते हैं। यदि शुभग्रह देखते हों तो यह योग भंग हो जाता है ॥ ४ ॥

शुभाशुभ योग।

मातुः पितुश्च सहमे तनुपेत्थशाले
तुर्येऽपि चेत्थमवगच्छ सुखानि पित्रोः।
चेदष्टमाधिपतिना कृतमित्थशालं
पित्रोर्विपद्भयमनिष्टकृतेसराफे ॥ ५ ॥

जिसके वर्षकाल में माता सहम और पिता सहम का वर्षलग्न के स्वामी के साथ इत्थशाल (मिलाप) हो तो उसके माता-पिता के लिए सुख जानना। इसी प्रकार चौथे भाव का भी वर्षलग्नस्वामी के साथ मिलाप हो तो भी माता-पिता को सुख होता है। यह एक योग हुआ। अब अशुभ योग कहते हैं कि माता या पिता के सहम का वर्ष लग्न से अष्टम भाव के स्वामी के साथ यदि मुथशिल योग हो तो माता पिता को विपत्तियाँ होती हैं अर्थात् उसके माता पिता बड़े दुःख को प्राप्त होते हैं। और जो माता-सहम और पितासहम का पापग्रहों से ईसराफ योग हो तो उसके माता-पिता को भय होता है ॥ ५ ॥

दो०। नीलकण्ठकृत ताज के तुर्यभाव फलज्ञान।
भाषाकरि पूरण भयो लखि हैं ताहि महान ॥ १ ॥

इति चतुर्थभावविचारः।

पंचमभावविचारः।

पुत्रायगो वर्षपतिर्गुरुश्चे-
त्सूर्यारसौम्योशनसोऽथवेत्थम्।
सत्पुत्रसौख्याय खलार्दितास्ते
दुःखप्रदाः पुत्रत एव चिन्त्याः ॥ १ ॥

दो०। नीलकण्ठि शुभग्रंथ में पञ्चमभाव महान।
ताके फल को मैं कहौं करिकै ताजकज्ञान ॥ १ ॥

जिसके वर्षकाल में यदि वर्ष का स्वामी होकर बृहस्पति पाँचवें या ग्यारहवें स्थान में बैठा हो तो पुत्रों को सुख होता है अथवा सूर्य, मंगल, बुध और शुक्र इनमें से जो कोई वर्ष का स्वामी होकर पाँचवें या ग्यारहवें

स्थान में स्थित हो तो वह इसी प्रकार पुत्रों को सुखकारी होता है। इसके उपरान्त जो बृहस्पति, सूर्य, मंगल, बुध और शुक्र ये पाँचों ग्रह यदि पापग्रहों से पीड़ित हों तो वह उसके पुत्रों के लिए दुःख देते हैं। यह पण्डितों को विचारना चाहिए॥ १॥

पुत्रप्राप्ति योग।

पुत्रे सुतस्य सहमे सबले सुताप्तिः
सौम्येक्षितेऽप्यतिसुखं यदि तत्र वर्षेट्।
सौम्येक्षितः शुभगृहे सकुजो बुधश्चे-
त्पुत्रायगः सुतसुखं विबलः सुतार्तिम्॥ २॥

जिसके वर्षसमय पाँचवें भाव में बल समेत पुत्र का सहम हो तो उस को पुत्र की प्राप्ति होती है। यदि उस पाँचवें घर में वर्ष का स्वामी बैठा हो और उसको शुभग्रह[1] देखते हों तो उसके बालकों को बहुत सुख होता है। यह एक योग हुआ। अब दूसरा योग कहते हैं कि जिसके वर्ष समय में यदि मंगलयुक्त बुध शुभग्रहों की राशियों[2] में से किसी राशि में बैठा हुआ शुभग्रहों से दृष्ट होकर पाँचवें या ग्यारहवें स्थान में स्थित हो तो वह पुत्रों को सुख करता है। यदि मंगल सहित बुध बल से हीन हो और उक्त स्थानों में भी नहीं बैठा हो तो पुत्र को रोग करता है अर्थात् पञ्चवर्गी के बल से रहित होकर मंगल से योग करता हुआ बुध पाँचवें या ग्यारहवें घर में विराजता हो तो पुत्र को सुख नहीं देता है॥ २॥

अन्य पुत्रप्राप्ति योग।

जीवो जन्मनि यद्राशावब्दे ससुतगो बली।
पुत्रसौख्याय भौमोज्ञो वर्षेशोऽत्र सुताप्तिदः॥ ३॥

जिस मनुष्य के जन्म समय बृहस्पति जिस राशि में बैठा हो यदि वह राशि वर्षकाल में बलिष्ठ होकर पाँचवें घर में विद्यमान हो तो पुत्रों को सुख देता है। यह एक योग हुआ। अब अन्य योग कहते हैं कि, जिसके

१—चंद्र, बुध, गुरु, शुक्र—ये शुभग्रह हैं। २—कर्क, मिथुन, कन्या, धन, मीन, तुला ये शुभग्रहों की राशियाँ हैं।

वर्षकाल में मंगल या बुध इन दोनों में से जो कोई एक वर्ष का स्वामी होकर इस पाँचवें भाव में स्थित हो तो वह उसको पुत्र देता है ॥ ३ ॥

पुत्रप्राप्तिदौष्ट्ययोग ।

यत्रेज्यो जनुषि गृहे विलग्नमेतत्
पुत्राप्त्यै बुधसितयोरपीत्थमूह्यम् ।
यद्राशौ जनुषि शनिः कुजश्च सोऽब्दे
पुत्रार्तिं तनुसुतगः करोति नूनम् ॥ ४ ॥

जिसके जन्म समय बृहस्पति जिस राशि में बैठा हो यदि वह राशि वर्ष में लग्नस्थान में हो तो उसको पुत्र की प्राप्ति होती है । इसीप्रकार बुध और शुक्र का भी जानना चाहिए । जैसे कि जन्मकाल में बुध और शुक्र जिस राशि में बैठे हों यदि वही राशि वर्ष समय लग्न में स्थित हो तो पुत्र की प्राप्ति होती है । यह शुभयोग कहा गया । अब अशुभ योग कहते हैं कि, जिसके जन्म काल में जिस राशि में शनैश्चर और मंगल बैठे हों यदि वही राशि वर्षकाल में लग्नस्थान वा पुत्र घर हो जावे अर्थात् जन्मकालीन शनैश्चर की राशि और जन्मकालीन मंगल की राशि वर्ष लग्न में हो अथवा वर्ष लग्न से पाँचवें घर में हो अथवा शनैश्चर और मंगल ये दोनों एक ही स्थान में बैठे हों तो निश्चय करके उस प्राणी के पुत्रों को पीड़ा करते हैं ॥ ४ ॥

अन्य सुतप्राप्तियोग ।

पुत्रे पुण्यस्य सहमं पुत्राप्त्यै शुभदृष्टियुक्
लग्नपुत्रेश्वरौ पुत्रे पुत्रदौ बलिनौ यदि ॥ ५ ॥

जिसके वर्षलग्न से पाँचवें स्थान में पुण्यसहम बैठा हो और उसको शुभग्रह देखते हों अथवा शुभग्रहों से युक्त हो तो उसको पुत्र की प्राप्ति होती है । यह एक योग हुआ । अब अन्ययोग कहते हैं कि, जिसके वर्षलग्न से पाँचवें घर (पुत्रभाव) में जो लग्न का स्वामी और पुत्रभाव का स्वामी ये दोनों बलिष्ठ होकर बैठे हों तो वह उसके लिए पुत्र देते हैं ॥ ५ ॥

शुभाशुभ योग।

चन्द्रो जीवोऽथवा शुक्रः स्वोच्चगः सुतदः सुते।
वक्री भौमस्सुतस्थश्चेदुत्पन्नसुतनाशनः ॥ ६ ॥

जिसके वर्षलग्न से पाँचवें स्थान में चन्द्रमा, बृहस्पति और शुक्र ये तीनों अथवा इन्हीं में से जो कोई एक अपने उच्च आदि स्थानों में बैठा हो तो वह उस प्राणी को पुत्र देता है। यह शुभ योग हुआ। अब अशुभ योग दिखाते हैं कि जिसके वर्षलग्न से पाँचवें स्थान में जो मंगल वक्री होकर स्थित हो तो वह उस प्राणी के उत्पन्न हुए पुत्र को नष्ट कर देता है ॥६॥

पुत्रप्राप्ति और पुत्रनाश योग।

पुत्राधिपो जन्मनि भार्गवोऽब्दे
पुत्रे विलग्नाधिपतीत्थशाली।
पुत्रप्रदो मन्दपदस्थपुत्रे
पापाधिकारीक्षित आत्मजार्तिः ॥ ७ ॥

जिसके जन्मकाल में पाँचवें भाव का स्वामी शुक्र हो और वही शुक्र वर्ष समय पाँचवें स्थान में स्थित होकर वर्षलग्न के स्वामी के साथ मुथशिल योग करे तो वह उस प्राणी के लिये पुत्र को देता है। यह पुत्र की प्राप्ति का योग हुआ। अब अशुभ योग दिखाते हैं कि, जिसके जन्मकाल में शनैश्चर का जो स्थान हो यदि वर्षकाल में वही पाँचवाँ घर हो जावे और उसको पापाधिकारी (अर्थात् पंचाधिकारियों में से किसी अधिकार में वर्तमान होकर) पापग्रह देखता हो तो उस प्राणी के लड़कों को पीड़ा होती है ॥ ७ ॥

अन्य योग।

यद्राशिगो ग्रहः सूतौ स राशिस्तत्पदाभिधः।
बली जन्मोत्थसौख्याय वर्षे तद्दुःखदोऽन्यथा ॥ ८ ॥

जिसके जन्मकाल में जो ग्रह जिस राशि में बैठा हो वह राशि उस ग्रह का स्थान कहना चाहिए। अब फल कहते हैं कि वह राशि वर्षकाल में उसी भाव को प्राप्त होकर यदि बलवान् हो तो जन्मकालीन उस भाव

से उत्पन्न शुभफलों का देनेवाला होता है। अन्यथा वर्ष समय में कहे हुए स्थान में बैठा हुआ राशि यदि निर्बल (बल से हीन) हो तो उस भाव से पैदा हुआ शुभ भी अशुभ हो जाता है ॥ ८ ॥

दो०। नीलकण्ठ शुभग्रन्थ में पुत्रभावफलज्ञान।
भाषाकरि पूरण भयो लखि हैं ताहि महान ॥ १ ॥

इति पञ्चमभावविचारः।

षष्ठभावविचारः।

रोगादि अशुभयोग।

मन्देऽब्दपेनृजुगतौ पतिते रुगार्तिः
स्यात्सन्निपातभवभीररिगेऽत्र शूलम्।
गुल्माक्षिरोगविषमज्वरभीर्गुरौ तु
पापार्दितेऽनिलरुजो मकबूलशून्ये ॥ १ ॥
स्यात्कामलाख्यरुगपीत्थमसृज्यसृग्भीः
पित्तं च रिष्फगरवौ दृशि शूलरोगः।
पित्तं पुनारिपुगृहेऽत्र भृगौ नृभेरौ
श्लेष्माभपेक्षितयुतेपि कफोऽरिगेन्दौ ॥ २ ॥

दो०। नीलकण्ठकृतताज के शत्रुभावफलज्ञान।
भाषाकरि वर्णन करूँ लखि हैं ताहि सुजान ॥ १ ॥

जिसके वर्षकाल में शनैश्चर वर्ष का स्वामी हो तथा वक्रगति हो और पापग्रहों से पीड़ित होकर छठेभाव में बैठा हो तो वह प्राणी रोग से व्याकुल होता है और उसके सन्निपात (एकही काल में तीनों दोषों) से पैदा हुआ भय (मरणसमान कष्ट), शूलपीड़ा, उदररोग, नेत्ररोग और विषमज्वर इन रोगों से डर होता है और इसी प्रकार बृहस्पति वर्ष का स्वामी होकर वक्रगतिवाले और पापग्रहों से पीड़ित होकर छठेभाव में बैठा हो और बृहस्पति का चन्द्रमा के साथ कम्बूलयोग न हो तो उस

प्राणी के वातजरोग होते हैं तथा कामला नामक रोग होता है। इसी प्रकार वर्षेश मंगल पापग्रहों से पीड़ित तथा वक्रगतिवाला होकर छठे भाव में बैठा हो तो रक्तविकार नामक रोग होता है। ऐसेही जिसके सूर्य वर्षेश होकर पापग्रहों से पीड़ित होता हुआ छठे भाव में स्थित हो तो उस प्राणी को पित्तदोष से पैदा हुआ रोग होता है अथवा बारहवें स्थान में उक्तस्वरूप से सूर्य बैठा हो तो नेत्रों में शूलरोग होता है। वैसे ही शुक्र वर्षपति होकर पापग्रहों से पीड़ित होता हुआ छठे भाव में विद्यमान हो तो उस प्राणी को पित्त रोग होता है और जो शुक्र नर राशि में स्थित होकर छठे भाव में बैठा हो और उसको छठे भाव का स्वामी देखता हो अथवा शुक्र छठे भाव के स्वामी से युक्त हो तो उस प्राणी को श्लेष्मा (जुकाम) रोग होता है। ऐसे ही चन्द्रमा वर्ष का स्वामी होकर शत्रुभाव में बैठा हो तो कफसम्बन्धी रोग होता है ॥ २ ॥

बुध का फल।

एवं बुधे पापयुतेऽब्दपेऽरौ वातोत्थरोगो जनि लग्ननाथः।
पापोऽब्दपेन चुतदृष्टिदृष्टो रोगप्रदो मृत्युकरः सपापः ॥ ३ ॥

इसी प्रकार वक्रगति बुध वर्ष का स्वामी होकर छठे भाव में बैठा हो और वह पापग्रहों से युक्त हो तो वातज रोग होता है और जो जन्मकालीन लग्न का स्वामी पापग्रह होकर वर्तमान वर्ष के स्वामी से चुतदृष्टि (चौथी, सातवीं, दशवीं और पहली दृष्टि) से देखा जाता हो तो वह रोग का देनेवाला होता है। और जो जन्मकालीन लग्न का स्वामी पापग्रह हो और वर्षकाल में पापग्रहों से युक्त हो और उसको वर्ष स्वामी चुतदृष्टि से देखता हो तो वह मृत्यु का देनेवाला होता है ॥ ३ ॥

शनिकृतारिष्ट योग।

सूत्यार्किभे लग्नगते रूक्षशीतोष्णरुग्भयम्।
शनीक्षिते याप्यता स्यात्सपापे मृत्युमादिशेत् ॥ ४ ॥

जिसके जन्म समय शनैश्चर जिस राशि में बैठा हो वही राशि वर्ष के लग्न में हो तो उस प्राणी के शरीर में रुखाई, जूड़ी, ज्वर आदि रोगों का भय होता है। जन्मकाल में शनैश्चर जिस राशि में बैठा हो उसी राशि को वर्ष में शनैश्चर देखता हो तो उस प्राणी के पूर्वोक्त रोग (कठिन साध्य)

होते हैं और जो शनैश्चर पापग्रहों से युक्त होकर जन्मकालीन पापयुक्त अपनी राशि को देखता हो तो वह प्राणी मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

भौमकृतारिष्ट योग।

एवं भौमे क्षुतदृशा रक्तपित्तरुजोऽग्निभीः।
ततोऽन्ये बहुला रोगाः शुभदृष्टोरुगल्पता ॥ ५ ॥

इसी प्रकार जन्मकाल में मंगल जिस राशि में बैठा हो वही राशि यदि वर्षकाल लग्न में हो अर्थात् वही वर्षलग्न हो और उसको मंगल क्षुतदृष्टि (पहली, चौथी, सातवीं और दशवीं दृष्टि) से देखता हो तो उस प्राणी के रक्तविकार और पित्त से पैदा हुआ रोग, अग्नि से भय और अन्य बड़े भारी रोग होते हैं। और जो उस लग्नगत राशि को शुभग्रह देखते हों तो उस प्राणी के शरीर में थोड़े रोग होते हैं ॥ ५ ॥

अन्य अरिष्टयोग।

लग्नाधिपाब्दपतिषष्ठपतीत्थशालो
रोगप्रदः खचरधातुविकारतः स्यात्।
कान्दर्पिकामयभयं पतिते सितेऽर्के
स्थानेऽथ षष्ठ इह रुक्सहमं सपापम् ॥ ६ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न का स्वामी, वर्षपति और छठेभाव का स्वामी इन तीनों का परस्पर मुथशिल योग हो अथवा इनमें से दो का ही मुथशिल योग हो अर्थात् वर्ष लग्न का स्वामी छठे भाव के पति के साथ मुथशिल करे अथवा वर्षपति छठे भाव के स्वामी के साथ मिलाप करे अथवा छठे भाव का स्वामीही वर्षलग्नेश और वर्षेश इन दोनों में से किसी के साथ मुथशिल योग करे तो वह उस मुथशिलकारी ग्रह को धातु के विकार से रोग का देनेवाला होता है। तथा जन्मकाल में शुक्र जिस राशि में बैठा हो वह राशि वर्षकाल में छठे भाव में हो और उसमें सूर्य बैठा हो और छठे, आठवें और बारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में शुक्र विद्यमान हो तो वह प्राणी काम से मतवाला होकर अगम्य स्त्रियों में रमता हुआ उपहास को प्राप्त होता है और यदि रोगसहम पापग्रहों से युक्त अथवा

दृष्ट हो तो भी वह प्राणी काम सम्बन्धी रोग से पीड़ित होकर व्याकुल होता है ॥ ६ ॥

अन्य रोगोत्पत्तियोग ।

सपापे गुरौ रन्ध्रगे लग्नआरे
सतन्द्रास्ति मूर्च्छाङ्गनाशः सचन्द्रे ।
खलाः सूतिकेन्द्रेऽब्दलग्ने रुगाप्त्यै
कफोर्ध्वांघ्रिगैरीक्ष्यमाणे सिते स्यात् ॥ ७ ॥

जिसके वर्षकाल में पापग्रह से युक्त होकर बृहस्पति वर्षलग्न से आठवें स्थान में बैठा हो और मंगल वर्षलग्न में टिका हो तो उस प्राणी के लिए आलस्य समेत मूर्च्छा होती है अर्थात् वह प्राणी आलस्य से हाथ और पैरों के व्यापारों से रहित होकर भूमि खाट आदिकों का सेवन करता है और जिसके वर्षकाल में चन्द्रमा से युक्त होकर मंगल लग्न में बैठा हो और पापग्रहों समेत बृहस्पति वर्ष लग्न से आठवें स्थान में विराजमान हो तो उस प्राणी के अंग का नाश होता है अर्थात् चन्द्र से युक्त वा रहित केवल मंगल ही वर्षलग्न में बैठा हो फिर चन्द्रमा अथवा पापग्रहों से युक्त बृहस्पति वर्षलग्न से आठवें (मृत्युघर) में बैठा हो तो उस प्राणी के अंग का नाश हो जाता है । यह एक योग हुआ । अब अन्य योग कहते हैं कि, जन्मकाल में जो चार केन्द्र हैं उनमें पापग्रह बैठे हों और यदि वर्षकाल में वे ही पापग्रह लग्न में बैठे हों तो वे उस प्राणी को रोगी बनाते हैं । ऐसे ही शुक्र को नरराशि में बैठे हुए पापग्रह देखते हों तो उस प्राणी के शरीर में कफरोग पैदा होता है ॥ ७ ॥

अन्य योग ।

दिनेऽब्दप्रवेशो विलग्नेऽब्दसूत्यो-
र्यदा दृक्कहद्दागृहाद्योऽधिकारः ।
रवेर्वा कुजस्यात्र पीडा ज्वरात्स्या-
द्दृशा सौम्यखेटोत्थयान्ते सुखाप्तिः ॥ ८ ॥

दिन में वर्ष का प्रवेश हो और जन्मकाल और वर्षकाल के लग्न में सूर्य या मंगल का द्रेष्काण अथवा हद्दा या अपना घर आदि अधिकार प्राप्त हो

तो इस वर्ष में ज्वर से पीड़ा होती है। इसका आशय यह है कि उक्त पाँच अधिकारियों में से किसी अधिकार में होकर सूर्य या मंगल लग्न में विद्यमान हो तो ज्वररोग से पीड़ा होती है और जो उस लग्न में बैठे हुए सूर्य या मंगल को शुभग्रह देखते हों तो वर्ष प्रवेश की समाप्ति (आखिरी) में सुख की प्राप्ति होती है ॥ ८ ॥

रोगनाश और रोगोत्पत्ति योग ।

निशि सूतौ वर्द्धमाने चन्द्रे भौमेत्थशालतः ।
रुग्नश्येदेधते मन्देत्थशालाद्व्यत्ययोऽन्यथा ॥ ९ ॥

जिस प्राणी का रात्रि में जन्म हो वहाँ शुक्लपक्ष का चन्द्रमा, वर्द्धमान होकर वर्षकालीन मंगल के साथ मुथशिल योग करता हो तो उस प्राणी का रोग नाश होजाता है। यदि शुक्लपक्ष का चन्द्रमा वर्द्धमान होकर वर्षकालीन शनैश्चर के साथ मुथशिल योग करे तो उस प्राणी का रोग बढ़ता है अन्यथा उलटा जानना चाहिए अर्थात् दिन में जन्म हुआ हो और कृष्णपक्ष में स्थित चंद्रमा मंगल के साथ मुथशिल योग करे तो रोगों की बढ़ती होती है। पुनः उस चंद्रमा का शनैश्चर के साथ मुथशिल हो तो रोगों का नाश होता है ॥ ९ ॥

अन्य दो योग ।

रवावीदृशिविरकेतुयुतेऽब्दं निखिलं गदः ।
अधिकारी बली सूतावब्दे केतुज्ञयुक् तथा ॥ १० ॥

जिसके वर्षकाल में केतु और बुध से युक्त होकर सूर्य मंगल के साथ मुथशिल (मिलाप) योग करे तो उस प्राणी के शरीर में सालभर रोग रहता है। यह एक योग हुआ। अब अन्य योग कहते हैं कि जिसके जन्मकाल में जो कोई ग्रह अधिकारी अर्थात् पञ्चवर्गी के अधिकारों में से किसी अधिकार में बैठा हो अथवा अपने उच्च आदि स्थानों को प्राप्त होकर बलवान् हो और यदि वर्षकाल में वही ग्रह केतु और बुध से युक्त हो तो सम्पूर्ण वर्ष उस प्राणी के लिए रोगप्रद होता है अर्थात् वह प्राणी सालभर रोगी रहता है ॥ १० ॥

शूलयोग ।

चतुर्थेऽस्ते च मुथहा युतदृष्टा शनीज्जिना ।
शूलपीडा पापखगैर्दृष्टा तत्परिणामजा ॥ ११ ॥

जिसके वर्षलग्न से चौथे स्थान अथवा सातवें स्थान में मुन्था स्थित हो और उसको शनैश्चर शत्रुदृष्टि (चौथी, दशवीं, पहली और सातवीं) से देखता हो तो शूलपीड़ा होती है और जो उक्त स्थानों में स्थित उस मुन्था को पापग्रह देखते हों तो शूलनाश होने के बाद शूलपीड़ा होती है ॥ ११ ॥

सब ग्रहों के वश से पिडिकादि योग ।

जन्मस्थजीवसितराशिगते महीजे
सूर्यांशगे पिडकशीतलिकादिमान्द्यम् ।
शीतोष्णगण्डभवरुक्च बुधे च सेन्दौ
कुष्ठं भगन्दररुजोपि सगण्डमालाः ॥ १२ ॥

जिस प्राणी के जन्मकाल में बृहस्पति अथवा शुक्र जिस राशि में बैठे हों यदि वर्षसमय उसी राशि में सूर्यांश को प्राप्त होकर मंगल बैठा हो तो उस प्राणी के शरीर में छोटी-छोटी फुन्सियाँ व शीतला (देवी) आदि रोग और जूड़ी, बुखार, गण्ड इन्हों से पैदा हुए रोग होते हैं । ऐसे ही जिस राशि में जन्मकाल के समय बृहस्पति या शुक्र बैठे हों यदि वर्षसमय उसी राशि में चन्द्रमासमेत बुध बैठा हो तो उस प्राणी के कुष्ठ, भगन्दर और गण्डमाला ये रोग होते हैं ॥ १२ ॥

अन्य अनिष्ट योग ।

जन्मलग्नेन्थिहानाथौ षष्ठौ पापान्वितेक्षितौ ।
निर्बलौ ज्वरपीडाङ्गवैकल्याद्यतिकष्टदौ ॥ १३ ॥

जिस प्राणी के जन्मलग्न का स्वामी और वर्षलग्न का स्वामी ये दोनों वर्षलग्न से छठे स्थान में बैठे हों और उनको पापग्रह देखते हों अथवा पापग्रहों से युक्त हों और जो पञ्चवर्गी के उत्तम बल से रहित हों तो वह उस प्राणीके लिये ज्वरपीड़ा (बुखार), अंगवैकल्य (हड़फूटन, दाह) आदि अति कष्टों के देनेवाले होते हैं ॥ १३ ॥

रोगप्राप्ति और स्त्रीप्राप्तियोग ।

मुथहा लग्नतन्नाथाः पापान्तस्थास्तु रोगदाः ।
षष्ठेशे षष्ठगे सौम्ये स्त्रियाः प्राप्तिरितीर्यते ॥ १४ ॥

जिसके वर्षकाल में मुन्था, वर्षलग्न, मुन्थास्वामी और वर्षलग्नेश ये चारों पाप ग्रहों के बीच बैठे हों तो उस प्राणी के लिए रोग के देनेवाले होते हैं और जो इन्हों के मध्य में कोई एक पापग्रह ही बैठा हो तो भी वह उस प्राणी के लिए रोग देता है । यह अशुभयोग हुआ । अब शुभ योग कहते हैं कि जिसके वर्ष समय छठे भाव का स्वामी शुभ ग्रह होकर छठे स्थान में बैठा हो तो स्त्री की प्राप्ति होती है । परंतु इस अर्थ में वामनाचार्य ने कहा है कि छठे भाव का स्वामी सौम्य होकर उसी में बैठा हो तो स्त्री का लाभ होता है । यह कितनेक आचार्यों का सम्मत है सो तो ठीक नहीं है क्योंकि जिससे यह रोग का प्रकरण है इससे उस प्राणी के जो ऐसा योग हो तो अवश्य उसकी स्त्री के रोग होता है । ऐसा कहने को उचित है और केवल स्त्री की प्राप्ति हो यह न कहना चाहिए क्योंकि इसका बाधक योग समरसिंह ने दिखलाया है । जैसे कि षष्ठ भाव का स्वामी शुभ ग्रह होकर अपने ही भाव में बैठा हो तो स्त्री को रोग होता है ॥ १४ ॥

रोगस्थान ।

रोगकर्ता यत्र राशावंशे स्यादनयोर्बली ।
तत्स्थानं तस्य रोगस्य वाच्यं राशिस्वरूपतः ॥ १५ ॥

पूर्व कहा हुआ रोग करनेवाला ग्रह जिस राशि के नवमांश में हो और राशि नवांशों के बीच जो राशि बली हो वह राशि उस रोग के राशिस्वरूप (वातपित्तकफमयुक्त) करके उसका स्थान (घर) कहना चाहिए अर्थात् रोगकारक ग्रह जिस राशि के नवांश में टिका हो वह राशि और नवांश की राशि इन दोनों के मध्य में जो राशि बलवान् देखपड़े उस राशि का वात, पित्त और कफ इन्हीं में से जो स्वरूप हो उसीसे उस रोग का घर कहना चाहिए ॥ १५ ॥

अन्य योग।

जन्मषष्ठाधिपे भौमे वर्षे षष्ठगते च रुक्।
क्रूरेत्थशाले विपुलः शुभदृग्योगतस्तनुः ॥ १६ ॥

जिस प्राणी के जन्मकीसमय छठे भाव का स्वामी मंगल हो और यदि वर्ष समय वही मंगल छठे स्थान में आजावे तो वह उस प्राणी के लिए रोग करता है। और जो पूर्वोक्त मंगल छठे भाव में स्थित होकर पापग्रहों के साथ मुथशिल योग करे तो उस प्राणी के बड़ा भारी रोग होता है और जो उक्त मंगल को शुभग्रह देखते हों अथवा वह मंगल ही शुभग्रहों से युक्त हो तो थोड़ा रोग होता है ॥ १६ ॥

दो०। नीलकण्ठकृत ताजके शत्रुभाव बलवान।
भाषाकरि पूरण भयो लखिहैं ताहि सुजान ॥ १ ॥

इति षष्ठभावविचारः।

सप्तमभावविचारः।

स्त्री से सुखयोग।

बली सितोऽब्दाधिपतिः स्मरस्थः
स्त्रीपक्षतः सौख्यकरो विचिन्त्यः।
ईज्येक्षितोऽत्यन्तसुखं कुजेना-
धिकारिणा प्रीतिकरो मिथः स्यात् ॥ १ ॥

दो०। नीलकण्ठ शुभग्रन्थ में नारिभाव फल ज्ञान।
भाषा भाषत शक्तिधर, लखि हैं ताहि महान ॥ १ ॥

जिसके वर्षकाल में बलवाला शुक्र वर्ष का स्वामी होकर सातवें घर में बैठा हो तो उस प्राणी को स्त्री की ओर से सौख्य करता है यह जानना चाहिए और जो पूर्वोक्त शुक्र को बृहस्पति देखता हो तो वह उस प्राणी को बड़ा सौख्य देता है और जो पाँच अधिकारियों में से किसी अधिकार में स्थित होकर मंगल उक्त शुक्र को देखता हो तो उस प्राणी की और उसका स्त्री की आपस में बड़ी प्रीति होती है अर्थात् स्त्री, पुरुष दोनों परस्पर प्रीति करते हुए आनंद में रहते हैं ॥ १ ॥

जारता योग और विवाह योग ।

बुधेक्षिते जारता स्याल्लघ्व्या मन्देन वृद्धया ।
गुरुदृष्ट्या नवा भार्या सन्ततिस्त्वरितं ततः ॥ २ ॥

जिसके वर्षकाल में वह शुक्र वर्ष का स्वामी होकर सातवें स्थान में बैठा हो और उसको बुध देखता हो तो उस प्राणी का थोड़ी उमरवाली स्त्री के साथ जारकर्म होता है और जो उस शुक्र को शनैश्चर देखता हो तो बूढ़ी स्त्री के साथ जारता होती है। और जो बृहस्पति पूर्वोक्त शुक्र को देखता हो तो उस प्राणी का विवाह नवीन भार्या के साथ होता है। और उस नई दुलहिन के सकाश से बहुत जल्द लड़का पैदा होता है।

अब यह विचार करना चाहिए कि जो (गुरुदृष्ट्या) ऐसा पाठ है सो तो ग्रन्थकार के प्रमाद से जानना चाहिए क्यों कि पूर्व पद्य में (ईज्येक्षिते) ऐसा कहचुके हैं इसलिए यहाँ पर (गुरुयुक्ते नवा भार्या) ऐसा पाठ पूर्व ग्रंथों के अनुरोध से कहना युक्त ही है क्योंकि जातकसार में वामन आचार्य ने कहा है (संयुक्ते सुरपूजिते नववधूप्राप्तिश्च सद्वंशतः) जो पूर्वोक्त शुक्र देवताओं से पूजित बृहस्पति से संयुक्त हो तो अच्छे वंश से नवीन भार्या की प्राप्ति होती है और ऐसाही ताजिकयोगसुधानिधि में भी कहा है ॥ २ ॥

स्त्रीसौख्य योग और विवाह योग ।

जन्मलग्नाधिपेऽस्तस्थे दारसौख्यं बलान्विते ।
जन्मशुक्रर्क्षमस्तेऽब्दे स्त्रीलाभाय सितेऽब्दपे ॥ ३ ॥

जिसके जन्म लग्न का स्वामी वर्षसमय बली होकर सातवें स्थान में हो तो उस प्राणी के लिए स्त्रीसुख होता है अर्थात् वह प्राणी अपनी भार्या से सुखी होता है और जन्मकाल में शुक्र जिस राशि में टिका हो यदि वर्षकाल में वह राशि सातवें स्थान में स्थित हो और शुक्र वर्ष का स्वामी हो तो उस प्राणी के लिए भार्या की प्राप्ति होती है ॥ ३ ॥

स्त्रीलाभ और स्त्रीकष्ट योग ।

लग्नास्तनाथयोरित्थशाले स्त्रीलाभमादिशेत् ।
सहमेशो भावपो वा विनष्टः कष्टदः स्त्रियाः ॥ ४ ॥

१—गुरुयुतेपि च नूतनवल्लभा भवति तत्र च सन्ततिराशु वा इति ॥

जो वर्षलग्न का स्वामी और सातवें घर का स्वामी इन दोनों का मुथ-शिल (मिलाप) योग हो तो स्त्री का लाभ (विवाह आदि के द्वारा स्त्री की प्राप्ति) कहे और यदि सप्तमस्थ का स्वामी अथवा सातवें भाव का स्वामी विनष्ट हो तो वह उस प्राणी की स्त्री के लिए कष्ट देता है। अब इस श्लोक में जो विनष्टग्रह कहा गया है उसका लक्षण वामन आचार्य ने यह कहा है कि जो ग्रह क्रूरग्रहों के बीच हो अथवा क्रूरग्रहों से युक्त हो अथवा क्रूरग्रहों से देखा जाताहो और विरश्मिता को प्राप्त हो उस ग्रह को पण्डितों ने विनष्ट कहा है॥ ४॥

स्वल्पस्त्रीसुख और महत्सुख योग।

नष्टेन्दौ शुक्रपदगे मैथुनं स्वल्पमादिशेत्।
जन्मशुक्रर्क्षगो भौमः स्त्रीसुखोत्सवकृद्बली॥ ५॥

जिस प्राणी के वर्षसमय शुक्र जिस राशि में बैठा हो उसीमें पूर्व कहे-हुए विनष्ट लक्षण से युक्त होकर चन्द्रमा बैठा हो तो उस प्राणी के लिए थोड़ा मैथुन कहे। वैसेही जन्मसमय शुक्र जिस राशि में स्थित हो यदि उसी राशि में वर्षसमय मंगल बली होकर टिका हो तो वह उस प्राणी की भार्या के लिए सुखों के उत्सवों का करनेवाला होता है॥ ५॥

स्त्रीसौख्ययोगचतुष्टय।

जन्मास्तपेऽब्दपसितेन युगीक्षिते स्यात्
स्त्रीसङ्गमो बहुविलाससुखप्रधानः।
केन्द्रत्रिकोणगगुरौ जनि शुक्रभस्थे
स्त्रीसौख्यमुक्तमिति हद्दविवाहयोश्च॥ ६॥

जिसके जन्मकालीन लग्न से सातवें स्थान का स्वामी, जो वर्षपति शुक्र से युक्त हो अथवा वर्षेश शुक्र उस जन्मकालीन लग्न से सातवें घर के स्वामी को देखता हो तो उस प्राणी के लिए बहुत विलासों और सुख प्रधानों से युक्त स्त्री का समागम होता है। यह एक योग हुआ। द्वितीय योग। जैसे कि, जन्म समय शुक्र जिस राशि में बैठा हो उसी

१—क्रूराक्रान्तः क्रूरयुतः क्रूरदृष्टश्च यो ग्रहः। विरश्मितां प्रपन्नश्च स विनष्टो बुधैः स्मृतः॥

राशि में बृहस्पति स्थित हो और वर्षकाल में केन्द्र १ । ४ । ७ । १० वा त्रिकोण ५ । ९ में बैठा हो तो उस प्राणी के लिए स्त्री का सुख होता है । यह दूसरा योग हुआ । इसी प्रकार वर्षलग्न में जो हद्दा का स्वामी आया हो वह जन्मकालीन शुक्र की राशि में प्राप्त होकर केन्द्र या त्रिकोण में बैठा हो तो भी स्त्री का सुख होता है । यह तीसरा योग हुआ । ऐसेही वर्षकाल में जो विवाह सहम अथवा उस विवाह सहम का स्वामी जन्म-कालीन शुक्राधिष्ठित राशि में प्राप्त होकर केन्द्र १ । ४ । ७ । १० अथवा त्रिकोण ९ । ५ में बैठा हो तो भी स्त्री का सुख होता है । यह चौथा योग हुआ । अब इस उक्त श्लोक में यह विचार करना चाहिए कि "केन्द्र" शब्द से लग्न को छोड़कर चौथे, सातवें और दशवें का ग्रहण किया है । उसका प्रमाण वाक्य समरसिंह ने कहा है कि शुक्र के स्थान में प्राप्त होकर केन्द्र अथवा त्रिकोण में बृहस्पति बैठा हो तो उस प्राणी के लिए पूर्ण फल का देनेवाला स्त्रीसुख होता है । ऐसेही विवाह सहम के स्वामी का और हद्दा के मालिक का पूर्ण फल जानना चाहिए क्योंकि फल के साम्य की उक्ति के लाघव से ग्रन्थकर्ता ने लग्न को कहा है यह बोधव्य है ॥ ६ ॥

स्त्रीक्लेश-विवाहयोग ।

अधिकारिपदस्थेऽर्के स्त्रीभ्यो व्याकुलतानिशम् ।
इन्थिहाधिकृतस्थाने गुरुदृष्टा विवाहकृत् ॥ ७ ॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में पाँचों अधिकारियों में से किसी अधिकारी की राशि पर सूर्य स्थित हो तो उस प्राणी को निरन्तर स्त्रियों से व्याकु-लता होती है । ऐसे ही जो मुन्था किसी अधिकार के स्थान में स्थित हो और उसको बृहस्पति देखता हो तो वह उस प्राणी का विवाह करानेवाली होती है ॥ ७ ॥

स्त्रीक्लेशयोग ।

इन्थिहार्कारयुग्द्यूने क्रूरिते सहमे स्त्रियाः ।
स्त्रीपुत्रेभ्यो भवेत्कष्टं पापदृष्ट्या विशेषतः ॥ ८ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न से सातवें स्थान में सूर्य और मंगल से युक्त मुन्था स्थित हो तो उस प्राणी को स्त्री और लड़कों से कष्ट होता है और

जो पापग्रह मुन्था को देखते हों तो विशेष करके स्त्री और पुत्रों से कष्ट होता है। यह एक योग हुआ। अब अन्ययोग दिखाते हैं कि स्त्री का सहम पापग्रहों से युक्त होकर वर्षलग्न से सातवें स्थान में हो तो भी स्त्रियों और लड़कों से कष्ट होता है। और जो उस स्त्रीसहम को पापग्रह देखते हों तो स्त्री और लड़कों से विशेष कष्ट कहना चाहिए। अब इस उक्त श्लोक में जो कितनेक आचार्य (क्रूरिते) इसका सम्बन्ध दोनों योगों में भी कहते हैं सो तो ठीक नहीं है क्योंकि (अकारयुक्) इसी करके द्यून (सातवें घर) का क्रूर युक्तपना सिद्ध है। इससे अन्यथा दो योगों का कल्पना करना ही व्यर्थ हो जायगा इसलिए यह व्याख्यान मन्तव्य नहीं है॥ ८॥

विवाह योग।

सूतौ द्यूनाधिपः शुक्रोऽब्दे द्यूने बलवान् भवेत्।
लग्नेशेनेत्थशालश्चेत्स्त्रीलाभं कुरुते सुखम्॥ ९॥

जिसके जन्मकाल में सातवें भाव का स्वामी शुक्र हो और वर्षकाल में वही शुक्र बलवान् होता हुआ सातवें स्थान में स्थित हो यदि वर्षलग्न के स्वामी के साथ मुथशिल (मिलाप) योग करता हो तो वह उस प्राणी के लिए स्त्री लाभ और सुख को करता है और जो (ध्रुवम्) ऐसा पाठ हो तो निश्चय करके स्त्री का लाभ करता है॥ ९॥

स्त्रीप्राप्ति योग।

भौमेऽब्दपे सितदृशा शुक्रेऽब्देशे कुजेक्षया।
तद्दृष्टे दारसहमे स्त्रीलाभो भवति ध्रुवम्॥ १०॥

जिसके वर्षसमय में मंगल वर्ष का स्वामी हो और उसको शुक्र देखता हो तो उस प्राणी के लिए स्त्रीलाभ होता है। यह एक योग हुआ। ऐसेही शुक्र वर्ष का स्वामी हो और मंगल शुक्र को देखता हो तो भी स्त्री का लाभ होता है। यह दूसरा योग हुआ। अथवा जिसके वर्षकाल में स्त्री के सहम (घर) को शुक्र और मंगल ये दोनों देखते हों तो उस प्राणी को निश्चय स्त्री का लाभ होता है। यह तीसरा योग जानना चाहिए॥ १०॥

दो पुनर्विवाह योग।

सूतौ वा दारसहमे तद्दृष्टे योषिदाप्यते।
स्वामिदृष्टं स्त्रीसहमं शुक्रदृष्टं विवाहकृत्॥ ११॥

जिसके जन्म समय स्त्रीसहम शुक्र और मंगल से दृष्ट हो अर्थात् शुक्र और मंगल ये दोनों स्त्रीसहम को देखते हों तो उस प्राणी को स्त्री की प्राप्ति होती है। यह एक योग हुआ। अब अन्य योग कहते हैं कि जो स्त्री-सहम अपने स्वामी और शुक्र से देखा जाता हो तो वह विवाह का करने-वाला होता है अर्थात् जो स्त्रीसहम का स्वामी अपने घर को देखता हो और उसी को शुक्र देखता हो तो अवश्य उस प्राणी का विवाह होता है॥ ११॥

स्त्रीसुखप्राप्ति योग।

सूतौ द्यूनाधिपे वर्षे सहमेशे स्त्रियाः सुखम्।
जन्मास्तपेन्थिहानाथवर्षेशाः खे द्युने तथा॥ १२॥

जिस प्राणी के जन्मकाल में जो सातवें भाव का स्वामी हो यदि वह वर्षकाल में स्त्रीसहम का स्वामी हो तो उस प्राणी को स्त्री से सुख मिलता है। यह एक योग हुआ। अब अन्ययोग कहते हैं। जिसके जन्मकालीन सातवें भाव का स्वामी, वर्षकालीन मुन्था का स्वामी और वर्ष का स्वामी ये तीनों दशवें घर में तथा सातवें घर में हों तो भी उस प्राणी को स्त्री से सुख की प्राप्ति होती है॥ १२॥

विदेशगमन योग।

मुथहातो द्यूनसंस्थः स्वगृहोच्चगतः शशी।
विदेशगमनं कुर्यात् क्लेशः पापेक्षणाद्भवेत्॥ १३॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में अपने घर और अपने उच्च वृष राशि में प्राप्त होकर चन्द्रमा मुन्था से सातवें घर में बैठा हो तो वह उस प्राणी के लिए विदेशगमन करता है और यदि पूर्वोक्त चन्द्रमा को पापग्रह देखते हों तो उस प्राणी को कष्ट होता है॥ १३॥

दो०। नीलकण्ठ शुभग्रंथ में जायाभावविचार।
भाषा करि पूरण भयो लखैं ताहि ज्ञातार॥ १॥

इति सप्तमभावविचारः।

अष्टमभावविचारः ।

मंगलकृत अरिष्ट ।

भौमेऽब्दपे क्रूरहतेऽयसा घातो बलोज्झिते ।
अग्निभीरग्निभे क्रूरनराद् द्विपदभे मृतिः ॥ १ ॥

दो० । नीलकण्ठ शुभ ग्रन्थ में मृत्युभाव बलवान ।
भाषा भाषत शक्तिधर लखें ताहि मतिमान् ॥ १ ॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में मंगल वर्ष का स्वामी हो और क्रूर ग्रहों से हत (युद्ध आदिकों से हारा) तथा निर्बल होकर जिस किसी घर में बैठा हो तो उस प्राणी के अंग में लोहे से घाव होता है । इसी प्रकार यदि मंगल अग्नितत्त्ववाली राशियों में से किसी राशि में बैठा हो तो उस प्राणी को अग्नि से भय होता है । ऐसे ही द्विपद राशियों (मिथुन, कन्या और धन के पूर्वार्द्ध) में से किसी में स्थित हो तो उस प्राणी की उग्रस्वभाववाले मनुष्यों (चोर आदिकों) से मृत्यु होती है ॥ १ ॥

मंगलकृत अन्य अरिष्ट ।

वियत्यवनिपामात्यरिपुतस्करजं भयम् ।
तुर्ये मातुः पितृव्याद्वा मातुलात्पितृतो गुरोः ॥ २ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्ष का स्वामी मंगल बल से रहित तथा क्रूरग्रहों से पीड़ित होकर यदि दशवें घर में बैठा हो तो उस प्राणी को राजा के मन्त्री, शत्रु और चोरों से भय कहना चाहिए और जो वह पूर्वोक्त मंगल चौथे घर में टिका हो तो उस प्राणी को माता, चाचा, मामा, बाप और गुरु से भय कहना चाहिए ॥ २ ॥

महामृत्यु योग ।

लग्नेन्थिहापतिसमापतयो मृतीशा
चेदित्थशालिन इमे निधनप्रदाः स्युः ।
चेत्पाकरिष्टसमये मृतिरेव तत्र
सार्के कुजे नृपभयं दिवसेऽब्दवेशे ॥ ३ ॥

वर्षलग्न का स्वामी, मुन्था का स्वामी और वर्ष का स्वामी ये तीनों आठवें भाव के स्वामी के साथ इत्थशालयोग करते हों तो वे मृत्यु के

देनेवाले होते हैं। यदि जन्मकालिक पापग्रह की दशा में पापग्रह की अन्तर्दशा हो तो मरण ही होता है। अब अन्ययोग कहते हैं। यदि उस वर्षकाल में दिन में वर्ष प्रवेश हो और सूर्य के साथ मंगल हो तो राजा से भय होता है ॥ ३ ॥

चार मृत्यु योग ।

सूर्ये मूसरिफे सितेन जनने वर्षेऽधिकारी तथा
केन्द्रे राजगदाद्भयं च रुगसृक्स्थानेऽधिकारीन्दुजे ।
सौम्ये क्रूरदृशा कुजस्य रुगसृक्दोषादिनांशुस्थिते
दग्धे बन्धमृती विदेशत इति प्राहुर्बुधे तादृशे ॥ ४ ॥

जिस प्राणी के जन्म समय सूर्य शुक्र के साथ मूसरिफ योग करे तथा वर्षकाल में पाँच अधिकारियों में से किसी अधिकार में होकर केन्द्र १ । ४ । ७ । १० में बैठा हो तो उस प्राणी के लिये राजा और रोग से भय होता है। यह एक योग हुआ। दूसरा योग। जन्म समय जिस राशि में मंगल बैठा हो उस राशि में बुध अधिकारी होकर स्थित हो तो उस प्राणी के रोग होता है। यह दूसरा योग हुआ। तीसरा योग। यदि पाँच अधिकारियों में से किसी अधिकार को प्राप्त बुध को मंगल क्रूरदृष्टि (चौथी, दशवीं, पहली और सातवीं इन में से किसी) से देखता हो तो लोहू के विकार से उत्पन्न रोग होता है। यह तीसरा योग हुआ। चौथा योग। इसी प्रकार अधिकारी बुध-मंगल से देखा जाता हो और मंगल की रश्मि में टिका हो अथवा युद्ध में मंगल से हारा हो तो परदेश में वह प्राणी किसी बन्धन में फँसकर मर जाता है ॥ ४ ॥

रोगकारक योग ।

भौमस्थानेऽधिकारीन्दौ गुप्तं नृपभयं रुजः ।
मन्दोऽधिकारी खे लोहहतेः पीडाकरः स्मृतः ॥ ५ ॥

जन्म समय मंगल जिस राशि में हो उसी राशि में वर्ष समय अधिकारी होकर चन्द्रमा बैठा हो तो गुप्तरूप (अनजान) में राजा से भय और रोग होते हैं। यह एक योग हुआ। अन्य योग। यदि शनैश्चर पाँच अधिकारियों में से किसी अधिकार को प्राप्त होकर दशवें घर में बैठा हो तो वह लोहे के

प्रहार से पीड़ा करनेवाला होता है। ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है॥ ५॥

अल्पमृत्यु योग।

भौमेऽष्टमे भयं वह्नेः प्रहारो वा नृपाद्भयम्।
आरे खस्थे चतुष्पाद्भ्यः पातो दुःखं रुजोऽसृजः॥ ६॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में वर्षलग्न से आठवें स्थान में मंगल बैठा हो तो उस प्राणी को अग्नि से भय अथवा किसी हथियार से घाव या राजा से भय होता है। यह एक योग हुआ। अन्य योग। यदि वर्षाङ्ग से दशवें स्थान में मंगल बैठा हो तो वह प्राणी चौपायों (घोड़े आदिकों) से गिरकर दुःख पाता है और उसके शरीर में लोहू के विकार से पैदा हुए रोग होते हैं॥ ६॥

धननाश और विवाद योग।

वित्ताष्टगेऽज्यो धनहा यद्यब्देशोऽशुभेक्षितः।
मन्दे द्यूने दुर्वचनापवादकलिभर्त्सनम्॥ ७॥

यदि वर्ष का स्वामी बृहस्पति वर्षलग्न से दूसरे अथवा आठवें घर में स्थित हो और उसको पापग्रह देखते हों तो वह धन का नाश करनेवाला होता है। यह एक योग हुआ। अन्य योग। जिस प्राणी के वर्षलग्न से सातवें स्थान में शनैश्चर बैठा हो तो वह प्राणी दुर्वचन, अपवाद, कलह और धिकार को प्राप्त होता है॥ ७॥

महाल्पमृत्यु योग।

पतिते ज्ञे क्रूरदृशारेत्थशाले मृतिं वदेत्।
कुजहद्दास्थिते नाशः सौम्यदृष्ट्या शुभं भवेत्॥ ८॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में बुध पतित होकर क्रूरदृष्टि से मंगल के साथ इत्थशालयोग करता हो तो विद्वान् को चाहिए कि उस प्राणी की मृत्यु (मौत) कह देवे और जो उक्त बुध मंगल की हद्दा में बैठा हो तो द्रव्यादिकों का नाश होता है और यदि इन दोनों योगों में भी उस बुध को शुभग्रह देखते हों तो उस प्राणी को शुभ ही होता है॥ ८॥

कलह योग ।

लग्नाधिपे नष्टदग्धे योषिद्वादोऽशुभान्विते ।
जन्मन्यष्टमगो जीवो नाधिकारी कलिः पृथुः ॥ ९ ॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में वर्षलग्न का स्वामी नष्ट (बलरहित) और दग्ध (अस्तंगत) होकर पापग्रहों से युक्त हो तो उस प्राणी की स्त्रियों के साथ लड़ाई होती है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । जिसके जन्म समय आठवें स्थान में बृहस्पति बैठा हो और यदि वह वर्षकाल में पाँच अधिकारियों में से किसी अधिकार में हो तो बड़ा कलह (लड़ाई वा झगड़ा) होता है ॥ ९ ॥

जयप्रवाद योग ।

जयः शुक्रेक्षणादुक्तः प्रत्युत्तरवशेन तु ।
भौमेऽन्त्यगे धने सूर्ये वादात्क्लेशं विनिर्दिशेत् ॥ १० ॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में पूर्व कहे हुए उस बृहस्पति को शुक्र देखता हो तो स्त्रियों के झगड़े में प्रत्युत्तर के वश से उस प्राणी का जय कहा जाता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । मंगल वर्षलग्न से बारहवें घर में बैठा हो और सूर्य दूसरे स्थान में स्थित हो तो लड़ाई (गाली-गलौज, मार-पीट) आदि से कष्ट कहना चाहिए ॥ १० ॥

कलह और रोग योग ।

रिपुगोत्रकलिर्भीतिस्संख्ये कुजहतेऽब्दपे ।
दग्धो जन्माङ्गपो वर्षेऽष्टमो रोगकली दिशेत् ॥ ११ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्ष का स्वामी मंगल से हत (पीड़ित) हो तो उस प्राणी की वैरियों और अपने वंशवालों के साथ कलह (लड़ाई) होती है और संग्राम में भय होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । जिस प्राणी के जन्मसमय लग्न का स्वामी वर्षकाल में अस्तंगत होकर वर्ष-लग्न से यदि आठवें स्थान में बैठा हो तो उस प्राणी के लिए रोग और कलह कहना चाहिए ॥ ११ ॥

कलहकारक दो योग ।

सूत्यब्दयोरधिकृतो भौमस्थाने गुरुर्हतः ।
पापैर्वादः स्फुटोऽप्येवं तादृशीन्दौ शनेः पदे ॥ १२ ॥

जन्मकाल और वर्षकाल में बृहस्पति अधिकारी होकर जन्म समय मंगल जिस राशि में बैठा हो उसी राशि में स्थित हो तथा पापग्रहों से पीड़ित हो तो लोगों के साथ प्रकट विवाद होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । इसी प्रकार जन्मकाल और वर्ष काल में अधिकारी होकर चन्द्रमा जन्म समय जिस राशि में शनैश्चर बैठा हो उस राशि में स्थित हो और वह चन्द्रमा पापग्रहों से हत हो तो पूर्वोक्त प्रकट कलह होता है ॥ १२ ॥

विदेशगमनादि योग ।

सूत्यब्दयोरधिकृते चन्द्रे बुधपदे हते ।
क्रूरैर्विदेशगमनं वादः स्याद्विमनस्कता ॥ १३ ॥

जिसके जन्मकाल और वर्षकाल में अधिकार को प्राप्त होकर चन्द्रमा जन्म समय जिस राशि में बुध बैठा हो उसी राशि में बैठा हो और पापग्रहों से पीड़ित हो तो वह मनुष्य विदेश गमन करता है और जहाँ कहीं जाता है वहाँ लोगों के साथ विवाद और वैमनस्य होजाता है ॥ १३ ॥

दो अल्पमृत्यु योग ।

मेषे सिंहे धनुष्यारेऽब्दपे[1] रन्ध्रे सितो भयम् ।
मृतौ मृतीशलग्नेशौ मृत्युदौ पापदृग्युतौ ॥ १४ ॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में मेष, सिंह और धन इन राशियों में से किसी राशि में मंगल बैठा हो और वर्ष का स्वामी वर्षलग्न से आठवें स्थान में हो तो उस प्राणी को तलवार से भय होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । वर्षलग्न से आठवें स्थान में आठवें भाव का स्वामी और वर्षलग्न का स्वामी ये दोनों बैठे हों और उनको पापग्रह देखते हों अथवा पापग्रहों से युक्त हों तो वह उस प्राणी के लिये मृत्यु को देते हैं ॥१४॥

सामान्यवर्ष योग ।

यत्रर्क्षे जन्मनि कुजः सोऽब्दलग्नोपगो यदा ।
बुधो वर्षपतिर्नष्टबलस्तत्र न शोभनम् ॥ १५ ॥

१—(अब्दपे) यह मंगल का विशेषण हो तो मेष, सिंह, और धन इन राशियों में से कोई राशि आठवें घर में हो और उसी में वर्ष का मालिक होकर मंगल बैठा हो तो तलवार से भय होता है ऐसा अर्थ होना युक्त है ।

जन्म समय मंगल जिस राशि में बैठा हो और वही राशि यदि वर्ष लग्न में हो और वहाँ वर्षेश बुध नष्ट होकर बैठा हो तो वह साल भर तक शुभ फल नहीं देता है ॥ १५ ॥

वाहन से भय और पतन योग ।

सार्के शनौ भौमयुते खाष्टस्थे वाहनाद्भयम् ।
सार्के भौमेऽष्टमस्थे तु पतनं वाहनाद्वदेत् ॥ १६ ॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में सूर्यसमेत शनैश्चर मंगल से युक्त होकर वर्ष लग्न से आठवें या दशवें स्थान में बैठा हो तो उस प्राणी को सवारी से भय होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । सूर्य समेत मंगल वर्ष लग्न से आठवें घर में स्थित हो तो वह प्राणी सवारी से गिरता है ऐसा फल कहना चाहिए ॥ १६ ॥

महामृत्यु योग ।

सारेऽब्दपेऽष्टमे मृत्युश्चन्द्रेन्त्यारिमृतौ मृतिः ।
उदिते मृतिसद्मेशे निर्बले जीविते मृतिः ॥ १७ ॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में मंगल के साथ वर्ष का स्वामी आठवें घर में बैठा हो तो उस प्राणी की मृत्यु होती है । इसी प्रकार वर्षकालिक लग्न से बारहवें, छठे और आठवें इन स्थानों में से किसी स्थान में चंद्रमा हो तो भी मरण होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । यदि मृत्यु सहम का स्वामी उदय होकर बल से रहित हो तो उस प्राणी की मौत होती है ॥ १७ ॥

अन्य दो महामृत्यु योग ।

पुण्यसद्मेश्वरः पुण्यसहमादष्टमगो यदा ।
मृत्यष्टमेशः पुण्यस्थो मृतिदः पापदृग्युतः ॥ १८ ॥

जो पुण्य सहम का स्वामी पुण्यसहम के घर से आठवें स्थान में स्थित हो और उसको पापग्रह देखते हों अथवा पापग्रहों से युक्त हो तो वह मरणप्रद होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । जिस प्राणी के जन्मकाल में आठवें स्थान का स्वामी पुण्यसहम में बैठा हो और उसको

पापग्रह देखता हो अथवा पापग्रहों से युक्त हो तो वह उस प्राणी के लिए मौत का देनेवाला होता है ॥ १८ ॥

अन्य दो मृत्यु योग ।

सूत्यष्टमगतो राशिः पुण्यसद्मनि नाथयुक् ।
अब्दलग्नादष्टमर्क्षं वा चेदित्थं स्यान्मृतिस्तदा ॥ १६ ॥

जिस प्राणी के जन्मकालिक लग्न से जो आठवीं राशि है वह वर्ष-कालीन पुण्यसहम के स्थान में स्थित हो और अपने स्वामी से युक्त हो तो उस प्राणी की मृत्यु होती है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । इसी प्रकार वर्षलग्न से आठवीं राशि पुण्यसहम में स्थित होकर यदि अपने स्वामी से युक्त हो तो उस प्रणी की मौत होती है ॥ १६ ॥

अन्य दो मृत्यु योग ।

पुण्यसद्माशुभाक्रातं मृतीशोन्त्यारिरन्ध्रगः ।
मुथहेशोऽब्दपो वापि मृत्युं तत्र विनिर्दिशेत् ॥ २० ॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में पुण्यसहम पापग्रहों से युक्त हो और यदि आठवें स्थान का स्वामी बारहवें, छठे और आठवें इन स्थानों में से किसी स्थान में बैठा हो तो उस प्राणी की मृत्यु कहना चाहिए । यह एक योग हुआ । अन्य योग । मुन्था का स्वामी अथवा वर्ष का स्वामी पापग्रहों से युक्त होकर बारहवें, छठे और आठवें इन स्थानों में से किसी स्थान में बैठा हो तो उस प्राणी की मृत्यु कहना चाहिए ॥ २० ॥

महामृत्यु योग ।

सक्रूरे जन्मपे मृत्यौ मृतिश्चेदिन्थिहार्कियुक् ।
भौमक्षुतेक्षणात्तत्र मृत्युः स्यादात्मघाततः ॥ २१ ॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में जन्मलग्न का स्वामी पापग्रहों से युक्त होकर आठवें स्थान में स्थित हो तो उस प्राणी की मौत होती है और यदि मुंथा जिस किसी स्थान में शनैश्चर से युक्त होकर बैठी हो और उसको मंगल क्षुतदृष्टि (चौथी, दशवीं, पहली, और सातवीं) दृष्टि से देखता हो तो इस योग में उस प्राणी की आत्मघात से मृत्यु होती है ॥ २१ ॥

महामृत्यु योग और सर्व मृत्युयोगपरिहार ।

मन्दोऽष्टमे मृतीशेत्थशालान्मृत्युकरस्स्मृतः ।
शुभेत्थशालात्सर्वेऽपि योगा नाशुभदायकाः ॥ २२ ॥

जिसके वर्षकाल में शनैश्चर वर्षलग्न से आठवें स्थान में स्थित होकर आठवें घर के स्वामी के साथ मुथशिल योग करे तो वह उस प्राणी के लिये मृत्युकारक होता है । अब इन योगों का अपवाद कहते हैं कि यदि पूर्वोक्त सम्पूर्ण मृत्यु योगों में अरिष्टकारक ग्रहों का शुभग्रहों के साथ मुथशिल योग हो तो वे अरिष्टकारक ग्रह बुरे फल के देनेवाले नहीं होते हैं किन्तु शुभही फल को देते हैं ॥ २२ ॥

महामृत्यु योग ।

सूतिरन्ध्रपतिर्मन्दोऽष्टमोऽब्दे लग्नपेन चेत् ।
इत्थशाली क्रूरदृशा तत्काले मृत्युदायकः ॥ २३ ॥

जिसके जन्मकाल में आठवें भाव का स्वामी शनैश्चर हो और वर्षकाल में वह वर्षलग्न से आठवें घर में स्थित हो तथा वर्षलग्न स्वामी के साथ क्रूरदृष्टि (चौथी, दशवीं, पहली और सातवीं) से मुथशिल योग करता हो तो उसी काल में उस प्राणी को मृत्यु का देनेवाला होता है ॥ २३ ॥

दो० । नीलकण्ठि शुभग्रन्थ में मृत्युभाव बलवान ।
भाषा करि पूरण भयो लखि हैं ताहि सुजान ॥ १ ॥

इति अष्टमभावविचारः ।

भाग्यभावविचारः ।

भौमेऽब्दपे त्रिनवगे क्रूरायुक्ते बलान्विते ।
गुणावहस्तदा मार्गश्चरं कार्यं स्थिरं ततः ॥ १ ॥

दो० । नीलकण्ठकृत ताजके नववाँ भाव महान ॥
भाषाभाषत शक्तिधर लखैं ताहि धीमान ॥ १ ॥

जिसके वर्षकाल में मंगल वर्ष का स्वामी हो तथा पापग्रहों के योग से रहित और बल से युक्त होकर वर्ष लग्न से तीसरे अथवा नवें स्थान में

बैठा हो तो उस प्राणी का मार्ग लाभ आदि सुखों का करनेवाला होता है और उसी से शीघ्र होनेवाला कार्य भी विलम्बसाध्य हो जाता है ॥ १ ॥

अन्य गमन योग।

त्रिधर्मस्थोऽब्दपः सूर्यः कम्बूली मार्गसौख्यदः।
अन्यप्रेषणयानं स्यात्सचेन्नाधिकृतो भवेत् ॥ २ ॥

यदि वर्षेश सूर्य कम्बूल योग का करनेवाला होकर लग्न से तीसरे अथवा नवें स्थान में बैठा हो तो वह गमन में सुख का देनेवाला होता है और यदि वह सूर्य पाँच अधिकारियों में से किसी अधिकार में न हो तो किसी दूसरे के भेजने से उस प्राणी का गमन होता है ॥ २ ॥

अन्य गमन योग।

शुक्रेऽब्दपे त्रिनवगे मार्गे सौख्यं विलोमगे।
अस्ते वा कुगतिः सौम्ये देवयात्रा तथाविधे ॥ ३ ॥
क्रूरार्दिते कुयानं स्याद्गुरावेवं विचिन्तयेत्।

जिसके वर्षकाल में शुक्र वर्ष का स्वामी होकर वर्षलग्न से तीसरे अथवा नवें घर में बैठा हो तो उस प्राणी को मार्ग में सुख होता है और जो पूर्वोक्त शुक्र वक्री अथवा सूर्य के साथ से अस्त हो जावे तो उस प्राणी का कुत्सित (बुरा) गमन होता है। अर्थात् गमन करने में कार्य की सिद्धि नहीं होती है। इसी प्रकार वर्षेश बुध बल से युक्त होकर वर्षलग्न से तीसरे अथवा नवें घर में स्थित हो तो देवयात्रा (किसी देवता के उद्देश से गमन) होती है। यही तीर्थयात्रादिकों का उपलक्षण जानना चाहिए और जो वह शुक्र अथवा बुध पापग्रहों से पीड़ित या युक्त हो तो उस प्राणी का कुत्सित गमन होता है। इसी प्रकार वर्ष का स्वामी बृहस्पति वर्ष लग्न से तीसरे या नवें घर में स्थित हो तो बुद्धिमान् देवयात्रा को कहे और जो वह (बृहस्पति) पापग्रहों से पीड़ित अथवा युक्त हो तो कुयान (बुरागमन) होता है ॥ ३ ॥

अचिन्तित यात्रा योग।

इत्थशाले लग्नधर्मपत्योर्यात्रास्त्यचिन्तिता ॥ ४ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न के स्वामी के साथ नवम भाव के स्वामी

का इत्थशाल (मुथशिल) योग हो तो अकस्मात् यात्रा होती है ॥ ४ ॥

चिन्तित यात्रा योग ।

लग्नेशो धर्मपे यच्छन्स्वं महश्चिन्तिताध्वदः ।
एवं लग्नाब्दपोर्योगे मुथहाङ्गपयोरपि ॥ ५ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न का स्वामी नवमभाव के स्वामी के साथ मुथशिल (इत्थशाल) योग करे तो वह उसके लिए चिन्तित गमन को देता है । इसी प्रकार वर्षलग्न का स्वामी वर्षेश के साथ मुथशिल करे तथा मुन्था का स्वामी वर्षलग्न के स्वामी के साथ मिलाप करे तो भी पूर्वोक्त फल होता है ॥ ५ ॥

उत्तम यात्रा योग ।

गुरुस्थाने कुजे धर्मे सद्यात्रा भृत्यवित्तदा ।
ज्ञस्थाने लग्नपो भौमो दृष्टः सद्यानसौख्यदः ॥ ६ ॥

जिसके जन्मसमय बृहस्पति जिस राशि में बैठा हो यदि उसी राशि में, वर्षलग्न में, मंगल नवें घर में बैठा हो तो उस प्राणी की उत्तम यात्रा होती है । उस यात्रा में सेवक (टहलुआ) और धन की प्राप्ति होती है । यह एक योग हुआ । अन्य योग। जिसके जन्म समय बुध जिस राशि में बैठा हो यदि उसी राशि में वर्षकुंडली में मंगल विराजता हो और उसको वर्षलग्न का स्वामी देखता हो तो वह उसके लिए उत्तमयान (गमन) अथवा अच्छी सवारी और सुख का देनेवाला होता है ॥ ६ ॥

अन्य सद्यात्रा योग ।

स्वस्थानगो वा बलवान् लग्नदर्शी सुयानदः ।

जिसके जन्मकाल में मंगल अपने स्थान (मेष, वृश्चिक) इनमें स्थित हो और वर्षकाल में भी मेष या वृश्चिक में बैठा हो या बलवान् होकर लग्न को देखता हुआ नवें घर में बैठा हो तो उसके लिए सुन्दर यान (गमन) अथवा अच्छी सवारी को देता है ॥

शुभ यात्रा के योग ।

जन्माधिकारी ज्ञो मन्दस्थाने क्रूरयुतो यदा ॥ ७ ॥

पन्थारिपोर्भकटकाद् गुरुरध्वेन्दुजीवयोः ।
धर्मे शनिर्नाधिकारी पन्थानमशुभं वदेत् ॥ ८ ॥

जिस प्राणी के जन्मकाल में बुध अधिकारी होकर शनैश्चर की राशि में बैठा हो और वर्षलग्न में पापग्रहों से युक्त नवें स्थान में बैठा हो तो वह वैरी के साथ लड़ाई के प्रसंग से गमन करता है। इसी प्रकार चन्द्रमा अथवा बृहस्पति जन्मकाल में अधिकारी होकर जन्मकालीन शनैश्चर की राशि में बैठा हो तथा वर्षलग्न में पापग्रहों से युक्त होकर नवें स्थान में बैठा हो तो शत्रु के कलह से बड़ाभारी गमन होता है और यदि वर्षकाल में शनैश्चर पंच अधिकारियों से रहित होकर नवें घर में बैठा हो तो अशुभ मार्ग कहना चाहिए ॥ ७ । ८ ॥

दूरयात्रा के योग ।

इत्थं गुरौ दूरयात्रा नृपसङ्गस्ततो गुणः ।
कुजेऽब्दपे नष्टबले स्वजनाद्दूरतो गतिः ॥ ९ ॥

इसी प्रकार वर्षकाल में बृहस्पति पाँचों अधिकारों से रहित होकर नवें घर में बैठा हो तो दूर गमन होता है और वहीं किसी राजा महाराजा की मुलाकात से द्रव्य की प्राप्ति होती है। यह एक योग हुआ। अन्य योग। वर्षका स्वामी मंगल पंचवर्गी के उत्तम बल से हीन होकर वर्षलग्न से नवें घर में स्थित हो तो अपने कुटुम्बवर्ग से दूर गमन होता है ॥ ९ ॥

प्रबल विदेशयात्रा योग ।

द्यूनेन्थिहा धर्मइन्दौ सबलेऽध्वा विदेशजः ।
वर्षेशो बलवान् पापायुतः केन्द्रेऽधिकारवान् ॥ १० ॥
अधिकारे गतिं संख्ये सेनापत्येऽपि वा वदेत् ।

जिस प्राणी के सातवें स्थान में मुन्था और नवें स्थान में बल समेत चन्द्रमा बैठा हो तो विदेश जाने के लिए मार्ग गमन होता है। केन्द्रगत वर्षेश से विशेष फल। जिस प्राणी के वर्षकाल में वर्ष का स्वामी बलिष्ठ तथा पाप ग्रहों के योग से रहित हो और अधिकारी होकर केन्द्र १ । ४ । ७ । १० में बैठा हो तो उस प्राणी का किसी अधिकार में गमन होता है अथवा रणभूमि वा सेना के स्वामित्व में गमन होता है ॥ १० ॥

अन्य योग ।

एवं बुधे कुजे जीवयुतेर्कान्निर्गते पुनः ॥ ११ ॥
परसैन्योपरि गतिर्जयः ख्यातिसुखावहः ।

इसी प्रकार बलयुत बुध और मंगल उदित हों और बृहस्पति से युक्त होकर केन्द्र में बैठे हों तो परसेना के ऊपर गमन (धावा) होता है । उसी से वह प्राणी जय, ख्याति और सुख को प्राप्त होता है ॥ ११ ॥

विशेष योग ।

जीवान्नवगे भौमे शुभायात्रा नृणां भवेत् ॥ १२ ॥

जिनके वर्षकाल में जिस राशि में बृहस्पति बैठा हो उस राशि से नवम स्थान में मंगल स्थित हो तो उन प्राणियों की शुभयात्रा होती है ॥ १२ ॥

दो० । नीलकण्ठ शुभग्रन्थ में, धर्मभाव बलवान ।
भाषा करि पूरण भयो, लखिहैं ताहि सुजान ॥ १ ॥

इति नवमभावविचारः ।

दशमभावविचारः ।

सबलेऽब्दपतौ खस्थे राज्यार्थसुखकीर्तयः ।
स्थानान्तराप्तिरन्यस्मिन्केन्द्रे गृहसुखाप्तयः ॥ १ ॥

दो० नीलकण्ठकृत ताजके, दशवाँ भाव महान ।
भाषा करि वर्णन करौं, लखैं ताहि धीमान ॥ १ ॥

बलयुक्त वर्ष का स्वामी दशवें स्थान में स्थित हो तो राज्य, धन, सुख और कीर्ति को देता है । यह एक योग हुआ । अन्ययोग । जो बलिष्ठ वर्षेश दशम घर को छोड़कर अन्य केन्द्र १ । ४ । ७ इनमें से किसी में स्थित हो तो वह दूसरे घर की प्राप्ति, गृह, सुख तथा अन्य वस्तुओं के लाभ को देता है ॥ १ ॥

स्थानविशेष से वर्षस्वामी सूर्य का विशेष फल ।

इत्थं बली रविर्भूस्थः पूर्वार्जितपदाप्तिकृत् ।
एकादशेऽस्मिन्सख्यं स्यान्नृपामात्यगणोत्तमैः ॥ २ ॥

इसी प्रकार जो वलिष्ठ सूर्य वर्षेश होकर वर्षलग्न से चौथे स्थान में बैठा हो तो वह पूर्व कमाये हुए पद की प्राप्ति का करनेवाला होता है और जो ऐसा पूर्वोक्त सूर्य वर्षलग्न से ग्यारहवें स्थान में विराजता हो तो वह राजा और उत्तम मंत्रीगणों से मित्रता कराता है ॥ २ ॥

राज्यप्राप्ति योग तथा राजाद्वारा बंधन योग ।

रविस्थानेन्थिहालग्ने खे वा राज्याप्तिसौख्यदा ।
नीचेऽर्कः पापसंयुक्तो भूपाद्बन्धवधं दिशेत् ॥ ३ ॥

जिसके जन्म समय जिस राशि में सूर्य बैठा हो वही राशि वर्ष का लग्न हो और उसी राशि में मुन्था बैठी हो अथवा वह राशि दशम लग्न हो और उसी में जो मुन्था स्थित हो तो वह उस प्राणी के लिए राज्य और सुख को देती है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । सूर्य नीचराशि (तुला) में प्राप्त और पापग्रहों से युक्त हो वर्षलग्न से दशवें घर में बैठा हो तो उस प्राणी का राजा से बंधन तथा वध (मारडालना) कहना अर्थात् ऐसे योग में वह प्राणी राजा के हुक्म से बाँधकर मारा जाता है ॥ ३ ॥

अन्य स्थानप्राप्ति योग ।

सिंहे रविर्बली खस्थः स्थानलाभो नृपाश्रयः ।
स्थानान्तराधिकाराप्तिरिन्दुरारपदे बली ॥ ४ ॥

जिसके (जन्म समय) सिंह राशि में सूर्य बैठा हो और वर्षकाल में भी सिंहराशि का होकर बली होता हुआ वर्षलग्न से दशवें घर में बैठा हो तो उस प्राणी के लिए स्थान का लाभ और राजा का आश्रय होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । जिसके जन्मसमय जिस राशि में मंगल बैठा हो यदि वर्षसमय उसी राशि में बल से युक्त होकर चन्द्रमा बैठा हो तो उस प्राणी को दूसरे स्थान में अधिकार की प्राप्ति होती है ॥ ४ ॥

अन्य राज्यप्राप्ति के योग ।

खेशलग्नेशवर्षेशेत्थशालो राज्यदायकः ।
वर्षेशे राज्यसहमेऽर्केत्थशाले महानृपः ॥ ५ ॥

जिसके वर्षलग्न में दशवें घर का स्वामी, वर्षलग्न का स्वामी और वर्षेश इन तीनों का जो परस्पर मुथशिल योग हो तो वह उस प्राणी के

लिए राज्य का देनेवाला होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग। जिसके वर्षलग्न में वर्ष का स्वामी राज्यसहम में बैठा हुआ सूर्य के साथ मुथशिल योग करे तो वह प्राणी महान् राजा होता है ॥ ५ ॥

अन्य द्रव्यनाश योग ।

शनिस्थाने कुजः पश्यन्मुथहां पापकर्मतः ।
नृपभीतिं वित्तनाशं दद्याद्दशमगो यदि ॥ ६ ॥

जिस प्राणी के जन्मसमय जिस राशि में शनैश्चर बैठा हो यदि वर्ष-लग्न में वही राशि दशयें घर में स्थित हो और उसमें बैठा हुआ मंगल मुन्था को देखता हो तो उस प्राणी के लिए पापकर्म से नृपभय और द्रव्य-नाश को देता है ॥ ६ ॥

पापवृद्धि और पुण्यवृद्धि योग ।

ईदृशे त्रिनवस्थेऽस्मिन्दग्धे नष्टेऽघसंचयः ।
मन्दोऽब्दपोऽधिकारी त्रिधर्मगो धर्मवृद्धिदः ॥ ७ ॥

जिसके जन्मसमय जिस राशि में शनैश्चर बैठा हो यदि वर्षसमय उसी राशि को प्राप्त होकर मंगल अस्तंगत व नष्टबल होता हुआ वर्षलग्न से तीसरे वा नवें स्थान में बैठा हो तो उस प्राणी के लिए पापका संचय (पापवृद्धि) होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । जो शनैश्चर वर्ष का स्वामी और अपने उच्चआदि अधिकारों में होकर वर्षलग्न से तीसरे या नवें स्थान में स्थित हो तो वह धर्म की वृद्धि का देनेवाला होता है ॥७॥

दुष्टयोग और शुभ योग ।

तस्मिन्दग्धे विनष्टे च पापकृद्धर्मनिन्दकः ।
ईदृशीदृक् फलं सूर्ये गुरावित्थं नयार्थभाक् ॥ ८ ॥

जिस प्राणी के वर्षकाल में वह शनैश्चर वर्ष का स्वामी होकर अधिकारी या दग्ध (अस्तंगत) अथवा नष्टबल होता हुआ वर्षलग्न से तीसरे या नवें स्थान में बैठा हो तो वह मनुष्य पापकर्म करनेवाला और धर्मनिन्दक होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । वर्षलग्न में सूर्य वर्ष का स्वामी होकर अधिकारी या अस्तंगत अथवा हीनबल होता हुआ वर्षलग्न से तीसरे अथवा नवें स्थान में बैठा हो तो भी उस प्राणी के

लिए पूर्वोक्त फल होता है। शुभयोग। जिसके वर्ष समय बृहस्पति इसी प्रकार वर्ष का स्वामी होकर अधिकारी या दग्ध अथवा हीनबल होता हुआ वर्षलग्न से तीसरे या नवें घर में स्थित हो तो वह पुरुष नीतिमार्ग से द्रव्य प्राप्त करता है॥ ८॥

मुन्थासम्बन्धी शुभाशुभ फल।

तत्रस्था मुथहा पुण्यागमं पापं खलाश्रयात्।
सूतौ खेशे रवौ खस्थे वर्षे मुथशिलं यदि॥ ९॥
लग्नाधिपेन राज्याप्तिरुक्ता वीर्यानुमानतः।

वर्षकाल में वर्षलग्न से तीसरे अथवा नवें घर में मुन्था स्थित हो तो वह पुण्य का लाभ करता है और जो उस मुन्था को पापग्रह देखते हों अथवा पापग्रहों से युक्त हो तो वह पाप का लाभ करता है। राज्यप्राप्ति योग। जिस प्राणी के जन्म समय में दशमभाव का स्वामी सूर्य हो और वर्षकाल में वर्षलग्न से दशवें स्थान में स्थित होकर वर्षलग्न के स्वामी के साथ मुथशिल योग करे तो उस प्राणी के लिए वीर्य के अनुमान (सूर्य के विश्वात्मक बलके प्रमाण) से राज्य की प्राप्ति आचार्यों ने कही है॥ ९॥

धर्म और राज्यनाश योग।

धर्मकर्माधिपौ दग्धौ धर्मराज्यक्षयावहौ॥ १०॥

जिसके वर्षकाल में नवें भाव का स्वामी और दशवें भाव का स्वामी ये दोनों दग्ध हों तो उस प्राणी के धर्म या राज्य को नष्ट करते हैं अर्थात् जो नवमभाव का स्वामी दग्ध (अस्तंगत) हो तो धर्म का नाश और जो दशमभाव का स्वामी दग्ध (अस्तंगत) हो तो राज्य का नाश होता है॥ १०॥

दो०। नीलकण्ठ शुभग्रन्थ में दशवाँ भाव महान।
भाषाकरि पूरण भयो लखिहैं ताहि सुजान॥ १॥

इति दशमभावविचारः।

लाभयोगविचारः ।

लाभ योग ।

अब्दपेज्ञेऽर्थगे लाभो वाणिज्याच्छुभदृग्युते ।
सेन्थिहेऽस्मिन् लग्नगते लाभः पठनलेखनात् ॥ १ ॥

दो० । नीलकण्ठकृत ताजके, लाभभाव सुविचार ।
भाषाकरि वर्णन करौं, शक्तिभक्ति उरधार ॥ १ ॥

जिसके वर्षलग्न में वर्ष का स्वामी बुध धन स्थान में बैठा हो और उसको शुभग्रह देखते हों अथवा शुभ ग्रहों से युक्त हो तो उस प्राणी को वाणिज्य से लाभ होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । यदि वही वर्षका स्वामी बुध शुभग्रहों से दृष्ट वा युक्त होकर मुन्था के साथ वर्षलग्न में बैठा हो तो उस प्राणी को पढ़ने लिखने के कार्य से लाभ होता है ॥ १ ॥

शुभफल ।

अस्मिन्षष्ठाष्टान्त्यगते सक्रूरे नीचकर्मकृत् ।
क्रूरेक्षणे न वा लाभोऽस्तंगते लिखनादितः ॥ २ ॥

यदि वर्षेश बुध वर्षलग्न से छठे, आठवें और बारहवें इनमें से किसी स्थान में पापग्रह के साथ में बैठा हो तो वह पुरुष नीचकर्म करनेवाला होता है अथवा वही वर्षेश बुध छठे, आठवें या बारहवें स्थान में बैठा हुआ पापग्रहों से देखा जाता हो अथवा अस्त हो तो उस प्राणी को लिखने पढ़ने आदि से लाभ नहीं होता है ॥ २ ॥

शुभाशुभ योग ।

जीवेऽब्दपे क्रूरहते लग्ने हानिर्भयं नृपात् ।
अस्मिन्नधिकृते द्यूने व्यवहाराद्धनाप्तयः ॥ ३ ॥

जिसके वर्ष काल में वर्ष का स्वामी बृहस्पति पापग्रहों से पीड़ित होकर वर्षलग्न में बैठा हो तो उस प्राणी के द्रव्य की हानि और राजा से भय होता है । यह एक योग हुआ । अन्य योग । यदि बृहस्पति अपने उच्च आदि अधिकारों को प्राप्त होकर वर्षलग्न से सातवें घर में स्थित हो तो उस प्राणी को वाणिज्य से धन का लाभ होता है ॥ ३ ॥

प्राप्ति योग ।

लग्नायेशेत्थशाले स्याल्लाभः स्वजनगौरवम् ।
सर्वेपि लाभे वित्ताप्त्यै सबला निर्बला न तु ॥ ४ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्नेश और लाभेश इन दोनों का परस्पर मुथशिल योग हो तो उसको लाभ और अपने जनों में गौरव होता है। यह एक योग हुआ। अन्य योग। यदि सम्पूर्ण ग्रह बली होकर ग्यारहवें घर में स्थित हों तो वे उसके द्रव्य की प्राप्ति के लिए होते हैं और यदि सम्पूर्ण ग्रह निर्बल होकर लाभ घर में स्थित हों तो वे द्रव्य की प्राप्ति के लिए नहीं होते हैं ॥ ४ ॥

गड़े हुए द्रव्य की प्राप्ति का योग ।

सवीर्यो ज्ञः समुथहो लग्नेऽर्थसहमे शुभाः ।
तदा निखातद्रव्यस्य लाभः पापदृशा न तु ॥ ५ ॥

जिसके वर्षकाल में बलिष्ठ बुध मुन्था के साथ वर्षलग्न में बैठा हो और शुभग्रह द्रव्यसहम में बैठे हों तो उस प्राणी को गड़े हुए द्रव्य का लाभ होता है। और जो उक्त योगपर पापग्रहों की दृष्टि हो तो गड़े हुए द्रव्य का लाभ नहीं होता है ॥ ५ ॥

दो० । नीलकण्ठ शुभ ग्रन्थ में, लाभभाव बलवान ।
भाषा करि पूरण भयो लखैं ताहि धीमान ॥ १ ॥

इति लाभभावविचारः ।

व्ययभावविचारः ।

व्यय (खर्च) का विचार ।

लग्नाब्दपौ हतबलौ व्ययषण्मृतिस्थौ
यद्राशिगौ तदनुसारि फलं विचिन्त्यम् ।
षष्ठेऽब्दपे भृगुसुतेऽथ विनष्टवीर्ये
दृष्टे खलैः क्षुतदृशा द्विपदर्क्षसंस्थे ॥ १ ॥

भृत्यक्षतिस्तुरगहा चतुरङ्घ्रिभस्थे-
ऽन्यस्मिन्नपीदमुदितं फलमब्दनाथे ।

दो० । नीलकण्ठि शुभग्रन्थ में खर्चभाव शुचकारि ।
भाषाकरि वर्णन करों होय सूरिमुदकारि ॥ १ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्षलग्न का स्वामी और वर्षेश ये दोनों निर्बल होकर बारहवें, छठे या आठवें स्थान में जिस राशि में बैठे हों तो उसी राशि के अनुसार फल कहना चाहिए । जैसे कि वर्षस्वामी छठेभाव में चतुष्पद-संज्ञक राशि में बैठा हो तो चौपायों का नाश कहना चाहिए । ऐसेही आठवें या बारहवें भावमें स्थित हुए ग्रहों का फल जानना चाहिए ।

षष्ठस्थान स्थित शुक्र का विशेष फल । शुक्र वर्ष का स्वामी बल से रहित तथा पापग्रहों करके क्षुतदृष्टि (चौथी, दशवीं, पहली और सातवीं) से देखा हुआ छठे भाव में पहुँच कर द्विपदसञ्ज्ञक राशि में बैठा हो तो सेवकों का नाश होता है और जो उक्त शुक्र चतुष्पदसञ्ज्ञक राशि में बैठा हो तो वह घोड़ों की या अन्य चौपायों की हानि करनेवाला होता है । ऐसेही अन्य वर्षस्वामी छठे, आठवें या बारहवें भाव में पहुँचकर उन द्विपदादिसञ्ज्ञक राशियों में बैठे हों तो भी यह पूर्वोक्त फल कहना चाहिए ॥ १ ॥

वर्षेश भौम का स्थानविशेष में फल ।

खस्थे कुजे शशियुते तुरगादिनाशः ।
स्याद्व्याकुलत्वमशुभोपहते व्यये वा ॥ २ ॥

जिसके वर्षकाल में मंगल वर्ष का स्वामी होकर चन्द्रमा के साथ दशवें स्थान में बैठा हो तो उसके घोड़े आदिकों का नाश और मन में व्याकुलता होती है अथवा वह चन्द्रयुक्त वर्षेश मंगल पापग्रहों से पीड़ित होकर बारहवें घरमें बैठा हो तो पूर्वोक्त फल कहना चाहिए । यहाँ पर (शशियुते) ऐसे पाठ को ग्रन्थकार ने अपनी बुद्धि से आदर किया है वास्तव में (खस्थे कुजे शनियुते) ऐसा पाठ पूर्वग्रंथों के अनुरोध से होना युक्त है ॥ २ ॥

१—समरसिंहने कहा है कि, जैसे (शनियुजि कुजे गगनगे चेतोव्याकुल्यं तुरंगनाशश्च) शनैश्चर से युक्त वर्षेश मंगल दशवें घर में बैठा हो तो चित्तकी व्याकुलता और तुरङ्ग (घोड़े) का नाश होता है । ऐसा ही ताजिकालंकार में

अशुभस्थान में स्थित वर्षेश सूर्य-शनि का फल।

पष्ठे रवौ खलहते चतुरङ्घ्रिभस्थे
भृत्यैः समं कलिरथाष्टमरिष्फगेऽपि।
मन्देऽब्दपे बलयुते रिपुरिष्फसंस्थे
भूवासनद्रुमजलाशयनिर्मितिश्च ॥ ३ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्षेश सूर्य पापग्रहों से युक्त चतुष्पद राशि में स्थित होकर वर्षलग्न से छठे, आठवें अथवा बारहवें स्थान में बैठा हो तो उस प्राणी की सेवकों के साथ लड़ाई होती है। और जो शनैश्चर वर्ष का स्वामी हो तो बल से युक्त होकर वर्षलग्न से छठे या बारहवें घर में स्थित हो तो वह प्राणी उजाड़ भूमि में ग्राम बसाकर वहीं बगीचा, कुआँ या तालाबों का निर्माण कराता है ॥ ३ ॥

स्थानान्तर्गत ग्रहों का फल।

स्वर्क्षोच्चगे कर्मणि सूर्यपुत्रे
नैरुज्यमर्थाधिगमश्च जीवे।
सूर्ये नृपाद्बाहुबलात्कुजेऽर्थो
बुधे भिषग्ज्योतिषकाव्यशिल्पैः ॥ ४ ॥

जिसके वर्षकाल में शनैश्चर वर्ष का स्वामी होकर अपनी राशि (मकर, कुम्भ) और अपने उच्च (तुलाराशि) में स्थित वर्षलग्न से दशवें घरमें बैठा हो तो वह शरीर से आरोग्य रहता है और उसे धन की प्राप्ति होती है। ऐसेही बृहस्पति वर्ष का स्वामी होकर अपनी राशि (धन, मीन) और अपने उच्च (कर्क) में स्थित वर्षलग्न से दशम घर में बैठा हो तो उस प्राणी के लिए आरोग्य और धन मिलता है। इसी प्रकार वर्षेश सूर्य अपनी राशि (सिंह) और अपने उच्च (मेष) में स्थित होकर वर्षलग्न से दशम घर में बैठा हो तो उस प्राणी के लिए राजा से धन प्राप्त होता है। ऐसेही मंगल वर्ष का पति होकर अपनी

भी कहा है कि (भौमे मन्दयुते स्थिते च दशमे स्यादाकुलत्वं मनस्यश्वानां क्षतिः) वर्ष का स्वामी मङ्गल शनैश्चर से युक्त होकर दशवें घर में बैठा हो तो मनमें व्याकुलता और घोड़ों का क्षय होता है।

राशि (मेष, वृश्चिक) और अपने उच्च (मकर) में स्थित होकर वर्षलग्न से दशम भाव में बैठा हो तो उस प्राणी के लिए अपने भुज-बल से धन मिलता है। और ऐसाही बुध वर्ष का मालिक होकर अपनी राशि (मिथुन, कन्या) और अपने उच्च (कन्या) में स्थित वर्षलग्न से दशवें स्थान में बैठा हो तो उस प्राणी के लिए वैद्यकी, ज्योतिष, कविता और शिल्प (कारीगरी) से रुपया मिलता है ॥ ४ ॥

निर्बल शनि आदि का फल।

मन्देऽब्दपे गतबले नैराश्यं दौस्थ्यमादिशेत्।
सूर्येऽब्देशे शशिस्थाने मन्देऽब्दजनुषोर्हते ॥ ५ ॥
सर्वकर्मसु वैकल्यं वक्रेऽस्ते च तथा पुनः।
कर्मकर्मेशसहमनाथाः शनियुतेक्षिताः ॥ ६ ॥

जिसके वर्षकाल में शनैश्चर वर्ष का स्वामी बल से रहित होकर वर्ष-लग्न से दशवें घर में स्थित हो तो वह प्राणी आशारहित होकर चञ्चल चित्त होता है।

जिसके वर्षेश सूर्य हो और शनैश्चर जन्म और वर्षसमय में जिस राशि में चन्द्रमा बैठा हो उसी राशि में बल से रहित होकर स्थित हो तो वह प्राणी सब कार्यों में असमर्थ होता है। इसी प्रकार फिर शनैश्चर वक्री या अस्त हो तो भी उक्त फल कहना चाहिए। जिसके वर्षकाल में दशमघर राज्येश और कर्मसहम का पति ये तीनों शनैश्चर से युक्त अथवा देखे जाते हों तो सब कर्मों में भूल (गल्ती) होजाती है ॥ ५ । ६ ॥

अशुभ स्थानस्थ वर्षेश का फल।

षडष्टव्ययगेऽब्देशे कर्मेशे च बलोज्झिते।
सूतावब्दे च न शुभं तत्राब्दे मृतिपे तथा ॥ ७ ॥

जिसके वर्षकाल में वर्षेश छठे, आठवें या बारहवें स्थान में बैठा हो तथा दशमभाव का स्वामी जन्म और वर्षकाल में निर्बल होकर छठे, आठवें या बारहवें स्थान में बैठा हो तो उस प्राणी का कल्याण नहीं होता है! और जो उस वर्ष में अष्टमभाव का स्वामी छठे, आठवें या बारहवें घर में विद्यमान हो तो भी कुशल नहीं होती है। यह बारहवें भाव का विचार पूरा हुआ ॥ ७ ॥

वर्ष का सामान्य शुभाशुभ फल ।

यत्र भावे शुभफलो दुष्टो वा जन्मनि ग्रहः ।
वर्षे तद्भावगस्तादृक् तत्फलं यच्छति ध्रुवम् ॥ ८ ॥

जन्मसमय जिस भावमें शुभ या अशुभ फल का देनेवाला जो कोई ग्रह बैठा हो यदि वही ग्रह वर्षकाल में भी उसी के बराबर होकर उसी भाव में बैठा हो तो उस भाव के शुभ अथवा अशुभ फल को निश्चय देता है ॥ ८ ॥

वर्ष में ग्रहों के फल देने का समय ।

ये जन्मनि स्युः सबला विवीर्या वर्षे शुभं प्राक्चरमे त्वनिष्टम् ।
दद्युर्विलोमं विपरीततायां तुल्यं फलं स्यादुभयत्र साम्ये ॥ ९ ॥

जो ग्रह जन्म समय बलिष्ठ हों और वर्षकाल में निर्बल हों तो वे वर्ष के पूर्वार्ध में शुभ और उत्तरार्ध में अशुभ देते हैं । जो जन्मकाल में निर्बल हों और वर्षकाल में सबल हों तो वे वर्ष के पूर्वार्ध में अनिष्ट और उत्तरार्ध में शुभ देते हैं । और जो जन्मकाल और वर्षकाल में बराबर पराक्रमी हों तो तुल्य फल होता है । तात्पर्य यह है कि जो ग्रह जन्मसमय और वर्ष-काल में भी बलयुक्त हों तो वे सम्पूर्ण वर्षभर शुभ फल देते हैं और जो ग्रह जन्मसमय में और वर्षसमय में भी निर्बल हों वे सम्पूर्ण वर्षभर दुःख को ही देते हैं । यह सब ग्रहों से पैदा हुआ फल उन ग्रहों की दशा या अन्तर्दशा में होता है ॥ ९ ॥

श्रीगर्गान्वयभूषणो गणितविच्चिन्तामणिस्तत्सुतो-
ऽनन्तोऽनन्तमतिर्व्यधात्खलमतध्वस्त्यै जनुःपद्धतिम् ।
तत्सूनुः खलु नीलकण्ठविबुधो विद्वच्छिवानुज्ञया
सत्तुष्ट्यै व्यदधाद्विवेचनमिदं भावेषु सत्ताजिकात् ॥ १० ॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां तन्वादिद्वादशभावविचारो नाम
पञ्चमं प्रकरणम् ॥ ५ ॥

श्रीयुत गर्गवंश में भूषण (अलंकार)रूप ज्योतिःशास्त्र का ज्ञाता कोई चिंतामणि नामक हुआ था । उसी के पुत्र अनन्त बुद्धिवाले अनन्तजी

ने दुष्टों का मत नाश करने के लिए जन्मपद्धति को रचा था। उसके पुत्र बड़े विद्वान् नीलकण्ठजी ने शिवजी की अनुज्ञा से सज्जनों की प्रसन्नता के लिए उत्तम ताजिकग्रंथों के अभिप्रायों को लेकर इस भावफलाध्याय को रचा है॥ १० ॥

इति श्रीशक्तिधरविरचितायां नीलकण्ठीभाषाव्याख्यायां तन्वादिद्वादशभावविचारोनाम पञ्चमं प्रकरणम् ॥ ५ ॥

दशाफलविचारे षष्ठं प्रकरणम्।

पूर्णबल लग्न की दशा का फल ।

हेममुक्ताफलद्रव्यलाभमारोग्यमुत्तमम् ।
कुरुते स्वामिसन्मानं दशा लग्नस्य शोभना ॥ १ ॥

सो० । दशाफलनविस्तार, छठवें प्रकरण महँ कहब ।
ज्योतिषश्रमनिस्तार होय जहाँ ज्योतिर्विदन ॥ १ ॥

पूर्णबल लग्न की दशा सोना, मोती, धन का लाभ, उत्तम आरोग्य और स्वामी का उत्तम सन्मान इन सबों को करती है ॥ १ ॥

मध्यमबल लग्न की दशा का फल ।

लाभं दिष्टेन वित्तस्य मानहीनस्य सेवनम् ।
मनसो विकृतिं कुर्याद्दशालग्नस्य मध्यमा ॥ २ ॥

जो लग्न की मध्यम दशा हो तो वह पुरुषों के लिए भाग्य से धन का लाभ और मान से हीन मनुष्य की सेवा और मनके विकार को करती है ॥ २ ॥

अधमबल लग्न की दशा का फल ।

विदेशगमनं क्लेशं बुद्धिनाशं कदव्ययम् ।
मानहानिं करोत्येव कष्टा लग्नदशाफलम् ॥ ३ ॥

लग्न की अधमदशा विदेशगमन, क्लेश, मति का नाश, निन्दित खर्च और मान की हानि करती है ॥ ३ ॥

१—जहाँ 'मानाहीनस्य' पाठ है वहाँ मानयुक्त पुरुष की सेवा कहना चाहिए।

क्रूरलग्न की दशा का फल।

क्रूरलग्नदशा मध्या सौख्यं स्वल्पं धनव्ययम् ।
अङ्गपीडां त्वपुष्टिं च कुरुते मृत्युविग्रहम् ॥ ४ ॥

क्रूर लग्न की मध्यमदशा थोड़ा सौख्य, धन का खर्च, शरीर में पीड़ा, दुर्बलता, मौत और लड़ाई को करती है ॥ ४ ॥

पूर्णबल सूर्य की दशा का फल।

दशा रवेः पूर्णबलस्य लाभं गजाश्वहेमाम्बररत्नपूर्णम् ।
मानोदयं भूमिपतेर्ददाति यशश्च देवद्विजपूजनादेः ॥ ५ ॥

पूर्णबल से युक्त सूर्य की दशा हाथी, घोड़े, सोना, वस्त्र और रत्नों से पूर्ण लाभ करती है और राजा से मान की प्राप्ति और देवता तथा ब्राह्मणों के पूजन आदि से यश को देती है ॥ ५ ॥

मध्यमबली सूर्य की दशा का फल।

दशा रवेर्मध्यबलस्य पूर्वमिदं फलं मध्यममेव दत्ते ।
ग्रामाधिकारव्यवसायधैर्यैः कुलानुमानाच्च सुखादिलाभः ६ ॥

मध्यम बल सूर्य की दशा पूर्व कहे हुए फल को मध्यम ही देती है और ग्राम के अधिकार में व्यवसाय (निश्चयरूप व्यापार) और धीरज करके कुलके अनुसार सुख आदि का लाभ होता है ॥ ६ ॥

अल्पबली सूर्य की दशा का फल।

दशा रवेरल्पबलस्य पुंसां ददाति दुःखं स्वजनैर्विवादात् ।
मतिभ्रमं पित्तरुजं स्वतेजोविनाशनं धर्षणमप्यरिभ्यः ॥ ७ ॥

अल्पबली सूर्य की दशा पुरुषों के लिए अपने जनों के साथ लड़ाई झगड़ा होने से दुःख, बुद्धिभ्रम, पित्त से रोग, अपने तेज का विनाश और शत्रुओं से धर्षण (दबाना) आदि कष्ट देती है ॥ ७ ॥

नष्टबली सूर्य की दशा का फल।

दशा रवेर्नष्टबलस्य पुंसां नृपाद्रिपोर्वा भयमर्थनाशम् ।
स्त्रीपुत्रमित्रादिजनैर्विवादं करोति बुद्धिभ्रममामयं च ॥ ८ ॥

नष्टबल से युक्त सूर्य की दशा मनुष्यों को राजभय अथवा शत्रुभय,

धन का नाश, स्त्री, पुत्र और मित्र आदि से लड़ाई, बुद्धिभ्रम और रोग को करती है ॥ ८ ॥

स्थान विशेष में स्थित सूर्य की दशा का फल ।

लग्नाद्रविः षट्त्रिदशायसंस्थो निन्द्योऽपि दत्ते शुभमर्धमेव ।
मध्यत्वमूनः शुभतां च मध्यो यातीत्थमत्यन्तशुभः शुभः स्यात्

नष्टबली सूर्य वर्षलग्न से तीसरे, छठे, दशवें और ग्यारहवें घर में स्थित हो तो अपनी दशा में आधा शुभ फल देता है । इसी प्रकार हीनबली सूर्य छठे, तीसरे, दशवें और ग्यारहवें स्थान में बैठा हो तो मध्यमफल का दाता होता है और यदि मध्यम बली सूर्य उपचय ६ । ३ । १० । ११ स्थान में प्राप्त हो तो वह शुभ फल देता है । ऐसेही पूर्णबली सूर्य उक्त स्थानों में बैठा हो तो अत्यन्त शुभ फल देता है । इन स्थानों से रहित होकर सूर्य अन्य स्थान में हो तो यथोक्त (जैसा पहले कहा गया है) फल का देनेवाला होता है । इसी प्रकार सब कहीं कहना चाहिए ॥ ९ ॥

पूर्णबली चन्द्र की दशा का फल ।

इन्दोर्दशा पूर्णबलस्य दत्ते
शुक्लाम्बरस्रग्मणिमौक्तिकाद्यम् ।
स्त्रीसङ्गमं राज्यसुखं च भूमि-
लाभं यशःकान्तिबलाभिवृद्धिम् ॥ १० ॥

पूर्णबली चन्द्रमा की दशा पुरुषों के लिए सफ़ेद वस्त्र, माला, मणि, मोती आदि देती है । स्त्रीसंगम, राज्यसुख, भूमिलाभ, यश, कान्ति और बल की वृद्धि देती है ॥ १० ॥

मध्यमबली चन्द्र की दशा का फल ।

इन्दोर्दशा मध्यबलस्य सर्वमिदं फलं मध्यममेव दत्ते ।
वाणिज्यमित्राम्बरगेहसौख्यं धर्मे मतिं कर्षणतोऽन्नलाभम् ११

मध्यमबली चन्द्रमा की दशा पुरुषों के लिए पूर्वोक्त सम्पूर्ण फल को मध्यम ही देती है । और वाणिज्य, मित्र, वस्त्र, घर का सुख, धर्म में बुद्धि और खेती से अन्न का लाभ देती है ॥ ११ ॥

स्वल्पबली चन्द्र की दशा का फल।

इन्दोर्दशा स्वल्पबलस्य दत्ते कफामयं कान्तिविनाशमाहुः।
मित्रादिवैरं जननं कुमार्या धर्मार्थनाशं सुखमल्पमत्र ॥ १२ ॥

अल्पबली चन्द्रमा की दशा पुरुषों के लिए कफ का रोग, कांति का विनाश, मित्रादिकों से वैर, कन्या की उत्पत्ति होना और धर्म तथा अर्थ का नाश इन सबों को देती है और इस दशा में बहुत थोड़ा सुख होता है। ऐसा फल आचार्यों ने कहा है ॥ १२ ॥

नष्टबली चन्द्र की दशा का फल।

इन्दोर्दशा नष्टबलस्य लोकापवादभीतिं धनधर्मनाशम्।
शीतामयं स्त्रीसुतमित्रवैरं दौस्थ्यं च दत्ते विरसाऽन्नभुक्तिम् १३॥

जो नष्टबली चन्द्रमा की दशा हो तो वह पुरुषों के लिए लोकापवाद से भय, धन तथा धर्म का नाश, शीत (जूड़ी) का रोग तथा स्त्री, पुत्र और मित्र से वैर, चित्त डावाँ डोल होना और बिना स्वादुवाले अन्न का भोजन इन सबों को देती है ॥ १३ ॥

छठी, आठवीं, और बारहवीं से भिन्न राशि में स्थित चन्द्र का फल।

षष्ठाष्टमान्त्येतरराशिसंस्थो
निन्द्योपि दत्तेऽर्धसुखं दशायाम्।
मध्यत्वमूनः शुभतां च मध्यो
यातीत्थमिन्दुः सुशुभः शुभः स्यात् ॥ १४ ॥

छठे, आठवें और बारहवें इनसे भिन्न राशि में बैठा हुआ निंद्य भी चन्द्रमा अपनी दशा में आधा सुख देता है और हीनबली चन्द्रमा मध्यम फल तथा मध्यमबली चन्द्रमा शुभ फल देता है और जो पूर्णबली चन्द्रमा हो तो वह शुभ ही फल का देनेवाला होता है ॥ १४ ॥

पूर्णबली भौम की दशा का फल।

दशापतिः पूर्णबलो महीजः सेनापतित्वं तनुते नराणाम्।
जयं रणे विद्रुमहेमरक्तवस्त्रादिलाभं प्रियसाहसत्वम् ॥ १५ ॥

जो दशा का स्वामी मंगल पूर्णबली हो तो वह मनुष्यों को सेनापति (फौजका मालिक) बनाता है तथा संग्राम में जय देता है और मूँगा, सोना, लालकपड़े आदिकों का लाभ तथा उत्तम साहस देता है ॥ १५ ॥

मध्यमबली भौम की दशा का फल ।

दशापतिर्मध्यबलो महीजः कुलानुमानेन धनं ददाति ।
राजाधिकारं त्वथ तत्परत्वं तेजस्विताकान्तिबलाभिवृद्धिम् १६

मध्यमबली मंगल दशा का स्वामी हो तो वह पुरुषों के लिए कुल के अनुमान से धन तथा राजा के घर से किसी अधिकार का लाभ अथवा उस अधिकार में प्रधानत्व और तेज, कान्ति और बलों की बढ़ती इन सबों को देता है ॥ १६ ॥

अल्पबली भौम की दशा का फल ।

दशापतिः स्वल्पबलो महीजो ददाति पित्तोष्णरुजं शरीरे ।
रिपोर्भयं बन्धनमास्यतोऽसृक् स्रवं च वैरं स्वजनैश्च शश्वत् ॥

स्वल्पबली मंगल दशा का स्वामी हो तो वह शरीर में पित्त अथवा तापसे रोग और शत्रुभय, बन्धन (क़ैद होना), मुँह से खून गिरना और निरन्तर अपने भाईबन्धुओं से वैर होना आदि फल देता है ॥ १७ ॥

नष्टबली भौम की दशा का फल ।

दशापतिर्नष्टबलो महीजो विवादमुग्रं जनयेद्रणं वा ।
चौराद्भयं रक्तरुजं ज्वरं च विपत्तिमन्यस्वहृतिं च खर्जूम् १८॥

नष्टबली मंगल दशा का स्वामी हो तो वह उग्र विवाद (झगड़ा) अथवा संग्राम (लड़ाई) कराता है तथा चौरभय, रक्तविकार, ज्वर और विपत्ति, विजातीय जन से धनहरण और खाज को पैदा करता है ॥ १८ ॥

तीसरे, छठे और ग्यारहवें स्थित भौम का फल ।

त्रिषडायगतो भौमो नष्टवीर्यः शुभार्द्धदः ।
मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः ॥ १९ ॥

जिस प्राणी के वर्ष समय में नष्टबली मंगल वर्षलग्न से तीसरे, छठे या ग्यारहवें घरमें बैठा हो तो वह अपनी दशा में आधा शुभ फल देता है

और जो हीनबली मंगल उक्त स्थानों में बैठा हो तो वह मध्यम फल और जो मध्यम बली मंगल उक्त स्थानों में बैठा हो तो वह शुभफल और जो पूर्णबली मंगल उक्त घरों में विद्यमान हो तो वह अत्यन्त शुभ फल देता है ॥ १६ ॥

पूर्णबली बुध की दशा का फल।

दशापतिः पूर्णबलो बुधश्चेद्यशोभिवृद्धिं गणितात्सुशिल्पात्।
तनोति सेवां सफलां नृपादेर्दौत्यं च वैदूष्यगुणोदयं च २० ॥

पूर्णबली बुध दशा का स्वामी हो तो वह गणित और सुन्दर शिल्प (कारीगरियों) से यश की बढ़ती तथा नृपादिकों की सफल सेवा और नृपादिकों का राजदूत होना और निन्दारहित गुणों के उदय को करता है ॥ २० ॥

मध्यमबली बुध की दशा का फल।

दशापतिर्मध्यबलो बुधश्चेद्गुरोः सुहृद्भ्यो लिपिकाव्यशिल्पैः।
धनाप्तिदायी सुतमित्रबन्धुसमागमान्मध्यममेव सौख्यम् २१॥

मध्यमबली बुध दशा का स्वामी हो तो वह गुरुजनों और मित्रजनों से तथा लिखने से, काव्य से और कारीगरियों से धन की प्राप्ति करता है और पुत्रों, मित्रों और बन्धुओं के सकाश से मध्यम ही सुख देता है ॥ २१ ॥

स्वल्पबली बुध की दशा का फल।

दशापतौ स्वल्पबले बुधे स्यान्मानस्य नाशः स्वजनापवादः।
अकार्यकोपस्खलनाद्यनिष्टं धनव्ययं रोगभयं च विन्द्यात् २२

जिसके वर्षसमय अल्पबली बुध दशा का स्वामी हो तो उस प्राणी के मान का नाश होता है और वह प्राणी अपने जनों से लड़ाई करता है। बिना मतलब कोप करके पदच्युत होना आदि अनिष्ट, धन का खर्च और रोग से भय पाता है ॥ २२ ॥

हीनबली बुध की दशा का फल।

दशापतौ हीनबले बुधे स्यात् स्वबुद्धिदोषो वधबन्धभीतिः।
दूरे गतिर्वातकफामयार्तिर्निखातद्रव्यस्य च नापि लाभः २३॥

जो दशा का स्वामी हीनबली बुध हो तो अपनी बुद्धि के दोष से मरण

वा बन्धन का भय होता है । और दूर गमन, वात या कफरोग से पीड़ा होती है तथा गाड़ा हुआ द्रव्य नहीं मिलता है ॥ २३ ॥

छठी, आठवीं और बारहवीं राशि से भिन्न राशि में स्थित बुध का फल ।

षडष्टान्त्येतरर्क्षस्थो नष्टो ज्ञोऽर्धशुभप्रदः ।
मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः ॥ २४ ॥

जिस प्राणी के वर्षसमय में वर्षलग्न से छठे, आठवें और बारहवें स्थान से अन्य किसी स्थान में जो नष्टबली बुध बैठा हो तो वह उस प्राणी के लिए अपनी दशा में आधा शुभ फल देता है । और जो हीन बली छठे आदि स्थान से भिन्न हो तो वह मध्यम फल देता है और जो मध्यमबली होकर भिन्न घरों में बैठा हो तो वह शुभ फल देता है । और जो पूर्णबली हो तो वह अपनी दशा में अत्यन्त शुभ फल देता है ॥ २४ ॥

पूर्णबली गुरु की दशा का फल ।

गुरोर्दशा पूर्णबलस्य दत्ते मानोदयं राजसुहृद्गुरुभ्यः ।
कीर्त्यर्थलाभोपचयं सुखानि राज्यं सुताप्तिं रिपुरोगनाशम् २५

पूर्णबली गुरु की दशा राजा, मित्र और गुरुजनों से मान का उदय और कीर्ति, धन लाभ की बढ़ती, सुख, राज्य और पुत्रप्राप्ति करती है तथा शत्रु और रोगों का नाश करती है ॥ २५ ॥

मध्यमबली गुरु की दशा का फल ।

गुरोर्दशा मध्यबलस्य धर्मे मतिं सखित्वं नृपमन्त्रिवर्गैः ।
तनोति मानार्थसुखादिलाभं सिद्धिं सदुत्साहबलातिरेकाम् २६

मध्यमबली बृहस्पति की दशा धर्म में मति, राजा और मन्त्रिजनों से मित्रता और मान, धन, सुख का लाभ तथा अच्छे उत्साह और बल के अतिरेकवाली सिद्धि अर्थात् विना प्रयास वाञ्छित कार्यों की सिद्धि को देती है ॥ २६

अल्पबली गुरु की दशा का फल ।

दशागुरोरल्पबलस्य दत्ते रोगं दरिद्रत्वमथारिभीतिम् ।
कर्णामयं धर्मधनप्रणाशं वैराग्यमर्थं च गुणं न किंचित् २७ ॥

अल्पबली बृहस्पति की दशा रोग, दरिद्र और शत्रुभय, कर्णरोग, धर्म तथा धन का नाश और वैराग्य को देती है। तथा धन व किञ्चित् गुण को नहीं देती है ॥ २७ ॥

नष्टबली गुरु की दशा का फल।

गुरोर्दशा नष्टबलस्य पुंसां ददाति दुःखानि रुजं कफार्तिम्।
कलत्रपुत्रस्वजनारिभीतिं धर्मार्थनाशं तनुपीडनञ्च ॥ २८ ॥

नष्टबली बृहस्पति की दशा पुरुषों के लिए दुःख, रोग और कफ की पीड़ा तथा भार्या, पुत्र अपने जनों और शत्रुजनों से भय, धर्म तथा धन का नाश और शरीर में पीड़ा को देती है ॥ २८ ॥

छठे, आठवें और बारहवें से भिन्नस्थान में स्थित गुरु का फल।

षडष्टरिष्फेतरगो गुरुर्निन्द्योऽर्द्धसत्फलः।
मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः ॥ २९ ॥

वर्षलग्न से छठे, आठवें और बारहवें इन स्थनों से अन्यस्थान में नष्टबली बृहस्पति बैठा हो तो वह अपनी दशा में आधा शुभफल देता है और जो हीनबली बृहस्पति बैठा हो तो वह अपनी दशा में मध्यम फल देता है और जो मध्यम बली बृहस्पति बैठा हो तो वह अपनी दशा में शुभफल देता है और जो पूर्णबली बृहस्पति हो तो वह अपनी दशा में अत्यन्त शुभफल देता है ॥ २९ ॥

पूर्णबली शुक्र की दशा का फल।

दशा भृगोः पूर्णबलस्य सौख्यं स्रग्गन्धहेमाम्बरकामिनीभ्यः।
हयादिलाभं सुतकीर्तितोषं नैरुज्यगान्धर्वरतिं पदाप्तिम् ॥ ३० ॥

पूर्णबली शुक्र की दशा हो तो वह माला, सुगन्ध (इतरचन्दनादि), सोना, वस्त्र और स्त्री से सुख देती है। घोड़े आदि की प्राप्ति, पुत्र तथा यश से सन्तुष्टता, नैरोग्य गानादिकों में रति और स्थान की प्राप्ति को देती है ॥ ३० ॥

मध्यबली शुक्र की दशा का फल।

दशा भृगोर्मध्यबलस्य दत्ते वाणिज्यतोऽर्थागमनं कृषेश्च।
मिष्ठान्नपानाम्बरभोगलाभं मित्रांश्च योषित्सुतसौख्यलाभम् ३१

वर्षसमय में मध्यमबली शुक्र की दशा वाणिज्य और खेती से द्रव्य की प्राप्ति, मीठे अन्न का भोजन, शर्बत आदि पेय पदार्थ, वस्त्र और भोगों का लाभ तथा मित्र, पुत्र और स्त्री से सुख का लाभ करती है ॥ ३१ ॥

अल्पबली शुक्र की दशा का फल ।

दशा भृगोरल्पबलस्य दत्ते मतिभ्रमं ज्ञानयशोऽर्थनाशम् ।
कदन्नभोज्यं व्यसनामयार्तिं स्त्रीपक्षवैरं कलिमप्यरिभ्यः ३२ ॥

वर्ष समय में अल्पबली भृगु की दशा मतिभ्रम, ज्ञान, यश तथा धन का नाश और कदन्न (सामा, काकुनि आदि) का भोजन, जुआ-चोरी आदि व्यसनों और रोग से पीड़ा, ससुरारवालों से वैर और शत्रुओं से लड़ाई कराती है ॥ ३२ ॥

नष्टबली शुक्र की दशा का फल ।

दशा भृगोर्नष्टबलस्य दत्ते विदेशयानं स्वजनैर्विरोधम् ।
पुत्रार्थभार्याविपदो रुजश्च मतिभ्रमोपि व्यसनं महच्च ॥ ३३ ॥

नष्टबली शुक्र की दशा विदेशगमन, अपने जनों से विरोध तथा पुत्र, धन और भार्या से दुःख और रोग, मतिभ्रम और व्यसन से उत्पन्न महा-दुःख को देती है ॥ ३३ ॥

छठे, आठवें और बारहवें से भिन्न स्थानगत शुक्र का फल ।

षडष्टरिस्फेतरगो भृगुर्निन्द्योऽर्धमत्फलः ।
मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः ॥ ३४ ॥

वर्षलग्न से छठे, आठवें और बारहवें स्थान से अन्य स्थानों में जो नष्टबली शुक्र बैठा हो तो वह अपनी दशा में आधा शुभ फल देता है और जो अल्प-बली शुक्र उक्त स्थानों में से अन्य स्थानों में बैठा हो तो वह मध्यम फल देता है और जो मध्यमबली शुक्र उक्त स्थानों से अन्य स्थानों में बैठा हो तो वह अपनी दशा में शुभ फल देता है। और जो पूर्णबली शुक्र उक्त घरों से अन्य घर में स्थित हो तो वह अपनी दशा में अत्यन्त शुभ फल करता है ॥ ३४ ॥

पूर्णबली शनैश्चर की दशा का फल ।

दशा शनेः पूर्णबलस्य दत्ते नवीनवेश्माम्बरभूमिसौख्यम् ।
आरामतोयाश्रयनिर्मितिश्च म्लेच्छातिसङ्गान्नृपतेर्धनाप्तिः ३५

पूर्णबली शनैश्चर की दशा नवीनघर, कपड़े और भूमि का सुख देती है और बागीचा, कुआँ या तालाब को बनवा देती है तथा किसी म्लेच्छ (मुसलमान) के द्वारा राजघर में पहुँचाकर राजा से धन की प्राप्ति कराती है ॥ ३५ ॥

मध्यमबली शनैश्चर की दशा का फल।

दशा शनेर्मध्यबलस्य दत्ते खरोष्ट्रमाषाण्डजतो धनाप्तिम्।
वृद्धाङ्गनासङ्गमदुर्गरक्षाऽधिकारचिन्तां विरसान्नभोगम् ॥३६॥

मध्यबली शनैश्चर की दशा गधा, ऊँट, उड़द और अण्डज (मुर्गी, कबूतर) आदिकों से धन की प्राप्ति, बूढ़ी स्त्री के साथ भोग, क़िले की रक्षा के अधिकार की चिन्ता तथा रसरहित अन्नों का भोजन इन सबों को देती है ॥ ३६ ॥

अल्पबली शनैश्चर की दशा का फल।

दशा शनेः स्वल्पबलस्य पुंसां तनोति दुःखं रिपुतस्करेभ्यः।
दारिद्र्यमात्मीयजनापवादं रोगं च शीतानिलकोपमुग्रम् ३७

अल्पबली शनैश्चर की दशा शत्रु और चोरों से दुःख देती है और वे पुरुष दरिद्री होकर अपने लोगों से लड़ाई करते हुए रोग, जूड़ी और वातविकार को प्राप्त होते हैं ॥ ३७ ॥

नष्टबली शनैश्चर की दशा का फल।

दशा शनेर्नष्टबलस्य पुंसामनेकधातुव्यसनानि दत्ते।
स्त्रीपुत्रमित्रस्वजनैर्विरोधं रोगाभिवृद्धिं मरणेन तुल्याम् ३८॥

नष्टबली शनैश्चर की दशा अनेक धातुओं (वात, पित्त, कफों) से दुःख देती है और वे नर भार्य्या, लड़के, मित्र और अपने कुटुंबीजनों से विरोध करते हुए मरणतुल्य रोग की वृद्धि को प्राप्त होते हैं ॥ ३८ ॥

तृतीय, षष्ठ और लाभगत शनैश्चर का फल।

त्रिषष्ठलाभोपगतो मन्दो निन्द्योऽर्धसत्फलः।
मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः ॥ ३९॥

जिसके वर्षलग्न से तीसरे, छठे और ग्यारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में नष्टबली शनैश्चर बैठा हो तो वह अपनी दशा में आधा शुभ फल देता है और जो अल्पबली शनैश्चर उक्त स्थानों में से किसी स्थान में

बैठा हो तो वह मध्यम फल देता है और जो मध्यमबली शनैश्चर उक्त स्थानों में बैठा हो तो वह अपनी दशा में शुभ फल देता है और जो पूर्णबली शनैश्चर उक्त स्थानों में विराजमान हो तो वह अपनी दशा में अत्यन्त शुभ फल देता है॥ ३९॥

चरादि लग्नगत द्रेष्काणवश से लग्नदशा का फल।

दशा तनोः स्वामिबलेन तुल्यं फलं ददातीत्यपरो विशेषः।
चरे शुभा मध्यफलाऽशुभा च द्विमूर्त्तिभेऽस्माद्विपरीतमूह्यम्॥ ४०

लग्न की दशा अपने स्वामी के बल के समान फल को देती है अर्थात् लग्नेश का जैसा बल होगा उसी के समान फल को देगी। यदि लग्नदशा का पहला द्रेष्काण चरराशि का हो तो लग्न की दशा शुभ फल देती है और यदि द्वितीय द्रेष्काण चर राशि का हो तो लग्न की दशा मध्यम फल की देनेवाली होती है और यदि तृतीय द्रेष्काण चरराशि का हो तो लग्न की दशा अधम फल को देती है। द्विस्वभाव लग्न में इस चर लग्न से विपरीत फल जानना चाहिए अर्थात् जो पहला द्रेष्काण द्विस्वभाव हो तो लग्न की दशा अधम, द्वितीय द्रेष्काण द्विस्वभाव हो तो मध्यम फल और यदि तीसरा द्रेष्काण द्विस्वभाव हो तो लग्न की दशा शुभ फल देती है॥ ४०॥

अनिष्टमिष्टं च समस्थिरर्क्षे
क्रमाद्दृकाणैः फलमुक्तमाद्यैः।
सत्स्वामियोगेक्षणतः शुभं स्यात्
पापेक्षणात्कष्टफलं च वाच्यम्॥ ४१॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां दशाफलविचारोनाम षष्ठं प्रकरणम्॥ ६॥

वर्षलग्न में स्थिर राशि का पहला द्रेष्काण हो तो लग्नदशा अनिष्ट फल की देनेवाली होती है और यदि दूसरा द्रेष्काण हो तो उत्तम फल की देनेवाली तथा तीसरा द्रेष्काण हो तो मध्यम फल की देनेवाली होती है। पूर्वाचार्यों ने द्रेष्काण वश से यह लग्नदशा का फल क्रम से कहा है।

अब अपवाद कहते हैं कि वह लग्न शुभग्रहों से और अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तो अशुभ फल भी शुभ हो जाता है। यदि शुभ फल हो

तो शुभतर (अच्छे से अच्छा) हो जाता है तथा यदि वह लग्न अपने स्वामी से अतिरिक्त पाप ग्रहों से दृष्ट या युत हो तो कष्टकारक फल कहना चाहिए। इस ग्रन्थ में ग्रंथकर्ता ने ग्रहों का बल चार प्रकार का कहा है। जैसे कि पन्द्रह विस्वा से लेकर बीस विस्वा तक पूर्णबल, दश विस्वा से लेकर पन्द्रह विस्वा तक मध्यम बल, पाँच विस्वा से लेकर दश विस्वा तक अधम बल और पाँच विस्वा से हीन नष्टबल कहा जाता है। यही वामनाचार्य ने भी कहा है कि ग्रहों के पूर्ण, मध्यम, अधम और नष्ट ये चार बल हैं। उन्हीं के क्रम से फल कहना चाहिए॥ ४१॥

इति श्रीशक्तिधरविरचितायां नीलकण्ठीभाषाव्याख्यायां
दशाफलविचारोनाम षष्ठं प्रकरणम्॥ ६॥

सप्तमं प्रकरणम्।

दशाक्रम से बलानुसार फल का विचार।

दशामानं समामानं प्रकल्प्योक्तेन वर्त्मना।
अन्तर्दशाः साधनीयाः प्राक्पात्यांशवशेन तु॥ १॥
आदावन्तर्दशापाकपतेस्तत्क्रमतोऽपरा।
शुभेक्षणान्वयान्मैत्र्या तत्फलं परिकल्पयेत्॥ २॥

पूर्वोक्त प्रकार से दशा के मान को वर्ष का मान कल्पित करके पात्यांश के क्रम से अन्तर्दशा साधन करना चाहिए। यह संज्ञातन्त्र में कह आये हैं। पहले दशा के पति की अन्तर्दशा होती है पश्चात् क्रम से अन्य ग्रहों की दशा होती है। दशा का फल चारप्रकार का बल देखकर कहना चाहिए। शुभग्रहों की दृष्टि से, पापग्रह की दृष्टि से, शुभग्रह की मित्रता से, पापग्रह के स्थान संबन्ध से अथवा पंचवर्गी के बल से ५, विशोंपक से न्यून बल, पांच से दशविंशोपक तक अधम बल, दश से पन्द्रह तक मध्यम बल और पन्द्रह से बीसतक पूर्णबल ग्रह होता है। यह चार प्रकार का बल देखकर फल कहना चाहिए। जैसा कि वामनाचार्य ने कहा है*॥ २॥

---

* पूर्णमध्याधमान्नष्टान् ग्रहज्ञात्वा दशाफलम्। तत्क्रमेणैव वक्ष्यामि प्रत्येकं च चतुर्विधम्॥

चन्द्रारजीवाः सौम्येज्यशुक्रा रविविधू तथा ।
मन्देज्यशुक्राः सूर्येन्दुभौमाः सौम्येज्यसूर्यजाः ॥ ३ ॥
जीवज्ञशुक्राः सूर्यादेः शुभा अन्तर्दशा इमाः ।
अन्येषामशुभा ज्ञेया इति वामनभाषितम् ॥ ४ ॥

सूर्य की दशा में चन्द्र, मंगल और गुरु की अन्तर्दशा; चन्द्रमा की दशा में बुध, गुरु और शुक्र की; मंगल की दशा में सूर्य और चन्द्र की; बुध की दशा में शनि, गुरु, शुक्र की; बृहस्पति की दशा में सूर्य, चन्द्र, मंगल की; शुक्र की दशा में बुध, गुरु, शनि की तथा शनि की दशा में गुरु, बुध और शुक्र की अन्तर्दशाएँ शुभ होती हैं। शेष दशाएँ अशुभ होती हैं। ऐसा वामनाचार्य ने कहा है ॥ ३–४ ॥

लग्नस्थित सकल ग्रहों का फल ।

सूर्यारमन्दास्तनुगा ज्वरार्तिं धनक्षयं पापयुगिन्दुरित्थम् ।
शुभान्वितः पुष्टतनुश्च सौख्यं जीवज्ञशुक्रा धनधान्यलाभम् ५

दो० । सतयें प्रकरण के विषे ग्रहफल करौं बखान ।
वर्षकुण्डली लघुहुँ जो तहँ जिहिबिन नहिं मान ॥ १ ॥

सूर्य, मंगल और शनैश्चर ये तीनों (या इन तीनों में से कोई एक) ग्रह वर्षलग्न में बैठे हों तो ज्वर, पीड़ा और धन का क्षय करते हैं। इसी प्रकार पापग्रह समेत चन्द्रमा लग्न में बैठा हो तो ज्वरपीड़ा और धन का क्षय करता है तथा जो शुभग्रहों से युक्त पुष्टशरीरवाला चन्द्रमा लग्न में बैठा हो तो वह सौख्य करता है और बृहस्पति, बुध और शुक्र ये तीनों लग्न में बैठे हों तो धन धान्य का लाभ करते हैं ॥ ५ ॥

धनभाव स्थित सकलग्रहों का फल ।

चन्द्रज्ञजीवास्फुजितो धनस्था धनागमं राज्यसुखं च दद्युः ।
पापा धनस्था धनहानिदाः स्युर्नृपाद्भयं कार्यविघातमार्किः ६

जो चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति और शुक्र ये चारों धनभाव में स्थित हों तो वे धनप्राप्ति तथा राज्यसुख को देते हैं और जो पापग्रह धनभाव में स्थित हों तो वे धनहानिकारक होते हैं तथा जो शनैश्चर धनस्थान में स्थित हो तो वह राजा से भय और कार्य का नाश करता है ॥ ६ ॥

तृतीयभावस्थित सकल ग्रहों का फल।

दुश्चिक्यगाः खलखगा धनधर्मराज्य-
लाभप्रदा बलयुताः क्षितिलाभदाः स्युः।
सौम्याः सुखार्थसुतमानयशोविलास-
लाभाय हर्षमतुलं किल तत्र चन्द्रः॥ ७॥

जिसके वर्ष में पापग्रह तीसरे घर में बैठे हों तो वह उसके लिए धन, धर्म और राज्य का लाभ देते हैं और जो बल से युक्त पापग्रह तीसरे भाव में बैठे हों तो पृथ्वी का लाभ देते हैं और जो सौम्यग्रह तीसरे स्थान में विद्यमान हों तो वह सुख, धन, पुत्र, मान, यश और विलास के लाभ को देते हैं और तीसरे घर में चन्द्रमा बैठा हो तो वह अतुल हर्ष को करता है॥ ७॥

चतुर्थभावस्थित सकल ग्रहों का फल।

चन्द्रः सुखे खलयुतो व्यसनं रुजं च
पुष्टः शुभेन सहितः सुखमातनोति।
सौम्याः सुखं विविधमत्र खलाः सुखार्थ-
नाशं रुजं व्यसनमप्यतुलं भयं च॥ ८॥

जिसके वर्ष में पापग्रहों से युक्त चन्द्रमा चौथे भाव में बैठा हो तो वह उस प्राणी के लिए कष्ट और रोग को देता है और जो चौथे घर में शुभग्रहों से युक्त तथा पूर्ण होकर चन्द्रमा बैठा हो तो वह उसको सुख देता है। यदि शुभग्रह चौथे घर में बैठे हों तो वे विविध सुख देते हैं। और जो चौथे घर में पापग्रह बैठे हों तो वह सुख और धन का नाश, रोग, कष्ट और अतुल भय देते हैं॥ ८॥

पञ्चमभावस्थित सकलग्रहों का फल।

पुत्रवित्तसुखसंचयं शुभाः पुत्रगा भृगुसुतोऽतिहर्षदः।
पुत्रवित्तधनबुद्धिहारकास्तस्करामयकलिप्रदाः खलाः॥ ९॥

जिसके वर्ष में शुभग्रह पाँचवें घर में बैठे हों तो वे उसके लिए पुत्र,

---

१—'सुखबुद्धिहारका' इतिपाठः समीचीनः। वित्तशब्दमुच्चार्य्य पुनर्धन-शब्दस्योपादानं पुनरुक्तिदोषप्रसंगादिति॥

धन और सुखसमूहों को देते हैं और जो शुक्र पाँचवें घर में बैठा हो तो वह अत्यन्त हर्ष को देता है और यदि पापग्रह पाँचवें घर में बैठे हों तो वे पुत्र, धन, सुख और बुद्धि का अपहरण करते हुए चौरभय, रोग और लड़ाई को देते हैं ॥ ९ ॥

षष्ठभावस्थित सकलग्रहों का फल ।

षष्ठे पापा वित्तलाभं सुखाप्तिं भौमोऽत्यन्तं हर्षदः शत्रुनाशम् ।
सौम्या भीतिं वित्तनाशं कलिं च चन्द्रो रोगं पापयुक्तः करोति॥

जिसके वर्ष में पापग्रह छठे भाव में बैठे हों तो वे उस प्राणी को धनलाभ और सुख की प्राप्ति करते हैं और जो मंगल छठे भाव में बैठा हो तो वह अत्यन्त आनन्द देता हुआ शत्रुगणों का नाश करता है। और जो छठे भाव में शुभग्रह बैठे हों तो वे भय, धननाश और लड़ाई को देते हैं और जो पापग्रह से युक्त चन्द्रमा छठे भाव में स्थित हो तो वह रोग-कारक होता है ॥ १० ॥

सप्तमभावस्थित सकलग्रहों का फल ।

सपापः शशी सप्तमे व्याधिभीतिं
खलाः स्त्रीविनाशं कलिं भृत्यभीतिम् ।
शुभाः कुर्वते वित्तलाभं सुखाप्तिं
यशोराजमानोदयं बन्धुसौख्यम् ॥ ११ ॥

पापग्रहसमेत चन्द्रमा सातवें घर में बैठा हो तो वह रोगों से भय करता है और जो पापग्रह सातवें घर में बैठे हों तो वे स्त्री का नाश, कलह और सेवक से भय करते हैं और जो शुभग्रह सातवें घर में बैठे हों तो वे धनलाभ, सुखप्राप्ति, यश, राजा से मान का उदय और बन्धुसौख्य को देते हैं ॥ ११ ॥

अष्टमभावगत सकलग्रहों का फल ।

चन्द्रोऽष्टमे निधनदः खलखेटयुक्तः
पापाश्च तत्र मृतितुल्यफलं च विन्द्यात् ।
सौम्याः स्वधातुवशतो रुजमर्थहानिं
मानक्षयं मुथशिले शुभजं शुभञ्च ॥ १२ ॥

जिस वर्ष में पापग्रहों से युक्त चन्द्रमा आठवें घर में बैठा हो अथवा केवल पापग्रह ही बैठे हों तो वह मरणतुल्य कष्ट को देते हैं और जो शुभग्रह आठवें स्थान में स्थित हों तो वे अपने धातुवश से रोग, धनहानि और मानक्षय करते हैं और जो अष्टमभावस्थ शुभग्रहों के साथ मुथशिल योग हो तो अनिष्ट फल भी अच्छा हो जाता है ॥ १२ ॥

नवमभावगत सकलग्रहों का फल।

तपसि सोदरभीः पशुपीडनं खलखगेऽतिमुदो रविरत्र चेत्।
शुभखगा धनधर्मविवृद्धिदाः खलखगे च शुभान्यपरे जगुः १३

जो पापग्रह नवें घर में बैठे हों तो भाइयों से भय और पशुओं को पीड़ा होती है। यदि इस नवें भवन में सूर्य बैठा हो तो अत्यन्त आनंद होता है क्योंकि उस नवें स्थान में सूर्य के स्थित होने से हर्षस्थान कहा गया है इसलिए वह प्राणी बड़े आनन्द को प्राप्त होता है और जो शुभग्रह नवें स्थान में स्थित हों तो वे धन और धर्म की वृद्धि के देनेवाले होते हैं। अब मतान्तर को कहते हैं कि जो पापग्रह भी उस भाग्यभवन में बैठे हों तो वे शुभ फल के दाता होते हैं ॥ १३ ॥

दशमभावस्थ सकलग्रहों का फल।

गगनगो रविजः पशुवित्तहा रविकुजौ व्यवसायपराक्रमैः।
धनसुखानि परे च धनात्मजावनिपसङ्गसुखानि वितन्वते १४

वर्षकाल में शनैश्चर दशवें घर में बैठा हो तो वह पशुओं और धन का नाश करता है और जो सूर्य, मंगल ये दोनों दशवें घरमें बैठे हों तो व्यापार और पराक्रम से धन का सुख देते हैं और जो इनसे अन्य ग्रह राज्यभाव में विराजमान हों तो वे धन, सुत और राजा के संगम से सुख को देते हैं ॥ १४ ॥

लाभभावस्थ सकलग्रहों का फल।

लाभे धनोपचयसौख्ययशोभिवृद्धि-
सन्मित्रसङ्गबलपुष्टिकराश्च सर्वे।
क्रूरा बलेन रहिताः सुतवित्तबुद्धि-
नाशं शुभास्तु तनुतां स्वफलस्य कुर्युः ॥ १५॥

जो सम्पूर्ण शुभ अथवा क्रूरग्रह बल से युक्त होकर ग्यारहवें घरमें बैठे हों तो वे धनसमूह, सौख्य, यशवृद्धि, अच्छे मित्रों का संगम, बल और पुष्टि के करनेवाले होते हैं। और जो क्रूर ग्रह बल से रहित होकर ग्यारहवें भाव में बैठे हों तो वे पुत्र, धन और बुद्धि को नाशते हैं और जो बल से रहित शुभग्रह लाभ भवन में विद्यमान हों तो वे अपना फल सूक्ष्म करते हैं ॥ १५ ॥

व्ययभावस्थ सकलग्रहों का फल ।

पापा व्यये नेत्ररुजं विवादं हानिं धनानां नृपतस्करादेः ।
सौम्या व्ययं सद्व्यवहारमार्गे कुर्युः शनिर्हर्षविवृद्धिमत्र १६॥

यदि पापग्रह बारहवें घर में बैठे हों तो वे नेत्ररोग, विवाद और नृप, चोर आदिकों से धन की हानि करते हैं और जो शुभग्रह व्ययभाव में स्थित हों तो वे अच्छे व्यवहार के मार्ग में खर्च कराते हैं और जो शनैश्चर इस व्ययघर में बैठा हो तो वह हर्षसमेत बड़ी बढ़ती को देता है ॥ १६ ॥

श्रीगर्गान्वयभूषणो गणितविच्चिन्तामणिस्तत्सुतो-
ऽनन्तोनन्तमतिर्व्यधात्खलमतध्वस्त्यै जनुःपद्धतिम् ।
तत्सूनुः खलु नीलकण्ठविबुधो विद्वच्छिवानुज्ञया
भावस्थग्रहपाकदौस्थ्यसुखतायुक्तं फलं सोऽभ्यधात् ॥१७॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां भावस्थग्रहफलविचारो नाम
सप्तमं प्रकरणम् ॥ ७ ॥

श्रीयुत गर्गवंश में भूषण, गणित शास्त्र का वेत्ता, चिन्तामणि नामक विद्वान् हुआ था । उसका पुत्र अनन्तमतिवाला अनन्त नामक हुआ जिसने दुष्टों का मत नाश करने के लिए जन्मपद्धति को बनाया । उसी के पुत्र विशेष विद्वान् नीलकण्ठ नामक विद्वान् ने शिवजी की आज्ञा से भावस्थ ग्रहों की दशा के अशुभ व शुभ युक्त फलको कहा है ॥ १७ ॥

इति श्रीशक्तिधरविरचितायां नीलकण्ठीभाषाव्याख्यायां
भावस्थग्रहफलविचारोनाम सप्तमं प्रकरणम् ॥ ७ ॥

अष्टमं प्रकरणम् ।

सज्ञातंन्त्रोक्त प्रकार से मास और दिनप्रवेश का निर्णयकर अधिकारि निर्णय और उनका फल ।

मासप्रवेशकाले ज्ञो ग्रहान् भावांश्च साधयेत् ।
तत्र मासतनोर्नाथो मुन्थहो जन्मपस्तथा ॥ १ ॥
त्रिराशिपो दिननिशो रवीन्दुभपतिस्तथा ।
अब्दप्रवेलग्नेश एषां वीर्याधिकस्तनुम् ॥ २ ॥
पश्यन्मासपतिर्ज्ञेयस्ततो वाच्यं शुभाशुभम् ।
अपरे मासलग्नेशं मासाधिपतिमूचिरे ॥ ३ ॥
दिनेशं दिनलग्नेशं तथा प्रोचुर्विचक्षणाः ।
मासघस्रेशयोर्वाच्यं फलं वर्षेशवद् बुधैः ॥ ४ ॥

दो० । यहि अठयें प्रकरण महँ करि सब अर्थ खुलास ।
मासदिवसपरवेशफल कहिहौं सहित हुलास ॥ १ ॥

विद्वान् को चाहिए कि मासप्रवेश काल में पूर्वोक्त प्रकार से तन्वादि बारह भावों का साधन करे तदनन्तर मासपति के निर्णय के लिए छः अधिकारियों का विचार करना चाहिए । जैसे—पहला मासलग्न का स्वामी, दूसरा मुन्था का स्वामी (अर्थात् वर्षकालीन मुन्था प्रतिमास ढाई अंश बढ़ता है इस क्रमसे मास का मुन्था जानना चाहिए। उस का स्वामी) तीसरा जन्मलग्न का स्वामी, चौथा त्रिराशिपति तथा पाँचवाँ समयपति दिन में सूर्य राशिपति और रात्रि में चन्द्रमा की राशि का स्वामी और छठा वर्षप्रवेश लग्न का स्वामी इन छः अधिकारियों के बीच में जो बलवान् होकर लग्न को देखता हो वह मासस्वामी जानना चाहिए और इसी मासस्वामी से शुभ तथा अशुभ फल कहना चाहिए । यहाँ अपर आचार्य मासलग्नस्वामी को ही मासस्वामी कहते हैं । उनके मत में पूर्व कहे हुए अधिकारी हैं तथा अन्य आचार्यों के मत से दिन प्रवेशलग्नस्वामी को ही दिन का ईश कहते

१—मासार्कस्य तदासन्नपंक्तिस्थेन सहान्तरम् । कलीकृत्यार्कगत्याप्तं दिनाद्येन युतोनितम् ॥ १ ॥ तत्पंक्तिस्थं वारपूर्वमासार्केऽधिकहीनके । तद्वाराद्ये मासवेशो घुवेशोऽप्येवमेवहि ॥ २ ॥

हैं । यहाँ भी अधिकारियों का निश्चय नहीं है । इसप्रकार निश्चय कर मासेश और दिनेश का फल वर्षेश के समान कहना चाहिए ॥ १ । २ । ३ । ४ ॥

मासफल ।

लग्नांशाधिपतिर्विलग्नपनवांशेशेन मैत्री दृशा
दृष्टो वा सहितः शशी च यदि तौ मैत्रीदृशालोकते ।
तस्मिन्मासि तनौ सुखं बहुविधं नैरुज्यमित्थं फलं
तावद्यावदिमे स्युरित्थमथ तां संचार्य वाच्यं फलम् ॥ ५ ॥

मासलग्न के नवांश का स्वामी मासलग्नेश नवांश के स्वामी द्वारा मित्र दृष्टि (तीसरी, ग्यारहवीं, नवीं, पाँचवीं) से देखा जाता हो अथवा युक्त हो और उन दोनों स्वामियों (मासलग्न-नवांशपति, मासलग्नेश-नवांश-पतियों) को चन्द्रमा मित्रदृष्टि से देखता हो तो उस मास में नानाप्रकार का सुख और शरीर में नीरोगता होती है । इस प्रकार मासफल तब तक होता है जबतक ये ग्रह (लग्ननवांशस्वामी, लग्नेश्वरांशस्वामी और चन्द्रमा) इस प्रकार के हों अर्थात् प्रति दिन चलते हुए इन तीनों का जबतक राशि संचार हो तबतक शुभफल कहना चाहिए ॥ ५ ॥

अनिष्टफल ।

तौ चेच्छत्रुदृशा मिथश्च शशिना दृष्टौ मनोदुःखदौ
रोगाधिक्यकरौ च कश्चिदनयोर्नीचेऽस्तगो वा यदि ।
कष्टात्सौख्यमिह द्वयं यदि पुनर्नीचास्तगं स्यान्मृति-
स्सूत्यब्दोद्भवरिष्टतो मृतिसमं स्यादन्यथेत्यूचिरे ॥ ६ ॥

यदि वह लग्नांशनाथ, और लग्नेश्वरांशनाथ आपस में शत्रुदृष्टि (चौथी, दशवीं, पहली, सातवीं) इनमें से किसी से दृष्ट हों अर्थात् लग्नांशनाथ, लग्नेश्वरांशनाथ को और लग्नेश-नवांशपति लग्ननवांशपति को वैरदृष्टि से देखता हो और उन दोनों को चन्द्रमा भी शत्रुदृष्टि से देखता हो तो मानसिक दुःख को देते हुए रोगाधिक्य को करते हैं और लग्नांशनाथ, लग्नेश्वरांशनाथ इन दोनों में से कोई एक नीचराशि का हो अथवा अस्त होगया हो तो वह पहले कष्ट देकर पीछे सौख्य देता है ।

अथवा वे दोनों नीचराशि में बैठे हों अथवा अस्त होजावें अथवा एक नीच में बैठा हो और दूसरा अस्त होगया हो तो मरण होता है। ऐसा फल तब होता है जबकि जन्मकाल और वर्षकाल में रिष्टयोग की उत्पत्ति हो अन्यथा जन्मकाल और वर्षकाल में रिष्टयोग का अभाव हो तो मृत्यु के समान कष्ट होता है। यह आचार्यों ने कहा है॥ ६॥

धनभावादि द्वादशभावों का उसीप्रकार शुभाशुभ फल।

भावांशाधिपतिः स्वभावपनवांशेशेन मैत्रीदृशा
दृष्टो वा सहितः शशी च यदि तौ मैत्रीदृशालोकने।
तद्भावोत्थसुखं विलोक्यमथ तद्व्यत्यासतः कीर्तितं
नीचास्तादिफलं च लग्नवदिदं विद्वद्भिरूह्यं धिया॥ ७॥

मासलग्न में जिस भाव का विचार करे तो उस भाव के नवांश का स्वामी अपने स्वामी के नवांशस्वामी से मित्रदृष्टि से देखा जाता हो अथवा युक्त हो और वहां चन्द्रमा भी यदि उन भावनवांशस्वामी और भावेश-नवांशस्वामी को मित्र दृष्टि से देखे तो उस भाव से उत्पन्न हुआ सुख उस महीना में होता है और जो इस कहे हुए से विरुद्ध हो तो विलोम (उलटा) फल कहना। जैसे कि वह भाव नवांशस्वामी और भावेश नवांशस्वामी ये दोनों आपस में शत्रुदृष्टि से दृष्ट हों अथवा युक्त हों और यदि चन्द्रमा भी उन दोनों (भावनवांशनाथ, भावेश नवांशपति) को शत्रुदृष्टि से देखता हो तो ज्योतिषियों ने उस भावसम्बन्धी कष्टफल उस महीना में विलोम कहा है और इस समय अस्त आदिकों का फल लग्न के समान बुद्धि से विद्वानों को जानना चाहिए। जैसे कि उन भावनवांशनाथ और भावेश नवांशस्वामियों में से जो एक नीच राशि में बैठा हो अथवा अस्त हो तो वह उस भावसम्बन्धी कष्ट को करके पीछे से सुख प्राप्त करता है। यदि दोनों ही नीच राशि में बैठे हों अथवा अस्त होजायँ तो उस महीना में उस भाव से पैदा हुए दुःख की प्राप्ति ही होती है॥ ७॥

प्रकारान्तर से तत्तद्भावों का सौख्य।

लग्नेशमासेशसमेश्वरांश-
नाथा यदंशाधिपमित्रदृष्ट्या।

दृष्टा युता वा शशिना च तत्त-
द्भावोत्थसौख्याय न चेदनिष्टम् ॥ ८ ॥

वर्षलग्नस्वामी, मासलग्नस्वामी, वर्षेश्वर और मासलग्ननवांशपति ये चारों जिस जिस भाव के नवांशस्वामी से अथवा भावेशनवांशस्वामी से मित्रदृष्टि द्वारा देखे जाते हों अथवा युक्त हों और फिर ये चारों चन्द्रमा करके मित्रदृष्टि से दृष्ट हों अथवा युक्त हों तो उस उस भाव का सुख होता है। यदि अनिष्ट न हो तो ऐसा फल कहना चाहिए ॥ ८ ॥

केवल लग्ननवांशवश से तत्तद्भावों का शुभाशुभ फल ।

निर्बला व्ययषष्ठाष्टांशपाः सत्फलदायकाः ।
अन्ये सवीर्याः शुभदा व्यत्यये व्यत्ययः स्मृतः ॥ ९ ॥

यदि अनिष्टकारक बारहवें, छठे और आठवें भावों के नवांशस्वामी निर्बल हों तो उस उस भाव से शुभ फल के देनेवाले कहे हैं और इनसे बाकी भावों के नवांशस्वामी यदि बलिष्ठ हों तो उस उस भाव से शुभ फल के दाता होते हैं और जो कहे हुए से विरुद्ध हों तो उलटा फल होता है। जैसे कि बारहवें, छठे और आठवें इन भावों के नवांशस्वामी यदि सबल (बलसंयुत) हों तो दुष्टफल देते हैं तथा अन्यभावों के नवांशस्वामी बल से रहित हों तो अशुभ फल देते हैं ॥ ९ ॥

विरुद्धस्थानस्थित अधिकारी ग्रहों का अनिष्ट फल ।

लग्नेशमासेशसमेशमुन्था-
धीशाः षडष्टोपगताः सपापाः ।
दृष्टाः खलैश्शत्रुदृशात्र मासे
व्याध्यादिविद्विड्भयदुःखदाः स्युः ॥ १०

वर्षलग्नस्वामी, मासस्वामी, वर्षेश्वर और मुन्था का स्वामी ये चारों पापग्रहों से युक्त होकर छठे या आठवें स्थान में स्थित हों और इन चारों को पापग्रह शत्रुदृष्टि (चौथी, दशवीं पहली और सातवीं इन में से किसी दृष्टि) से देखते हों तो वे इस मास में व्याधि आदि, शत्रुभय और दुःख को देते हैं ॥ १० ॥

विहितस्थानस्थित अधिकारी ग्रहों का शुभाशुभ फल ।

केन्द्रत्रिकोणायगतास्तु लग्न-
मासाऽब्दपा वीर्ययुता नराणाम् ।
नैरुज्यशत्रुक्षयराज्यलाभ-
मानोदयात्यद्भुतकीर्तिदाः स्युः ॥ ११ ॥

जो वर्षलग्नेश, मासेश और वर्षेश्वर ये तीनों बलवान् होकर केन्द्र (पहले, चौथे, सातवें, दशवें), त्रिकोण (नवें, पांचवें) और ग्यारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में बैठे हों तो वे मनुष्यों के लिए नीरोगता, वैरिगणों का नाश, राज्यलाभ, मान का उदय और अति अद्भुत कीर्ति को देते हैं ॥ ११ ॥

मतान्तर ।

इन्थिहालग्नयोराशिर्यो बली तत्र हद्दपाः ।
दशेशाः स्वांशतुल्याहैरित्युक्तं कैश्चिदागमात् ॥ १२ ॥

मासमुन्था और मासलग्न इनकी जो बली राशि हो उस राशि में जो हद्दा के स्वामी हैं वे अपने अंशतुल्य दिनों करके दशा के स्वामी होते हैं । यह आगम 'मूलशास्त्र' से कितनेक विद्वानों ने कहा है ॥ १२ ॥

अन्य आचार्यों का मत ।

रवीन्द्वोरसमावेशान्नैतद्युक्तं परे जगुः ।
दशान्तरदशाच्छेदे फलमाब्दं तु युज्यते ॥ १३ ॥

यह पूर्वमत सूर्य और चन्द्रमा के सम्बन्ध के नहीं होने से युक्त नहीं है । यह अन्य आचार्य कहते हैं । अब मासदशा और अन्तरदशा का फल कहते हैं कि वर्षदशा अन्तर्दशा के विभाग की रीति से किये हुए विभाग में वर्ष का कहा हुआ फल युक्त ही होता है ॥ १३ ॥

दिनप्रवेश का फल ।

दिनप्रवेशकालेऽपि ग्रहान्भावांश्च साधयेत् ।
चन्द्रलग्नांशकाभ्यां तु फलं तत्र वदेद्बुधः ॥ १४ ॥

दिनप्रवेश समय में पण्डितों को उचित है कि सूर्यादि नवग्रहों और

लग्नादि बारह भावों का साधन करें । उस दिनप्रवेश में चन्द्रमा और लग्न के नवांशों से शुभ अथवा अशुभ फल कहें ॥ १४ ॥

दिनस्वामी-निर्णय ।

चतुष्कमिन्थिहेशादिदिनमासाब्दलग्नपाः ।
एषां बली तनुं पश्यन् दिनेशः परिकीर्तितः ॥ १५ ॥

मुन्थास्वामी, जन्मलग्नस्वामी, त्रैराशिकस्वामी और दिनरात्रीश, ये चार और दिनलग्नेश, मासलग्नेश, वर्षलग्नेश इन सातों के बीच जो बली होकर दिनलग्न को देखे उसी को पण्डितों ने दिनेश कहा है ॥ १५ ॥

दिन में ग्रहों का शुभाशुभ फल ।

त्रिकोणकेन्द्रायगताः शुभाश्चे-
च्चन्द्रात्तनोर्वा बलिनः खलास्तु ।
षट्त्र्यायगास्तत्र दिने सुखानि
विलासमानार्थयशोयुतानि ॥ १६ ॥

शुभग्रह बलवान् होते हुए चन्द्रमा और लग्न से त्रिकोण ९ । ५ या केन्द्र १ । ४ । ७ । १० अथवा ग्यारहवें घर में स्थित हों और पापग्रह तीसरे, छठे और ग्यारहवें इनमें से किसी घर में बैठे हों तो वहाँ दिन में विलास, मान, धन और यश से युक्त सुख को देते हैं ॥ १६ ॥

षडष्टरिष्फादिगत दिनेशादिकों का फल ।

षडष्टरिष्फोपगतादिनाब्द-
मासेन्थिहेशाः खलखेटयुक्ताः ।
गदप्रदा मानयशोहराश्च
केन्द्रत्रिकोणायगताः सुखासचै ॥ १७ ॥

जो दिनेश, वर्षेश, मासेश और मुथहेश ये चारों पापग्रहों से युक्त होकर छठे, आठवें और बारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में बैठे हों तो वे रोगों को देते हुए मान और यश को नष्ट करते हैं और जो दिनेश आदि चारों केन्द्र १ । ४ । ७ । १० अथवा त्रिकोण ९ । ५ या ग्यारहवें, इन स्थानों में से किसी स्थान में बैठे हों तो सुख की प्राप्ति होती है ॥ १७ ॥

दिनलग्नांशकद्वारा फल।

लग्नांशकः सौम्यखगैः समेतो
दृष्टोपि वा मित्रदृशेन्दुनापि।
नैरुज्यराज्यादिशरीरपुष्टि-
मासोक्तिवद्दुःखमतोऽन्यथात्वे ॥ १८ ॥

जो दिनलग्ननवांशराशि शुभग्रहों से युक्त हो अथवा मित्रदृष्टि से दृष्ट हो और चन्द्रमा से भी युक्त अथवा मित्रदृष्टि से दृष्ट हो तो वह नीरोगता, राज्यआदि और शरीरपुष्टि को देता है और जो कहे हुए प्रकार से विपरीत हो (तौ चेच्छत्रुदृशा) तो इस मासोक्तरीति से दुःखफल जानना चाहिए ॥ १८ ॥

उक्तरीति से भावफलार्थ का अतिदेश।

यदंशकः सौम्ययुतेक्षितो वा
स्निग्धेक्षणाद्भावजसौख्यकृत्सः।
दुःखप्रदः प्रोक्तवदन्यथात्वे
सर्वेषु भावेष्वियमेव रीतिः ॥ १९ ॥

जिस भाव के नवांश की राशि शुभग्रहों से युक्त अथवा मित्रदृष्टि से देखी जाती हो तो वह उस भाव से पैदा हुए सौख्य का करनेवाला होता है अन्यथा दुःख देता है। यही रीति सब भावों में जाननी चाहिए ॥ १९ ॥

छठे और बारहवें भाव का विशेष फल।

षष्ठांशकस्सौम्ययुतो रोगदः पापयुक् शुभः।
व्ययांशे शुभयुग्दृष्टे सद्व्ययः पापतस्त्वसत् ॥ २० ॥

जो छठे भाव का नवांश राशि शुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो वह रोग को देता है और जो पापग्रहों से युक्त हो तो वह शुभ फल को देता है और जो बारहवें भाव की नवांश राशि शुभग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो अच्छे काम में खर्च होता है और जो पापग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो बुरे काम में खर्च होता है ॥ २० ॥

जायाभाव में विशेष फल ।

जायांशः सौम्ययुग्दृष्टः स्वस्त्रीसौख्यविलासकृत् ।
पापैर्गृहकलिं दुःखं पापान्तस्थे मृतिं वदेत् ॥ २१ ॥

जायाभाव की नवांश राशि शुभग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो अपनी भार्या से सौख्य और विलास को करती है और जो पापग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हो तो घर में लड़ाई और दुःख होता है और जो पापग्रहों के बीच में वह राशि हो तो स्त्री की मृत्यु कहना चाहिए ॥ २१ ॥

अन्ययोग ।

शुभमध्यस्थिते त्र्यंशे बहुलं कामिनीसुखम् ।
स्वस्यां रतिं गुरावन्यखगेऽन्यासु रतिं वदेत् ॥ २२ ॥

जो जायाभाव की नवांश राशि शुभग्रहों के बीच में स्थित हो तो कामिनी से बहुत सुख होता है और जो बृहस्पति त्र्यंश (तीसरे भाग) में बैठा हो तो अपना स्त्री में रति (रमण) कहना चाहिए और जो अन्य ग्रह स्थित हो तो पण्डित को अन्य भार्या में रति कहना चाहिए ॥ २२ ॥

अष्टमभाव का फल ।

मृत्यंशे मृत्युगैस्सौम्यैर्युग्दृष्टे मरणं रणे ।
मिश्रैर्मिश्रं खलैः सौख्यं वर्षलग्नानुसारतः ॥ २३ ॥

अष्टमभाव के नवांश की राशि दिनप्रवेश लग्न से मृत्युघर में स्थित शुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो रणभूमि में मरण होता है और जो शुभ-ग्रहों से मिले हुए पापग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो मिश्रित फल कहना चाहिए और जो केवल पापग्रहों से ही वह राशि युक्त अथवा देखी जाती हो तो वर्षलग्न के अनुसार सुख होता है ॥ २३ ॥

कर्त्तरीयोग का फल ।

द्विर्द्वादशे खलाहानिं व्यये सौम्याः शुभव्ययम् ।
कर्त्तरी पापजा रोगं करोति शुभजा शुभम् ॥ २४ ॥

जिस प्राणी के दिनप्रवेश लग्न से दूसरे और बारहवें घर में पापग्रह बैठे हों तो वे उस प्राणी के धन का क्षय करते हैं और जो बारहवें घर में शुभ

ग्रह स्थित हों तो अच्छे काम में खर्च होता है। पापग्रहजनित कर्तरीयोग रोग करता है और शुभग्रहजनित कर्तरीयोग शुभ फल को देता है॥ २४॥

चन्द्रकृत अनिष्ट फल।

लग्नेऽष्टमे वा क्षीणेन्दुर्मृत्युदः पापदृग्युतः।
रोगो वा ग्रहणं वापि रिपुतः शस्त्रभीरपि॥ २५॥

जिस प्राणी के दिन प्रवेश लग्न में अथवा दिन प्रवेश लग्न से आठवें स्थान में पापग्रहों से दृष्ट वा युक्त होकर क्षीण चन्द्रमा बैठा हो तो उस प्राणी को मृत्युदायक होता है अथवा वह प्राणी रोगी होकर वैरियों से पकड़ा जाता है और किसी हथियार से भय भी होता है॥ २५॥

पुनश्चन्द्रकृत अनिष्ट फल।

चन्द्रे सभौमे निधनारिसंस्थे
नृणां भयं शस्त्रकृतं रिपोर्वा।
पापैः सुखस्थैः पतनं गजाश्व-
यानात्तनौ स्याद्बहुला च पीडा॥ २६॥

जिन प्राणियों के दिनप्रवेश लग्न से आठवें और छठे स्थान में मंगल समेत चन्द्रमा बैठा हो तो उन मनुष्यों को हथियार से या शत्रु से भय होता है और जो पापग्रह चौथे घर में स्थित हों तो हाथी या घोड़े की सवारी से पतन (गिरना) होता है और उसीसे शरीर में बड़ी भारी पीड़ा प्राप्त होती है॥ २६॥

शुभ फल।

शुभा द्यूने विजयदा द्यूतादर्थे सुखावहाः।
नवमे धर्मभाग्यार्थराजगौरवकीर्तिदाः॥ २७॥

जो शुभग्रह दिनप्रवेश लग्न से सातवें घर में बैठे हों तो वह जुआं से विजय देते हैं और जो दूसरे घर में बैठे हों तो सुख को प्राप्त करते हैं और जो नवें घर में स्थित हों तो धर्म, भाग्य, धन, राजगुरुत्व और कीर्ति को देते हैं॥ २७॥

दिनप्रवेश में चन्द्रमा की अवस्था ।

दिनप्रवेशोऽस्ति विधुरवस्थायां तु यादृशि ।
तदवस्थातुल्यमसौ फलं दत्ते न संशयः ॥ २८ ॥

दिनप्रवेश समय जिस अवस्था में चन्द्रमा बैठा होता है उसी अवस्था के तुल्य फल को देता है इस में सन्देह नहीं है ॥ २८ ॥

अवस्था-आनयन ।

विहाय राशिं चन्द्रस्य भागाद्विघ्नाश्शरोद्धृताः ।
लब्धं गता अवस्थास्स्युर्भोग्यायाः फलमादिशेत् ॥ २६ ॥

पण्डित को उचित है कि दिनप्रवेशसमय में चन्द्रमा का साधन करे । उस स्पष्ट चन्द्रमा की राशि को छोड़कर शेष अंशादिकों को दो से गुण देवे, उनमें पाँच का भाग लेने से जो लब्ध हों वे अवस्थाएँ होती हैं । उन में जो भोग्यअवस्था हो उसका फल कहना चाहिए ॥ २६ ॥

चन्द्रमा की अवस्थाओं का फल ।

प्रवासः प्रवासोपगे रात्रिनाथेऽ
र्थनाशस्तु नष्टोपगे मृत्युभीतिः ।
मृतावस्थिते स्याज्जयायां जयस्तु
विलासस्तु हास्योपगे कामिनीभिः ॥ ३० ॥
रतौ स्याद्रतिः क्रीडिता सौख्यदात्री
प्रसुप्तापि निद्रां कलिं देहपीडा ।
भयं तापहानिः सुखं स्यात्तु भुक्ता
ज्वरा कम्पिता सुस्थितासु क्रमेण ॥ ३१ ॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां मासदिनप्रवेशादिविचारोनामा
ऽष्टमंप्रकरणम् ॥ ८ ॥

१ प्रवास अवस्थामें चन्द्रमा हो तो परदेश गमन होता है, २ नष्टावस्था में द्रव्य का नाश, ३ मृतावस्था में मृत्यु भय, ४ जया अवस्था में जय, ५

हास्य अवस्था में कामिनियों के साथ विलास, ६ रति अवस्था में विषय-सौख्य होता है और ७ क्रीड़िता अवस्था सौख्य देती है, ८ प्रसुप्ता अवस्था नींद और लड़ाई को भी करती है, ९ भुक्तावस्था में देह में पीड़ा उत्पन्न होती है, १० ज्वरावस्था में भय होता है, ११ कम्पितावस्था में ताप और हानि होती है और १२ सुस्थितावस्था में सुख होना है। क्रम से ऐसा फल जानना चाहिए॥ ३०। ३१॥

इति श्रीमत्मुकुलशक्तिधरविरचितायां नीलकण्ठीभाषाव्याख्यायां मासदिवसफलविचारोनामाष्टमं प्रकरणम्॥ ८॥

नवमं प्रकरणम्।

मृगयाविचार।

सवीर्यौ कुजज्ञौ नृपाखेटसिद्ध्यै
न सिद्धिर्यदा वीर्यहीनाविमौ स्तः।
जलाखेटमाहुः सवीर्यैर्ग्रहर्क्षै-
र्जलाख्यैर्नगाख्यैर्नगाखेटमाहुः॥ १॥

दो०। नवयें प्रकरण महँ कहब मृगयाभुजिस्वपिज्ञान।
पुनि वर्णब कविवंशधर लखैं ताहि धीमान॥ १॥

यदि वर्ष में मंगल और बुध ये दोनों बलिष्ठ हों तो वह राजाओं के शिकार की सिद्धि के लिए होते हैं और यदि वे दोनों निर्बल हों तो शिकार की सिद्धि नहीं होती है। जलसञ्ज्ञक राशियों (कर्क, वृश्चिक, मीन) से जलसम्बन्धी शिकार को और पर्वतसंज्ञक राशियों (मेष, सिंह, धनुष) से पर्वतसम्बन्धी शिकार को आचार्य लोग कहते हैं॥ १॥

अन्यविचार।

लग्नास्तनाथौ केन्द्रस्थौ निर्बलौ क्लेशदायिनी।
मृगयोक्ता शुभफला वीर्याढ्यौ यदि तौ पुनः॥ २॥

लग्नस्वामी और जायाभाव का स्वामी ये दोनों यदि निर्बल होकर

पहिले, चौथे, सातवें और दशवें इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हों तो वह शिकार क्लेश की देनेवाली होती है और यदि लग्नेश तथा सप्तमेश दोनों बली होकर केन्द्र में बैठे हों तो मृगया शुभ फल देती है ॥ २ ॥

भोजन-चिन्ता ।

लग्नाधिपो भोज्यदाता सुखेशो भोज्यमीरितम् ।
बुभुक्षामदपः कर्मपतिर्भोक्तेति चिन्तयेत् ॥ ३ ॥

लग्न का स्वामी भोजन का देनेवाला तथा चौथे घर का स्वामी भोजन की वस्तु और सातवें भाव का स्वामी भोजन की इच्छा एवं दशमघर का स्वामी भोजनकर्ता होता है यह विचार आचार्यों ने कहा है ॥ ३ ॥

अन्ययोग ।

लग्ने लाभे च सत्खेटैर्युते दृष्टे च भोजनम् ।
जीवे लग्ने सिते वापि सुभोज्यं दुःस्थितावपि ॥ ४ ॥

लग्नस्थान और ग्यारहवाँ घर ये दोनों शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हों तो भोजन मिलता है और लग्नस्थान में बृहस्पति अथवा शुक्र स्थित हों तो दारिद्र्यादि दुःख की प्राप्ति में भी सुन्दर भोजन मिलता है ॥ ४ ॥

अन्ययोग ।

मन्दे तमसि वा लग्ने सूर्येणालोकिते युते ।
लभ्यते भोजनं नात्र शस्त्रभीतिस्तदा क्वचित् ॥ ५ ॥

जिस प्राणी के लग्न में शनैश्चर अथवा राहु बैठा हो और उसको सूर्य देखता हो अथवा सूर्य से युक्त हो तो इस योग में भोजन नहीं मिलता किन्तु कहीं से शस्त्र का भय होता है ॥ ५ ॥

अन्ययोग ।

रविदृष्टं युतं वापि लग्नं न यदि तत्र हि ।
उपवासस्तदा वाच्यो नक्तं वा विरसाशनम् ॥ ६ ॥

यदि लग्न सूर्य से दृष्ट अथवा युक्त न हो तो उपवास कहना चाहिए अथवा रात्रि में विरस (रसरहित) भोजन मिलेगा यह कहना चाहिए ॥ ६ ॥

अन्ययोग।

चन्द्रे कर्मगते भोज्यमुष्णं शीतं सुखे कुजे।
तुर्ये खेटस्य वसतो भोज्यान्ने रसमादिशेत्॥ ७॥

चन्द्रमा दशवें घर में बैठा हो तो गरम भोजन मिलता है और जो मंगल चौथे घर में स्थित हो तो ठण्ढा भोजन प्राप्त होता है और चौथे घर में बैठे हुए ग्रहों के अनुसार भोजन के अन्न का रस कहना चाहिए॥ ७॥

अन्ययोग।

स्निग्धमन्नं सिते तुर्ये तैलसंस्कृतमर्कजे।
नीचोपगे कदशनं विरसं च असंस्कृतम्॥ ८॥

चौथे घर में शुक्र बैठा हो तो भोजन में चिकना अन्न प्राप्त होता है और जो शनैश्चर चौथे स्थान में बैठा हो तो तैल से भुना हुआ अन्न मिलता है और जो नीच राशि में उक्त ग्रह बैठे हों तो रसरहित और संस्कारहीन बुरा भोजन मिलता है॥ ८॥

सूर्यादिभिर्लग्नगतैः सवीर्यै राजादिगेहे भुजिमामनन्ति।
सुखे सुखेशे सबले सुभोज्यं चरादिके स्यादसकृत्सकृद्द्विः ९॥

जो सूर्यआदि ग्रह बलवान् होकर लग्न में बैठे हों तो राजा आदि के घरों में भोजन आचार्यों ने कहा है और जो चौथे घर का स्वामी बलवान् होकर चौथे घर में स्थित हो तो सुन्दर भोजन मिलता है और जो चौथे घर का स्वामी चरराशि में बैठा हो तो बहुत बार भोजन खाने में आता है और जो स्थिरराशि में बैठा हो तो एकबार भोजन प्राप्त होता है और जो द्विस्वभाव लग्न में बैठा हो तो दोबार भोजन खाने में आता है॥ ९॥

मूलत्रिकोणगे खेटे लग्ने पितृगृहेऽशनम्।
मित्रालये मित्रभस्थे शत्रुगेहेऽरिगेहगे॥ १०॥

जो ग्रह मूल त्रिकोण में स्थित होकर लग्न में बैठा हो तो पिता के घर में भोजन प्राप्त होता है और जो मित्र की राशि में बैठा हो तो मित्र

१— "सिंहो वृषः प्रथमषष्ठहयांगतौलिकुम्भास्त्रिकोणभवनानि भवन्ति सूर्य्यात्"। इति बृहज्जातके।

के घर में भोजन प्राप्त होता है और जो शत्रुघर में बैठा हो तो वैरी के घर में भोजन मिलता है ॥ १० ॥

शुभेक्षितयुते लग्ने बलाढ्ये स्वगृहे भुजिः।
गृहराशिस्वभावेन यत्नादन्यच्च चिन्तयेत् ॥ ११ ॥

जिस प्राणी के भोजन समय में शुभग्रहों से दृष्ट या युक्त और बल से पुष्ट लग्न हो तो उस प्राणी को अपने घर में भोजन मिलता है। पण्डितों को चाहिए कि ग्रहों की राशिस्वभाव द्वारा यत्न से अन्य (खाने के योग्य पदार्थों) का विचार करें ॥ ११ ॥

ग्रहों के बलद्वारा भोजन के अन्नों का विचार।

तिलान्नमर्के हिमगौ सुतण्डुला भौमे मसूराश्चणकाश्च भोज्यम्।
बुधे समुद्गाः खलु राजमाषाः गुरौ सगोधूमभुजिः सवीर्ये १२॥

जो लग्न में बलसहित सूर्य हो तो तिलों के लड्डुओं का भोजन मिलता है और बलयुक्त चन्द्रमा हो तो चावलों का, बलयुक्त मंगल हो तो मसूर और चनों का, बलसे संयुक्त बुध हो तो मूँग सहित उड़द-लोबिया का और बृहस्पति बलिष्ठ हो तो गेहूँ का भोजन मिलता है ॥ १२ ॥

शुक्रे यवा बाजरिका युगंधराः शनौ कुलित्थादिसमाषमन्नम्।
भोज्यं तुषान्नं शिखिराहुवीर्याच्छुभेक्षणालोकनतः सहर्षम् १३॥

जो शुक्र बली हो तो यव, बाजरा और जुँधरी अथवा ज़मींकन्द का भोजन मिलता है और जो शनैश्चर बली हो तो उड़दयुक्त कुलथी आदि अन्नों का भोजन और केतु तथा राहु बलवान् हों और इनको शुभग्रह देखते हों तो भूसी व कनकी आदि का भोजन मिलता है ॥ १३ ॥

सूर्ये मूलं पुष्पमिन्दौ कुजे स्यात्
पत्रं शाखां चापि शाकं सवीर्ये।
शुक्रेज्यज्ञे व्यञ्जनं भूरिभेदं
मन्देनेत्थं सामिषं राहुकेत्वोः ॥ १४ ॥

जो सूर्य वीर्यवान् हो तो मूली का साग भोजन में प्राप्त होता है और चन्द्रमा के बलिष्ठ रहते पुष्प (गोभी आदिकों के फूलका साग) व मंगल

सरलचित्त और जो लग्न में क्रूरग्रह हों तो प्रश्नकर्ता को कुटिल जानना चाहिए । यदि लग्न और सातवें स्थानपर शुभग्रहों की दृष्टि हो अथवा चन्द्रमा और बृहस्पति की दृष्टि हो तो प्रश्नकर्ता को सरल चित्त जानना चाहिए ॥ ८ । ९ ॥

यदि गुरुबुधयोरेकः पश्यत्यस्ताधिपं च रिपुदृष्ट्या ।
तत्कुटिलः प्रष्टा खल्वनयोः रेकस्तयोः साधुः ॥ १० ॥
सम्यग्विचार्य लग्नं ब्रूयात्प्रश्नं सकृद्यथाशास्त्रम् ।
यस्त्वेकं ब्रूतेऽसौ तस्य न मिथ्या भवेद्वाणी ॥ ११ ॥

यदि गुरु और बुध इनमें से कोई एक सप्तमेश को शत्रुदृष्टि से देखता हो तो पृच्छक को कुटिल जानना तथा इनमें से कोई एक सप्तमेश को मित्रदृष्टि से देखता हो तो सरलस्वभाव जानना । इसलिए लग्न का अच्छे प्रकार विचार करके शास्त्रानुसार एक बार प्रश्न कहना चाहिए । जो एकही प्रश्न को बताता है उसकी वाणी मिथ्या नहीं होती है ॥ १०।११ ॥

बहुत से प्रश्न कहने की विधि ।

बहूनि यदि प्रश्नानि युगपद्यदि पृच्छति ।
प्रष्टा तेषां विधिं वक्ष्ये शास्त्रतो लोकतुष्टये ॥ १२ ॥
आदिमं लग्नतो ज्ञानं चन्द्रस्थानाद्द्वितीयकम् ।
सूर्यस्थानात्तृतीयं स्यात्तुर्यं जीवग्रहाद्भवे ॥ १३ ॥
बुधभृग्वोर्बलीयः स्यात्तद्ग्रहात्पञ्चमं पुनः ।
राश्यनुरूपं कथयेत्संज्ञाध्यायोक्तवद्बुधः ॥ १४ ॥

यदि पृच्छक एक साथ बहुत से प्रश्न पूछे तो उनकी भी विधि, लोगों की प्रसन्नता के लिए, शास्त्रानुसार कही जाती है । पहला प्रश्न लग्न से, दूसरा चन्द्रमा के स्थान से, तीसरा सूर्य के स्थान से और चौथा प्रश्न बृहस्पति के स्थान से कहना चाहिए तथा पाँचवाँ बुध और शुक्र इनमें जो बलवान् हो उस ग्रह के स्थान से, राशि के अनुसार, कहना चाहिए जैसा कि संज्ञाध्याय में राशियों के रूप, रंग, धातु और आकार प्रकार कहे हैं उनका विचार करके बुद्धिमान् प्रश्न कहे ॥ १२ । १४ ॥

राशिचक्र का पूजन।

राशिचक्रं समभ्यर्च्य फलैः पुष्पैः सरत्नकैः।
प्रष्टा सुभूमौ दैवज्ञानेकं पृच्छेत्प्रयोजनम् ॥ १५ ॥

प्रश्नकर्ता अच्छे स्थान में फल, फूल और रत्नों से राशिचक्र का पूजन करके पण्डितों से एक बार अपने प्रयोजन को पूछे ॥ १५ ॥

ग्रहों की दीप्तादि अवस्थाओं से विचार।

दशभेदं ग्रहाणां च गणितं भावजं तथा।
विमृश्यैकं च कथयेन्नानेकं प्राह पद्मभूः ॥ १६ ॥
दीप्ताद्यं दशभेदं च ग्रहाणां भावजं फलम्।
विचार्य प्रवदेद्यस्तु तस्योक्तं नान्यथा भवेत् ॥ १७ ॥

ग्रहों के दशभेदों को गणित से तथा भाव से उत्पन्न फल को विचार कर एक प्रश्न कहे। अनेक प्रश्न न कहे। यह ब्रह्माजी ने कहा है। ग्रहों की दीप्तादि दश अवस्थाओं के भेद और ग्रहों के भाव से उत्पन्न फल को विचार कर जो पण्डित कहता है उसका वचन मिथ्या नहीं होता है ॥ १६।१७॥

ग्रहों की दीप्त आदि अवस्थाओं के नाम।

दीप्तो दीनोऽथ मुदितः स्वस्थः सुप्तो निपीडितः।
मुषितः परिहीनश्च सुवीर्य्यश्चाधिवीर्यकः ॥ १८ ॥

दीप्त १, दीन २, मुदित ३, स्वस्थ ४, सुप्त ५, पीड़ित ६, मुषित ७, हीन ८, सुवीर्य ९ और अधिवीर्य १० ये ग्रहों की अवस्थाओं के दश भेद हैं ॥ १८ ॥

ग्रहों की दीप्तआदि अवस्थाओं के लक्षण।

स्वोच्चे दीप्तः समाख्यातो नीचे दीनः प्रकीर्तितः।
मुदितो मित्रगेहस्थः स्वस्थश्च स्वगृहे स्थितः ॥ १९ ॥
शत्रुगेहस्थितः सुप्तो जितोऽन्येन निपीडितः।
नीचाभिमुखगो हीनो मुषितोऽस्तंगतो ग्रहः ॥ २० ॥
सुवीर्यो कथितः प्राज्ञः स्वोच्चाभिमुखसंस्थितः।
अधिवीर्यो निगदितः सुरश्मिः शुभवर्गगः ॥ २१ ॥

अपने उच्च में स्थित ग्रह दीप्त, नीच में स्थित ग्रह दीन, मित्र घर में स्थित मुदित और अपनी राशि में स्थित ग्रह स्वस्थ होता है। शत्रु स्थान में स्थित ग्रह सुप्त, अन्यग्रहों से जीता हुआ पीड़ित, नीचाभिलाषी ग्रह हीन और अस्तंगत ग्रह मुषित कहलाता है। अपने उच्च का अभिलाषी ग्रह सुवीर्य और शुभवर्गगत सुन्दररश्मि में प्राप्त ग्रह अधिवीर्य होता है १९।२१॥

ग्रहों की दीप्तादि अवस्थाओं का फल।

दीप्ते सिद्धिश्च कार्य्याणां दीने दुःखसमागमः।
स्वस्थे कीर्तिस्तथा लक्ष्मीरानन्दो मुदितं महान् ॥ २२ ॥
सुप्ते रिपुभयं दुःखं धनहानिर्निपीडिते।
मुषिते परिहीने च कार्यनाशोऽर्थसंक्षयः ॥ २३ ॥
गजाश्वकनकावाप्तिं सुवीर्ये रत्नसंपदः।
अधिवीर्ये राज्यलब्धिर्ग्रहैर्मित्रार्थसङ्गमः ॥ २४ ॥

दीप्तावस्था में प्राप्त ग्रह कार्य सिद्ध करता है, दीन अवस्था में दुःख, स्वस्थ में कीर्ति और धन तथा मुदित अवस्था में ग्रह बहुत आनन्द देता है। सुप्तग्रह में वैरी से भय, पीड़ित में धनहानि, मुषित में कार्यनाश और परिहीन अवस्था में धन का नाश होता है। सुवीर्यावस्था में हाथी, घोड़ा, सुवर्ण और रत्न आदि सम्पत्ति का लाभ तथा अधिवीर्यावस्था में ग्रह हो तो राज्य का लाभ और मित्र तथा धन का संग होता है ॥ २२।२४ ॥

सूर्य का स्वरूप।

पूर्वः सत्त्वं नृपस्तातः क्षत्री ग्रीष्मोऽरुणश्चलः।
मधुदृक् पैत्तिको धातुः शूरः सूक्ष्मकचो रविः ॥ २५ ॥

पूर्व का स्वामी, सतोगुणी, राजा, पिता, क्षत्रिय, ग्रीष्मऋतुप्रधान, रक्तवर्ण, चलस्वभाव, शहदतुल्य नेत्र, पित्तधातु, शूर और सूक्ष्मकेश ये सूर्य के रूप और गुण हैं ॥ २५ ॥

चन्द्रमा का स्वरूप।

कफी वर्षी मृदुर्माता पयो गौरश्च सात्त्विकः।
जीवो वश्यश्चरो वृत्तो मारुताशो विधुः सुदृक् ॥ २६॥

कफ-प्रकृति, वर्षाऋतु, कोमल स्वभाव, मातासंज्ञक, जलतत्त्व, गौरवर्ण, सतोगुणी, जीवसंज्ञक, चरवश्य, गोलाकृति, वायुदिशा का स्वामी और सुन्दर नेत्र ये चन्द्रमा के गुण-रूप हैं ॥ २६ ॥

मंगल का स्वरूप ।

ग्रीष्मः क्षत्रतमो रक्तो याम्यः सेनाग्रणीश्चरः ।
युवा धातुश्च पिंगाक्षः क्रूरः पित्तं शिखी कुजः ॥ २७ ॥

ग्रीष्मऋतु, क्षत्रियजाति, तमोगुणी, दक्षिणदिशा का स्वामी, सेनापति, चरस्वभाव, युवावस्था, पित्तधातु, पीतवर्ण नेत्र, क्रूरप्रकृति और शिखावाला ये मंगल के गुण-रूप हैं ॥ २७ ॥

बुध का स्वरूप ।

शरदीशो हरिर्दीर्घः षंढो मूलं कुमारकः ।
लिपिज्ञ उत्तरेशश्च शूद्रः सौम्यस्त्रिधातुकः ॥ २८ ॥

शरदृऋतु का स्वामी, हरितवर्ण, लंबाशरीर, नपुंसक, मूलवस्तु का स्वामी, कुमारावस्था, लेखनकला का ज्ञाता, उत्तर दिशा का स्वामी, शूद्र-जाति, सरलस्वभाव और तीनों धातुवाला ये बुध के गुण-रूप हैं ॥ २८ ॥

बृहस्पति का स्वरूप ।

सत्त्वं पीतो हिमः श्लेष्मा दीर्घो मन्त्री द्विजो नरः ।
मध्वैशानी कफो जीवो मधुपिङ्गलदृक्तथा ॥ २९ ॥

सतोगुणी, पीतवर्ण, ठंडास्वभाव, कफप्रकृति, लम्बा शरीर, देवमंत्री, ब्राह्मण, पुरुष, मधुरप्रिय, ईशान दिशा का स्वामी, कफ प्रकृति, शहद के तुल्य पीले नेत्रवाला ये बृहस्पति के गुण-रूप हैं ॥ २९ ॥

शुक्र का स्वरूप ।

शुक्रः शान्तो द्विजो नारी वैश्यो मन्त्री चरः सितः ।
आग्नेयी दिक् कफश्चाम्लः कुटिलासितमूर्धजः ॥ ३० ॥

शान्तस्वभाव, ब्राह्मणवर्ण, स्त्रीसंज्ञक, वैश्यजाति, दैत्यों का मंत्री, चरस्वभाव, श्वेतवर्ण, आग्नेय दिशा का स्वामी, कफप्रकृति, अम्लधातु, टेढ़े श्याम रंग के बालोंवाला ये शुक्र के गुण-रूप हैं ॥ ३० ॥

शनि का स्वरूप।

कृष्णस्तमः कृशो वृद्धः षण्ढो मूलान्त्यजोऽलसः।
शिशिरः पवनः क्रूरः पश्चिमो वातुलः शनिः॥ ३१॥

कृष्णवर्ण, तमोगुणी, कृशशरीर, वृद्धावस्था, नपुंसक, मूल वस्तु प्रधान, चाण्डाल, आलसी, शिशिर ऋतु का स्वामी, वायुप्रधान, क्रूरस्वभाव, पश्चिमदिशा का स्वामी तथा वाचाल ये शनैश्चर के गुण-रूप हैं॥ ३१॥

राहु-केतु का स्वरूप।

राहुर्धातुः शिखी मूलं शेषमन्यच्च मन्दवत्।
चिन्तनीयं विलग्नेशात्केन्द्रगाद्वा बलाधिकात्॥ ३२॥

राहु धातुप्रधान, जटाधारी तथा मूलवस्तुवाला है। शेष गुण-रूप शनि के समान हैं। इसी प्रकार केतु का भी विचार करना। यह पूर्वोक्त ग्रहों का स्वभाव आदि लग्न से लग्नेश से, या केन्द्र से अथवा जो ग्रह बलवान् हो उसके अनुसार प्रश्न के लक्षण आदि कहना चाहिए॥ ३२॥

द्वादशभावविचारः।

लग्न से विचारने योग्य कार्य।

सौख्यमायुर्वयो जातिरारोग्यं लक्षणं गुणम्।
क्लेशाकृती रूपवर्णस्तनोश्चिन्त्यं विचक्षणैः॥ ३३॥

सुख, आयु, अवस्था, जाति, नीरोगता, लक्षण, गुण, क्लेश, आकृति (स्वरूप), रूप और वर्ण इनका विचार पंडितों को लग्न से करना चाहिए॥ ३३॥

धनभाव से विचारने योग्य कार्य।

मुक्ताफलं च माणिक्यं रत्नधातुधनाम्बरम्।
हयकार्याध्वविज्ञानं वित्तस्थानाद्विलोकयेत्॥ ३४॥

मोती, माणिक्य, रत्न, धातु, धन, वस्त्र, घोड़ासंबन्धी तथा मार्गसंबन्धी कार्यों का दूसरे स्थान से विचार करना चाहिए॥ ३४॥

तृतीयभाव से विचारणीय कार्य।

भगिनीभ्रातृभृत्यानां दासकर्मकृतामपि।
कुर्वीत वीक्षणं विद्वान्सम्यग्दुश्चिक्यवेश्मतः॥ ३५॥

बहिन, भाई, नौकर, दासकर्म करना (व्यापार कर्म) आदि का विचार विद्वान् को तीसरे भाव से करना चाहिए॥ ३५॥

चौथे घर से विचारणीय कार्य।

वाटिकाखलकक्षेत्रमहौषधिनिधीनपि।
विवरादिप्रवेशं च पश्येत्पातालतो बुधः॥ ३६॥

बाग लगाना, खलिहान, खेती, औषधि (अन्नादि), निधि (भूमिस्थधन आदि) तथा सुरंग, कन्दरा आदि में प्रवेश करना इनका चौथे स्थान से विचार करना चाहिए॥ ३६॥

पाँचवे भाव से विचारने योग्य कार्य।

गर्भापत्यविनेयानां मन्त्रसंधानयोरपि।
विद्याबुद्धिप्रबन्धानां सुतस्थाने विनिर्णयः॥ ३७॥

गर्भ, सन्तान, नम्रता, मन्त्रसाधन या सम्मति आदि लेना, विद्या तथा बुद्धि संबन्धी प्रबन्ध इनका पाँचवें भाव से विचार करना चाहिए॥ ३७॥

छठे भाव से विचारने योग्य कार्य।

चौरभीरिपुसंग्रामखरोष्ट्रक्रूरकर्मणाम्।
मातुलान्तकभृत्यानां रिपुस्थानाद्विनिर्णयः॥ ३८॥

चोरों का भय, शत्रुओं से युद्ध तथा गधा व ऊँटों का तथा क्रूरकर्मों का विचार, एवं मामा के पक्ष का, रोग का और नौकरों का विचार छठे स्थान से करना चाहिए॥ ३८॥

सातवें भाव से विचारणीय कार्य।

वाणिज्यं व्यवहारं च विवादं च समं परैः।
गमागमकलत्राणि पश्येत्प्राज्ञः कलत्रतः॥ ३९॥

वाणिज्य-व्यापार, व्यवहार (लेन-देन), दूसरों के साथ विवाद या

संधि तथा आना जाना और स्त्रीसंबन्धी विचार इनको बुद्धिमान् सप्तमभाव से विचारे ॥ ३९ ॥

आठवें भाव से विचारणीय कार्य।

नद्युत्तारेऽध्ववैषम्ये दुर्गे च शस्त्रसङ्कटे।
नष्टे दुष्टे रणे व्याधौ छिद्रे छिद्रं निरीक्षयेत् ॥ ४० ॥

नदी से तैरकर पार होना, विषम (ऊँचे नीचे) मार्गसम्बन्धी विचार, क़िला का विचार, शस्त्रसंकट, नष्ट होना, दुष्टता तथा रणकार्य, रोग और परछिद्रान्वेषण इनको आठवें भाव से विचारना चाहिए ॥ ४० ॥

नवमभाव से विचारने योग्य कार्य।

वापीकूपतडागादिप्रपादेवगृहाणि च।
दीक्षां यात्रां मठं धर्मं धर्मान्निश्चिन्त्य कीर्तयेत् ॥ ४१ ॥

बावड़ी, कुआँ, तालाब आदि तथा पौशाला, देवमंदिर, घर, मंत्रदीक्षा, यात्रा, मठसंबन्धी कार्य तथा धर्मसंबन्धी कार्य का विचार नवम भावसे करना चाहिए ॥ ४१ ॥

दशमभाव से विचारने योग्य कार्य।

राज्यं मुद्रां परं पुण्यं स्थानं तातं प्रयोजनम्।
वृष्ट्यादिव्योमवृत्तान्तं व्योमस्थानान्निरीक्षयेत् ॥ ४२ ॥

राज्यकार्य, मुद्रा (सिक्का बनाना), पुण्य, स्थान, पिता, प्रयोजन तथा वर्षा आदि आकाश का वृत्तान्त दशम भाव से विचारना चाहिए ॥ ४२ ॥

ग्यारहवें भाव से विचारने योग्य कार्य।

गजाश्वयानवस्त्राणि सस्यकाञ्चनकन्यकाः।
विद्वान् विद्यार्थयोर्लाभं लक्षयेल्लाभभावतः ॥ ४३ ॥

हाथी, घोड़ा, वाहन, वस्त्र, खेती संबन्धी अन्न, सोना, पुत्री, विद्या तथा धन के लाभ का विचार बुद्धिमान् ग्यारहवें भाव से करे ॥ ४३ ॥

बारहवें स्थान से विचारने योग्य कार्य।

त्यागभोगविवादेषु दानेष्टकृषिकर्मसु।
व्ययस्थानेषु सर्वेषु विद्धि विद्वन् व्ययं व्ययात् ॥ ४४ ॥

छोड़ना, भोगविलास, विवाद, दान, इष्टवस्तु, खेती का काम और खर्चसंबन्धी सब विचार बारहवें भाव से करे ॥ ४४ ॥

भावसंबन्धी बलाबल।

यो यो भावः स्वामिदृष्टो युतो वा
सौम्यैर्वा स्यात्तस्य तस्यास्ति वृद्धिः।
पापैरेवं तस्य भावस्य हानि-
र्निर्देष्टव्या पृच्छतां जन्मतो वा ॥ ४५ ॥

अपने स्वामी से अथवा शुभग्रहों से जो जो भाव देखा जाता हो अथवा युक्त हो उस उस भाव की वृद्धि होती है और जो भाव पापी ग्रहों से देखा जाता हो अथवा युक्त हो तो उस भाव की हानि कहना चाहिए। यह जन्म समय तथा प्रश्न समय में विचार करना ॥ ४५ ॥

प्रश्न में शुभाशुभ।

सौम्ये विलग्ने यदि वा स्ववर्गे
शीर्षोदये सिद्धिमुपैति कार्य्यम्।
अतो विपर्यस्तमसिद्धिहेतुः
कृच्छ्रेण संसिद्धिकरं विमिश्रम् ॥ ४६ ॥

प्रश्न लग्न में सौम्यराशि हो अथवा शुभग्रह उसमें स्थित हों या लग्न अपने अधीश्वर के वर्ग में हो अथवा शीर्षोदय[1] लग्न हो तो प्रश्नकर्ता के कार्य की सिद्धि होती है। यदि इससे उलटा हो अर्थात् लग्न पापग्रहों के वर्ग में हो अथवा पापीग्रहों से युक्त हो अथवा पृष्ठोदय[2] हो तो कार्य की सिद्धि नहीं होती और जो लग्न शुभाशुभ ग्रहों से युक्त हो तो बड़ी कठिनता से कार्य की सिद्धि होती है ॥ ४६ ॥

दृष्टिवश से कार्यसिद्धि।

लग्नपतिर्यदि लग्नं कार्याधिपतिश्च वीक्षते कार्यम्।
लग्नाधीशः कार्यं कार्येशः पश्यति विलग्नम् ॥ ४७ ॥

१—शीर्षोदयराशि ३, ५, ६, ७, ८, ११ हैं। २—पृष्ठोदय राशि १, ४, ९, १० हैं।

लग्नेशः कार्येशं विलोकते लग्नपं तु कार्येशः।
शीतगुदृष्टौ सत्यां परिपूर्णा कार्यनिष्पत्तिः॥ ४८॥

अगर लग्नेश लग्न को देखता हो और कार्याधिप कार्यभाव को देखता हो तथा लग्नेश कार्यभाव को और कार्यभाव का स्वामी लग्न को देखता हो एवं लग्न का स्वामी कार्येश को और कार्यभाव का स्वामी लग्नेश को देखता हो और उसपर चन्द्रमा की दृष्टि भी हो तो कार्य की पूर्ण सिद्धि होती है॥ ४७–४८॥

लग्नेश आदि की लग्नपर दृष्टि का फल।

कथयन्ति पादयोगं पश्यति सौम्यो न लग्नपो लग्नम्।
लग्नाधिपं च पश्यति शुभग्रहश्चार्धयोगोऽत्र॥ ४९॥
एकः शुभग्रहो यदि पश्यति लग्नाधिपं विलोकयति।
लग्नं पादोनयोगमाहुस्तदा बुधा कार्यसंसिद्धौ॥ ५०॥

शुभग्रह लग्न को देखते हों और लग्नेश प्रश्न लग्न को नहीं देखता हो तो उसको चौथाई योग (५ विश्वा) कहते हैं। और जो शुभग्रह लग्नाधिप को देखते हों तो आधायोग (१० बिश्वा) होता है। अगर शुभग्रह लग्नेश को और लग्न को भी देखता हो तो कार्य सिद्धि का पौन योग (१५ विश्वा) कहना चाहिए॥ ४९–५०॥

लग्नपतिदर्शने सति शुभग्रहौ द्वौ त्रयोऽथवा लग्नम्।
पश्यन्ति यदि तदानीमाहुर्योगं त्रिभागोनम्॥ ५१॥
क्रूरावेक्षणवर्ज्यश्चन्द्रः सौम्याश्च खेचरा लग्नम्।
लग्नेशदर्शने सति पश्यन्तः पूर्णयोगकराः॥ ५२॥

लग्न पर लग्नेश की दृष्टि होने पर अगर दो या तीन ग्रह लग्न को देखते हों तो त्रिभागऊन (पौनकम) कार्य सिद्ध होता है। और क्रूर ग्रहों की दृष्टि से रहित होकर चन्द्रमा और शुभग्रह लग्न को देखते हों तथा लग्न पर लग्नेश की दृष्टि भी हो अथवा क्रूरदृष्टि वर्जित चन्द्रमा और

---

१ क्रूरावेक्षणवर्ज्यश्चन्द्रः सौम्यो वा लग्नपं लग्नं च।
पश्यन्तः पूर्णं तद्योगं कार्यस्य संसिद्धैव। इति क्वचित्पाठः॥

सौम्यग्रह लग्नेश तथा लग्न को पूर्णदृष्टि से देखते हों तो कार्य पूर्ण सिद्ध होता है ॥ ५१ । ५२ ॥

अनिष्टयोग ।

क्रूराक्रान्तः क्रूरयुतः क्रूरदृष्टश्च यो ग्रहः ।
विरश्मितां प्रपन्नश्च सोऽनिष्टफलदायकः ॥ ५३ ॥

जो ग्रह क्रूर ग्रहों से आक्रान्त या क्रूरों से युक्त हो अथवा क्रूर ग्रहोंसे देखा जाता हो और अस्त हो तो वह ग्रह अनिष्ट (खराब) फल का देनेवाला होता है ॥ ५३ ॥

हमारा कार्य कब सिद्ध होगा ?

अमुकं गदेति कार्यं कदा भविष्यत्यमुत्र पृच्छायाम् ।
लग्नं लग्नाधिपतिः कार्यं कार्याधिपः पश्येत् ॥ ५४ ॥
लग्नस्थः कार्येशः पश्यति चेल्लग्नपं तदैव भवेत् ।
तत्कार्यं यद्यन्यः स्थितः सत्वरं तदा न स्यात् ॥ ५५ ॥

समरसिंह के मत से कहते हैं—किसी ने पूछा कि बताइए हमारा कार्य कब सिद्ध होगा ? इस प्रश्न में यदि लग्नेश लग्न को देखता हो और कार्येश कार्यभाव को देखता हो तो शीघ्रही कार्य की सिद्धि होती है । अथवा कार्य भाव का स्वामी लग्न में बैठा हो और लग्नेश को देखता हो तो भी शीघ्र कार्य सिद्ध हो जाता है । यदि लग्नेश अन्यत्र स्थित हो (लग्न को न देखता हो) अथवा कार्येश कार्यभाव को और लग्नेश को न देखता हो तो कार्य शीघ्र सिद्ध नहीं होता है ॥ ५४ । ५५ ॥

पश्यति यदा च लग्नं द्रक्ष्यति चन्द्रो विलग्नपं च यदा ।
लग्ने कार्ये च यदा द्वयोश्च योगे तदा सिद्धिः ॥ ५६ ॥
यदि लग्नपं न पश्यति कार्याधीशो विलग्नमथ तस्य ।
कार्यस्य हानिरुक्ता लग्नमृते किमपि न वाच्यम् ॥ ५७ ॥

यदि चन्द्रमा लग्न और लग्नेश को देखता हो अथवा लग्नेश और कार्येश एकत्र स्थित हों तो कार्य की सिद्धि होती है । यदि कार्याधीश लग्नेश और लग्न को न देखता हो तो उस कार्य की हानि कहना

चाहिए। क्योंकि लग्न के बिना कुछ भी न कहना चाहिए ॥ ५६ । ५७ ॥

द्रेष्काणवश से लाभ और हानि का विचार ।

लग्नपो मृत्युपश्चापि मृत्यौ स्यातामुभौ यदि ।
स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिन्प्रष्टुर्लाभस्तदा ध्रुवम् ॥ ५८ ॥
एवं द्वादशभावेषु द्रेष्काणैरेव केवलम् ।
बुधो विनिश्चयं ब्रूयाद्योगेष्वन्येषु निस्पृहः ॥ ५९ ॥

यदि लग्नेश और अष्टमेश दोनों आठवें स्थान में स्थित हों और एक ही द्रेष्काण में हों तो प्रश्नकर्ता को अवश्य लाभ होता है। इसी प्रकार बारहों भावों में केवल द्रेष्काण से ही निश्चय करके विद्वान् को फल कहना चाहिए। अन्य योगों में से यही बलवान् होता है ॥ ५८ । ५९ ॥

लाभादि में समय का विचार ।

उदयोपगतं राशिं तत्कलीकृत्य लिप्तिकां गुणयेत् ।
छायांगुलैश्च कुर्यात् हृत्वा मुनिभिस्ततः शेषः ॥ ६० ॥
गणयित्वैवं प्राग्वत् हृत्वा सौम्यस्य भवेदुदयः ।
कार्यप्राप्तिः प्रष्टुर्वक्तव्या नेतरैर्ग्रहैर्भवति ॥ ६१ ॥

प्रश्न समय तत्काल लग्न को स्पष्ट करके उसकी कला बना लेवे और उस समय बारह अंगुल तृण की छाया से उसको गुण देवे और उसमें सात का भाग देवे जो शेष बचे उसको मेषादि राशि जानो। यदि वह राशि सौम्य ग्रह की हो तो प्रश्नकर्ता के कार्य की सिद्धि होती है। और पापग्रहों की राशि होने से कार्य की हानि होती है ॥ ६० । ६१ ॥

ग्रहगुणकारो ज्ञेयो दैवविदा पंच ५ विंशतिः सैकः ।
मनवो १४ ङ्का ९ ष्टौ ८ त्रितयं ३ भवाः ११ सूर्यादितो ज्ञेयः ६२ ॥
गुणकारैक्यविभक्तः सूर्यादिगुणाङ्कसंशुद्धः ।
यस्य न शुद्ध्यति वर्गो विज्ञेयस्तद्वशात्कालः ॥ ६३ ॥

ज्योतिषियों को सूर्यादिकों का गुणक इस प्रकार जानना चाहिए—सूर्य के ५, चन्द्रमा के २१, मंगल के १४, बुध के ९, बृहस्पति के ८, शुक्र के

२ और शनि के ११। इन गुणकांकों के ऐक्य ७१ को पूर्वोक्त लग्न के कलात्मक पिण्ड को जो छायांगुलों से गुणा है उस पिण्ड में भाग दे। जो शेष बचे उसमें सूर्यादि के गुणकांकों को क्रम से घटावे। जिस ग्रह का गुणकांक न घटे उसी से समय का विचार करे॥ ६२। ६३॥

आरदिवाकरशेषे दिवसाः पक्षाश्च भृगुशशिनोः।
गुर्ववशेषे मासो ऋतवः सौम्ये शनैश्चरेऽब्दाः स्युः॥ ६४॥
आधाने धनप्राप्तौ गमनागमने पराजये चापि।
रिपुनाशे वा कालं पृच्छायां निश्चितं ब्रूयात्॥ ६५॥

इति श्रीनीलकण्ठविरचितायां ताजिकनीलकण्ठ्यां प्रश्नतन्त्रे प्रथमं प्रकरणम्॥ १॥

जैसे मंगल और सूर्य का गुणकांक न घटे तो उतने दिन, शुक्र और चन्द्रमा का गुणकांक न घटे तो पक्ष, बृहस्पति का न घटे तो महीना, बुध का न घटे तो ऋतु और शनि का गुणकांक न घटे तो उतने वर्ष जानना। गर्भाधान, धनप्राप्ति, आना-जाना, विजय-पराजय और वैरी का नाश इनका समय निश्चित करके प्रश्नकाल में कहना चाहिए॥ ६४। ६५॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां प्रश्नतन्त्रे खूबचन्दशर्मविरचितायां भाषाटीकायां प्रथमं प्रकरणम्॥ १॥

द्वितीयं प्रकरणम्।

द्वादशभावप्रश्नानि।

भूत, भविष्य और वर्तमान प्रश्न में शुभाशुभ फल।

भूतं भवद्भविष्यन्मम किं कथयेति जातपृच्छायाम्।
लग्नपतेः शशिनो वा बलमन्विष्यं बलाभावे॥ १॥
दृष्ट्वा नवांशकबलं शुभदृग्योगं च सर्वकालेषु।
प्रष्टुः शुभमादेश्यं विपरीतं व्यत्ययाद्वाच्यम्॥ २॥

कोई ऐसा प्रश्न करे कि मेरा भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्यकाल का क्या हाल है, कहिए। तब प्रश्न लग्न के स्वामी का अथवा चन्द्रमा का बल देखे। ये बली न हों तो नवांश का बल अथवा शुभग्रहों की दृष्टि और शुभग्रहों का बल देखकर हर समय पृच्छक को शुभ फल कहना चाहिए। यदि इससे उलटा हो अर्थात् उपरोक्त बलहीन तथा पापदृष्ट हों तो अशुभ फल कहना॥ १। २॥

लग्नेशो मूसरिफो यस्मात्तस्मादतीतमाख्येयम्।
येन युतस्तस्माद्भवेदेष्यं यो योक्ष्येत् तस्मात्॥ ३॥

लग्नेश का जिस ग्रह के साथ मूसरिफ योग हो उससे भूतकाल का और लग्नेश का जिस ग्रह से योग हो (अर्थात् लग्नेश जिस ग्रह के साथ बैठा हो) उससे वर्तमान का और लग्नेश की जिस ग्रह के साथ दृष्टि हो उससे भविष्य का हाल कहना॥ ३॥

शुभ फल।

यदि लग्ने लग्नपतिः सौम्ययुतो वा विलोकितः सौम्यैः।
तत्प्रष्टुर्व्याकुलता शरीरदोषा विनश्यन्ति॥ ४॥

यदि लग्नेश प्रश्न लग्न में हो और सौम्य ग्रहों से युक्त हो अथवा शुभ ग्रहों से देखा जाता हो तो प्रश्नकर्ता की व्याकुलता और शरीर के सब दोष नष्ट हो जाते हैं॥ ४॥

शुभाशुभ फल।

पापो यदि लग्नपतिस्तदा कलिर्व्याधिधननाशाः।
सौम्ये निर्वृतिबुद्धिर्द्रव्याप्तिः सौख्यमतुलं च॥ ५॥

यदि प्रश्न लग्न का स्वामी पापीग्रह हो तो कलह, शरीर में रोग और धन का नाश होता है। यदि लग्नेश शुभग्रह हो तो शुभ बुद्धि, धन की प्राप्ति और अत्यन्त सुख होता है॥ ५॥

द्वितीयस्थानसंबन्धी प्रश्न।

धनलाभस्य प्रश्ने लग्नेशेनेन्दुनाऽथ धननाथः।
कुरुते यदीत्थशालं शुभयुतिदृष्ट्या भवेल्लाभः॥ ६॥

क्रूरग्रहैर्धनस्थैर्दूरे लाभोऽन्यदप्यशुभम् ।
क्रूरमुथशिले धनेशे प्रष्टा म्रियतेऽथवा विलग्नेशे ॥ ७ ॥

धन लाभ के प्रश्न में—धनेश से चन्द्रमा और प्रश्नलग्नेश का इत्थशाल योग हो और शुभग्रहों से युक्त अथवा शुभग्रहों से धनेश दृष्ट हो तो धन का लाभ होता है। यदि धनस्थान में क्रूर ग्रह हों तो दूर से लाभ होता है और कुछ अशुभ फल भी होता है। यदि धनेश और लग्नेश का क्रूर ग्रहों से इत्थशाल हो तो प्रश्नकर्ता की मृत्यु हो जाती है ॥ ६ । ७ ॥

धनं धनपेत्थशाले मन्दगतिर्यत्र भावानाम् ।
तनुधनसहजादीनां प्रष्टुस्तद्द्वारतो लाभः ॥ ८ ॥

यदि धनभाव और धनेश ग्रह मन्द गतिवाला होकर तनु, धन और सहज आदि किसी भी भाव के साथ इत्थशाल करता हो तो उसी भाव के द्वारा धन की प्राप्ति होती है ॥ ८ ॥

प्रश्नदीपोक्त धनलाभयोग ।

लग्नस्थं चन्द्रजं चन्द्रः क्रूरो वा यदि पश्यति ।
धनलाभो भवत्याशु किंत्वनर्थोहि पृच्छतः ॥ ९ ॥
चन्द्रलग्नधनाधीशा दृष्टा युक्ताः परस्परम् ।
धनकेन्द्रत्रिकोणस्थाः सद्यो लाभकराः स्मृताः ॥ १० ॥

लग्न में स्थित बुध को चन्द्रमा अथवा क्रूरग्रह देखता हो तो शीघ्र लाभ होता है परन्तु पूछनेवाले के लिए अनर्थ होता है। चन्द्रमा, लग्नाधीश और धनेश ये परस्पर देखते हों अथवा एक स्थान में स्थित हों अथवा धन भाव में या केन्द्र १।४।७।१० स्थान में अथवा त्रिकोण ९।५ स्थान में स्थित हों तो शीघ्र लाभ करानेवाले होते हैं ॥ ९ । १० ॥

शुभदस्वामिषड्वर्गे लग्ने सौम्ययुतेक्षिते ।
प्रष्टुस्तात्कालिकी लब्धिरलब्धिस्तु विपर्यये ॥ ११ ॥
चतुर्थे सप्तमे चन्द्रे खे रवौ लग्नगे शुभे ।
प्रष्टुः सद्योऽर्थलाभः स्याल्लग्ने वा सुरमंत्रिणि ॥ १२ ॥

शुभ फल देनेवाले स्वामी के षड्वर्ग में लग्न हो और सौम्य ग्रहों से

युक्त हो अथवा देखा जाता हो तो प्रश्नकर्ता को तत्काल प्राप्ति होती है और इससे विपरीत हो तो प्राप्ति नहीं होती है। चौथे और सातवें चन्द्रमा हो और दशवें सूर्य हो तथा लग्न में शुभग्रह या लग्न में बृहस्पति हो तो पृच्छक को शीघ्र ही धन का लाभ होता है॥ ११। १२॥

तृतीय स्थानसम्बन्धी प्रश्न।

भ्राता नीरोग होगा या नहीं।

सहजपतिर्यदि सहजं पश्यति चेत्तद्द्वयं शुभैर्दृष्टम्।
तद्भ्रातरो गतरुजाः स्वस्थाः क्रूरेक्षणे वामम्॥ १३॥

तीसरे भाव का प्रश्न–तृतीय भाव का स्वामी यदि तीसरे घर को देखता हो और तृतीय भाव तथा तृतीयेश को शुभग्रह देखते हों तो उसका भाई रोग से छूटकर नीरोग हो जाता है। यदि तृतीय भाव और तृतीयेश को पापी अथवा क्रूरग्रह देखते हों तो पूर्वोक्त से विपरीत फल होता है॥ १३॥

यदि सहजपतिः षष्ठे तत्पतिना मुथशिलेऽथ तन्मान्द्यम्।
षष्ठेशे सहजस्थे सहजपतौ क्रूरिते वापि।
सूर्यस्य रश्मिसंस्थे भयावहं प्रष्टुरादेश्यम्॥ १४॥

यदि तृतीयेश छठे भाव में और षष्ठेश से इत्थशाल करता हो तो प्रश्नकर्ता के भाई को बीमार कहना। छठे भाव का स्वामी तीसरे घर में और तृतीयेश क्रूर हो अथवा क्रूरयुक्त हो अथवा सूर्य के साथ (अस्तंगत) हो तो पृच्छक को भयप्रद कहना चाहिए॥ १४॥

षष्ठाष्टमभावेशौ यद्भावेशेनेत्थशालिनौ स्याताम्।
पीडा तस्य प्रवदेत्षष्ठाष्टमभावगे वापि॥ १५॥
एवं सर्वेऽपि यथा पित्रोस्तुर्ये सुतानां च।
भृत्यचतुष्पदवर्गस्यास्ते स्त्रिया सुहृदो ये॥ १६॥

छठे और आठवें भाव के स्वामी जिस भाव के स्वामी से इत्थशाल करते हों अथवा छठे या आठवें भाव में स्थित हों तो उसी भाव से उत्पन्न पीड़ा कहना चाहिए। इसी प्रकार सब भावों का विचार करना चाहिए। जैसे चतुर्थेश का षष्ठेश और अष्टमेश से इत्थशाल हो अथवा चतुर्थेश छठे

या आठवें भाव में स्थित हो तो माता-पिता को कष्ट कहना । ऐसे ही पाँचवें से पुत्र का, सप्तम से नौकर, चतुष्पद, स्त्री और प्रियजनों का वृत्त कहना १५।१६

चतुर्थभावसम्बन्धी प्रश्न ।

भूमि लाभ का प्रश्न ।

लग्नपतीन्दुचतुर्थपतिमुथशिलमथवा गृहे गमनम् ।
प्रष्टुः पृथ्वीलाभदमसौम्यदृग्योगतो नैव ॥ १७ ॥

चौथे भाव का प्रश्न-पृथ्वी प्राप्ति के प्रश्न में लग्नेश, चन्द्रमा और चतुर्थेश इनका परस्पर इत्थशाल हो अथवा तीनों एकही स्थान में स्थित हों तो प्रश्नकर्ता को पृथ्वी का लाभ होगा और पापग्रह से दृष्ट हों वा पाप ग्रह से युक्त हों तो पृथ्वी का लाभ नहीं होता है ॥ १७ ॥

खेतीलाभ का प्रश्न ।

यदि पृच्छति कृषको मे क्षेत्राल्लाभो भवेच्च न वा ।
लग्नं कृषकस्तुर्यं भूमिर्द्यूनं कृषिस्तरुर्दशमम् ॥ १८ ॥
लग्नस्थे शुभखेटे साफल्यं कर्षकस्य कृषितः स्यात् ।
तुर्ये च क्रूरगते त्यक्त्वा भूमिं प्रयात्येषः ॥ १९ ॥
येन च शुभोपगते शुभं कृषेस्त्वन्यथा तु विपरीतम् ।
दशमे दशमपतौ वा शुभयुतदृष्टे शुभा वृत्ताः ॥ २० ॥

कोई किसान पूछे कि मुझे खेती से लाभ होगा या नहीं ? यहाँ लग्न को किसान, चौथे स्थान को भूमि, सातवें को खेती और दशवें को अन्न या वृक्षादि समझकर फल कहना । जैसे लग्न में शुभग्रह हों तो किसान को खेती में सफलता होती है । यदि चौथे में पापग्रह हों तो जमीन को छोड़कर किसान चला जायगा । सातवें स्थान में शुभग्रह हों तो खेती से लाभ होगा और पापग्रह हों तो विपरीत फल होगा । यदि दशवें स्थान में दशमेश बैठा हो या शुभयुक्त हो अथवा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो वृत्त अथवा अन्नादि अच्छे होंगे ॥ १८ । २० ॥

लग्ने क्रूरोपगते स्याच्चौरोपद्रवस्तु कृषिकर्तुः ।
वक्रातिचारवर्जे क्रूरे चौरस्य कृषिलाभः ॥ २१ ॥

यदि प्रश्न लग्न में क्रूर ग्रह बैठा हो तो किसान की खेती को चौरों से हानि हो। यदि वे क्रूर वक्र और अतिचार से रहित हों तो चौर को खेती से लाभ होता है। अथवा चौर से खेती को लाभ होता है॥ २१ ॥

भाड़ा पर खेती उठाने का प्रश्न।

भूभाटकपृच्छायां लग्नं प्रष्टा च भाटकं येन।
तस्योत्पत्तिर्दशमे तथावसानं चतुर्थे स्यात्॥ २२ ॥
लग्नस्य लग्नपस्य च शुभयोगे शुभसुशोभनं वामे।
द्यूने क्रूरोपगते यस्मादपि भाटकस्तोऽनर्थः॥ २३ ॥
दशमे क्रूरोपगते नोत्पत्तिर्बहुतरा भवेत्प्रष्टुः।
क्रूरार्दिते तु तुर्ये स्यादवसाने शुभं नास्य॥ २४ ॥

भूमि को भाड़ा पर या क़िस्त आदि पर उठाने के प्रश्न में लग्न को प्रश्नकर्ता, सातवें को भाड़ा, दशवें स्थान को खेती की पैदावार और चौथे भाव को परिणाम समझकर शुभाशुभ कहे। प्रश्न लग्न और लग्नेश शुभग्रह से युक्त हों अथवा दृष्ट हों तो प्रश्नकर्ता को शुभ फल होता है। यदि पापयुक्त अथवा दृष्ट हों तो अशुभ फल कहना। यदि सातवें भाव में क्रूर ग्रह स्थित हों तो किराया या क़िस्त आदि में अनर्थ होता है। यदि दशमभाव पापयुक्त या दृष्ट हो तो बहुत भाड़ा नहीं मिलेगा और चतुर्थ भाव पापाक्रान्त या पापदृष्ट हो तो परिणाम शुभ नहीं होता है॥ २२।२४॥

पञ्चम स्थानसम्बन्धी प्रश्न।

इस स्त्री से सन्तान होगी या नहीं।

यदि पृच्छत्येतस्याः स्त्रियो भवेन्मे प्रजा न वा काश्चित्।
लग्नेशेन्द्वोः सुतपतिना मुथशिलभावे प्रसूतिः स्यात्॥ २५॥
सुतभावपतिर्लग्ने लग्नपचन्द्रौ सुतेऽथ वा स्याताम्।
सत्वरितमेव वाच्या सविलम्बं नक्तयोगेन॥ २६ ॥

अगर कोई पूछे कि मेरी इस स्त्री के संतान होगी या नहीं तो प्रश्नलग्नेश और चन्द्रमा का पंचमेश के साथ इत्थशाल योग हो तो सन्तान होवेगी। यदि पंचमेश लग्न में हो और लग्नेश तथा चन्द्रमा पंचम में बैठे

हों तो शीघ्र ही संतानोत्पत्ति होती है। यदि नक्तयोग हो तो कुछ विलम्ब में संतान कहना चाहिए ॥ २५ । २६ ॥

दो सन्तान तथा पुत्र-पुत्रीयोग ।

द्विशरीरे च विलग्ने शुभयुतपुत्रे द्व्यपत्ययोगोऽस्ति ।
यदि लग्नपुत्रपतिपुंराशौ चेत्स्यात्तदा सुतो गर्भे ॥ २७ ॥
पुंराशौ पुंग्रहकृतमुथशिलयुक्तस्तदा सुतदः ।
अथवा विधुरपराह्णे सूर्यात्पृष्टे तदा स्त्री स्यात् ॥ २८ ॥

यदि द्विस्वभाव लग्न हो और पंचमस्थान में शुभग्रह हों तो दो सन्तान का योग कहना। यदि लग्नेश और पंचमेश पुरुष राशि में स्थित हों तो गर्भ में पुत्र कहना चाहिए। यदि पुरुषसंज्ञक राशि में पुरुषसंज्ञक ग्रहों का इत्थशाल हो तो भी पुत्रप्रद होता है और अपराह्णकाल में सूर्य से पीछे चन्द्रमा हो तो कन्या की उत्पत्ति होती है ॥ २७ । २८ ॥

दीर्घायु पुत्र का योग ।

होरास्वामी पुरुषः पुंराशौ चेत्तथापि सुतगर्भः ।
तुंगेन्दुसौम्ययुक्तं गर्भे दीर्घायुपुत्रसंभूतिः ॥ २९ ॥

यदि लग्नेश पुरुष ग्रह हो और पुरुषसंज्ञक राशि में बैठा हो तो भी पुत्र ही होता है। यदि चन्द्रमा उच्चराशि में शुभग्रहों से युक्त पंचम में बैठा हो तो दीर्घायु पुत्र होता है ॥ २९ ॥

स्त्री के गर्भ होगा या नहीं ?

एषां गर्भवती किल न वा प्रमाणं प्रयाति गर्भोऽयम् ।
प्रश्ने लग्नपशशिनोः सुतस्थयोर्गर्भवत्येव ॥ ३० ॥
यद्येतयोर्मुथशिलं केन्द्रे सुतपेन गर्भिणी तदपि ।
आपोक्लिमेत्थशालादनीक्षणाल्लग्नपुत्रयोर्नैवम् ॥ ३१ ॥

कोई प्रश्न करे कि यह स्त्री गर्भवती होगी अथवा गर्भवती है या नहीं? तो प्रश्नकाल में लग्नेश और चन्द्रमा पंचमभाव में बैठे हों तो गर्भवती कहना चाहिए। यदि लग्नेश और चन्द्रमा का केन्द्रस्थान में पंचमेश के साथ मुथशिल योग हो तो भी गर्भवती कहना चाहिए। यदि लग्नेश और

चन्द्रमा का आपोक्लिम (३, ६, ६, १२) स्थान में पंचमेश से इत्थशाल हो अथवा लग्नेश पंचम को और पंचमेश लग्न को न देखता हो तो गर्भवती नहीं है॥ ३०। ३१॥

गर्भपातयोग।

चरलग्ने क्रूरेन्दोर्मुथशिलभावे विनश्यति हि गर्भः।
लग्नपशशिनोस्तत्पतिते तत्रस्थे वक्रिमुथशिलेपि तथा ३२॥

अगर चरलग्न में क्रूरग्रह और चन्द्रमा का इत्थशाल हो तो गर्भ नष्ट हो जाता है। और लग्नेश तथा चन्द्रमा नीचादि से पतित तथा वक्री ग्रह से मुथशिल योग करें तो भी गर्भ नष्ट हो जाता है॥ ३२॥

बालकों के जीवन-मरण का प्रश्न।

जीवितमरणप्रश्ने बालानामन्त्यपे शुभैर्दृष्टे।
केन्द्रस्थे सितपक्षे शुभयुक्तेऽन्त्ये विधौ जीवेत्॥ ३३॥
क्रूरश्चेदन्त्यपतिर्दग्धश्चापोक्लिमे च युते।
क्रूरस्तु जातमात्रो म्रियते बालोऽथवा गर्भे॥ ३४॥

बालकों के जीवन मरण के प्रश्न में बारहवें भाव का स्वामी शुभग्रहों से दृष्ट होकर केन्द्र में स्थित हो और शुक्लपक्ष का चन्द्रमा शुभग्रहों से युक्त बारहवें स्थान में स्थित हो तो बालक जीता रहता है। यदि बारहवें का स्वामी पापग्रह हो और दग्ध हो तथा अपोक्लिमस्थान में स्थित हो तथा क्रूरग्रह से युक्त हो तो पैदा होते ही मर जाता है अथवा बालक गर्भ में ही मर जाता है॥ ३३। ३४॥

बालक कब उत्पन्न होगा।

प्रसवज्ञानप्रश्ने भुक्ताँल्लग्नांशकान् परित्यज्य।
भोग्याद्विचिन्त्य शेषाननुमित्यैवं वदेद्दिवसान्॥ ३५॥
यावन्तो नवमांशा गतास्तावन्तो गर्भस्य मासा गताः।
यावन्तो भोग्यास्तावद्भिरग्रतः प्रसव इति व्याख्या॥ ३६॥

प्रसव (बालक उत्पन्न होने) को जानने के लिए जो प्रश्न हो उस प्रश्न लग्न के भुक्त अंशों को छोड़कर भोग्य अंशों से अनुमान लगाकर

शेष दिन बताना चाहिए । जितने नवमांश बीत गये हों उतने ही गर्भ को महीने समझना और जितने नवमांश बाकी हों उतने महीने प्रसव होने में शेष बताना चाहिए ॥ ३५ । ३६ ॥

लग्नाद्यतमे स्थाने शुक्रस्तावन्तो वदेन्मासान् ।
यदि धर्मादूर्ध्वस्थस्तद्वदेत्पञ्चमस्थानात् ॥ ३७ ॥
लग्नांतर्दिनराशिर्दिवाग्रहो लग्नपश्च दिनराशौ ।
तद्दिवसे जन्म स्याद्विपरीते व्यत्ययश्चैषाम् ॥ ३८ ॥

अथवा प्रश्न लग्न से जितने स्थान पर शुक्र बैठा हो उतने गर्भ के गत मास कहना । यदि शुक्र नवम स्थान से आगे के स्थान में हो तो पंचम भाव से शुक्र तक गिनकर गतमास की संख्या कहना । यदि लग्न में दिन बली राशि हो और लग्नेश भी दिवाबली राशि में बैठा हो तो दिन में बालक पैदा होगा और इससे विपरीत हो (अर्थात् लग्न और लग्नेश रात्रिबली हों) तो रात्रि में प्रसव कहना चाहिए । यदि एक रात्रिबली राशि हो और एक दिवाबली राशि हो तो जो बलवान् हो उसके अनुसार कहना चाहिए ॥ ३७ । ३८ ॥

तत्काले द्विरसांशश्चन्द्रसमस्तत्समे चन्द्रे ।
गर्भस्य प्रसवः स्यादनुपातः शास्त्रतः कार्य्यः ॥ ३९ ॥

प्रश्नकाल में अथवा आधान समय में चन्द्रमा जिस द्वादशांश में हो उसी के तुल्य राशि में चन्द्रमा जब होगा तभी नवें या दशवें महीने में प्रसव होगा । इसका अनुपात बृहज्जातक आदि अन्य ग्रन्थों से करना चाहिए ॥ ३९ ॥

इस वर्ष में संतान होगी या नहीं ।

अस्मिन्वर्षेऽपत्यं भविता विलग्नपञ्चमाधीशौ ।
भजतो यदीत्थशालं तत्रैवाब्दे भवेन्नूनम् ॥ ४० ॥
यदि वा मिथो गृहगतौ स्यातामेतौ च संततिस्तदपि ।
वाच्या तस्मिन्वर्षे शुभयोगादन्यथा न पुनः ॥ ४१ ॥

कोई पूछे कि इस वर्ष में हमारे सन्तान होगी या नहीं ? तो ऐसे प्रश्न

लग्न में लग्नेश और पञ्चमेश का इत्थशाल हो तो उस वर्ष अवश्य सन्तान होती है । अथवा लग्नेश और पञ्चमेश एक ही स्थान में स्थित हों अथवा शुभग्रहों के साथ में हों तो उस वर्ष में अवश्य संतान होगी । इससे विपरीत हो तो सन्तान न होगी ॥ ४० । ४१ ॥

यह प्रसववाली होगी या नहीं ?

सुताप्रसूतयुवतिज्ञाने सुतपोऽथ षष्ठपः सूर्यात् ।
निर्गत्योदयमायात्ततः प्रसूते च नारीयम् ॥ ४२ ॥
अथ जीवभौमशुक्रा आकाशे उदयिनस्तथाप्येवम् ॥ ४३ ॥

यह स्त्री प्रसववाली होगी या नहीं, इस प्रश्न में पञ्चमेश और षष्ठेश दोनों सूर्य के साथ से निकल कर उदय हो गये हों अथवा बृहस्पति, मंगल और शुक्र ये आकाश में उदय हों अर्थात् दशवें स्थान में स्थित हों तो स्त्री प्रसववाली होती है अर्थात् उस स्त्री के सन्तानोत्पत्ति होती है ४२।४३ ॥

षष्ठस्थानसम्बन्धी प्रश्न ।

यह रोग से उठेगा या नहीं ।

रोगादयमुत्थास्यति नवेति लग्नं भिषग्द्यूनम् ।
व्याधिर्दशमं रोगी हिबुकं भेषजमिहाहुराचार्य्याः ॥ ४४ ॥
क्रूरार्दिते विलग्ने वैद्यान्नगुणस्तदोषधाद्रोगः ।
वृद्धिमुपयाति दशमे क्रूरैर्निजबुद्धितोप्यगुणः ॥ ४५ ॥

यह रोगी रोग से छूटेगा या नहीं ? इस प्रश्न में प्रश्न लग्न से वैद्य, सातवें घर से रोग, दशवें घर से रोगी और चौथे घर से औषधि का विचार करना आचार्यों ने कहा है । यदि लग्न पापाक्रान्त हो तो वैद्य से रोग नहीं जायगा और उसकी औषधि से रोग अधिक बढ़ जायगा । यदि दशवें घर में क्रूर (पाप) ग्रह हों तो अपनी ही बुद्धि से दुर्गुण होकर रोग बढ़ जावेगा ॥ ४४ । ४५ ॥

अस्ते च क्रूरयुते मान्द्यान्मान्द्यं तथौषधाद्भन्धौ ।
सौम्योपगतैस्तैररोगिता रोगिणो भवति ॥ ४६ ॥

लग्नेशेन्द्वोः सौम्येत्थशालतो रोगनाशनं वाच्यम् ।
वक्रे तु तत्र खेटे भूयोपि गदः समुपयाति ॥ ४७ ॥

सातवाँ घर क्रूरग्रहों से युक्त हो तो रोग से ही अन्य रोग उत्पन्न हो जाता है तथा चौथा स्थान क्रूराक्रान्त हो तो औषध ही से अन्य रोग पैदा हो जाता है । यदि इन स्थानों (सातवें, चौथे घरों) में शुभग्रह स्थित हों तो रोगी नीरोग हो जाता है । अथवा लग्नेश और चन्द्रमा का शुभग्रहों के साथ इत्थशाल हो तो रोग नाश हो जाता है । यदि वे ग्रह वक्री हों तो रोग फिर उत्पन्न हो जाता है ॥ ४६ । ४७ ॥

रोगी का मृत्युयोग ।

भूमिस्थलग्ननाथः शशिमुथशिले भवेन्मृत्युः ।
लग्नस्थे रन्ध्रपतौ लग्नपशशिनोर्विनाशे वा ॥ ४८ ॥
लग्नाधिपतिः सूर्यश्चन्द्रः सप्तेशमुथशिलविधायी ।
सप्तेशे षष्ठस्थे तन्मरणं रोगिणो वाच्यम् ॥ ४९ ॥

प्रश्नलग्नेश चौथे स्थान में स्थित होकर चन्द्रमा के साथ इत्थशाल योग करे तो रोगी की मृत्यु होती है । लग्नेश सूर्य हो और चन्द्रमा सप्तमेश के साथ मुथशिलयोग करता हो तथा सप्तमेश छठे घर में स्थित हो तो रोगी की मृत्यु कहना चाहिए ॥ ४८ । ४९ ॥

अन्य मृत्यु तथा पीड़ायोग ।

रन्ध्रेशे न विनष्टेनास्तमिते नापि केन्द्रस्थे ।
लग्नेशस्य मुथशिले मृत्युः स्याद्रोगपृच्छायाम् ॥ ५० ॥
अथवा तयोश्च केन्द्रे मुथशिलतः क्रूरपीडिते मरणम् ।
यदि केन्द्रे क्रूरग्रहस्तदापि पीडाष्टमेशेऽपि ॥ ५१ ॥

अष्टमेश नष्टबली तथा अस्त होकर केन्द्र में बैठा हो और लग्नेश से मुथशिल योग हो तो रोगी के प्रश्न में मृत्यु का योग होता है । अथवा लग्नेश और अष्टमेश क्रूरग्रहों से पीड़ित हो केन्द्र में मुथशिली हों तो भी मरण होता है । यदि केन्द्र में क्रूरग्रह हों अथवा अष्टमेश केन्द्र में हो तो पीड़ा होती है ॥ ५० । ५१ ॥

सूर्यद्वादशभागे प्रविष्टे लग्नेश्वरेऽप्येवम् ।
तनुमृत्युभावनाथावन्योन्याश्रयगतौ मरणम् ॥ ५२ ॥
लग्ने चरे च रोगी क्षणे स्यादरुक्चापि ।
द्विशरीरे पररोगः स्थिरे गदस्यैकरोगत्वम् ॥ ५३ ॥

यदि लग्नेश्वर सूर्य के द्वादशांश में हो तो भी मृत्यु होती है। और लग्नेश अष्टम भाव में बैठा हो और अष्टमेश लग्न में बैठा हो तो मृत्युयोग होता है। यदि लग्न चर हो तो रोगी का क्षण-क्षण में रोग बदलता रहे और द्विस्वभाव लग्न हो तो दूसरा रोग हो जावे तथा प्रश्न में स्थिर लग्न हो तो वही एक रोग रहता है ॥ ५२ । ५३ ॥

शशिनो वक्रमुथशिले स्थिररोगो मन्दमुथशिले पूर्वम् ।
मूत्रनिरोधाद्रोगोत्पत्तिर्ज्ञेया कृतप्रश्ने ॥ ५४ ॥

चन्द्रमा का वक्री ग्रह से मुथशिल योग हो तो रोग स्थिर रहता है। और चन्द्रमा का शनैश्चर से इत्थशाल हो तो पहले मूत्र के रुकने से रोग की उत्पत्ति जानना ॥ ५४ ॥

रोगी और नीरोगी का ज्ञान ।

अथ पृच्छायाः पूर्वे सप्ताहानि च विलोक्य चत्वारि ।
यदि तेषु शशांकरवी शुभयुतदृष्टौ तदा शस्तम् ॥ ५५ ॥
अथ मन्दोऽयमथ नवेति प्रश्नेश्वरोऽथ चन्द्रो वा ।
षष्ठेशमुथशिली स्यादस्तमितस्तदा मन्दः ॥ ५६ ॥

प्रश्न दिन से सात या चार दिन पहले देखे कि यदि सूर्य और चन्द्रमा शुभग्रहों से दृष्ट हों अथवा शुभयुक्त हों तो शुभ फल (रोगी अच्छा होवेगा) कहना चाहिए। कोई पूछे कि यह रोगी होगा या नहीं, इस प्रश्न में लग्नेश्वर अथवा चन्द्रमा षष्ठेश से इत्थशाल करता हो या अस्त हो तो रोगी होना बतावे ॥ ५५ । ५६ ॥

स्वामिसेवक और चतुष्पद का प्रश्न । मेरा अन्य स्वामी होगा या नहीं ?

ईशोऽन्यो मम भविता नवेति लग्नेश्वरस्य यदि केन्द्रे ।
नो भवति मुथशिलं षष्ठान्त्यपतिभ्यां तदा नान्यः ॥ ५७ ॥

कोई पूछे कि मेरा अन्य स्वामी होगा या नहीं अर्थात् दूसरी जगह नौकरी लगेगी या नहीं ? यदि इस प्रश्न में लग्नेश्वर का केन्द्र में षष्ठेश और द्वादशेश से इत्थशाल न हो तो अन्य स्वामी नहीं होगा ॥ ५७ ॥

वक्री वाऽन्येन समं लग्नपतिः सहजनवमसंस्थेन ।
कुरुते यदीत्थशालं तदाऽन्यनाथो भवेत्प्रष्टुः ॥ ५८ ॥

यदि लग्नेश्वर वक्री हो और अन्य किसी नवमेश या तृतीयेश के साथ इत्थशाल करता हो तो पूछनेवाले का अन्य स्वामी होगा ॥ ५८ ॥

लग्नपतौ केन्द्रस्थे रिपुदृष्ट्या क्रूरवीक्षिते सुखपे ।
रविरश्मिगतेऽथ भवेद्यावज्जीवं न चाऽन्यपतिः ॥ ५९ ॥

यदि लग्नेश केन्द्र में हो तथा चौथे भाव के स्वामी पर पापग्रह की दृष्टि हो और लग्नेश अस्त हो तो जीवन पर्यन्त अन्य स्वामी न होगा ॥ ५९ ॥

अयमीशो भद्रो मे पृच्छायां लग्नपस्य कम्बूले ।
स्वामी स एव भव्यो द्यूनेशस्य च शुभोऽन्येशः ॥ ६० ॥

कोई पूछे कि मेरा यही स्वामी अच्छा है या अन्य ? तो इस प्रश्न में लग्नेश का शुभग्रह के साथ कंबूल हो तो यही स्वामी शुभ है और जो सप्तमेश का शुभग्रह के साथ कंबूल योग हो तो दूसरा स्वामी अच्छा होगा ॥ ६० ॥

गृहभूमिस्थानानां चलनप्रश्ने पुरोक्त एव विधिः ।
सम्यग्विचार्य वाच्यं शुभमशुभं पृच्छतः स्वधिया ॥ ६१ ॥

घर, भूमि (जमीन) और स्थान के स्थिर या चलायमान होने के प्रश्न में भी पूर्वोक्त विधि ही से अच्छे प्रकार अपनी बुद्धि से विचार कर पृच्छक को शुभाशुभफल कहना चाहिए ॥ ६१ ॥

नौकर और चौपाये के लाभ का प्रश्न ।

भृत्यचतुष्पदलाभं प्रश्ने लग्नेशशीतगू षष्ठे ।
षष्ठेशमुथशिलो वा लग्ने षष्ठेश्वरोऽथ तल्लाभः ॥ ६२ ॥

नौकर और घोड़ा आदि चौपाये के लाभ के प्रश्न में लग्नेश और

चन्द्रमा छठे स्थान में हों अथवा षष्ठेश से मुथशिल योग करते हों या लग्न में षष्ठेश स्थित हो तो उसका लाभ होगा ॥ ६२ ॥

भृत्यस्य वाहनस्य च यद्वा प्रश्ने च लग्नलग्नपती ।
अर्थी दाता सप्तमसप्तमपा तद्बलात्प्राप्तिः ॥ ६३ ॥

नौकर और वाहन के प्रश्न में लग्न और लग्नेश्वर तो लेनेवाले तथा सप्तमभाव और सप्तमेश देनेवाले होते हैं । इन सबका बल विचारकर प्राप्ति कहना । अर्थात् लग्नेश या लग्न का सप्तमेश या सप्तम से इत्थशाल हो तो सेवक या वाहन की प्राप्ति कहना अन्यथा नहीं ॥ ६३ ॥

सप्तम स्थान का प्रश्न ।

स्त्री लाभ का प्रश्न ।

स्त्रीलाभस्य प्रश्ने स्मराधिपे लग्नपेन शशिना वा ।
कृतमुथशिले युवत्या अयाचिताया भवेल्लाभः ॥ ६४ ॥

स्त्री के लाभ के प्रश्न में सप्तमेश का लग्नेश अथवा चन्द्रमा के साथ इत्थशाल योग हो तो विना माँगे ही स्त्री का लाभ होता है ॥ ६४ ॥

यदि लग्नपो विधुर्वा द्यूने तदयाचितां स्त्रियं लभते ।
लग्नेशान्मूसरिफे चन्द्रेऽस्तमुथशिले स्वयं लाभः ॥ ६५ ॥

यदि लग्नेश या चन्द्रमा सप्तमभाव में हों तो भी विना याचना किये ही स्त्री का लाभ होता है । और लग्नेश का सप्तमेश से ईसराफ योग हो तथा चन्द्रमा का सप्तम से इत्थशाल योग हो तो स्वयं ही (आपही से) स्त्री की प्राप्ति होती है ॥ ६५ ॥

येन समं तु मुथशिलं तत्र विनष्टे च पापयुतदृष्टे ।
निकटीभूतं तदा किल विनश्यति स्त्रीगतं कार्यम् ॥ ६६ ॥
पापेऽत्र रन्ध्रनाथे स्त्रीजातेरेव विघटते कार्यम् ।
सहजपतौ भ्रातृभ्यस्तुर्येशे पितृव्य एव नान्येभ्यः ।
सौम्यकृतयुक्तिदृग्भ्यां पूर्वोक्तस्थानतः शुभं वाच्यम् ॥ ६७ ॥

सप्तमेश का जिस ग्रह के साथ इत्थशाल योग हो वह ग्रह नष्टबली हो, पापयुक्त हो अथवा पापदृष्ट हो तो समीप आया हुआ भी स्त्रीसंबन्धी कार्य अवश्य नष्ट हो जाता है। यदि सप्तमभाव में पापीग्रह हो अथवा अष्टमेश हो तो स्त्रीसंबन्धी कार्य स्त्रीजाति से ही नष्ट हो जाता है और सप्तमेश का तीसरे भाव के स्वामी से संबन्ध हो तो भाई से तथा चौथे भाव के स्वामी से संबन्ध हो तो पिता के भाई से कार्य का नाश होता है अन्य से नहीं। यदि सप्तम स्थान पर अथवा सप्तमेश पर शुभग्रह का योग हो अथवा शुभग्रहों की दृष्टि हो तो जो शुभग्रह जिस भाव का स्वामी हो उसी भाव से शुभ कहना चाहिए॥ ६६। ६७॥

स्त्रीप्रेम का प्रश्न।

प्रीतिस्थानप्रश्ने स्मरपतिलग्नेशमुथशिले स्नेहः।
झकटकदृशा झकटकः शशिकम्बूले तु सापि शुभा॥ ६८॥
यदि मन्दो लग्नेशः केन्द्रे च स्यात्तदा बली प्रष्टा।
अस्तेश्वरे च मन्दे केन्द्रे प्रतिवादिनोऽस्ति बलम्॥ ६९॥

कोई पूछे कि स्त्री से स्नेह होगा या नहीं? इस प्रश्न में सप्तमेश और लग्नेश का इत्थशाल हो तो स्त्री से प्रेम होगा। और इनकी झगड़ालू दृष्टि (शत्रुदृष्टि) हो तो झगड़ा (कलह) होगा। यदि चन्द्रमा का कम्बूलयोग हो तो वह स्त्री सीधे स्वभाव की होगी। यदि शनैश्चर लग्नेश होकर केन्द्र में बैठा हो तो प्रश्नकर्ता बली होता है और शनैश्चर सप्तमेश होकर केन्द्र में स्थित हो तो प्रतिवादी बलवान् होता है॥ ६८। ६९॥

उभयोरेकस्थितयोर्ज्ञातव्या झकटकं तयोः प्रीतिः।
सूर्ये न शुभं विबले नरस्य शुक्रे तयोर्द्वितयोः॥ ७०॥

लग्नेश और सप्तमेश दोनों एक ही स्थान में बैठे हों तो पहले झगड़ा होकर दोनों (स्त्री-पुरुषों) में प्रीति हो जाती है। यदि सूर्य बलहीन हो तो पुरुष को शुभ नहीं होता और शुक्र बलहीन हो तो स्त्री को शुभ नहीं होता तथा सूर्य और शुक्र दोनों बलहीन हों तो दोनों को शुभ नहीं होता॥ ७०॥

रुष्ट स्त्री के फिर आगमन का प्रश्न।

मम गृहिणी रुष्टा पुनरेष्यति वाथ भूम्यधःस्थरवौ।
भूपरिगते च शुक्रे नैति पुनर्वक्रितेऽभ्येति॥ ७१॥
सूर्यान्निर्गतशुक्रे वक्रेऽपि समेति चान्यथा रुष्टा।
क्षीणेन्दौ बहुदिवसैः पूर्णविधौ च द्रुतमुपैति॥ ७२॥

किसी ने पूछा कि मेरी रूठी हुई स्त्री फिर लौटकर आवेगी या नहीं? इस प्रश्न में लग्न से चतुर्थ स्थान पर्यन्त तो सूर्य स्थित हो और चतुर्थ स्थान से आगे शुक्र हो तो फिर लौटकर नहीं आवेगी। यदि शुक्र वक्री हो तो फिर लौट कर आजावेगी। यदि सूर्य का साथ छोड़कर समीप ही शुक्र उदय हुआ हो और वक्री भी हो तो रूठी हुई स्त्री आपही लौटकर आजावेगी। इससे विपरीत हो तो लौटकर नहीं आवेगी। यदि उस समय चन्द्रमा क्षीण हो तो बहुत दिन में और चन्द्रमा पूर्ण हो तो शीघ्र ही लौटकर आवेगी॥ ७१। ७२॥

कन्या के निर्दोष-संबन्धी प्रश्न।

एषा कुमारिका किल निर्दोषा किन्नवेति पृच्छायाम्।
लग्ने स्थिरे स्थिरर्क्षे लग्नपशशिनोश्च निर्दोषा॥ ७३॥
चरराशिगतैरेतैरियं कुमार्यपि च जातदोषा स्यात्।
द्विशरीरस्थे चन्द्रे चरलग्ने स्वल्पदोषा स्यात्॥ ७४॥

किसी ने प्रश्न किया कि यह कुमारी कन्या निर्दोष है या नहीं? इस प्रश्न में स्थिर लग्न हो तथा लग्नेश और चन्द्रमा स्थिर राशि में बैठे हों तो कन्या निर्दोष (शुद्ध) है। यदि प्रश्न लग्न में चर राशि हो तथा लग्नेश और चन्द्रमा भी चर राशि में हों तो कुँवारी होने पर भी यह कन्या दोषयुक्त (दुष्टा) है। चर लग्न हो और चन्द्रमा द्विस्वभाव राशि में स्थित हो तो कन्या थोड़े दोषवाली होती है॥ ७३। ७४॥

शशिभौमावेकर्क्षे स्थिरवर्जे तत्परेण गुप्तमियम्।
रमिता शनिचन्द्रमसोर्लग्नगयोः प्रकटमुपभुक्ता॥ ७५॥

यदि भौमशनी केन्द्रे विधुदृष्टौ वृश्चिकेऽथ शुक्रः स्यात्।
तद्द्रेष्काणेऽथ तदा निर्भ्रान्तं जातदोषैषा ॥ ७६ ॥

चन्द्रमा और मंगल स्थिर रहित एक ही राशि में बैठे हों तो यह कन्या किसी से गुप्त रमण की गई है। और शनि और चन्द्रमा लग्न में स्थित हों तो यह प्रकट भोगी गई है। यदि मंगल और शनैश्वर केन्द्र में स्थित हों और चन्द्रमा से दृष्ट हों तथा वृश्चिक राशि में या वृश्चिक के द्रेष्काण में शुक्र स्थित हो तो निस्सन्देह वह दोषी है ॥ ७५ । ७६ ॥

प्रसूति-परीक्षा।

एषा किल प्रसूता सिते घटे ज्ञे हरौ च नो सूता।
अनयोरलिवृषगतयोः सूता नारी परिज्ञेया ॥ ७७ ॥
भौमबुधशुक्रचन्द्रा द्विशरीरे चापवर्जिते चेत्स्युः।
अग्रेऽस्ति तत्प्रसूतिश्चापे नाग्रेण पृष्ठतः सूता ॥ ७८ ॥

यह स्त्री प्रसूता हुई है या नहीं? इस प्रश्न में कुंभ का शुक्र हो और सिंह का बुध हो तो प्रसूता नहीं हुई है। यदि शुक्र वृश्चिक का हो और बुध वृष का हो तो स्त्री को प्रसूति हुई जानना। मंगल, बुध, शुक्र और चन्द्रमा ये धन राशि से वर्जित द्विस्वभाव राशि में स्थित हों तो यह पहले प्रसूति हो चुकी है। और ये चारों ग्रह धन राशि में स्थित हों तो न तो पहले प्रसूति हुई है और न आगे प्रसूति होगी ॥ ७७ । ७८ ॥

क्रूरश्चेच्चरराशौ परतः सूता स्थिरे तु निजपत्युः।
मिश्रेण तु मिश्रमूह्यं जातकसन्देहपृच्छायाम् ॥ ७९ ॥

बालक के उत्पन्न होने में यह सन्देह हो कि यह किससे उत्पन्न हुआ है, इस प्रश्न में लग्नेश और पंचमेश क्रूर ग्रह चर राशि में हों तो दूसरे से बालक पैदा हुआ है और स्थिर राशि में हों तो निजपति से उत्पन्न जानना और लग्नेश तथा पंचमेश मिश्र (क्रूर और शुभग्रह) हों तो दोनों के मेल से उत्पन्न हुआ जानना ॥ ७९ ॥

गर्भिणी-परीक्षा।

गुर्विण्येषा स्वपत्युः परपुरुषाद्वेति लग्नसुतपत्योः।
शुभयुतिदृग्भ्यां स्वपतेः शनिभौमदृशाऽन्यतो गुर्वी ॥ ८० ॥

यह अपने पति से गर्भिणी है या परपुरुष से? इस प्रश्न में लग्नेश और पंचमेश शुभग्रह से युक्त हों अथवा दृष्ट हों तो अपने पति से गर्भिणी है और शनैश्चर और मंगल से दृष्ट हों तो परपुरुष से गर्भिणी जानना॥ ८०॥

कुलटा या पतिव्रता की परीक्षा।

कुलटा सतीयमथवेति लग्नपतिश्चन्द्रमाश्च भौमेन।
एकांशेन मुथशिलकृत्तदैव भवने भजत्यन्यम्॥ ८१॥
यदि गृहनिजगो भौमस्तदान्यदेशं प्रयाति जारकृते।
रविणेति मुथशिले सत्युपभुक्ता सा तु राजपुरुषेण॥ ८२॥
सौम्येन लेखकवणिङ् निजभे शुक्रेण योषयैव स्त्री।
एतैर्योगैरसती विपरीते सुचरितेति विज्ञेयम्॥ ८३॥

कोई पूछे कि यह स्त्री व्यभिचारिणी है या पतिव्रता है? ऐसे प्रश्न में लग्नेश और चन्द्रमा मंगल के साथ एक अंश से इत्थशाल करते हों तो उसी घर में किसी अन्य से रमण करती है। यदि वह (लग्नेश चन्द्र से मुथशिली) मंगल अपने घर में बैठा हो तो वह अपने जारपुरुष के साथ अन्य देश को चली जायगी। यदि लग्नेश और चन्द्रमा का सूर्य के साथ इत्थशाल हो तो उस स्त्री को किसी राजपुरुष द्वारा रमण की हुई जानना। यदि लग्नेश और चन्द्रमा का बुध से इत्थशाल हो तो किसी बनिया से भोगी जानना। यदि अपनी राशि में स्थित शुक्र से इत्थशाल हो तो स्त्री रूप पुरुष से संगम की हुई जानना। पूर्वोक्त कोई भी योग हो तो स्त्री को व्यभिचारिणी और इससे विपरीत योग हो तो सुचरित्रा सती जानना॥ ८१। ८३॥

लग्नपतिनाथ शशिना मूसरिफे भूसुते भवेज्जारः।
त्यक्तः पुनर्गुरुदृशा पुत्रभयाद्रविदृशा च राजभयात्॥ ८४॥
सितदृष्ट्या परनारीभयात्सितज्ञैकराशिगतदृष्ट्या।
जारस्य स्थविरत्वाल्लज्जितत्वात्त्यजति जारं सा॥ ८५॥

लग्नेश और चन्द्रमा का मंगल के साथ ईसराफ योग हो तो स्त्री जाररत होती है। और उस योग में बृहस्पति की दृष्टि हो तो पुत्र के भय से तथा सूर्य की दृष्टि हो तो राजभय से जार (व्यभिचारी पुरुष) को छोड़ देती है।

और मंगल की दृष्टि हो तो दूसरी स्त्री के भय से जार को छोड़ देती है। यदि एक राशि में स्थित शुक्र और बुध पूर्वोक्त मंगल को देखते हों तो जार को बूढ़ा जानकर लज्जा से उसको छोड़ देती है ॥ ८४ । ८५ ॥

अष्टम स्थानसम्बन्धी प्रश्न ।

युद्धप्रश्न ।

नृपसंग्रामप्रश्ने विलग्नलग्नेशसंस्थितात्खेटात् ।
शशिमूसरिफात्प्रष्टास्तास्तपसंस्थेन्दुमुथशिलाच्छत्रुः ८६ ॥
अथवा शनिकुजजीवाः शीघ्रेभ्यो बलयुता उपरिचराः ।
बुधसितचन्द्रास्तेभ्यश्च दुर्बलाऽधश्चराश्च संचिन्त्याः ॥८७॥

राजा के युद्ध के प्रश्न में लग्न और लग्नेश जिस भाव में बैठा हो उस भाव से चन्द्रमा का ईसराफ योग हो तो प्रश्नकर्ता की जय कहना और सातवाँ भाव और सप्तमेशस्थित भाव से चन्द्रमा का इत्थशाल हो तो शत्रु की जीत कहना । अथवा शनैश्चर, मंगल और बृहस्पति ये बलवान् ग्रह शीघ्रगामी ग्रहों से आगे हों (अधिक अंशोंवाले हों) और बुध, शुक्र और चन्द्रमा उनसे बलहीन होकर नीचे रहें (अल्पांश हों) तो प्रश्नकर्ता की जय और इससे विपरीत हो तो शत्रु की जय कहना ॥ ८६ । ८७ ॥

लग्नपतावस्तपतेः षट्त्रिदृशाथ मुथशिले द्वयोः स्नेहः ।
वर्गद्वयमध्याधःपतितः सोऽन्येन बद्धः स्यात् ॥ ८८ ॥
वर्गद्वयाधिपानां मूसरिफेऽस्तंगते न रणदैर्घ्यम् ।
लग्नस्वामिनि मन्देकम्बूलेउपरिगे जयः प्रष्टुः ॥ ८९ ॥

लग्नेश पर सप्तमेश की तीसरी या छठी दृष्टि हो और दोनों का इत्थशाल हो तो दोनों राजाओं में स्नेह हो जायगा और दोनों वर्गों में से जो अधःपतित (नीच) हो वह दूसरे से बाँधा जावेगा अर्थात् लग्नेश नीच हो तो प्रश्नकर्ता और सप्तमेश नीच हो तो शत्रु बाँधा जायगा । युद्ध करनेवालों के दोनों वर्गस्वामियों (लग्नेश और सप्तमेश) से ईसराफ योग हो और अस्त हो तो युद्ध का विस्तार नहीं होगा । और लग्नेश मन्दगामी अधिकांश हो और सप्तमेश शीघ्रगामी स्वल्पांश हो कंबूलयोग करे तो प्रश्नकर्ता की जय होगी यह कहना चाहिए ॥ ७८ । ८९ ॥

एवं गुणे तु तस्मिन्विप्रविनष्टेऽस्तपतितनीचस्थे ।
केन्द्रेऽस्ते वाऽस्तपतौ प्रष्टुर्हानिः प्रवक्तव्या ॥ ६० ॥

और जो लग्नस्वामी मन्दगति अधिकांश और शीघ्रगामी ग्रह अल्पांश हो चन्द्रमा से इत्थशाली हो तथा अस्त या नीचगत हो और सप्तमेश केन्द्र में अस्तंगत हो तो प्रश्नकर्ता की हानि कहना चाहिए ॥ ६० ॥

लग्नादधः शुभे सति उपरि च मन्दे शुभः सहायः स्यात् ।
लग्नपतौ रन्ध्रस्थे रन्ध्रपमुथशिलेऽहितः प्रष्टुः ॥ ६१ ॥

लग्न से नीचे (दशम भाव से लग्नपर्यन्त) शुभग्रह हों और लग्न से ऊपर (लग्न से चौथे भावपर्यन्त) शनैश्वर स्थित हो तो पृच्छक को अच्छी सहायता मिलेगी तथा लग्नेश आठवें स्थान में हो और अष्टमेश इत्थशाल करता हो तो पृच्छक की पराजय होती है ॥ ६१ ॥

प्रश्नकर्ता का विजययोग ।

सप्तेशे धनसंस्थे धनेशकृतमुथशिले रिपोर्नाशः ।
लग्नेशदशमपत्योर्मुथशिलतः पृच्छकस्य जयवीर्ये ॥ ६२ ॥

सप्तमेश दूसरे भाव में बैठा हुआ धनेश से इत्थशाल करता हो तो शत्रु का नाश होगा और लग्नेश और दशमेश का इत्थशाल हो तो पृच्छक की पराक्रम से विजय होगी ॥ ६२ ॥

शत्रु का विजययोग ।

तुर्यास्तपयोरेवं शत्रोर्योगे जयो ज्ञेयः ।
उभयवर्गेऽपि केन्द्रे तत्पतिकृतमुथशिले बलं ज्ञेयम् ॥ ६३ ॥

इसी प्रकार चतुर्थेश और सप्तमेश का इत्थशाल योग हो तो शत्रु की विजय जानना । और दोनों वर्गों के स्वामी केन्द्र में स्थित हों तो जो उस केन्द्रपति से इत्थशाल करता हो वही बलवान् जानना ॥ ६३ ॥

वादी-प्रतिवादी का विनाशयोग ।

चरराशौ सबलत्वं जित्वा प्रान्ते विनाशस्तु ।
लग्नपतावन्त्यस्थे प्रष्टा नश्यति परोऽस्तपे षष्ठे ॥ ६४ ॥

खपतौ लग्ने प्रष्टुस्तुर्येशेऽस्ते रिपोः सहायबलम्।
यन्मुथशिलौ रवीन्दू तस्य बलं मुसरिफे हानिः॥ ६५॥

जिसका वर्गेश चर राशि में बलवान् हो वह शत्रुओं को जीतकर स्वयं भी नष्ट हो जायगा। यदि लग्नेश बारहवें बैठा हो तो पृच्छक नष्ट हो जायगा और सप्तमेश छठे घर में बैठा हो तो शत्रु का नाश होगा। दशमेश लग्न में हो और चतुर्थेश सातवें घर में हो तो प्रश्नकर्ता को शत्रुसेना से सहायता मिलेगी। जिसके वर्ग में चन्द्रमा और सूर्य इत्थशाल योग अथवा ईसराफ योग करें उसकी सेना की हानि होगी॥ ६४। ६५॥

नवमस्थानसम्बन्धी प्रश्न।

गमनप्रश्न।

मम गमनं भविता किं नवेति लग्नेश्वरेऽथवा चन्द्रे।
नवमेशमुथशिले सति नवमे वा स्याद्भवेद्गमनम्॥ ६६॥
लग्नस्थे नवमपतौ लग्नाधिपमुथशिले च संचारात्।
रहितो याति पुनर्ना नवमदृशा वर्जिते योगे॥ ६७॥

कोई पूछे कि मेरा गमन होगा या नहीं? इस अवस्था में लग्नेश अथवा चन्द्रमा का नवमेश के साथ इत्थशाल हो अथवा लग्नेश नवम भाव में स्थित हो तो गमन होगा। नवमेश लग्न में बैठा हो और लग्नेश से इत्थशाल योग करे तो वह स्थिर रहेगा। यदि पूर्वोक्त योग के रहते नवमेश की नवम पर दृष्टि न हो तो गया हुआ भी फिर लौट आता है॥ ६६। ६७॥

लग्नपतौ केन्द्रस्थे सहजेशमुथशिले च विक्रूरे।
गमनं स्यादस्मिन्वा केन्द्रे क्रूरे च नास्ति गतिः॥ ६८॥
अस्ते क्रूरेऽपि च यत्कार्यं निर्याति विघ्नमत एव।
आकाशस्थे पापे राजकुलाज्ज्येष्ठतो निजाद्वापि॥ ६९॥

लग्नेश केन्द्र में बैठा हुआ तृतीयेश से इत्थशाल करता हो तो गमन होगा परन्तु लग्नेश पापी न हो। यदि उस केन्द्र में पापीग्रह स्थित हो तो गमन नहीं होगा। यदि सातवें स्थान में पापीग्रह हो तो जिस कार्य के लिए मनुष्य जाता है उसमें विघ्न होगा। और जो दशवें घर में

पापीग्रह हो तो राजकुल से या अपने से बड़े से या अपने से ही कार्य में विघ्न होगा ॥ ९८ । ९९ ॥

नवमेशे मुथशिलगे लग्नाधीशेन पापरिपुदृष्टे ।
गमनेऽवसानतः स्यात्प्रष्टुः कष्टं क्षयोऽर्थस्य ॥ १०० ॥
लग्नेशे नवमेशे मुथशिलकृतिरन्ध्रसप्तमे कष्टम् ।
उदितेऽस्मिन्वा यायाद्विनिःसृतिः स्यात्सुखकरः पन्था १०१

नवमेश का लग्नेश के साथ इत्थशाल योग हो और उसपर पापीग्रह की शत्रु दृष्टि हो तो गमन करने से अन्त में पृच्छक को कष्ट होगा और धन का नाश होगा । लग्नेश और नवमेश का आठवें या सातवें स्थान में इत्थशाल हो तो गमन में कष्ट होगा । यदि वह अस्त से उदय हो गया हो तो मार्ग सुखकारी होगा ॥ १०० । १०१ ॥

गमन में किस भाव से क्या विचारना चाहिए ।

लग्नान्मार्गानुभवो व्योम्नः कार्यं स्मराद्गतिस्थानम् ।
भूमेः कार्यं परिणतिरेवं लग्ने शरीरसुखम् ॥ १०२ ॥
दशमे शुभे च सिद्धिः कार्यस्यास्ते प्रयाति यत्स्थाने ।
तत्र शुभं च चतुर्थे परिणामः सुन्दरः कार्ये ॥ १०३ ॥

प्रश्नलग्न से मार्ग का अनुमान करना, दशमभाव से कार्य का विचार करना, सप्तम से गमन स्थान का, चौथे भाव से कार्य का परिणाम (नतीजा) और लग्न से शरीर के सुख का विचार करना चाहिए । यदि दशवें भाव में शुभग्रह हो तो कार्य की सिद्धि होती है । सातवें भाव में शुभग्रह हो तो सुख से गमन होता है । और चौथे भाव में शुभग्रह हो तो कार्य का परिणाम शुभ होगा ॥ १०२ । १०३ ॥

लग्नेशं शशिनं वा यः क्रूरस्तुदति तत्र मनुजर्क्षे ।
मनुजत्रिराशिके वा तदा भयं द्विपदतो गन्तुः ॥ १०४ ॥
जलराशौ वारिभयं चतुष्पदर्क्षे तथाश्वादेः ।
घटचापे द्रुमकण्टकभयं हरौ व्याघ्रसिंहादेः ॥ १०५ ॥

लग्नेश या चन्द्रमा को जो पापीग्रह पीड़ित करे वह पुरुष राशि में बैठा हो या पुरुष राशि के द्रेष्काण में हो तो गमन करनेवाले को द्विपदों (मनुष्यों) से भय होगा । यदि पूर्वोक्त ग्रह जलचर राशि में हो तो जल से भय, चतुष्पद राशि में हो तो कुत्ता आदि से भय, कुंभ या धन में हो तो वृक्ष के काँटों से भय तथा वह ग्रह सिंहराशि में हो तो व्याघ्र (बाघ) शेर आदि से भय होगा ॥ १०४ । १०५ ॥

नगर-प्रवेश का प्रश्न ।

नगरप्रवेशतोऽस्मान् फलमस्ति न वा प्रवेशलग्नमिह ।
तस्मिन्धनपे वक्रे नो वसतिः कार्यसिद्धिर्वा ॥ १०६ ॥
अतिचरिते बहुदिवसं वसतिर्ना कार्यसिद्धिरीषदपि ।
नवमतृतीयगतेस्मिन्कार्यं कृत्वाशु निजपुरं याति १०७॥
लग्ने कर्मण्याये धनपयुते शोभनं ज्ञेयम् ।
सक्रूरसप्तमस्थे पथि विघ्नाज्झकटकश्चतुर्थस्थे ॥ १०८ ॥

हमको नगर में जाने से कुछ फल होगा या नहीं ? इस प्रश्न में धनेश वक्री होकर लग्न में बैठा हो तो वहाँ न बसना ही होगा और न कार्य सिद्धि ही होगी । यदि धनेश अतिचारी हो तो बहुत दिन रहना नहीं होगा तथा कार्य कुछ थोड़ा सा भी सिद्ध न होगा । और जो धनेश नवें या तीसरे स्थान में स्थित हो तो अपना कार्य करके शीघ्र ही अपने गाँव को लौट आवेगा । लग्न में, दशवें या ग्यारह वें स्थान में धनेश बैठा हो तो कार्य शुभ होगा । यदि क्रूरग्रह के साथ सातवें घर में धनेश बैठा हो तो रास्ते में विघ्न होगा और चौथे भाव में बैठा हो तो रास्ते में किसी से झगड़ा होगा ॥ १०६ । १०८ ॥

दशमस्थान-सम्बन्धी प्रश्न ।

राज्यप्राप्ति प्रश्न ।

राज्याप्तिप्रश्नलग्ने लग्नेशे शशिनि वा नभःपतिना ।
कृतमुथशिले वरदृशा राज्यं रूपक्रमाद्भवति ॥ १०९ ॥

अन्योन्यभवनगमनात्क्रूराभावेऽथ चिन्तितप्राप्तिः।
लग्नस्थेनान्येन च सौम्येनाम्बरस्थमुथशिलेप्येवम् ११०॥

राज्यप्राप्ति के प्रश्न में लग्नेश और चन्द्रमा लग्न में स्थित हों अथवा दशमेश से मित्रदृष्टि से इत्थशाल करते हों तो कुलानुसार राज्यप्राप्ति होती है। यदि लग्नेश और दशमेश परस्पर एक दूसरे के स्थान में (लग्नेश दशम में और दशमेश लग्न में) पापग्रह रहित बैठा हो तो विचारे हुए राज्य की प्राप्ति होती है। अथवा लग्न में स्थित अन्य सौम्य ग्रह का दशम में स्थित ग्रह से इत्थशाल हो तो भी राज्य की प्राप्ति होगी॥ १०९। ११०॥

पापैर्दिते तु मन्दे निकटीभूयोत्तरत्यधोराज्यम्।
भूमिस्थे क्रूरदृशा त्वपवादः शुभदृशा कीर्तिः॥ १११॥
मन्दग्रहे बलवति क्रूरवियुते यदा शशी विबलः।
मन्देन बलेन भ्रमाद्राज्यप्राप्तिर्भवेत्प्रष्टुः॥ ११२॥

मन्दगतिवाला ग्रह पापाक्रान्त होतो शीघ्रही राज्य का नाश होता है। और वह मन्दगति ग्रह चौथे स्थान में क्रूर ग्रहों से दृष्ट हो तो अयश और उस पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो सुयश होता है। मन्दगति ग्रह बलवान् हो तथा पापग्रह से रहित हो और चन्द्रमा बलरहित हो तो उस मन्द ग्रह के बल से प्रश्नकर्ता को भ्रमण करने से राज्य की प्राप्ति होती है॥ १११। ११२॥

लग्नाधिपतौ स्वगृहे लाभो राज्यस्य तुङ्गगे भौमे।
लग्नाम्बराधिपौ यदि केन्द्रगौ केन्द्रगेन्दुमुथशिलतः ११३
उत्तमराज्यावाप्तिः स्वर्क्षस्थे चेन्दुतो विपुला।
यत्रर्क्षे लग्नेशस्तत्पतिरशुभे गृहे तदाकार्यम्॥ ११४॥
न स्यादस्ते कष्टाद्दशमदृशा कटुकता कार्ये।
राज्यप्राप्तौ सत्यां यदि पृच्छति कोपि परिणतिं च तदा ११५

लग्नेश अपनी राशि में हो तथा मंगल उच्च का (मकर राशि का) हो

१—मन्दगामी यो ग्रहो अधिकारी तस्मिन्पापयुते राज्यनाश इति तात्पर्य्यम्।

तो राज्य का लाभ होता है । यदि लग्नेश और दशमेश केन्द्र में हों और केन्द्र में स्थित चन्द्रमा से इत्थशाल करते हों तो उत्तम राज्य की प्राप्ति होती है। यदि चन्द्रमा अपनी राशि में हो तो विपुल (बहुत बड़े) राज्य की प्राप्ति होती है । जहाँ लग्नेश बैठा हो उस राशि का पति अशुभ ग्रह के स्थान में बैठा हो तो राज्य का कार्य नहीं होता है । यदि वह अस्त हो तो कष्ट से राज्य कार्य होता है और शत्रुदृष्टि से कार्य में कटुता (कड़ुआपन-रुखाई) होती है ॥ ११३ । ११५ ॥

लग्नं शरीरकार्यं गृहकर्मास्तं नभश्च राज्यार्थम् ।
लाभो मित्रस्यार्थे चतुर्थकं कर्मणोवसतये च ॥ ११६ ॥
द्रव्यं धनायसहजं भृत्येभ्यो रिपुश्च वैरिभ्यः ।
एतैः शुभैः शुभं स्यादशुभे वामं च सर्वकार्य्याणाम् ॥ ११७॥

कोई पूछे कि इस राज्य प्राप्ति का परिणाम क्या होगा ? इस प्रश्न में लग्न से शरीर का, सातवें से घर का कार्य, दशम से राज्य कार्य का तथा चौथे से मित्र के लाभ का और दशवें से बसने (निवास करने) का विचार करना चाहिए । दूसरे और ग्यारहवें से धन का, तीसरे से सेवक का और छठे से वैरी का विचार करना चाहिए । इन स्थानों में शुभग्रह बैठे हों या शुभ से दृष्ट हों तो सब काम शुभ होते हैं और इनमें अशुभ बैठे हों तो सब काम विफल होते हैं ॥ ११६ । ११७ ॥

वित्तस्वामिनि भौमेऽनौचित्ये पारदारिकव्ययकृत् ।
जीवे धर्मायरवौ गुरुपूजायै सिते विलासाय ॥ ११८ ॥
वाणिज्याय ज्ञे पुनरिन्दौ मुथशिलिनी चान्यथान्यार्थम् ।
लग्नपतौ पतितस्थे विबले राज्यात्ययस्तु कम्बूले ।
कोपि गुणः स्यात्पापाक्रान्तैरशुभं च्युतो भवति ॥ ११९॥

यदि धनेश मंगल हो और लग्नेश से इत्थशाल करता हो तो अनुचित रीति से परस्त्री के लिए धन का खर्च होता है । बृहस्पति धनेश हो तो धर्म के लिए तथा सूर्य धनेश हो तो गुरु की पूजा में और शुक्र धनेश हो तो भोग विलास में धन खर्च होता है । बुध धनेश हो तो वाणिज्य में धन खर्च होता है और धनेश का चन्द्रमा से इत्थशाल हो तो दूसरे के

लिए धन व्यय होता है। लग्नेश पतित तथा बल रहित हो तो राज्य का नाश होता है। यदि लग्नेश शुभों से कम्बूल योग करता हो तो कुछ गुणकारी होता है। तथा पापाक्रान्त हो तो राज्य से च्युत होकर अशुभ-फल भोगता है॥ ११८। ११९॥

राजा और मंत्री का स्नेह प्रश्न।

नरपतिसचिवस्नेहप्रश्ने कंबूले लग्नसप्तपयोः।
मुथशिलयोः शुभदृष्ट्या शुभता राज्ये मिथः स्नेहः १२०

कोई पूछे कि राजा और राजमंत्री से स्नेह होगा या नहीं तो इस प्रश्न में लग्नेश और सप्तमेश का कंबूल योग हो और इत्थशाल करते हों तथा शुभग्रहों की दृष्टि हो तो राजा और मंत्री में प्रीति होगी और राज्य में शुभ सुख होगा॥ १२०॥

राज्य स्थिर अथवा अस्थिर का प्रश्न।

राज्यं चरं स्थिरं वा लग्नपगगनेशयोः सहयोः।
यद्येको मन्दः स्यात्केन्द्रे तत्स्थितमथोन्यथा वाच्यम् १२१
यदि वा स वाममार्गे भूमेर्वा प्रच्युतिर्भवेत्पूर्वम्।
कंबूले सति लभते शीघ्रं मूसरिफे तु न पुनः॥ १२२॥

यह राज्य स्थिर रहेगा या चर? इस प्रश्न में लग्नेश और दशमेश एक स्थान में स्थित हों और इनमें से एक मन्द गतिवाला केन्द्र में बैठा हो तो राज्य स्थिर रहेगा और इससे विपरीत हो तो राज्य चलायमान होगा। यदि वह केन्द्रस्थ ग्रह वक्री हो तो पहले राज्य छूटकर फिर मिल जाय और कंबूल योग हो तो शीघ्र राज्य लाभ हो। यदि ईसराफ योग हो तो फिर राज्य लाभ न हो॥ १२१। १२२॥

एकादशस्थानसम्बन्धी प्रश्न।

राजा से लाभ आदि का प्रश्न।

नृपतेर्गौरवलाभाशादि मम स्यान्नवेति पृच्छायाम्।
आयेशलग्नपत्योः स्नेहदृशा मुथशिले तु तं भवति १

रिपुदृष्ट्या बहुदिवसैः केन्द्रे चायेशचन्द्रकम्बूले ।
वाञ्छ्या पूर्णैवाशा चरस्थिरद्विःस्वभावगे स्वनामफलम् १२४
मन्दे क्रूरोपहते भूत्वाशाशु प्रणाशमुपयाति ।
क्रूरायुक्ते च शुभयुज्यधिकारवशेन लब्ध्याशा ॥ १२५ ॥

कोई पूछे कि राजा से मान, धन, और आशा का लाभ होगा या नहीं ? इस प्रश्न में लाभेश और लग्नेश का मित्रदृष्टि से इत्थशाल योग हो तो धन-मानादि का लाभ होगा । यदि शत्रुदृष्टि से इत्थशाल हो तो बहुत दिन में लाभ होगा और लाभेश का चन्द्रमा के साथ केन्द्र में इत्थशाल हो तो आशापूर्ण होगी । परन्तु लाभेश चर, स्थिर और द्विस्वभाव आदि जैसी राशि में स्थित हो उसी के नाम सदृश फल होगा । यदि लाभेश मन्दगतिवाला हो और क्रूरों से पीड़ित हो तो आशा पूर्ण होकर फिर शीघ्रही आशाभङ्ग हो जावे । यदि क्रूर रहित शुभग्रहों से युक्त हो तो अधिकारवश से थोड़ी या अधिक आशा पूर्ण होवे ॥ १२३ । १२५ ॥

मित्रसे प्रीति का प्रश्न ।

मित्रेण सह प्रीतिर्भविता लग्नेश्वरायपत्योश्च ।
प्रियदृष्ट्या मुथशिलतः प्रीतिर्वान्योन्यगृहयानात् १२६ ॥
केन्द्रस्थितयोरनयोर्मैत्री किल पूर्वजातैव ।
पणफरगतौ पुरस्तादापोक्लिमतो महाप्रीतिः ॥ १२७ ॥

मित्र से प्रीति होगी या नहीं ? इस प्रश्न में लग्नेश और लाभेश मित्रदृष्टि से इत्थशाल योग करते हों अथवा लग्नेश लाभ में और लाभेश लग्न में हो तो परस्पर प्रीति होगी । यदि लग्नेश और लाभेश दोनों केन्द्र में स्थित हों तो प्रीति पहले ही होचुकी बताना । और पणफर २, ५, ८, ११ में हों तो आगे प्रीति होगी तथा लग्नेश और लाभेश आपोक्लिम स्थान ३, ६, ९, १२ में हों तो बहुत प्रीति होगी ॥ १२६ । १२७ ॥

गुप्त कार्य-सिद्धि का प्रश्न ।

गुप्तं कार्यमिदं मे सिध्यति लग्नेश्वरेऽथ चन्द्रमसि ।
शुभमुथशिलगे केन्द्रे तन्निकटे वाथ सिद्धिः स्यात् ॥ १२८॥

किसी ने पूछा कि मेरा गुप्त कार्य सिद्ध होगा या नहीं ? इस प्रश्न में लग्नेश और चन्द्रमा का केन्द्र या केन्द्र के समीप में शुभ इत्थशाल योग हो तो गुप्त कार्य की सिद्धि होती है ॥ १२८ ॥

द्वादशभावसम्बन्धी प्रश्न ।

युद्धसम्बन्धी प्रश्न ।

रिपुविग्रहपृच्छायां बलवति षष्ठे रिपुः सबलः ।
द्वादशपे शुभदृष्टे बलवति वाच्यं शुभं प्रष्टुः ॥ १२९ ॥

कोई पूछे कि वैरी से लड़ाई होगी या नहीं ? तो इस प्रश्न में यदि छठा भाव बलवान् हो तो वैरी बलवान् होता है और बारहवें भाव का स्वामी बलवान् और शुभ ग्रहों से देखा जाता हो तो प्रश्नकर्ता को शुभ होता है अर्थात् प्रश्नकर्ता बलवान् होता है ॥ १२९ ॥

शुभयुतदृष्टे सद्व्ययमशुभेक्षणयोगतो व्ययमनर्थात् ।
एवं भावेष्वखिलेषूह्यं सदसत्फलं सुधिया ॥ १३० ॥

इति श्रीताजिकनीलकण्ठ्यां प्रश्नतंत्रे लग्नादि
द्वादशभावप्रश्ननिरूपणं द्वितीयं प्रकरणम् ।

द्वादशेश शुभग्रह से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो अच्छे काम में धन खर्च होता है । और अशुभयुक्त या दृष्ट हो तो अनर्थ में खर्च होता है इसीप्रकार बुद्धिमान् को सब भावों का शुभाशुभ विचारकर फल कहना चाहिए ॥ १३० ॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां प्रश्नतन्त्रे खूबचन्दशर्मविरचितायां भाषाटीकायां
लग्नादिभावप्रश्ननिरूपणं नाम द्वितीयं प्रकरणम् ॥ २ ॥

तृतीयं प्रकरणम् ।
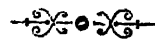
केचिद्विशेषतः प्रश्नाः कथ्यन्ते ।

पथिक के आगमन का प्रश्न ।

आगमने पृच्छायां लग्नेशे लग्नमध्यसंस्थेन ।
कृतमुथशिले समेति हि सुखमस्ततुरीयगे कष्टात् ॥ १ ॥

किसी ने पूछा कि पथिक आवेगा या नहीं ? तो इस प्रश्न में लग्नेश का लग्न में स्थित ग्रह से इत्थशाल हो तो पथिक सुख से आवेगा और लग्नेश का सप्तम में स्थित ग्रह से अथवा चतुर्थ स्थान में स्थित ग्रह से इत्थशाल हो तो कष्ट से आवेगा ॥ १ ॥

स्थानाच्चलितः प्रश्ने लग्नपतौ सहजनवमगृहसंस्थे ।
लग्नस्थेन मुथशिले पन्थानं वहति पथिकोऽयम् ॥ २ ॥
रन्ध्रेऽथ धने तस्मिन्नाकाशसंस्थेन मुथशिलेऽप्येवम् ।
केन्द्रस्थितेत्थशाले लग्नेक्षणवर्ज्यमेति न कदापि ॥ ३ ॥

पथिक स्थान से चला है या नहीं ? इस प्रश्न में लग्नेश तीसरे या नवें स्थान में स्थित होकर लग्नस्थ ग्रह से इत्थशाल करता हो तो पथिक रास्ता में आरहा है । अथवा लग्नेश अष्टम या दूसरे स्थान में बैठा हुआ दशमेश से मुथशिल योग करता हो तो भी रास्ते में आ रहा है । यदि लग्नेश केन्द्र में स्थित हो दशमेश से इत्थशाल करता हो और लग्न को न देखता हो तो पथिक कभी भी नहीं आवेगा ॥ २ । ३ ॥

लग्नाधिपतौ वक्रे लग्नं पश्यत्यमुत्र चन्द्रे वा ।
वक्रगमूथशिले सति समेति पथिकः सुखं शीघ्रम् ॥ ४ ॥
अन्त्यस्थितलग्नपतौ शशिना कृतमुथशिले द्रुतमुपैति ।
लग्नाद्वापि चतुर्थाच्छुभाद्द्वितीयतृतीयगो वापि ।
कथयन्ति नष्टलाभं प्रवासिनश्चागमं त्वरितम् ॥ ५ ॥

लग्नेश वक्र होकर लग्न या चन्द्रमा को देखता हो और वक्री ग्रह से इत्थशाल करता हो तो पथिक सुखपूर्वक शीघ्र ही आ जायगा। अथवा लग्नेश बारहवें भाव में स्थित होकर चन्द्रमा से इत्थशाल करता हो तो भी पथिक शीघ्र ही आ जावेगा। लग्नेश लग्न से या चौथे भाव से दूसरे या तीसरे भाव में स्थित हो अथवा शुभग्रह से दूसरे या तीसरे स्थान में स्थित हो तो पथिक शीघ्र आवेगा। इस योग में प्रवासी को नष्टवस्तु का लाभ होना भी पूर्वाचार्यों ने कहा है ॥ ४ । ५ ॥

ग्रहः षष्ठेऽथ यामित्रे वाक्पतिः कण्टके स्थितः।
पथिकागमनं ब्रूते सिते ज्ञे वा त्रिकोणगे ॥ ६ ॥
पृष्ठोदये पापदृष्टे शुभदृग्वर्जिते बुधः।
लग्नात्षष्ठे यदा पापा यातुश्च निधनं वदेत् ॥ ७ ॥

प्रश्नलग्न से छठे या सातवें कोई ग्रह हो और केन्द्र में बृहस्पति स्थित हो अथवा शुक्र या बुध त्रिकोण (९ । ५) स्थान में स्थित हो तो पथिक का आगमन कहना चाहिए। पृष्ठोदय लग्न पापग्रह से दृष्ट हो और शुभग्रह की उस पर दृष्टि न हो तथा लग्न से छठे भाव में पापग्रह बैठे हों तो विद्वान् को जानेवाले की मृत्यु कहना चाहिए ॥ ६ । ७ ॥

यदा क्रूरास्तृतीयस्था देशाद् देशान्तरं गतः।
चौरेणैव हृतः स्वश्च पथिकः केन्द्रगा यदि ॥ ८ ॥

यदि तीसरे भाव में पापीग्रह स्थित हों तो पथिक एक देश से दूसरे देश को गया समझना। यदि केन्द्र में पापग्रह बैठे हों तो पथिक चौरों से लूटा गया जानना ॥ ८ ॥

पापैः षष्ठात्रिलाभस्थैः कण्टकस्थैः शुभग्रहैः।
प्रवासी सुखमायाति दूरस्थेऽपि सुनिश्चितम् ॥ ९ ॥

छठे, ग्यारहवें और तीसरे स्थान में पापग्रह स्थित हों तथा केन्द्र में शुभग्रह स्थित हों तो दूर गया हुआ भी परदेशी निश्चय सुखपूर्वक आ जाता है ॥ ९ ॥

चतुरस्रे त्रिकोणे वा पापगेहस्थितः शनिः।
पापदृष्टश्च नियतं बन्धनं यातुरादिशेत्॥ १०॥
शुभयुक्ते स्थिरे लग्ने स्थिरो बन्धश्चरेऽन्यथा।
द्वितनौ सौम्यसंयुक्ते बन्धमोक्षौ क्रमेण तु॥ ११॥

पापग्रह की राशि में स्थित शनि केन्द्र या त्रिकोण (५। ९) स्थान में स्थित हो तथा पापग्रह से दृष्ट हो तो विदेश जानेवाले को बन्धन में पड़ा बतलाना चाहिए। यदि प्रश्न लग्न स्थिर हो और शुभग्रह युक्त हो तो बन्धन स्थिर रहेगा और चर लग्न हो तो बन्धन स्थिर नहीं रहेगा। यदि शुभग्रह युक्त द्विस्वभाव लग्न हो तो बन्धन होकर छूट जायगा॥ १०। ११॥

पापत्रिकोणयामित्रे विलग्ने पृष्ठकोदये।
शत्रुभिर्वीक्ष्यमाणश्च यातुः कष्टं वदेत्सुधीः॥ १२॥
मार्गस्थानगतैः सौम्यैर्मार्गं तस्य शुभं वदेत्।
क्रूरैर्दुःखं विलग्नस्थैः पापैः क्लेशमवाप्नुयात्॥ १३॥

पापग्रह पाँचवें, सातवें और नवें स्थान में बैठे हों और शत्रुग्रहों से दृष्ट पृष्ठोदय लग्न हो तो परदेशी को कष्टित बतावे। मार्ग (नवम) स्थान में सौम्यग्रह हों तो मार्ग शुभ कहना चाहिए और क्रूरग्रह हों तो दुःख कहना चाहिए तथा लग्न में पापग्रह हों तो मार्ग में दुःख, क्लेश कहना चाहिए॥ १२। १३॥

चरलग्ने चरांशे वा चतुर्थे यदि चन्द्रमाः।
प्रवासी सुखमायाति कृतकार्यश्च वेश्मनि॥ १४॥
कण्टकैः सौम्यसंयुक्तैः पापग्रहविवर्जितैः।
प्रवासी सुखमायाति निधनस्थे सुधाकरे॥ १५॥

यदि प्रश्नलग्न चर हो या चर के नवांश में हो और चौथे स्थान में चन्द्रमा हो तो परदेशी अपना कार्य करके सुख से घर आ जावेगा। यदि केन्द्र में शुभग्रह हों और पापग्रह एक भी न हो तथा आठवें चन्द्रमा हो तो प्रवासी सुखपूर्वक आ जाता है॥ १४। १५॥

गमागमौ तु न स्यातां स्थिरराशौ विलग्नगे ।
न रोगोपशमो नाशो द्रव्याणां न पराभवः ॥ १६ ॥
विपरीतं चरे वाच्यं फलं मिश्रं द्विमूर्तिषु ।
स्थिरवत्प्रथमे खण्डे परार्धे चरराशिवत् ॥ १७ ॥

यदि लग्न में स्थिर राशि हो तो आवागमन नहीं होगा और न रोग ही छूटेगा तथा द्रव्य (धन) का नाश होगा परन्तु अपमान न होगा । यदि चर लग्न हो तो इससे उलटा फल कहना और द्विस्वभाव लग्न हो तो पहले स्थिर लग्न का सा तथा उत्तरार्ध में चर का सा फल (शुभाशुभ मिला हुआ फल) जानना ॥ १६ । १७ ॥

गमागमौ तु न स्यातां योगो दुरुधराकृते ।
शुभैः शुभकृतो रोधः पापैस्तस्करतो भयम् ॥ १८ ॥
प्रवासी सुखमायाति गुरुशुक्रौ त्रिवित्तगौ ।
चतुर्थस्थानगावेतौ शीघ्रमायाति कार्यकृत् ॥ १९ ॥

यदि प्रश्नकाल में दुरुधरा योग हो तो भी आवागमन नहीं होता है । यदि दुरुधरा योग शुभग्रहों का हो तो शुभकार्य में अटकाव होता है तथा पापग्रहकृत हो तो चौरों से भय होता है । यदि प्रश्न समय बृहस्पति और शुक्र तीसरे या दूसरे स्थान में हों तो परदेशी सुख से आता है और दोनों चौथे घर में बैठे हों तो परदेशी काम करके शीघ्र आजाता है ॥ १८ । १९ ॥

इन्दुः सप्तमगो लग्नात्पथिकं वक्ति मार्गगम् ।
मार्गाधिपश्च राश्यर्धात्परभागे व्यवस्थितः ॥ २० ॥
शुक्रार्कजीवसौम्यानामेकोऽपि स्याद्यदायगः ।
तदाशु गमनं ब्रूयात्प्रष्टुर्न गमनं व्यये ॥ २१ ॥

लग्न से सातवें चन्द्रमा हो तो पथिक को रास्ते में बतलाना तथा नवमेश राशि के आधे से पर भाग में स्थित हो तो भी मार्ग में कहना । शुक्र, सूर्य, बृहस्पति और बुध इनमें से एक भी ग्रह लाभ में (ग्यारहवें) बैठा हो तो शीघ्र आगमन कहना और इनमें से कोई ग्रह बारहवें में हो तो गमन नहीं होगा ॥ २० । २१ ॥

लग्नाद्यावन्मिते स्थाने बली खेटो व्यवस्थितः।
ब्रूयात्तावन्मिते मासे पथिकस्य निवर्तनम् ॥ २२ ॥
एवं कालं चरांशस्थे द्विगुणं च स्थिरांशके।
द्विस्वभावांशगे खेटे त्रिगुणं चिन्तयेत्सुधीः ॥ २३ ॥

लग्न से जितनी संख्या पर बलवान् ग्रह बैठा हो उतने ही महीने में पथिक लौटकर आ जाता है। यदि वह बलवान् ग्रह चर राशि के नवांश में हो तो उतने ही समय में लौट आवेगा और स्थिर राशि के नवांश में हो तो पूर्वोक्त से दुगने समय में और द्विस्वभाव राशि के नवांश में वह बलवान् ग्रह हो तो तिगुने समय में आगमन बताना चाहिए॥ २२। २३॥

यातुर्विलग्नाद्यामित्रभवनाधिपतिर्यदा।
करोति वक्रमावृत्तेः कालं तु ब्रुवतेऽपरे ॥ २४ ॥
चतुर्थे दशमे वापि यदि सौम्यग्रहो भवेत्।
तदा न गमनं क्रूरैस्तत्रस्थैर्गमनं भवेत् ॥ २५ ॥

गमन करनेवाले के लग्न से सातवें भाव का स्वामी जब वक्र होता है तब लौटकर आगमन होता है। यह किसी अन्य आचार्य का मत है। चौथे या दशवें स्थान में शुभग्रह हो तो गमन नहीं होता है और क्रूरग्रह चौथे या दशवें में हो तो गमन होता है॥ २४। २५॥

लग्नाद्वा लग्ननाथाद्वा यावन्तः सौम्यखेचराः।
मार्गे तत्रोदया वाच्याः स्थाने स्थाने विचक्षणैः ॥ २६ ॥
लग्नाद्वा लग्ननाथाद्वा यावन्तः क्रूरखेचराः।
नवमे द्वादशे वापि तत्संख्याः स्युरुपद्रवाः ॥ २७ ॥

लग्न से अथवा लग्नेश से नवम स्थान में जितने शुभग्रह हों उतनी ही जगह मार्ग में पथिक को शुभ का उदय होगा यह पंडितों को कहना चाहिए। और लग्न से अथवा लग्नेश से नवम और दशम स्थान में जितने क्रूरग्रह स्थित हों मार्ग में उतने ही उपद्रव पथिक को होंगे यह कहना चाहिए॥ २६। २७॥

क्रूरयुक्तेक्षितो मन्दः शुभदृग्योगवर्जितः।
धर्मस्थस्तनुते व्याधिं प्रोषितस्याष्टमे मृतिम्॥ २८॥

पापग्रहों से युक्त या दृष्ट शनैश्चर नवें स्थान में बैठा हो और शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट न हो तो परदेशी के शरीर में रोग हो जाता है और यदि शनैश्चर आठवें हो तो पथिक की मृत्यु हो जाती है॥ २८॥

यामित्रस्थ शुभोत्थे यातानायान्ति दुरुधरायोगे।
मित्रस्वामिनिषेधात्पापोत्थे शत्रुरुक्चौरात्॥ २९॥

यदि प्रश्न लग्न से सप्तम स्थान में स्थित शुभग्रहों से दुरुधरायोग हो तो मित्र या स्वामी के अनुरोध से पथिक लौटकर नहीं आवेगा। यदि पापग्रहों से दुरुधरायोग हो तो शत्रु, रोग या चौरों के डर से लौटकर नहीं आवेगा॥ २९॥

चन्द्राऽर्कयोश्छिद्रगयोर्यमेन संदृष्टयोः स्यात्पथि शस्त्रभीतिः।
रन्ध्रे सिते ज्ञे च सुखाप्तिरारे मन्दे भयं पापयुगीक्षितेऽध्वनि ३०॥

चन्द्रमा और सूर्य आठवें स्थान में हों और उन पर शनि की दृष्टि हो तो मार्ग में शस्त्र का भय होता है। और शुक्र तथा बुध आठवें हों तो सुख मिलता है। यदि पापयुक्त या पापदृष्ट मंगल और शनैश्चर आठवें हों तो मार्ग में भय होता है॥ ३०॥

विदेशी मनुष्य जीता है या मर गया।

लग्नेश्वरे शीतकरेऽथ षष्ठे तुर्येऽष्टमे वाप्यतिनीचगे वा।
अस्तंगते छिद्रपतीत्थशालयुक्तेऽशुभैर्दूरगतो मृतः स्यात्॥३१॥

लग्नेश और चन्द्रमा छठे, चौथे या आठवें स्थान में अति नीच का होकर बैठा हो और अस्त हो, अष्टमेश से इत्थशाली तथा अशुभ युक्त हो तो परदेशी दूर जाकर मरा होगा यह कहना चाहिए॥ ३१॥

भूमेरधस्थेन च वक्रगेन यदीत्थशालं कुरुते शशाङ्कः।
सौम्यैरदृष्टे मरणं प्रकुर्याद्दूरस्थितस्यापि विदेशगस्य॥ ३२॥

चौथे स्थान से नीचे स्थित किसी वक्री ग्रह से चन्द्रमा इत्थशाल

करता हो और शुभग्रहों से दृष्ट न हो तो दूर गये हुए विदेशी की मृत्यु करता है ॥ ३२ ॥

सौम्यैः षष्ठान्त्यरन्ध्रस्थैर्विबलैश्च शुभेक्षितैः ।
पापयुक्तौ शशांकार्कौ तदा दूरस्थितो मृतः ॥ ३३ ॥

यदि शुभग्रह छठे, बारहवें और आठवें स्थान में स्थित हों और बलरहित शुभग्रहों से दृष्ट हों तथा चन्द्रमा और सूर्य पापयुक्त हों तो दूर स्थित मनुष्य की मृत्यु होती है ॥ ३३ ॥

पृष्ठोदये पापयुते त्रिकोणकेन्द्राष्टषष्ठोपगतैश्च पापैः ।
सौम्यैरदृष्टः परदेशसंस्थो मृतो गदार्तो नवमे च सूर्ये ॥३४॥

पापयुक्त पृष्ठोदय लग्न हो और ५, ९, १, ४, ७, १० वें स्थान में पापग्रहों और उन पर शुभग्रह की दृष्टि न हो तो परदेशी मर गया तथा नवें सूर्य हो तो परदेशी रोगी होगा ऐसा कहना ॥ ३४ ॥

तुर्योपरिस्थेन खगेन चन्द्रमा यदीत्थशालं कुरुते शुभेक्षितः ।
सौम्यैर्युतो वा परदेशसंस्थितः सुखी च जीवेत्पथि सौख्यमेति च

चौथे स्थान से ऊपर स्थित किसी ग्रह से चन्द्रमा इत्थशाली होकर शुभग्रहों से दृष्ट या युक्त हो तो परदेशी सुख से जीता है और रास्ते में सुख को पाता है ॥ ३५ ॥

परचक्रागम प्रश्न ।

मार्गान्निवर्तते शत्रुः पापैः शत्रुगृहाश्रितैः ।
चतुर्थगैरपि प्राप्तः शत्रुर्भग्नो निवर्तते ॥ ३६ ॥
झषालिकुम्भकर्कटा रसातले यदा स्थिताः ।
रिपोः पराजयस्तदा चतुष्पदैः पलायनम् ॥ ३७ ॥

शत्रु के आगमन की आशंका के प्रश्न में यदि छठे स्थान में पापग्रह बैठे हों तो शत्रु रास्ते से ही लौट जावेगा और जो चौथे स्थान में पापग्रह स्थित हों तो शत्रु आकर भी फिर घायल होकर चला जाता है । मीन, वृश्चिक, कुंभ और कर्क ये राशियाँ प्रश्नलग्न से चौथे स्थान में हों तो

वैरी की पराजय होती है और चौपायों (हाथी-घोड़ों) के सहित भाग जाता है ॥ ३६ । ३७ ॥

स्थिरोदये जीवशनैश्चरे स्थिते गमागमौ नैव वदेत्तु पृच्छतः।
त्रिपञ्चषष्ठा रिपुसंगमाय पापाश्चतुर्था विनिवर्तनाय ॥ ३८ ॥

यदि प्रश्न लग्न में स्थिर राशि हो और उसमें बृहस्पति और शनैश्चर स्थित हों तो प्रश्नकर्ता से कहना चाहिए कि शत्रु का आना जाना नहीं होगा और तीसरे, पाँचवें तथा छठे स्थान में पापग्रह हों तो शत्रु से संगम होगा। तथा चौथे घर में पापग्रह हों तो शत्रु लौट जायगा ॥ ३८ ॥

दशमोदयसप्तमगास्सौम्या नगराधिपस्य विजयकराः।
आरार्किज्ञगुरुसिताः प्रभङ्गदा विजयदा नवमे ॥ ३९ ॥

दशवें, लग्न में और सातवें शुभग्रह हों तो शहर के स्वामी (राजा) की विजय कराते हैं और नवें स्थान में मंगल और शनि हों तो हार कराते हैं तथा नवें बुध, बृहस्पति और शुक्र हों तो विजय देनेवाले होते हैं ॥ ३९ ॥

शत्रुआगमन प्रश्न।

उदयर्क्षाच्चन्द्रर्क्षं भवति च यावद्दिनैश्च तावद्भिः।
आगमनं स्याच्छत्रोर्यदि न हि मध्ये ग्रहः कश्चित् ॥ ४०

लग्न से चन्द्रमा जितनी राशि पर हो उतने ही दिन में शत्रु का आगमन होता है यदि लग्न और चन्द्रमा के बीच में कोई ग्रह न हो तो ॥ ४० ॥

जय-पराजय का प्रश्न।

दैत्येज्यवाचस्पतिसोमपुत्रैरेकर्क्षगैर्लग्नगतैर्बलाढ्यैः।
द्वाभ्यामथेज्ये भृगुजेऽथलग्ने हन्याद्रणे यायिनृपं पुरेशः ४१
सूर्येन्दुभौमार्कजसैंहिकेयैः सर्वैश्चतुर्भिस्त्रिभिरेव लग्नगैः।
हन्यात्तदा स्थायिनमाशु यायी द्यूनस्थितैर्यायिनृपं पुरेशः ४२

जीत-हार के प्रश्न में शुक्र, बृहस्पति और बुध एक ही नक्षत्र के होकर बलयुक्त लग्न में स्थित हों अथवा बृहस्पति या शुक्र इन दोनों में से कोई

एक भी लग्न में हो तो पुर का मालिक आनेवाले राजा को रण में मारेगा । यदि सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, शनैश्चर और राहु इनमें से चारों या तीन ग्रह लग्न में स्थित हों तो आनेवाला पुर में स्थित राजा को मारेगा और उपर्युक्त ग्रह सातवें स्थान में हों तो पुराधीश आनेवाले को मारेगा ॥ ४१ । ४२ ॥

दैत्येज्यशीतांशुबुधाः सुरेज्यैः सर्वैस्त्रिभिर्द्यूनगतैर्बलाढ्यैः ।
हन्याद्रणे स्थायिनमाशु यायी सुखास्पदस्थैश्चशुभैःसुसन्धिः

शुक्र, चन्द्रमा, बुध और बृहस्पति ये सब या इनमें से तीन बलवान् ग्रह सातवें स्थान में हों तो आनेवाला शत्रु पुरस्थित को रण में मारेगा और चौथे स्थान में शुभग्रह हों तो सन्धि हो जायगी ॥ ४३ ॥

कुजेत्थशाले हिमगौ विलग्ने बन्धोऽथ मृत्युर्युधि नागरस्य ।
भौमेत्थशाले च विधौ कलत्रे बन्धं मृतिर्वा लभतेऽत्र यायी४४॥

यदि चन्द्रमा मंगल के साथ इत्थशाल करता हुआ लग्न में बैठा हो तो नगराधीश की मृत्यु हो या वह बन्धन में पड़ जावे । और चन्द्रमा मंगल के साथ इत्थशाल करता हुआ सातवें स्थान में हो तो आनेवाले शत्रु की मृत्यु हो या वह बन्धन में पड़ जावे ॥ ४४ ॥

लग्नेशयामित्रपयोश्च मध्ये भवेद्ग्रहो यःस्वगृहोच्चसंस्थः ।
तद्वर्गमर्त्यान्नृपयोश्चसन्धिर्ज्ञेयो बुधे लेखकपण्डिताभ्याम्॥४५

लग्नेश और सप्तमेश इन दोनों में से जो ग्रह स्वगृही हो या उच्च का हो उसी वर्ग के मनुष्यों द्वारा या लेखक और पंडित के द्वारा दोनों राजाओं की सन्धि जानना ॥ ४५ ॥

क्रूरे कलत्रे ह्युदये शुभग्रहो यच्छेद्धनं यायिनृपाय नागरः ।
विपर्ययाद्यायिनृपःपुरेश्वरं दुर्गात्स निष्कास्य ददाति वास्पदम्

सातवें स्थान में पापग्रह हों और लग्न में शुभग्रह हों तो नगराधीश आगन्तुक राजा को धन देता है । और इसके विपरीत हो (लग्न में पापग्रह और सातवें शुभग्रह हों) तो आगन्तुक राजा पुराधीश को किला निकालकर फिर रहने को स्थान दे देता है ॥ ४६ ॥

रवीत्थशाले शशिजे सुगुप्ताश्चरा भवेयुश्च कुजेसराफात्।
गृहाच्छशाङ्केन युतश्च तस्मिन्ये येऽन्यवेषाश्च भवन्ति चाराः॥

यदि सूर्य और बुध से इत्थशाल हो तो शत्रु राजा के गुप्तचर रहते हैं। बुध का मंगल से ईसराफ हो और चन्द्रमा से युक्त हो तो दूत लोग अन्य वेष बनाकर रहते हैं॥ ४७॥

किला का प्रश्न।

प्रश्ने विलग्ने क्रूरे वा दुर्गभङ्गो न जायते।
विशेषतो भूमिपुत्रे राहौ वा मूर्तिगे सति॥ ४८॥

किला के प्रश्न में, यदि लग्न में क्रूरग्रह हों अथवा विशेष करके मंगल और राहु लग्न में हों तो दुर्ग का भंग नहीं होता है (किला नहीं टूटता है)॥ ४८॥

सप्तमे सिंहिकासूनुर्दुर्गं शीघ्रेण लभ्यते।
यामित्रोदयगे क्रूरे रिष्फगे लग्ननायके॥ ४९॥
द्वितीये वाष्टमे षष्ठे तदा दुर्गं न लभ्यते।
सक्रूरो लग्नपो वक्री युद्धदः केन्द्रसंस्थितः॥ ५०॥

सातवें राहु हो तो शीघ्र ही किला मिल जाता है। यदि लग्न में और सातवें क्रूर ग्रह हो तथा बारहवें लग्नेश हो यद्वा दूसरे, आठवें और छठे स्थान में लग्नेश हो तो दुर्ग की प्राप्ति नहीं होगी। यदि क्रूरग्रह सहित लग्नेश वक्री होकर केन्द्र में बैठा हो तो युद्ध होता है॥ ४९। ५०॥

षष्ठाधिपे द्यूनगते पापे वा युद्धमादिशेत्।
पृच्छायां केन्द्रगैः क्रूरैः कोटे दुर्गे वधो नृणाम्॥ ५१॥

छठे भाव का स्वामी सातवें घर में हो अथवा सातवें पापग्रह हो तो युद्ध कहना चाहिए। प्रश्न समय केन्द्र में पापग्रह हों तो कोट या किले में मनुष्यों का वध होता है॥ ५१॥

भौमाष्टमेशावेकत्र ददतो निधनं नृणाम्।
स्वायपुत्रस्थिते जीवे कोटमध्ये भयं न हि।
शनौ भौमे च केन्द्रस्थे बहूनां वधबन्धनम्॥ ५२॥

मंगल और अष्टमेश दोनों एक ही स्थान में बैठे हों तो बहुत मनुष्यों का मरण होता है । यदि बृहस्पति दूसरे, ग्यारहवें और पाँचवें स्थान में हो तो कोट में कुछ भय नहीं होता है और शनैश्चर, मंगल केन्द्र में हों तो बहुतों का वध और बन्धन होता है ॥ ५२ ॥

घोरयुद्धयोग ।

लग्नगतो यदि पापः पापेन युतेक्षितो वा स्यात् ।
लग्नात्पूर्वात्परगौ पापौ युद्धं तदा घोरम् ॥ ५३ ॥

जो पापग्रह लग्न में हो और पापग्रह से दृष्ट या युक्त हो अथवा लग्न से पहले और आगे पापग्रह हों तो घोर युद्ध होता है ॥ ५३ ॥

रोगी के शुभाशुभ का प्रश्न ।

विलग्ने षष्ठपः पापो जन्मराशिनिरीक्षितः ।
रोगिणस्तस्य मरणं निश्चयेन वदेद्बुधः ॥ ५४ ॥
चतुर्थाष्टमगे चन्द्रे पापमध्यगतेऽपि वा ।
मृतिः स्याद्बलसंयुक्तः सौम्यदृष्ट्याचिरात्सुखम् ॥ ५५ ॥

यह रोगी अच्छा होगा या नहीं ? इस प्रश्न में पापी षष्ठेश लग्न में हो और रोगी की जन्म राशि को देखता हो तो बुद्धिमान् उस रोगी की अवश्य मृत्यु बतावे । यदि चौथे या आठवें चन्द्रमा हो अथवा पापग्रहों के मध्य में हो तो रोगी की मृत्यु होती है । यदि चन्द्रमा बलवान् हो और शुभग्रहों से दृष्ट हो तो रोगी शीघ्र ही सुखी हो जायगा ॥ ५४ । ५५ ॥

विधौ लग्ने स्मरे भानौ रोगी याति यमालयम् ।
प्रश्ने क्रूरगृहे लग्ने रोगवृद्धिश्चिकित्सकात् ॥ ५६ ॥
तथा लग्ने गते सौम्ये वैद्योक्तममृतं वचः ॥ ५७ ॥

चन्द्रमा लग्न में हो और सूर्य सातवें घर में हो तो रोगी यमराज के स्थान में चला जाता है (मर जाता है) । प्रश्न लग्न में क्रूरग्रह हों तो चिकित्सा करनेवाले से रोग बढ़ जायगा और लग्न में शुभग्रह हों तो वैद्य के वचन ही रोगी के लिए अमृत हो जाते हैं ॥ ५६ । ५७ ॥

लग्नं वैद्यो द्युनं व्याधिः खं रोगी तुर्यमौषधम् ।

रोगिणो भिषजो मैत्री मैत्री भेषजरोगयोः।
व्याधेरुपशमो वाच्यः प्रकोपः शात्रवे तयोः ॥ ५८ ॥

लग्न को वैद्य, सातवें भाव को रोग, दशवें को रोगी और चौथे को ओषधि कल्पित करके शुभाशुभ ग्रहों से विचार करना चाहिए। रोगी और वैद्य की (लग्नेश और दशमेश की) मित्रता हो तथा रोग और ओषधि की (सप्तमेश और चतुर्थेश की) मित्रता हो तो रोग की शान्ति कहना चाहिए और परस्पर शत्रुता हो तो रोग का कोप होना कहना चाहिए ॥ ५८ ॥

लग्ननाथे च सबले केन्द्रसंस्थे शुभग्रहे।
उच्चगे वा त्रिकोणे वा रोगी जीवति निश्चयम् ॥ ५९ ॥
एकः शुभो बली लग्ने त्रायते रोगपीडितम्।
सौम्या धर्मारिलाभस्थास्तृतीयस्था गदापहाः ॥ ६० ॥

लग्नेश बलवान् हो और केन्द्र में अथवा अपने उच्च में या त्रिकोण (९।५) में शुभग्रह स्थित हों तो रोगी निश्चय रोग से छूटकर जीता है। लग्न में एक भी शुभग्रह हो तो वह रोगी की रक्षा करता है। यदि नवें, छठे, ग्यारहवें और तीसरे शुभग्रह स्थित हों तो रोग को नष्ट करते हैं ॥ ५९। ६० ॥

देवादिदोष का ज्ञान।

वह्न्यंकद्वादशे षष्ठे लग्नात्पापग्रहो यदि।
हतो गदैर्जलैश्शस्त्रैस्तस्य दोषः कुलोद्भवः ॥ ६१ ॥

यदि लग्न से तीसरे, नवें, बारहवें और छठे स्थान में पापग्रह हो तो रोग, जल और शस्त्र से पीड़ित रोगी को अपने कुल से उत्पन्न दोष बताना चाहिए ॥ ६१ ॥

लग्न से दोषज्ञान।

देवस्य मेषे गवि पितृपक्षे
आकाशदेव्या मिथुनेऽथ कर्के।
स्याच्छाकिनी क्षेत्रपतिस्तु सिंहे
स्त्रियां कुलाढ्या च तुले तु मातुः ॥ ६२ ॥

नागास्त्वलौ यक्षपतिर्धनुष्ये नक्रेऽम्बुदेव्यास्तु घटेऽथ यक्षी ।
झषे कुलोपासितदैवतस्य दोषं भवेद्धर्मबहिष्कृताय ॥ ६३ ॥

मेष लग्न हो तो देवदोष, वृष हो तो पितृदोष, मिथुन हो तो आकाश देवी का दोष, कर्क लग्न हो तो डाकिनी-शाकिनी का दोष, सिंह हो तो क्षेत्रपाल का दोष, कन्या से कुल देवता का, तुला से माता के कुल देव का, वृश्चिक से नाग देवता का, धन से यक्षादि का, मकर से जलदेवी का, कुंभ से यक्षिणी देवी का और मीन लग्न से कुलपूजित देवता का दोष कहना चाहिए। ये अधर्मी मनुष्यों को ही दोष होते हैं। शान्ति से ठीक हो जाते हैं ॥ ६२ । ६३ ॥

प्रेताश्च राहौ पितरः सुरेज्ये चन्द्रेऽम्बुदेव्यस्तपनेऽपि देव्यः ।
स्वगोत्रदेव्यश्च शनौ बुधे च भूतानि विद्याद्व्ययरन्ध्रसंस्थे ६४
शाकिन्य आरे भृगुजेऽम्बुदेव्यो गृह्णन्ति मर्त्यं विमुखं मुकुन्दात्।
स्वक्षोंच्चगे वीर्ययुते च साध्यश्चन्द्रे च नीचे विबले न साध्याः ६५

यदि बारहवें अथवा आठवें स्थान में राहु हो तो प्रेतदोष, बृहस्पति हो तो पितृदोष, चन्द्रमा हो तो जलदेवी का दोष, सूर्य हो तो देवी का दोष, शनि हो तो अपने गोत्र की देवी का दोष और बुध हो तो भूतों का दोष होता है। मंगल बारहवें या आठवें हो तो डाकिनी-शाकिनी का दोष और शुक्र हो तो जलदेवी का दोष होता है। परन्तु ये दोष उन्हीं को होते हैं, जो मनुष्य भगवान् से विमुख होते हैं। पूर्वोक्त दोषकारक ग्रह यदि अपनी राशि में हों या उच्च में हों अथवा बलवान् हों, तो दोष साध्य है और चन्द्रमा नीच का हो और बलरहित हो तो असाध्य दोष कहना ॥ ६४ । ६५ ॥

केन्द्रस्थैर्बलिभिः पापैरसाध्या देवतागणाः ।
सौम्यग्रहैश्च केन्द्रस्थैः साध्या मन्त्रैस्तवार्चनैः ॥ ६६ ॥

यदि केन्द्र में पापग्रह बलवान् हों तो देवतागण असाध्य होते हैं और केन्द्र में शुभग्रह हों तो मन्त्र, स्तोत्रपाठ और पूजा से साध्य होते हैं ॥ ६६ ॥

रोगमुक्ति का योग।

कण्टकाष्टत्रिकोणस्थाः शुभा उपचये शशी ।

लग्ने च शुभसंदृष्टे रोगी रोगाद्विमुच्यते ॥ ६७ ॥

केन्द्र १ । ४ । ७ । १० में, आठवें और त्रिकोण ५ । ९ स्थान में शुभग्रह हों और उपचय स्थान में चन्द्रमा हो तथा लग्न को शुभग्रह देखते हों तो रोगी रोग से छूट जाता है ॥ ६७ ॥

स्वामी और सेवक का प्रश्न ।

शीर्षोदये सौम्ययुतेक्षितो वा सौम्यैर्द्वितीयाष्टमसप्तमस्थैः ।
तृतीयलाभारिगतैश्च पापैः सौख्यार्थलाभो नृपसेवकस्य ६८॥
लग्नाद्द्वितीये मदनाष्टमर्क्षे वित्तक्षयं संभ्रमभीतिमृत्युम् ।
कुर्वन्ति पापाः क्रमशो नरेन्द्राद्भृत्यस्य तस्मात्परिवर्जयेत्तम् ॥

राजा की सेवा में लाभ होगा या नहीं ? इस प्रश्न में शुभग्रहों से दृष्ट या युक्त शीर्षोदय लग्न हो और दूसरे, आठवें और सातवें शुभग्रह स्थित हों तथा तीसरे, ग्यारहवें और छठे पापग्रह हों तो राजा के सेवक को सुख और धन का लाभ होता है । यदि लग्न से दूसरे, सातवें और आठवें स्थान में पापग्रह हों तो नौकर को राजा के द्वारा क्रम से धन का नाश, उद्वेग, भय और मृत्यु को देनेवाले होते हैं इसलिए ऐसे ग्रहों के रहते नौकरी न करे ॥ ६८ । ६९ ॥

लग्नाद्द्वितीयाष्टमसप्तमस्थाः
पापाः विनाशं नृपभृत्ययोश्च ।
कुर्वन्ति तेष्वेव गताश्च सौम्याः
कुर्युर्धनारोग्यसुखानि चोभयोः ॥ ७० ॥

शशाङ्कसौम्यैरुदयास्तभावौ दृष्टौ युतौ वा सबलैर्न पापैः ।
प्रष्टुस्तदा स्याद्धृदि पार्थिवस्य स्नेहप्रसादावकृपा प्रतीपात् ७१

यदि लग्न से दूसरे, आठवें या सातवें पापग्रह हों तो राजा और सेवक दोनों का नाश होता है । और पूर्वोक्त स्थानों में शुभग्रह हों तो धन, आरोग्य और सुख दोनों को होते हैं । यदि लग्न और सातवाँ भाव चन्द्रमा और बलवान् शुभ ग्रहों से दृष्ट हों अथवा युक्त हों तो पृच्छक पर राजा के हृदय में स्नेह और कृपा का भाव होता है । परन्तु

पापग्रह न हों तो यह योग होता है। यदि पापग्रह हों तो राजा क कोप होता है॥ ७० । ७१॥

दूसरा स्वामी होने या न होने का प्रश्न।

षष्ठेश्वरेण व्ययपेन केन्द्रे यदीत्थशालं कुरुते विलग्नपः।
प्रभुस्तदान्यः प्रभुरर्थदः स्यादतः प्रतीपान्न भवेत्परः प्रभुः ७२॥
लग्नेश्वरे स्वर्क्षगते स्वतुङ्गे केन्द्रस्थिते शीतकरेत्थशाले।
शुभग्रहैर्दृष्टयुते बलान्विते प्रष्टुर्निजस्वाम्यमितार्थलाभः॥७३॥

दूसरे की नौकरी करने के प्रश्न में यदि षष्ठेश और द्वादशेश से लग्नेश केन्द्र में इत्थशाल करे तो दूसरा स्वामी धन का देनेवाला होगा और इससे विपरीत योग हो तो अन्य स्वामी न होगा। लग्नेश बलवान् होकर अपनी राशि में बैठा हो या अपने उच्च केन्द्र में स्थित हो चन्द्रमा से इत्थशाल करता हो और शुभग्रहों से दृष्ट या युक्त हो तो प्रश्नकर्ता को अपने ही स्वामी से असंख्य धन का लाभ होता है॥ ७२ । ७३॥

जायेश्वरे स्वोच्चनिजर्क्षसंस्थे केन्द्रस्थिते शीतकरेत्थशालगे।
शुभग्रहैर्दृष्टयुते बलोत्कटैः प्रष्टुस्तदान्यः प्रभुरर्थदो भवेत् ७४॥

सप्तमेश अपने उच्च में अथवा अपनी राशि में स्थित हो और केन्द्र में स्थित चन्द्रमा से इत्थशाल करता हो तथा बलवान् शुभग्रहों से दृष्ट या युक्त हो तो प्रश्नकर्ता के लिए दूसरा मालिक धन देनेवाला होता है॥ ७४॥

इदं गृहं वा शुभमन्यदालयं स्थानं त्विदं वाऽशुभमन्यदालयम्।
ममात्र भद्रं गमनात्तु तत्र वा पृष्ठोदयेत्थं विधिना विमृश्य ७५॥

यह घर मेरे लिए शुभदायक होगा या अन्य घर? अथवा यह स्थान मुझे अशुभ है या अन्य स्थान? मेरा यहाँ रहने में कल्याण है या अन्यत्र जाने में? इत्यादि प्रश्न पूर्वोक्त रीति से लग्न द्वारा विचार कर पृच्छक को बताना चाहिए॥ ७५॥

स्वप्नविचार प्रश्न।

लग्नेऽर्के नृपतिं वह्निं शस्त्रं पश्यन्ति लोहितम्।
श्वेतं पुष्पं सितं वस्त्रं गन्धं नारीं च शीतगौ॥ ७६॥

रक्तं मांसं प्रवालं च सुवर्णं धरणीसुते ।
बुधे खे गमनं जीवे धनं बन्धुसमागमम् ॥ ७७ ॥

प्रश्न लग्न में सूर्य हो तो राजा, अग्नि, अस्त्र-शस्त्र और रक्त वर्ण की वस्तुएँ देखता है । लग्न में चन्द्रमा हो तो सफेद फूल, सफेद कपड़े, सुगन्धित वस्तु तथा स्त्री को देखता है । यदि मंगल लग्न में हो तो खून, मांस, मूंगा और सोना दिखाई देता है । बुध लग्न में हो तो आकाश में गमन करना दिखाई देता है तथा बृहस्पति लग्न में हो तो धन और बन्धुओं का समागम दिखाई देता है ॥ ७६ । ७७ ॥

जलावगाहनं शुक्रे शनौ तुङ्गावरोहणम् ।
लग्नलग्नांशपवशात्स्वप्नो वाच्योऽथवा बुधैः ॥ ७८ ॥
सर्वोत्तमबलाद्वापि खेटाद्बुद्ध्या विचिन्तयेत् ।
बलसाम्ये फलं मिश्रं दुःस्वप्नो निर्बलैः खगैः ॥ ७९ ॥

लग्न में शुक्र हो तो जल में तैरना तथा शनैश्चर हो तो ऊँचे पर्वतादि पर चढ़ना दिखाई पड़ता है । अथवा बुद्धिमान् लग्नेश और लग्न के नवांशाधिपति से विचार कर स्वप्न फल कहे । अथवा सबसे उत्तम बलवाले ग्रह से अपनी बुद्धि द्वारा विचार कर उत्तम फल, समान बलवाले ग्रह से सामान्य फल और निर्बल ग्रहों से स्वप्न का बुरा फल कहना चाहिए ॥ ७८ । ७९

रविर्लग्ने शशिदृष्टे रविशशिसमेतविलग्नाद्वा ।
स्वप्नं दृष्टं प्रवदेत्प्रष्टुर्लग्नान्तरात्कालः ॥ ८० ॥

यदि चन्द्रमा से दृष्ट सूर्य लग्न में हो अथवा लग्न में सूर्य और चन्द्रमा हो तो पृच्छक ने स्वप्न देखा है और इससे अन्य योग हो तो कालान्तर में देखेगा, यह कहना चाहिए ॥ ८० ॥

मृगया (शिकार) सम्बन्धी प्रश्न ।

लग्नेशयामित्रपतीस्थशाले
सुस्नेहदृष्ट्या त्वनयोर्द्वयोश्च ।
आखेटकः स्यात्सफलोऽरिदृष्ट्या
स्यान्निष्फलोऽल्पफलोऽतिकष्टात् ॥ ८१ ॥

लग्नेश्वरे द्यूनगते विलग्ने जायेश्वरे स्यान्मृगया प्रभूता ।
यामित्रनाथे हिबुके नभस्थे चाखेटकः स्वल्पतरोऽपि न स्यात८२

लग्नेश और सप्तमेश इन दोनों का मित्रदृष्टि से परस्पर इत्थशाल हो तो शिकार खेलने जाना सफल होगा और शत्रुदृष्टि हो तो जाना निष्फल हो या अत्यन्त कष्ट से कुछ थोड़ी सी शिकार मिले। यदि लग्नेश सातवें घर में हो और सप्तमेश लग्न में हो तो बहुत सी शिकार मिले। यदि सप्तमेश चौथे या दसवें स्थान में हो तो थोड़ी सी भी शिकार नहीं मिले ॥ ८१ । ८२ ॥

ज्ञभौमौ सबलौ सिद्धिरस्तांशे मृगयाच्युतिः ।
लग्नद्यूने तत्पती च हेतुस्तैर्जलजादिगैः ॥ ८३ ॥
क्रूराक्रान्तानि यावन्ति मध्ये भानीन्दुलग्नयोः ।
तावन्तः प्राणिनो वाच्या द्वित्रिघ्नाः स्वांशकादिषु ॥८४॥

बुध और मंगल बलवान् हों तो शिकार की प्राप्ति होती है तथा बुध और मंगल सप्तम राशि के नवांश में हों तो हाथ आई हुई शिकार भी चली जाती है। लग्न या सप्तम राशि या सप्तमेश और लग्नेश जिस राशि में बैठे हों वह राशि जलचर-स्थलचर आदि जैसी हों वैसी ही शिकार कहना चाहिए। चन्द्रमा और लग्न के बीच जितनी क्रूर ग्रहों से आक्रान्त राशियाँ हों उतने ही प्राणी शिकार में प्राप्त होते हैं। यदि वे अपनी राशि में हों तो द्विगुणित और अपने नवांश में हों तो त्रिगुणित शिकार प्राप्त होती है ॥ ८३ । ८४ ॥

किंवदंती सत्य है या असत्य ।

लग्नं तु लग्नेश्वरशीतगूदयैः शुभान्वितैः केन्द्रगतैस्तु सत्या ।
पापान्वितैःपापनिरीक्षितैश्च त्रिकस्थितैर्वा भवतीह मिथ्या८५

किसी ने पूछा कि यह किंवदन्ती सत्य है या असत्य ? इस प्रश्न में लग्न, लग्नेश और चन्द्रमा ये तीनों उदित शुभ ग्रहों से युक्त केन्द्र में हों तो किंवदन्ती सत्य है और यदि पाप ग्रहों से युक्त या दृष्ट छठे, आठवें और बारहवें स्थान में स्थित हों तो किंवदन्ती मिथ्या होती है ॥ ८५ ॥

शुभदृग्योगतः सौम्यां वार्तां सत्यां विनिर्दिशेत्।
पापदृग्योगतो दुष्टा वार्ता सत्येति कीर्त्यते।
लग्नेश्वरे भाविवक्रे मिथ्या वार्ता भविष्यति॥ ८६॥

चन्द्रमा और लग्न पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो शुभ बात सत्य होती है और अशुभ बात असत्य होती है तथा पाप ग्रहों से दृष्ट या युक्त हो तो दुष्ट बात सत्य होती है और लग्नेश वक्री होनेवाला हो तो बात झूठी होती है। ऐसा कहना चाहिए॥ ८६॥

नष्टधनप्राप्ति का प्रश्न।

प्रश्ने चतुर्थाधिपतिस्तत्रस्थे वावलोकिते।
अवश्यं वर्तते तत्र धनं चन्द्रेऽथवा भवेत्॥ ८७॥
वित्तपे धनगे बन्धौ वास्ति तत्र धनं बहु।
पापे तुर्यगते द्रव्यस्थितं तूर्णं न लभ्यते॥ ८८॥

धनप्राप्ति के प्रश्नलग्न में चतुर्थेश स्थित हो अथवा लग्न को देखता हो तो अवश्य वहीं धन वर्तमान है अथवा चन्द्रमा लग्न में हो तो भी धन वहीं बताना चाहिए। धनेश धन स्थान में अथवा चतुर्थ स्थान में हो तो वहाँ बहुत धन है। यदि चौथे भाव में पाप ग्रह हो तो धन शीघ्र नहीं मिलेगा॥ ८७। ८८॥

भौमे सप्ताष्टराशिस्थे धनमन्यत्र नाप्यते।
लग्ने तमोरविच्छिद्रे तदा द्रव्यं न लभ्यते॥ ८९॥

यदि मंगल सातवीं या आठवीं राशि में स्थित हो तो धन अन्य जगह है, मिलेगा नहीं। यदि लग्न में राहु हो और आठवें सूर्य हो तो धन नहीं मिलता है॥ ८९॥

नष्ट धनप्राप्तियोग।

लग्नेश्वरे द्यूनगते विलग्ने जायेश्वरे नष्टधनस्य लाभः।
जायेशलग्नाधिपतीत्थशाले द्यूने विनष्टं धनमेति मर्त्यः ९०
लग्नेशजायाधिपतीत्थशाले लग्नेस्वयं यच्छति तस्करोऽर्थम्।
सूर्ये विलग्नेऽस्तमिते शशाङ्के न लभ्यते यद्द्रविणं विनष्टम् ९१

लग्नेश सातवें घर में हो और सप्तमेश लग्न में हो तो खोये हुए धन का लाभ होता है। यदि सप्तमेश और लग्नेश का सातवें स्थान में इत्थशाल योग हो तो गया हुआ धन मनुष्य को मिल जाता है। यदि लग्नेश और सप्तमेश का लग्न में इत्थशाल हो तो चोर स्वयं धन लाकर दे जाता है। यदि सूर्य लग्न में हो और चन्द्रमा सातवें हो तो चुराया हुआ धन नहीं मिलेगा॥ ६०। ६१॥

कर्मेशलग्नाधिपतीत्थशाले चौरः स्वमादाय पुरात्पलायते।
चन्द्रेऽस्तपे चाऽर्ककरैर्विनष्टे तल्लभ्यते नष्टधनं सतस्करम् ६२॥
अस्तेश्वरे केन्द्रगतेऽस्ति चौरस्तत्रैव नान्यत्र पुराद्विनिर्गतः।
धर्मेशदुश्चिक्यपतीत्थशाले जायेश्वरेऽन्यत्र गतः स चौरः६३

यदि धनेश और लग्नेश का इत्थशाल योग हो तो चौर धन लेकर पुर से भाग जाता है। यदि चन्द्रमा और सप्तमेश सूर्यकिरणों से नष्ट हों (अस्तंगत हों) तो चौर सहित गया हुआ धन मिल जाता है। सप्तमेश केन्द्र में स्थित हो तो चौर वहीं है, नगर से बाहर नहीं गया है। यदि नवमेश और तृतीयेश का सप्तमेश के साथ इत्थशाल हो तो चौर और जगह भाग गया है, यह कहना चाहिए॥ ६२। ६३॥

कर्मेशलग्नाधिपतीत्थशाले तल्लभ्यते राजकुलैश्च चौर्यम्।
त्रिधर्मपद्यूनपतीत्थशाले त्वन्यत्प्रदेशाद्गमने तदाप्तिः॥६४॥

यदि दशमेश और लग्नेश का इत्थशाल हो तो राजकुल के द्वारा पकड़ा हुआ चौर मिल जाता है। यदि तृतीयेश, नवमेश और सप्तमेश का इत्थशाल हो तो अन्य देश में जाने से चौर मिलता है॥ ६४॥

शुभेत्थशाले हिमगौ विलग्ने स्वस्थेऽथवा नष्टधनस्य लाभः।
सुस्नेहदृष्ट्या रविणा शुभेन दृष्टे विलग्ने हिमगौ च लाभः६५

प्रश्नलग्न में अथवा दशवें घर में बैठा हुआ चन्द्रमा शुभ ग्रहों से इत्थशाल योग करता हो तो गये हुए धन का लाभ होता है। यदि लग्न में स्थित चन्द्रमा को सूर्य और शुभग्रह मित्रदृष्टि से देखते हों तो भी धन का लाभ होता है॥ ६५॥

स्थिरोदये स्थिरांशे वा वर्गोत्तमगतेऽपि वा।
स्थितं तत्रैव तद्द्रव्यं स्वकीयेनैव चोरितम्॥ ९६॥
आदिमध्यावसानेषु द्रेष्काणेषु विलग्नतः।
द्वारदेशे तथा मध्ये गृहान्ते च वदेद्धनम्॥ ९७॥

यदि प्रश्नलग्न स्थिर हो या स्थिर का नवांश लग्न में हो या वर्गोत्तम राशि लग्न में हो तो वह धन उसी जगह धरा है अथवा किसी अपने ही आदमी ने चुराया है। लग्न के पहले, दूसरे और तीसरे द्रेष्काण के क्रम से द्वारपर, घर में और घर के पीछे के हिस्से में धन कहना चाहिए। अर्थात् लग्न का पहला द्रेष्काण हो तो द्वार पर, दूसरा द्रेष्काण हो तो घर के बीच में और आखिरी द्रेष्काण हो तो घर के अन्त में धन होता है॥ ९६। ९७॥

गिरे हुए धन का प्रश्न।

पतितधनस्य प्रश्ने मिथो गृहस्थौ विलग्नसप्तेशौ।
यदि मुथशिलं तयोः स्यात्तदाशु तत्रैव वदति धनम्॥९८॥

गिरा हुआ धन मिलेगा या नहीं? इस प्रश्न में लग्नेश सप्तमभाव में हो और सप्तमेश लग्न में हो और दोनों का मुथशिल योग हो तो शीघ्र ही कहना कि धन वहीं है॥ ९८॥

नष्टं क्व दिशि प्राप्तं पृच्छायां लग्नगे विधौ प्राच्याम्।
खस्थाने याम्यायामस्ते वारुण्यां वा भुव्युदीच्याम् ९९॥

गया हुआ धन किस दिशा में मिलेगा, इस प्रश्न में चन्द्रमा लग्न में हो तो पूर्व में, दशवें चन्द्रमा हो तो दक्षिण में, सातवें चन्द्रमा हो तो पश्चिम में और चौथे स्थान में चन्द्रमा हो तो उत्तर में धन मिलेगा॥ ९९॥

यदि नेन्दुः केन्द्रे तच्चत्वारिंशकैश्च पञ्चयुतैः।
भागोदिक्क्रम उक्तो वह्न्यवनी-वायुवारिराशौ वा॥१००॥

यदि चन्द्रमा केन्द्र में न हो तो चन्द्रस्थित अंशक से पैंतालीसवें अंश में जो राशि हो, उसकी जो दिशा अथवा उपदिशा अथवा अग्नि, भूमि,

वायु और जल इनमें से जो उस राशि का तत्त्व हो उसी में नष्ट धन बताना चाहिए ॥ १०० ॥

नष्टहृतवित्तलब्धेः पृच्छायां चौरसप्तमं ततो लाभः।
हिबुकं द्रव्यस्थानं लग्नं चन्द्रश्च धननाथः ॥ १०१ ॥

खोये हुए या चोरे हुए धनलाभ के प्रश्न में, सातवें घर से चौर, चौथे से लाभ, लग्न से धन स्थान और चन्द्रमा धन का स्वामी जानना ॥ १०१ ॥

लग्नेशोऽस्तेऽस्तपतिना चेन्मुथशिली ततो लाभः।
यद्यष्टेशो लग्ने तदा स्वयं तस्करोऽर्पयति ॥ १०२ ॥
रविरश्मिगे धनेशे वास्तमिते तस्करस्य लाभः स्यात्।
लग्नेशदशमपत्योर्मुथशिलतः प्राप्यतेऽर्थवाँश्चौरः १०३॥

लग्नेश सप्तम में स्थित हो और सप्तमेश से यदि इत्थशाल करता हो तो नष्ट धन का लाभ होता है। यदि अष्टमेश लग्न में हो तो चौर स्वयं आकर धन दे जाता है। यदि धनेश सूर्य के साथ हो या अस्त हो तो चौर मिल जाता है। यदि लग्नेश और दशमेश का मुथशिल योग हो तो धन सहित चौर मिल जाता है ॥ १०२ । १०३ ॥

लग्नेशदृष्टभावे चौरः सह मात्रयायाति।
अस्ताधिपतौ दग्धे रविरश्मिगतेऽथ लभ्यते चौरः १०४॥
लग्नपकृतेत्थशाले राजभयाद्धनमिदं स्वयं दत्ते।
लग्नास्तपयोर्न स्याद्यदि दृष्टिर्लग्नपस्तथा विकलः १०५॥
तत्तस्करो स्वहस्ताद्ददाति चौर्य्यं हि राजकुले।
लग्नपमध्यपयोगे राजकुलं प्राप्य लभ्यते चौर्य्यम् १०६॥

यदि लग्नेश की सप्तमभाव पर दृष्टि न हो तो चौर धन सहित आ जावेगा। और सप्तमेश दग्ध हो अथवा अस्त हो तो चौर मिल जावेगा। यदि लग्नेश का सप्तमेश के साथ इत्थशाल-योग हो तो राजभय से स्वयं चौर धन दे जाता है। और लग्नेश तथा सप्तमेश की परस्पर दृष्टि न हो और लग्नेश विकल हो तो चौर अपने हाथ ही से चुराया हुआ धन

राजकुल में दे देता है । लग्नेश और दशमेश दोनों साथ में हों तो चुराया हुआ धन राजकुल से मिलेगा ॥ १०४ । १०६ ॥

रन्ध्रं चौरस्य धनं धनपे तत्राथ सप्तमे नाप्तिः ।
रन्ध्रपतौ धनपस्य तु मुथशिलयोगे तु प्राप्यते वित्तम् १०७॥
रन्ध्रपतौ दशमपतेर्मुथशिलगे चौरपक्षकृद्भूपः ।
धनपे विलग्नपे सति दृष्टिविहीने श्रुतिर्भवति नाप्तिः १०८॥

आठवाँ घर चौर का धन है । यदि उस आठवें घर में धनेश हो अथवा सातवें घर में हो तो धन नहीं मिलेगा । यदि अष्टमेश का धनेश से इत्थशाल हो तो धन मिलेगा । यदि अष्टमेश और दशमेश का इत्थशाल योग हो तो राजा चौर का पक्षपात करेगा । यदि धनेश ही लग्नेश हो और धन स्थान पर उसकी दृष्टि न हो अथवा धनेश की लग्नेश पर दृष्टि न हो तो चोरी गई वस्तु के बारे में सुनाई पड़ेगा परन्तु वह मिलेगी नहीं ॥ १०७ । १०८ ॥

चोरज्ञान का प्रश्न

चौरज्ञानप्रश्ने लग्ने रविशशिदृशा स्वगृहे चौरः ।
अनयोरेकदृशा गृहसमीपवर्ती वसत्येषः ॥ १०९ ॥
लग्नस्थे लग्नपतावस्तपयुक्ते च गृहगतश्चौरः ।
अस्ताधिपतावन्त्ये सहजे वा स्वीयभृत्योऽयम् ॥ ११० ॥

चौर जानने के प्रश्न में यदि लग्न पर सूर्य और चन्द्रमा दोनों की दृष्टि हो तो अपने घर में चौर है । यदि इनमें से एक ही की दृष्टि हो तो चौर घर के समीप ही बसता है । लग्नेश सप्तमेश के साथ लग्न में बैठा हो तो चौर घर ही में है । यदि सप्तमेश बारहवें या तीसरे घर में हो तो अपना नौकर ही चौर होता है ॥ १०९ । ११० ॥

अस्तेशे तुङ्गस्थे स्वगृहे वा तस्करः प्रसिद्धः स्यात् ।
लग्नदशमास्तभावाः क्रमेण वीक्ष्याः स्वतुङ्गभवनादौ ॥ १११ ॥
यः खेटः स्याद्बलवान् स ज्ञेयस्तस्करस्य बली ।
लग्नादिषु यो ग्रहः स्वोच्चादिबली स यज्जातिः ॥ ११२ ॥

सप्तमेश अपने उच्च में हो अथवा अपनी राशि में हो तो प्रसिद्ध नामी चौर है । तथा लग्न, दशम और सप्तम इन भावों को क्रम से देखना कि इनमें से किसी में स्वगृही अथवा अपने उच्च का जो ग्रह बैठा हो उसी बलवान् ग्रह से चौर का बल जानना । तथा लग्नादि में स्व उच्चादि से युक्त जो ग्रह बैठा हो उसी की जाति का चौर बताना चाहिए ॥ १११ । ११२ ॥

एवं योगं तु विना द्यूनेशस्यैव बलमभिग्राह्यम् ।
इत्थं चौरज्ञाने चौरः सूर्ये गृहेश्वरस्य पिता ॥ ११३ ॥
चन्द्रे माता शुक्रे भार्या मन्दे सुतो भवेन्नीचे ।
जीवे गृहप्रधानं भौमे पुत्रोऽथवा भ्राता ॥ ११४ ॥

यदि पूर्वोक्त योग न हो तो सप्तमेश के बल के अनुसार ही चौर का बल, रूप और जाति आदि जानना । इस प्रकार चौर के जानने में पूर्वोक्त योगकर्ता सूर्य हो तो गृहस्वामी का पिता चोर है । चन्द्रमा योगकर्ता हो तो माता, शुक्र हो तो स्त्री, शनैश्चर हो तो पुत्र या नीच दास आदि, बृहस्पति हो तो घर का प्रधान और मंगल योगकर्ता हो तो पुत्र अथवा भाई चौर होता है ॥ ११३ । ११४ ॥

ज्ञे स्वजनो मित्रं वा ज्ञात्वेत्थं पुण्यसहममावेश्यम् ।
तस्मिन् क्रूरादृष्टे पुरा न चौरोऽस्तपे पुरापि स्यात् ॥ ११५ ॥

बुध यदि योगकर्ता हो तो मित्र चौर होता है । ऐसा जानकर पुण्य सहम को देखना । यदि वह पुण्य सहम पापग्रह से दृष्ट न हो तो वह पहले चौर नहीं था । यदि सप्तमेश पापदृष्ट हो तो वह पुराना चोर है ११५

अस्तेशान्मूसरिफे भौमे चौरः पुरापि निगृहीतः ।
सप्तेशे रविपुत्रे चन्द्रदृशा तस्करो हि पाखण्डी ॥ ११६ ॥

यदि सप्तमेश से मंगल का ईसराफ योग हो तो चौर पहले भी चोरी में पकड़ा हुआ है । और शनि सप्तमेश हो और चन्द्रमा उसको देखता हो तो चौर पाखण्डी है, यह कहना चाहिए ॥ ११६ ॥

जीवो विलोक्य लोकं भौमे खातेन तालकं भंक्त्वा ।
[illegible]कुञ्चिकयापहृतं सितातिथिज्ञे प्रपञ्चकरः ॥ ११७ ॥

यदि पूर्वोक्त शनैश्चर को बृहस्पति देखता हो तो लोक-विदित चोर होता है। यदि सातवें घर में मंगल हो तो चोर ने ताला तोड़कर माल चुराया है। यदि सप्तम में शुक्र हो तो दूसरी कुंजी से ताला खोलकर चोरी की है और बुध सप्तम में हो तो अतिथि ने जाल रचकर चोरी की है॥ ११७॥

चौर की आयु का प्रश्न।

चौरस्य वयोज्ञाने सिते युवा ज्ञे शिशुर्गुरौ मध्यः।
तरुणो भौमे मन्दे वृद्धोऽर्के स्यादतिस्थविरः॥ ११८॥

चौर की आयु जानने के प्रश्न में शुक्र से युवावस्था, बुध से बाल्यावस्था, बृहस्पति से मध्यावस्था, मंगल से तरुणावस्था, शनि से वृद्धावस्था और सूर्य से अति वृद्धावस्था चौर की कहना चाहिए॥ ११८॥

तनुनभसोः स्वमन्दिरे स्मरभूम्योर्भूमिलाभयोर्मध्यम्।
चरिते रवौ नवमध्यमवृद्धवयोऽतीतकाः क्रमशः॥ ११९॥

यदि सूर्य लग्न या दशवें घर में हो तो नवीन युवावस्था, अपनी राशि में हो तो मध्यावस्था, चौथे और सातवें में हो तो वृद्धावस्था और चौथे और ग्यारहवें के बीच में सूर्य हो तो अत्यन्त वृद्धावस्था जानना चाहिए ११९॥

गतधन के स्थान का प्रश्न।

नष्टस्थाने प्रश्ने तुर्ये भूम्यग्निवायुजलमध्यात्।
यो भवति राशिस्तस्मात्स्थानं ज्ञेयं गतधनस्य॥ १२०॥
अथ चतुर्थगृहे तुर्येश्वरोऽथ यः स्याद्ग्रहस्ततो ज्ञेयः।
मन्दे मलिनस्थाने चन्द्रेऽम्बुनि गीष्पतौ सुरारामे॥ १२१॥
भौमे वह्निसमीपे रवौ गृहाधीश्वरासनस्थाने।
तल्पे शुक्रे सौम्ये पुस्तकवित्तान्नयानपार्श्वे च॥ १२२॥

कोई पूछे कि मेरा गया हुआ धन किस स्थान पर है? इस प्रश्न में चौथे स्थान में पृथ्वी, अग्नि, वायु और जल इनमें से जिस तत्त्ववाली राशि हो उसी तत्त्व की प्रधानतावाला गत धन का स्थान जानना

चाहिए । चौथे घर में चतुर्थेश बैठा हो अथवा और कोई ग्रह बैठा हो तो उसी के अनुसार गत धन का स्थान कहना । यदि चतुर्थ स्थान में शनि हो तो मलिन स्थान में, चन्द्रमा हो तो कूपादि के समीप या हाथ-पैर धोने आदि के स्थान में और बृहस्पति हो तो मन्दिर या बाग़ में, मंगल हो तो अग्नि के समीप में, सूर्य हो तो गृहपति के बैठके में, शुक्र हो तो शय्या के नीचे और बुध चतुर्थ में हो तो पुस्तक, धन, अन्न या पालकी आदि के समीप में गत धन जानना ॥ १२० । १२२ ॥

यह चोर है या नहीं ।

चौरोयमथ न वेति क्रूरेन्द्वोर्मुथशिले च चौरः स्यात् ।
सौम्यशशिमुथशिले खलु न भवति चौरः प्रवक्तव्यम् ॥ १२३ ॥

यह चौर है या नहीं ? इस प्रश्न में चन्द्रमा और पापग्रह का इत्थशाल हो तो चौर होगा । यदि चन्द्रमा का शुभग्रहों के साथ इत्थशाल हो तो चौर नहीं है । यह कहना चाहिए ॥ १२३ ॥

इसने कभी चोरी की है या नहीं ।

किमनेन तस्करत्वं कदापि विहितं न वेति पृच्छया ।
लग्नपशशिनोरेकस्मादपि मूसरिफेऽस्तपे विहितम् १२४॥

क्या इसने कभी चोरी की है या नहीं ? इस प्रश्न में लग्नेश या चन्द्रमा इन दोनों में से एक का भी सप्तमेश से ईसराफ योग हो तो इसने चोरी की है ॥ १२४ ॥

चौर पुरुष है या स्त्री ।

चौरः स्त्री पुरुषो वा पृच्छायामस्तपे स्त्रियो राशौ ।
स्त्रीखेटे स्त्रीदृष्टश्चौरः स्त्रीव्यत्ययात्पुरुषः ॥ १२५ ॥

किसी ने पूछा चोर स्त्री है या पुरुष ? इस प्रश्न में सप्तमेश स्त्री संज्ञक राशि में हो या सप्तमेश स्त्री-संज्ञक हो अथवा स्त्री-संज्ञकग्रहों से देखा जाता हो तो स्त्री चौर है और इससे विपरीत हो तो पुरुष चौर कहना १२५

लग्नेशनवमांशतो वयःप्रमाणजातयो ज्ञेयाः ।
चौरोयमिहानन्तं शास्त्रं कथितोऽयमुद्देशः ॥ १२६ ॥

लग्नेश के नवांश से चौर की आयु, जाति और रंग आदि जानना। लग्न के द्रेष्काण से भी रूप-रंग आदि विचार कर कहना। यहाँ तो चौर के बारे में उद्देशमात्र कहा है। शास्त्र अनन्त है। अपनी बुद्धि से विचारकर फल कहना चाहिए॥ १२६॥

संतान का प्रश्न।

लग्नेश्वरेणाथ निशाकरेण यदीत्थशालं कुरुते सुतेशः।
शुभः शुभैस्संयुत ईक्षितः स्यात्सत्सन्तति प्रष्टुरसौ विदध्यात्

यदि पंचम भाव का स्वामी लग्नेश या चन्द्रमा से इत्थशाल करता हो, शुभग्रह हो तथा शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो वह अच्छी संतान देने वाला होता है॥ १२७॥

पुंस्त्रीग्रहाः पुत्रग्रहं विलग्नात्पश्यन्ति यावन्त इहातिवीर्याः।
तत्संख्यकाः स्युस्तनयाश्च कन्याःशुभेशयोगात्सुतभांशतुल्याः

लग्न से पाँचवें स्थान को जितने बलवान् पुरुष ग्रह देखते हों उतने ही पुत्र हों तथा जितने स्त्री-संज्ञक बलवान् ग्रह देखते हों उतनी ही कन्याएँ होती हैं। अथवा पंचम के जितने नवांश बीते हों उतनी संख्या के पुत्र होते हैं, परन्तु पंचमेश शुभग्रहों के साथ में हो तो॥ १२८॥

लग्नेशपुत्राधिपती परस्परं न पश्यतश्चेदुदयं च पञ्चमम्।
पापेत्थशालौ सुतलग्नपौ च प्रष्टुस्तदा सन्ततिनास्तितां वदेत्॥

लग्नेश और पंचमेश परस्पर न देखते हों तथा लग्न और पंचम को भी न देखते हों तथा लग्नेश और पंचमेश का पापग्रह से इत्थशाल हो तो संतान नहीं होगी यह कहना चाहिए॥ १२९॥

पुत्रालये सिंहवृषालिकन्याः प्रश्नोदयाज्जन्मभतस्तथेन्दोः।
अल्पप्रजःसन्ततिपृच्छकःस्यात्पापःसुतर्क्षे सहितेक्षिते वा १३०

प्रश्नलग्न से, जन्मलग्न से तथा चन्द्रमा से पाँचवें स्थान में सिंह, वृष, वृश्चिक और कन्या ये राशियाँ हों तो प्रश्नकर्ता के थोड़ी ही संतान होती है। यदि पंचम भाव में पापग्रह हों अथवा पापदृष्ट हो तो भी अल्प संतान होती है॥ १३०॥

स्वर्क्षस्थितौ रन्ध्रगतौयमार्कौ प्रष्टुः स्त्रियं सन्दिशतश्च बन्ध्याम्
छिद्रस्थितौ चंद्रबुधौ सदोषां वा काकबन्ध्यां तनयाप्रसूतिम् १३१

यदि प्रश्न समय अपनी राशि में बैठे हुए सूर्य और शनैश्चर आठवें घर में हों तो पृच्छक की स्त्री को वन्ध्या कहना। यदि चन्द्रमा और बुध आठवें स्थान में स्थित हों तो प्रश्नकर्ता की स्त्री दोषयुक्त या काकबन्ध्या अथवा कन्या पैदा करनेवाली होती है। अर्थात् चन्द्रमा बलवान् हो तो कन्याएँ हों और उसको पुरुष ग्रह देखते हों तो काकबन्ध्या हो और बुध बलवान् हो तो बन्ध्या होती है॥ १३१॥

मृतप्रजाश्छिद्रगयोः सितेज्ययोर्गर्भस्रवा भूमिसुतेऽष्टमर्क्षगे।
छिद्रेश्वरे छिद्रगतेऽतिवीर्यगे पुष्पं न विन्दत्यबला सुतप्रदम्॥
शुक्रार्कयोरष्टमसंस्थयोर्वा क्रूरैर्धनान्त्याष्टमराशिसंस्थैः।
जाता पुरस्तान्म्रियते प्रजा वा प्रष्टुर्न चाग्रे शुभसन्ततिः स्यात्

शुक्र और बृहस्पति आठवें हों तो मृतप्रजा (सन्तान हो-होकर मरे) हो और मंगल आठवें हो तो गर्भपात होवे। तथा अष्टमेश अष्टमभाव में बलवान् होकर बैठा हो तो प्रश्नकर्ता की स्त्री को पुत्र देनेवाला ऋतु (रजोधर्म) ही नहीं हो। अथवा शुक्र और सूर्य आठवें हों तथा पापग्रह दूसरे, बारहवें और आठवें स्थान में स्थित हों तो प्रश्नकर्ता के पहले पैदा हुए बालक मर जावें और आगे कोई अच्छी सन्तान नहीं होवे १३२।१३३॥

रिष्फेश्वरे केन्द्रगते च सौम्यैर्युतेक्षिते जीवति बालकश्च।
आपूर्णमासे शुभयुक्त इन्दौ केन्द्रे शिशुर्जीवति दीर्घकालम् १३४

यदि बारहवें भाव का स्वामी केन्द्र में हो और उसे शुभग्रह देखते हों तो बालक जीता रहता है। तथा शुक्लपक्ष में शुभग्रहों से युक्त चन्द्रमा केन्द्र में हो तो बालक बहुत समय जीता रहता है (दीर्घजीवी होता है)॥ १३४॥

पञ्चमेशोऽथ लग्नेशो विषमस्थानगौ तदा।
पुत्रजन्मप्रदौ ज्ञेयौ कन्यानां समराशिगौ १३५॥

युग्मराशिगते लग्ने यदा तत्र शुभग्रहः ।
गर्भेऽपत्यद्वयं वाच्यं दैवज्ञेन विपश्चिता ॥ १३६ ॥

पंचमेश अथवा लग्नेश विषम (मेष, मिथुनादि) राशि में हों तो पुत्र देनेवाले होते हैं और समराशि (वृष, कर्कादि) में हों तो कन्याप्रद होते हैं । यदि द्विस्वभाव लग्न हो और उसमें शुभग्रह बैठे हों तो गर्भ में दो संतान ज्योतिषी को कहना चाहिए ॥ १३५ । १३६ ॥

विषमोपगतो लग्नाच्छनिः पुत्रसुखप्रदः ।
समभे योषितां जन्म विशेषो जातकोक्तिवत् ॥ १३७ ॥

लग्न से विषम स्थान में शनैश्चर बैठा हो तो पुत्र देनेवाला है और समराशि में हो तो कन्याप्रद होता है । विशेष जातकवत् विचारना ॥ १३७ ॥

भोजन में रसादि का प्रश्न ।

कटुको लवणस्तिक्तो मिश्रितो मधुरो रसः ।
अम्लः कषायः कथिता रव्यादीनां रसा बुधैः ॥ १३८ ॥
लग्नं पश्यति यः खेटस्तस्य यः कथितो रसः ।
भोजनेऽसौ रसो वीर्यक्रमाद्वाच्यं परे रसाः ॥ १३९ ॥

विद्वानों ने सूर्य आदि के रस इस प्रकार कहे हैं—सूर्य का कडु, चन्द्रमा का नमकीन, मंगल का तिक्त, बुध का सब मिला हुआ, गुरु का मीठा, शुक्र का खट्टा और शनैश्चर का कसैला होता है । जो ग्रह लग्न को देखता हो उसका जो रस हो वही रस भोजन में कहा गया है । अथवा ग्रहों के बल के क्रमानुसार विशेष रस कहना ॥ १३८ । १३९ ॥

चन्द्रो यस्य मुथशिलस्तस्य विशेषं वदेद्भुक्तौ ।
लग्ने राहौ मन्दे रविदृष्टे भोजनाभावः ॥ १४० ॥

चन्द्रमा का जिस ग्रह के साथ इत्थशाल हो उसी ग्रह का रस भोजन में विशेष होता है । लग्न में राहु या शनैश्चर सूर्य से दृष्ट हों तो भोजन का अभाव होता है ॥ १४० ॥

आज कैसा भोजन किया ।

कीदृङ्मयाद्य भुक्तं पृच्छायां यदि भवेत्स्थिरं लग्नम् ।

तद्भुक्तमेकवेलं द्व्यात्मनि वेलद्वयं चरे त्वसकृत् ॥ १४१ ॥
चन्द्रे लग्नगते स्यात्क्षारं भौमे च कटुकमम्लगुरौ।
मधुरं दिनकृति तिक्तं शुक्रे स्निग्धं बुधे च सर्वरसम् ॥१४२॥

किसी ने पूछा कि आज मैंने कैसा भोजन किया है ? तो इस प्रश्न में जो स्थिर लग्न हो तो एक बार भोजन किया, द्विस्वभाव लग्न हो तो दोनों समय और चर लग्न हो तो कई बार भोजन किया है। यदि चन्द्रमा लग्न में हो तो नमकीन, मंगल हो तो कडुआ और खट्टा, बृहस्पति हो तो मीठा, सूर्य हो तो तीखा, शुक्र हो तो चिकना और बुध लग्न में हो तो सब रसों का भोजन किया गया है ॥ १४१ । १४२ ॥

मन्दे कषायमशुभान्मूसरीफे शशिनि मुथशिले शुभेऽरिदृशा।
उद्वाहात्प्रियदृष्ट्या प्राणयिकत्वात्समागतं भोज्यम् ॥ १४३ ॥

और शनैश्चर लग्न में हो तो कसैला भोजन किया है। यदि चन्द्रमा अशुभ ग्रहों से ईसराफ योग करता हो और शुभग्रहों से शत्रुदृष्टि से मुथ- करता हो तो कष्ट से भोजन मिलेगा और मित्रदृष्टि से मुथशिल योग हो तो विवाह के कार्य में बना हुआ भोजन प्राप्त होगा ॥ १४३ ॥

शुभेसराफे त्वशुभेत्थशाले चन्द्रे कदन्नं मधु आज्यवर्ज्यम्।
शुभेत्थशालेऽथ खलेसराफे शक्यं न भोक्तुं परतोऽपि लब्धम् १४४

यदि चन्द्रमा का शुभग्रहों से ईसराफ हो और अशुभ ग्रहों से इत्थशाल हो तो घी और मिष्टान्न से रहित खराब अन्न खाने को मिलेगा। यदि शुभ ग्रहों से इत्थशाल हो और पापग्रहों से भी इत्थशाल हो तो दूसरों से भी मिला हुआ भोजन करने को समर्थ न होगा ॥ १४४ ॥

चन्द्रे स्वनाथदृष्टे सुखभोजनमन्यथा कष्टात्।
गुरुमुथशिले सगौरवमर्केणमुथशिलेऽतिशुचि तीक्ष्णम्॥१४५॥
शुक्रे सुस्वादुरसं सहास्यगीतं बुधे जनाकीर्णम्।
शस्त्रकथाढ्यं शनिना कुस्थानगतं कुजे चोष्णम् ॥ १४६ ॥

यदि चन्द्रमा अपनी राशि के स्वामी से दृष्ट हो तो भोजन सुख से मिलेगा। इसके विपरीत कष्ट से मिलेगा और चन्द्रमा का बृहस्पति से

इत्थशाल हो तो बड़े आदर से तथा सूर्य से इत्थशाल हो तो बहुत पवित्र तथा तीक्ष्ण भोजन मिलेगा । शुक्र से इत्थशाल हो तो सुन्दर स्वादिष्ट भोजन तथा बुध से इत्थशाल हो तो बहुत से मनुष्यों के साथ हास्य-गान-पूर्वक भोजन मिले । यदि शनैश्चर से इत्थशाल हो तो शस्त्र तथा कथा युक्त खराब स्थान में तथा मंगल से इत्थशाल हो तो गरम भोजन मिलेगा ॥ १४५ । १४६ ॥

यदि वदति भोजनार्थं निमन्त्रितो यामि शशिमहीसुतयोः ।
एकस्थितयोः केन्द्रे मुथशिलयोर्वापि पूर्णता भवति ॥ १४७ ॥
विधिनानेन शनेः स्यात्कुभोजनं ज्ञसितयोरभीष्टान्नम् ।
जीवस्य तुष्टिजनकं होरेशे तनुखगे स्वयमुपैति ॥ १४८ ॥

किसी ने कहा कि मैं निमन्त्रित होकर भोजन के लिए जाता हूँ (कैसा भोजन मिलेगा ?) इस प्रश्न में चन्द्रमा और मंगल केन्द्र में एक स्थान में स्थित हों और इत्थशाल करते हों तो अच्छे प्रकार पूरा भोजन होता है । इसी प्रकार शनि हो तो कुभोजन (खराब भोजन) हो । बुध और शुक्र हों तो इच्छित भोजन हो । बृहस्पति हो तो प्रसन्नता करने-वाला भोजन हो और लग्नेश लग्न या दशवें स्थान में हो तो स्वयं भोजन प्राप्त होगा ॥ १४७ । १४८ ॥

यश्चन्द्रेण मुथशिली तस्मिन्नीशे तनोः स्वगृहे भोज्यम् ।
वित्तेशे भृत्यगृहे भ्रातॄणां सहजपे तथान्यत्र ॥ १४९ ॥

जो ग्रह चन्द्रमा से इत्थशाल करता हो वही ग्रह लग्नेश हो तो अपने घर में ही भोजन होगा और वह धनेश हो तो नौकर के घर में तथा तृतीयेश हो तो भाइयों के घर में भोजन होगा । इसी प्रकार अन्य स्थानों में भी जानना अर्थात् जो ग्रह चन्द्रमा से इत्थशाल करे वह जिस भाव का स्वामी हो उसी भाव संबन्धी भोजन कहना चाहिए ॥ १४९ ॥

लग्नस्थिते सूर्यसुतेऽथ राहौ सूर्येक्षिते वैरिनिमन्त्रितस्य ।
स्याच्छस्त्रघातःशशिभौमयोश्च लग्नस्थयोःसौरिदृशास्तिघातः

यदि लग्न में स्थित शनि या राहु को सूर्य देखता हो तो शत्रु से

निमंत्रित होकर शस्त्र से घायल होगा तथा चन्द्रमा और मंगल लग्न में स्थित हों और शनि देखता हो तो भी शत्रु द्वारा घायल होगा ॥ १५०॥

जीवे सिते चन्द्रगते बलाढ्ये चन्द्रे बुधे केन्द्रगते शुभान्विते वा।
त्रिलाभषष्ठास्पदगैश्च पापैः स्यात्प्रेमनिर्वैरकरं सुभोजनम् १५१

गुरु और शुक्र चन्द्रमा के घर में बलवान् होकर बैठे हों तथा चन्द्रमा और बुध केन्द्र में शुभ संयुत बैठे हों और तीसरे, ग्यारहवें तथा छठे स्थान में पापग्रह स्थित हों तो वैर से रहित अर्थात् प्रेम से सुन्दर भोजन मिलेगा ॥ १५१ ॥

भोज्यं बुभुक्षा भोक्ता च सुखास्ताङ्गबलक्रमात् ।
लग्नपो भोज्यदस्तेषां बलेन फलमादिशेत् ॥ १५२ ॥

भोजन पदार्थ चौथा भाव, भूख या भोजन रुचि सातवाँ भाव तथा भोजनकर्ता लग्न (या दशम) है और लग्नेश भोजन देनेवाला है। इनके बल से शुभाशुभ कहना चाहिए ॥ १५२ ॥

तुर्येशलाभाधिपतीत्थशाले शुभग्रहेक्षायुतितस्सुभोजनम् ।
इत्थं खलग्नाधिपतीत्थशाले लाभेश्वरे तत्सुखलाभऊह्यः १५३

चौथे भाव के स्वामी से और लाभेश से इत्थशाल हो और शुभग्रह की दृष्टि हो या शुभग्रह से युक्त हो तो सुन्दर भोजन मिलेगा । इसी प्रकार दशमेश और लग्नेश का लाभेश से इत्थशाल हो तो भोजन और सुख का लाभ कहना ॥ १५३ ॥

वाद-विवाद का प्रश्न ।

क्रूरः खचरो लग्ने विवादपृच्छा सुजयति विवादं तम् ।
सर्वावस्थासु परं नीचेऽस्ते जयति न द्विषतः ॥ १५४ ॥

विवाद के प्रश्न में यदि लग्न में पापग्रह हो तो प्रश्नकर्ता सब तरह से उस विवाद को जीतेगा। परन्तु सातवें घर में नीचग्रह हो तो शत्रु से नहीं जीतेगा ॥ १५४ ॥

लग्नद्यूने मुक्त्वा परस्परं क्रूरयोर्भकटदृष्टौ ।

विवदद्वादियुगं तच्छुरिकाभ्यां प्रहरति तदैवम् ॥ १५५ ॥

लग्न और सप्तम को छोड़कर क्रूर ग्रहों की परस्पर शत्रु दृष्टि हो तो दोनों वादी प्रतिवादी झगड़ा करते हुए छुरियों से प्रहार करेंगे ॥ १५५॥

लग्नद्यूने च यदि क्रूरः खचरो विवादिनोर्न तदा।
कलहनिवृत्तिः काले जयति हि बलवान्नतबलं तु ॥१५६॥

लग्न और सप्तम में यदि क्रूर ग्रह हो तो दोनों का झगड़ा निवृत्त नहीं होगा। समय पाकर बलवाला निर्बल को जीत लेगा ॥ १५६ ॥

लग्नेशसुतपौ सौम्याः केन्द्रे सन्धिर्न वान्यथा।
लग्नद्यूनेशषष्ठेशारित्वेप्यन्योऽन्यविग्रहः ॥ १५७ ॥

लग्नेश, पंचमेश और शुभग्रह केन्द्र में हों तो सन्धि होगी अन्यथा न होगी। यदि लग्नेश, सप्तमेश और षष्ठेश ये छठे घर में हों तो परस्पर लड़ाई होगी ॥ १५७ ॥

गया हुआ क्यों नहीं आया ?

गृहमागतो न यदसौ किं बद्धः किमथवा हत इति प्रश्ने।
मूर्तौ क्रूरो यदि तन्नहतो बद्धोऽथवा पुरुषः ॥ १५८ ॥

यदि गया हुआ वह घर पर नहीं आया तो क्या वह बाँधा गया अथवा मारा गया ? इस प्रश्न में यदि लग्न में पापग्रह हों तो मारा नहीं गया है। शायद वह आदमी बाँधा गया हो ॥ १५८ ॥

त्रिकोणचतुरस्रास्तस्थितः पापग्रहो यदि।
क्रूरैर्निरीक्षितः पापैर्नूनं बन्धनमादिशेत् ॥ १५९ ॥

नवें, पाँचवें, चतुरस्र (पहले, चौथे, सातवें, दशवें) अथवा चौथे, आठवें और सातवें स्थान में पापग्रह हो और पापग्रहों तथा क्रूरग्रहों से दृष्ट हो तो बन्धन में आया हुआ कहना चाहिए ॥ १५९ ॥

सप्तमगोऽष्टमगो वा चेत्क्रूरस्तद्धतोपि वा बद्धः।
मूर्तौ च सप्तमे वा यद्वा लग्नेऽष्टमेपि भवेत् ॥ १६० ॥
क्रूरस्तदसौ पुरुषो बद्धश्च हतश्च मुच्यते च परम् ॥ १६१ ॥

अथवा सातवें तथा आठवें में क्रूरग्रह हो तो मारा गया या बाँधा गया है। अथवा लग्न में या सातवें स्थान में अथवा लग्न में और आठवें स्थान में यदि पापग्रह हो तो वह पुरुष बाँधा गया, मारा गया और बाद में छोड़ दिया गया ॥ १६० । १६१ ॥

बद्धः सप्ताष्टगे क्रूरे मृत्युर्यस्ते चाष्टलग्नगे ।
बद्धो विमुच्यतेऽस्त्याशु सौम्यः श्रेयांस्तनौ तदा ॥१६२॥

सातवें, आठवें स्थान में अथवा लग्न और सातवें में या आठवें और लग्न में पापग्रह हो तो बन्धन में प्राप्त कहना। यदि लग्न में शुभग्रह हो तो बँधा हुआ भी छूटकर कल्याणवान् होगा ॥ १६२ ॥

बंध-मोक्ष का विशेष प्रश्न ।

बद्धोऽस्ति तत्किं भवितेति प्रश्ने विमुच्यतेऽसौ खलु मृत्युयोगे।
कदा विमुच्येत च पृच्छमाने शुभं कदा भावि च ते मृतिःस्यात् ॥

वह मनुष्य बँधा हुआ है सो क्या होगा ? इस प्रश्न में यदि मृत्यु योग हो तो वह निश्चय छूट जायगा। वह कब छूटेगा ? कब शुभ होगा ? उस की मौत कब होगी ऐसा प्रश्न करने पर ॥ १६३ ॥

मुक्तिप्रश्ने यदा केन्द्रे केन्द्रेशाः स्युर्न मोक्षदाः ।
तस्मिन्वर्षेऽथ लग्नेशः पतितः केन्द्रगे न च ॥ १६४ ॥
सम्बन्धेप्सुः स चेत्क्रूरो मृतीशः स्यात्तदा मृतिः ।
लग्नेशेऽस्तमितेऽम्बुस्थे कुजदृष्टे तदा मृतिः ॥ १६५ ॥

छूटने के प्रश्न में यदि केन्द्रों के स्वामी केन्द्र में हों तो कैदी नहीं छूटेगा। यदि उस वर्ष में लग्नेश पतित होकर केन्द्र में हो तो भी नहीं छूटेगा। यदि अष्टमेश क्रूर ग्रह होकर लग्नेश से संबन्धकारक हो तो उसकी मृत्यु हो जायगी। अथवा लग्नेश सातवें या चौथे स्थान में स्थित हो और मंगल से दृष्ट हो तो भी मृत्युकारक जानना ॥ १६४ । १६५ ॥

चन्द्रश्चाम्बुगपापेन मृत्युनाथेन योगकृत् ।
तदा गुप्ता मृतिश्चन्द्रः केन्द्रे मन्दयुगीक्षितः ॥
दीर्घपीडा च भौमेन युग्दृष्टो बन्धताडने ॥ १६६ ॥

चन्द्रमा चतुर्थस्थ पापग्रह से और अष्टमेश से इत्थशाल योग करता हो तो गुप्त मृत्यु होती है। यदि चन्द्रमा शनैश्चर से युक्त या दृष्ट होकर केन्द्र में हो तो बड़ी भारी पीड़ा होगी। तथा चन्द्रमा मंगल से युक्त या दृष्ट हो तो बन्धन और ताड़ना दोनों होंगे॥ १६६॥

दृश्यार्धे लग्नपश्चेत्स्याद्व्ययपेनेत्थशालवान्॥ १६७॥
पलायते तदा बद्धो व्ययगे लग्नगेऽपि वा।
तृतीयनवमस्वामी व्ययगो लग्नपेन च॥ १६८॥
तदेत्थशालयोगेप्सुस्तदापि च पलायते।
दृश्यार्धेत्युपचारेण चन्द्रो मुथशिलस्तदा॥ १६९॥

यदि लग्नेश्वर दृश्यार्ध (लग्न से सप्तम तक) में स्थित हो और व्ययेश से इत्थशाल करता हो अथवा बारहवें स्थान में हो या लग्न में हो तो बँधा हुआ कैदी भाग जावेगा। अथवा तृतीयेश और नवमेश बारहवें स्थान में स्थित हो और लग्नेश से इत्थशाल योगकारक हो तो भी कैदी भाग जावेगा। अथवा दृश्यार्ध में स्थित चन्द्रमा से इत्थशाल हो तो भी कैदी भाग जावेगा॥ १६७। १६९॥

बन्धमोक्षस्त्रिधर्मेशः संग्रहः शीघ्रमोक्षकृत्।
पतितेन्दुस्त्रिधर्मस्थग्रहसम्बन्धकृत्तदा॥ १७०॥
केन्द्रस्थत्रिभवेशेन योगेप्सुश्चेत्तदा चिरात्।
यावच्छुक्रो बली लग्ने तावत्कर्ता बलाधिकः॥ १७१॥

तृतीयेश और नवमेश दोनों साथ हों तो बँधा हुआ शीघ्र छूट जाता है। यदि पतित चन्द्रमा तीसरे और नवम में स्थित ग्रह से इत्थशाल करता हो तो भी बन्धन से छूट जाता है। केन्द्र में स्थित तृतीयेश और लाभेश से योग करने की इच्छावाला पूर्वोक्त चन्द्रमा हो तो देर में छूटेगा। जब तक लग्न में शुक्र बलवान् रहता है तब तक अधिक बलकर्ता होता है॥ १७०। १७१॥

अस्तंगते तनौ शुक्रे बद्धमोक्षादिसंभवः।
म्रियते येन योगेन तेन योगेन मुच्यते॥ १७२॥

मेषे तुले च शीघ्रं स्यात्कर्के नक्रे सकष्टता ।
स्थिरे चिराद्द्विदेहस्थे मोक्षो मध्यमकालतः ॥१७३॥

यदि लग्न में शुक्र अस्तंगत हो तो बद्ध मनुष्य का छूटना संभव है। जिस योग के होने से मनुष्य मरता है उसी योग से मनुष्य छूटता है। मेष और तुला लग्न में शीघ्र छूट जाता है। कर्क और मकर में कष्ट से छूटता है। स्थिर लग्न हो तो देर में छूटेगा और द्विस्वभाव लग्न हो तो मध्यम समय में छूटेगा॥ १७२। १७३॥

नौका के चार प्रश्न ।

क्षेमायातं बहित्रस्य मज्जनं पवनं जले ।
पण्यव्यवहृतौ लाभो नापि प्रश्नचतुष्टयम् ॥ १७४ ॥

नाव का क्षेम से आना १, जल में डूबना २, जल में तैरना ३, नाव द्वारा व्यवहार करने में लाभ ये चार प्रश्न नावसंबन्धी हैं॥ १७४॥

नौर्लाभदा स्यान्मम नेति पृष्टे केन्द्रे शुभाश्चेदितरेषु पापाः ।
बलान्विताः क्षेमजयार्थदा नौर्भावीति वाच्यं विदुषा विमृश्य॥
लग्नाधिपे वक्रिणि चास्तनाथेऽव्यावृत्त्य नौरेति च मार्गतः सा।
चेत्सौम्यदृष्टः कुशलेन पापैर्दृष्टस्तदा वस्तुविनेति वाच्यम्१७६

किसी ने पूछा कि नाव से मुझे लाभ होगा या नहीं? इस प्रश्न में यदि केन्द्र में शुभग्रह हों और अन्य स्थानों में बली पापग्रह हों तो नौका कुशल, जय और धन की देनेवाली होगी ऐसा पंडितों को कहना चाहिए। यदि लग्नेश और सप्तमेश वक्री हों तो नाव रास्ते से लौट आवेगी। यदि ये दोनों शुभदृष्ट हों तो नौका माल सहित कुशल से लौट आवेगी और पापदृष्ट हों तो विना वस्तु के खाली लौट आवेगी॥ १७५। १७६॥

विलग्नरन्ध्राधिपती स्वगेहे प्रवेक्ष्यतश्चेद्व्यवहारलाभः ।
यदाष्टमे सौम्यखगा बलाढ्यास्तदा तरी लाभसुखप्रदास्यात्१७७

लग्नेश और अष्टमेश अपनी राशि में हों तथा अपने स्थान को देखते

हों तो व्यवहार में लाभ होगा। यदि अष्टम स्थान में बलवान् ग्रह बैठे हों तो नाव लाभ और सुख की देनेवाली होती है॥ १७७॥

कुशला याति पृच्छायां मृत्युयोगे समागते।
तदा नौरेति शीघ्रेण लाभाद्यं चान्ययोगतः॥ १७८॥
लग्नेशं चन्द्रनाथं वा चन्द्रं वा मृत्युपो यदि।
पश्येत्क्रूरदृशा नावा समं नश्यति नौपतिः॥ १७९॥

नाव के कुशलपूर्वक आने के प्रश्न में यदि मृत्युयोग हो तो नाव शीघ्र ही आ जायगी। अन्य शुभयोग से लाभादि सहित आवेगी। लग्नेश, चन्द्रराशि का स्वामी अथवा चन्द्रमा इनको अष्टमेश पापदृष्टि से देखता हो तो नौका सहित नाव का स्वामी नष्ट हो जायगा॥ १७८। १७९

लग्नेशाष्टपतिः स्वस्य गेहं नालोकते यदि।
तदा यानस्य वक्तव्यं निश्चितं मज्जनं बुधैः॥ १८०॥
तावुभौ सप्तमस्थौ चेज्जले वापंनिकां वदेत्।
लग्नचन्द्रपती क्रूरदृष्ट्याऽन्योन्यं यदीक्षितौ।
तदा पोतजनानां च मिथः कलहमादिशेत्॥ १८१॥

लग्नेश और अष्टमेश अपने घर को न देखते हों तो निश्चय कहना चाहिए कि नाव जल में डूब गई। यदि अष्टमेश और लग्नेश सातवें घर में बैठे हों तो नाव डूबकर भी घर लौट आवेगी यह कहना। यदि लग्नेश और चन्द्रमा जिस राशि में बैठे हों उसके स्वामी परस्पर क्रूरदृष्टि से देखते हों तो नाव में बैठे हुए मनुष्यों का परस्पर कलह होगा यह कहना चाहिए॥ १८०। १८१॥

क्रय-विक्रय का प्रश्न।

क्रेता लग्नपतिर्ज्ञेयो विक्रेता लाभपः स्मृतः।
ग्रह्णाम्यहमिदं वस्तु प्रश्न एवं विधे सति॥ १८२॥

---

१ यवनाचार्यः—"द्यूने वापनिकां कृत्वा यानमायाति मन्दिरम्।"

बलशालि विलग्नं चेद् गृह्यते तत्क्रयाणकम् ।
तस्मात्क्रयाणकाल्लाभः प्रष्टुर्भवति निश्चितम् ॥ १८३ ॥

बेचने और लेने के प्रश्न में लग्नपति तो खरीदनेवाला होता है और लाभेश बेचनेवाला होता है । मैं इस वस्तु को लेऊँगा इस प्रकार का प्रश्न करने पर यदि लग्न बलवान् हो तो जो वस्तु खरीदी जायगी उस वस्तु से प्रश्नकर्ता को निश्चय लाभ होगा ॥ १८२ । १८३ ॥

विक्रीणाम्यमुकं वस्तु प्रश्न एवंविधे सति ।
आयस्थाने बलवति विक्रेतव्यं क्रयाणकम् ॥ १८४ ॥

किसी ने पूछा कि मैं इस वस्तु को बेचूँगा । ऐसा प्रश्न करने पर यदि लाभ स्थान बलवान् हो तो खरीदी वस्तु को बेचना चाहिए ॥ १८४॥

धान्योत्पत्ति का प्रश्न ।

दिशि कस्यां भवेत्सस्यनिष्पत्तिः क्व च सा नहि ।
पूर्वदेशस्य भंगो हि क्व दिशि क्व च ते नहि ॥ १८५ ॥
चतुर्णामपि केन्द्राणां मध्ये यत्र शुभग्रहः ।
तस्यां च सस्यनिष्पत्तिः स्वास्थ्यं चैव भविष्यति ॥१८६

किसी ने पूछा कि किस दिशा में अनाज पैदा होगा और किस दिशा में नहीं पैदा होगा । पूर्व देश का भंग होगा । या अन्य दिशा का भंग होगा या कहीं भी कुछ भंग नहीं होगा । ऐसे प्रश्न में चारों केन्द्रों में से जिसमें शुभग्रह बैठा हो उसी की दिशा में अनाज पैदा होगा और सुख-शान्ति रहेगी । लग्नपूर्व, चौथा उत्तर, सप्तम पश्चिम और दशम दक्षिण दिशा कल्पित करना ॥ १८५ । १८६ ॥

यस्यां दिशि शनिः पापैर्युतो वाप्यवलोकितः ।
दिशि यस्यां च ह्यस्वास्थ्यं दुर्भिक्षं च भविष्यति १८७॥

जिस दिशा में पापयुक्त अथवा पापदृष्ट शनैश्चर बैठा हो उस दिशा में रोग और दुर्भिक्ष होगा ॥ १८७ ॥

दिशि यस्यांरविस्तत्र धान्यनाशो नृपाद्भवेत् ।

यत्रापि मङ्गलस्तत्र धान्यनाशोऽग्निभीस्तथा ॥ १८८ ॥

जिस दिशा में पापयुक्त सूर्य हो उस दिशा में राजा से भय होगा और जिस दिशा में पापयुक्त या दृष्ट मंगल हो उस दिशा में धान्य (अनाज) का नाश तथा अग्नि का भय होगा ॥ १८८ ॥

यस्यां दिशि शुभाः खेटाः समस्तबलशालिनः।
निष्पन्ना सैव विज्ञेया तस्य स्वास्थ्यं च तत्र हि ॥१८९॥

जिस दिशा में पूर्णबली सब शुभग्रह बैठे हों उसी दिशा में उत्तम धान की उत्पत्ति होगी और वहीं स्वास्थ्य भी रहेगा ॥ १८९ ॥

केन्द्रेषु सर्वतः पापाः समस्तबलसंयुताः।
देशस्तदा विनष्टोऽसौ ज्ञातव्यः शास्त्रकोविदैः ॥ १९० ॥

केन्द्रों में सब जगह पूर्णबली पापग्रह ही हों तो विद्वान् को जानना चाहिए कि वह देश ही नष्ट हो जायगा ॥ १९० ॥

लाभालाभ का प्रश्न।

लग्नपो मृत्युपश्चापि मृत्यौ स्यातामुभौ यदि।
स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिन्प्रष्टुर्लाभस्तदा ध्रुवम् ॥ १९१ ॥
एवं द्वादशभावेषु द्रेष्काणैरेव केवलम्।
बुधैर्विनिश्चयं ब्रूयाद्योगेष्वन्येषु निस्पृहः ॥ १९२ ॥

लाभ के प्रश्न में—लग्नेश और अष्टमेश दोनों यदि आठवें घर में एकही द्रेष्काण में बैठे हों तो पृच्छक को अवश्य लाभ होगा। इसी प्रकार बारह भावों का, केवल द्रेष्काण से ही विचार करके विद्वान् को शुभाशुभ कहना चाहिए। अन्य योगों में निस्पृह रहना चाहिए ॥ १९१। १९२

प्रश्नकाले सौम्यवर्गे लग्ने यदधिको भवेत्।
ग्रहभावानपेक्षेण तदाख्येयं शुभं फलम् ॥ १९३ ॥

यदि प्रश्नकाल में लग्न में सौम्यग्रहों का वर्ग अधिक हो तो ग्रहभाव की अपेक्षा से शुभ फल कहना चाहिए ॥ १९३ ॥

लग्नाधिपश्च लाभस्याधीशश्च दायको भवेत्।

लग्नाधिपस्य योगोत्थलाभाधीशेन लाभदः ॥ १६४ ॥

लग्नेश ही लाभाधीश हो तो लाभदायक होता है अथवा लग्नेश का लाभेश से इत्थशाल हो तो भी लाभदायक होता है ॥ १६४ ॥

भवति परलाभकरस्तदैव स यदि चन्द्रदृग्लाभे।
योगाः सर्वेऽप्यफलाश्चन्द्रमृते व्यक्तमेतच्च ॥ १६५ ॥
कर्माधीशेनैवं कर्माधीशेन च निवृत्त्यधीशेन।
मृत्युपतिना च योगे लाभाधीशस्य वक्तव्यम् ॥ १६६ ॥

यदि लग्नेश चन्द्रमा से दृष्ट हो लाभस्थान में स्थित हो तो दूसरे से लाभ करानेवाला होता है। यह प्रकट है कि विना चन्द्रमा के सब योग निष्फल हैं। इसी प्रकार दशमेश से भी विचार करना क्योंकि कर्माधिपति से लग्नेश का इत्थशाल हो और चन्द्रदृष्ट हो तो कर्म की सिद्धि होती है। यदि लाभाधीश का अष्टमेश से योग हो तो लाभ नहीं होता है ॥ १६५ । १६६ ॥

तत्तत्स्थानेक्षणतः पुण्यविवृद्धिश्च कर्मवृद्धिश्च।
विबुधैस्तदा निवृत्तिर्मृत्युभावापरेष्वेवम् ॥ १६७ ॥
लग्नेशो यदि षष्ठः स्वयमेव रिपुर्भवत्यात्मा।
मृत्युकृदष्टमगोऽसौ व्ययगः सततं व्ययं कुरुते ॥ १६८ ॥

जिस-जिस स्थान पर चन्द्रमा की दृष्टि हो उस-उस स्थान से पुण्य की वृद्धि तथा कर्म की वृद्धि होती है। परन्तु अष्टमभाव पर दृष्टि हो तो कर्म-धर्म की निवृत्ति जानना चाहिए। इसी प्रकार अन्य भावों में भी विचार करना चाहिए। यदि लग्नेश छठे घर में हो तो अपना आत्मा ही अपना शत्रु हो जाता है। यदि लग्नेश आठवें घर में हो तो मृत्युप्रद होता है तथा बारहवें घर में हो तो खर्च कराता है ॥ १६७ । १६८ ॥

लग्नस्थं चन्द्रजं चन्द्रः क्रूरो वा यदि पश्यति।
धनलाभो भवत्याशु किन्त्वनर्थोऽपि पृच्छतः ॥ १६९ ॥

यदि लग्न में स्थित बुध को चन्द्रमा अथवा पापग्रह देखता हो तो शीघ्र ही लाभ होगा परन्तु पृच्छक का अनर्थ भी होगा ॥ १६९ ॥

सामान्य विचार ।

इन्दुः सर्वत्र बीजाभो लग्नं च कुसुमप्रभम् ।
फलेन सदृशोंशश्च भावः स्वादुसमप्रभः ॥ २०० ॥

चन्द्रमा सर्वत्र बीज के समान, लग्न पुष्प के समान, उसका नवमांश फल के समान और भाव स्वाद के समान होता है ॥ २०० ॥

लग्नपतिर्यदि लग्नं कार्याधीशश्च वीक्षते कार्यम् ।
लग्नाधीशः कार्यं कार्येशः पश्यति विलग्नम् ॥ २०१ ॥
लग्नेशः कार्येशं विलोकयेल्लग्नपं च कार्येशः ।
शीतगुदृष्टौ सत्यां परिपूर्णा कार्यसंसिद्धिः ॥ २०२ ॥

लग्नेश लग्न को और कार्यभाव का स्वामी कार्य को तथा लग्नेश कार्य को और कार्येश लग्न को देखता हो, एवं लग्नेश कार्येश को और कार्येश लग्नेश को देखता हो और इनको चन्द्रमा देखता हो तो कार्य की पूर्ण सिद्धि होगी ॥ २०१ । २०२ ॥

कथयन्ति पदायोगं पश्यति सौम्यो न लग्नपो लग्नम् ।
लग्नाधिपं च पश्यति शुभग्रहश्चार्धयोगोऽत्र ॥ २०३ ॥
एकः शुभग्रहो यदि पश्यति लग्नाधिपं विलग्नं वा ।
पादोनयोगमाहुस्तदा बुधाः कार्यसंसिद्धौ ॥ २०४ ॥

यदि शुभग्रह लग्न को देखता हो परन्तु लग्नेश न देखता हो तो चौथाई योग होता है । यदि लग्नेश को शुभग्रह देखता हो तो आधा योग होता है । यदि एक भी शुभग्रह लग्नेश और लग्न को देखता हो तो कार्य की सिद्धि के लिए पौन योग विद्वानों ने कहा है अर्थात् चतुर्थांश हीन पूर्ण कार्य होता है ॥ २०३ । २०४ ॥

लाभादि का समय निरूपण ।

उदयोपगतं राशिं तत्कलीकृत्य लिप्तिकां गुणयेत् ।
छायांगुलैश्च कुर्यात् हत्वा मुनिभिस्ततः शेषः ॥ २०५ ॥

गणयित्वैवं प्राग्वद्धृत्वा सौम्यस्य भवेदुदयः ।
कार्यप्राप्तिः प्रष्टुर्वक्तव्या नेतरैर्ग्रहैर्भवति ॥ २०६ ॥

प्रश्नलग्न में जो राशि हो उसकी कला करके उस पिण्ड को छाया के अंगुलों से गुणा करे और ७ से भाग देवे जो शेष बचे उसे गिन करके एक स्थान में रक्खे । यदि वह शुभ ग्रह का उदयांक हो तो प्रश्नकर्ता के कार्य की सिद्धि कहना और अन्य ग्रह का उदयांक हो तो कार्य सिद्धि नहीं होगी ॥ २०५ । २०६ ॥

ग्रहगुणकारो ज्ञेयो दैवविदा पंच ५ विंशतिरैकः ।
मनवो १४ का ६ ष्टौ ८ त्रितयं ३ भवाः ११ सूर्यादितो ज्ञेयः॥
गुणकारैक्यविभक्तः सूर्यादिगुणकमंशुद्धः ।
यस्य न शुध्यति वर्गो विज्ञेयस्तद्वशात्कालः ॥ २०८ ॥

अब ग्रहों का गुणक कहते हैं । सूर्यादि ग्रहों के क्रम से ५, २१, १४, ९, ८, ३ और ११ गुणक जोतिषियों को जानना चाहिए अर्थात् सूर्य के ५, चन्द्रमा के २१, मंगल के १४, बुध के ९, बृहस्पति के ८, शुक्र के ३ और शनैश्चर के ११ गुणक हैं । इन गुणकार अंकों के ऐक्य ७१ से पूर्वोक्त छायांगुल से गुणित लग्न के कलात्मक पिण्ड में भाग देना जो शेष बचे उसमें सूर्यादिकों के गुणक को घटाना, जिसका गुणक नहीं घटे उसी के अनुसार समय कहना चाहिए ॥ २०७ । २०८ ॥

आरदिवाकरशेषे दिवसाः पक्षाश्च भृगुशशिनोः ।
गुर्ववशेषे मासो ऋतवः सौम्ये शनैश्चरेऽब्दाः स्युः २०९॥
आधानेऽथ प्राप्तौ गमनागमने पराजये विजये ।
रिपुनाशे वा कालं पृच्छायां निश्चितं ब्रूयात् ॥ २१० ॥

जैसे मंगल और सूर्य का गुणक न घटे तो दिन, चन्द्रमा और शुक्र का न घटे तो पक्ष, बृहस्पति का न घटे तो महीना, बुध का न घटे तो ऋतु और शनैश्चर का गुणक न घटे तो वर्ष जानना । यह गर्भाधान, धनप्राप्ति, गमन, आगमन, पराजय, विजय और वैरी का नाश आदि का समय पूछने पर निश्चय कर कहना चाहिए ॥ २०९ । २१० ॥

ग्रहों के वर्ग।

अकचटतपयशवर्गा रविकुजसितसौम्यजीवसौराणाम्।
चन्द्रस्य च निर्दिष्टास्तैः स्युः प्रथमोद्भवैर्वर्णैः॥ २११॥
ज्ञात्वा तस्माल्लग्नं विज्ञाय शुभाशुभं च वदेत्।
वर्गादिमध्यमान्त्यैर्वर्णैः प्रश्नोद्भवैर्विषमराशिः॥ २१२॥

रवि आदि ग्रहों के वर्ग ये हैं—सूर्य का अवर्ग, मंगल का कवर्ग, शुक्र का चवर्ग, बुध का टवर्ग, बृहस्पति का तवर्ग, शनैश्चर का पवर्ग और चन्द्रमा का यवर्ग और शवर्ग हैं। जहाँ लग्न के जानने में अड़चन हो वहाँ प्रश्न के आदि अक्षर के वर्ग से जो ग्रह हो उसी की राशि को लग्न जान कर उससे शुभाशुभ कहे। जिस ग्रह की दो राशि हैं उसकी विषम राशि लेना चाहिए। यदि एक साथ कई प्रश्न हों तो वहाँ पहले अक्षर से प्रथम प्रश्न का, दूसरे अक्षर से दूसरे प्रश्न का और तीसरे प्रश्न का अन्त्य वर्ण के वर्ग से लग्न निश्चित करना॥ २११। २१२॥

लग्नज्ञाने प्रवदेत्पृच्छायुग्मं कुजज्ञजीवानाम्।
सितरविजयोश्चानेकं रविशशिनोरेकराशित्वात्॥ २१३॥
तस्मात्प्राग्वत्प्रवदेत्पृच्छासमये शुभाशुभं सर्वम्।
कालस्य च विज्ञानादेतच्चिन्त्यं बहुप्रश्ने॥ २१४॥

लग्न जानने के प्रश्न में मंगल, बुध और बृहस्पति की राशि लग्न में जान पड़े तो दो प्रश्न कहना। तथा शुक्र और शनैश्चर से अनेक प्रश्न कहना तथा सूर्य और चन्द्रमा की एक राशि होने से इनके लग्न ज्ञान में एकही प्रश्न कहना चाहिए। इस प्रकार प्रश्न समय में पूर्व कथनानुसार संपूर्ण शुभाशुभ का विचार तथा समय का विचार करके बहुत से प्रश्नों को कहना चाहिए॥ २१३। २१४॥

धातु, मूल और जीव-चिन्ता का विचार।

स्वांशे विलग्ने यदि वा त्रिकोणे
स्वांशे स्थितःपश्यति धातुचिन्ताम्।

परांशकस्थश्च करोति जीवं
मूलं परांशोपगतः परांशम् ॥ २१५ ॥

लग्नेश और चन्द्रमा अपने नवांश में हों या लग्न में हों अथवा नवें या पाँचवें स्थान में हों या अपने नवांश में बैठे हुए लग्न को देखते हों तो धातु चिन्ता कहना। यदि दूसरे ग्रह के नवांश में बैठे हों तो जीवचिन्ता और शत्रु के अंश में लग्नेश या चन्द्रमा हो तो मूलचिन्ता कहना ॥ २१५॥

धातुर्मूलं जीवमित्योजराशौ युग्मे विद्यादेतदेव प्रतीपम् ।
लग्ने योंशस्तत्क्रमाद्गण्य एवं संक्षेपोऽयं विस्तरात्तत्प्रभेदाः ॥

प्रश्न लग्न में यदि ओज (विषम) राशि हो तो क्रम से धातु, मूल और जीव चिन्ता नवांशवश से कहना अर्थात् पहले नवांश में धातु, दूसरे नवांश में मूल, तीसरे नवांश में जीव और फिर चौथे में धातु इत्यादि विचार करना। यदि लग्न में सम राशि हो तो नवांशानुसार क्रमसे जीव, मूल और धातुचिन्ता जानना। यह संक्षेप से कहा है। विस्तार से इसके कई भेद हैं ॥ २१६ ॥

बलिनौ केन्द्रोपगतौ रविभौमौ धातुकरौ प्रश्ने ।
बुधसौरौ मूलकरौ शशिगुरुशुक्राः स्मृता जीवाः ॥२१७॥

यदि प्रश्न समय में सूर्य और मंगल केन्द्र में बैठे हों तो धातुसंबन्धी प्रश्न होता है। बुध और शनि केन्द्र में बैठे हों तो मूल संबन्धी प्रश्न और चन्द्रमा, बृहस्पति और शुक्र केन्द्र में बैठे हों तो जीवसंबन्धी प्रश्न होता है ॥ १७ ॥

मेषालिसिंहलग्ने कुजार्कयुक्ते निरीक्षितेप्यथवा ।
धातोश्चिन्तां प्रवदेद्युगघटकन्यागतैर्लग्नैः ॥ २१८ ॥
बुधरविजयुतैर्मूलं वृषतुलहारिमीनचापकर्कटकैः ।
चन्द्रगुरुशुक्रयुतैर्दृष्टैर्जीवो विनिर्देश्यः ॥ २१९ ॥

यदि लग्न में मेष, वृश्चिक और सिंह राशि हो और उसमें मंगल और सूर्य बैठे हों या उसको देखते हों तो धातु चिन्ता कहना। यदि मिथुन, कुंभ और कन्या राशि लग्न में हो और उसमें बुध और शनि

बैठे हों या देखते हों तो मूलसंबन्धी चिन्ता कहना। और वृष, तुला, सिंह, मीन, धन तथा कर्क राशि लग्न में हो उसमें चन्द्रमा, बृहस्पति और शुक्र बैठे हों या देखते हों तो जीवसंबन्धी प्रश्न कहना चाहिए १८। १९॥

भाव-प्रश्नज्ञान।

लग्नलाभपयोः प्राणी तयोर्यद्भावगः शशी।
तस्य भावस्य या चिन्ता प्रष्टुः सा हृदि वर्तते ॥ २२० ॥
एवं बलाधिकाच्चन्द्राल्लग्ननाथो यतः स्थितः।
दैवज्ञेन विनिर्णेयः प्रश्नस्तद्भावसम्भवः ॥ २२१ ॥

लग्नेश और लाभेश की जो राशियाँ हैं उनमें से जितनी संख्यावाली राशि में चन्द्रमा बैठा हो उसी भाव की चिन्ता प्रश्नकर्ता के हृदय में वर्तमान बताना चाहिए। इसी प्रकार बलवान् चन्द्रमा से जितनी संख्यावाले भाव में लग्नेश स्थित हो उस भाव से विद्वान् ज्योतिषी निर्णय करके प्रश्न को बतावे ॥ २२० । २२१ ॥

आत्मसमं लग्नगतैस्तृतीयगैर्भ्रातरः सुतं सुतगैः।
माता वा भगिनी वा चतुर्थगैः शत्रुगैः शत्रुः स्यात् २२२॥
जायासप्तमसंस्थैर्नवमे धर्माश्रितो गुरुर्दशमे।
स्वांशपतिमित्रशत्रुषु तथैव वाच्यं बलयुतेषु ॥ २२३ ॥

उत्तम बलवाला ग्रह अथवा तत्काल लग्न का नवमांशेश अथवा लग्नेश का मित्र ग्रह अथवा पूर्वोक्त लग्नेश, लाभेश और चन्द्रमा लग्न में हों तो आत्मासंबन्धी प्रश्न, तीसरे स्थान में हों तो भाईसंबन्धी, पंचम में स्थित हों तो पुत्रसंबन्धी, चौथे में हों तो माता या बहिन संबन्धी, सप्तम भाव में स्थित हों तो स्त्रीसंबन्धी, नवम भाव में हों तो धर्मसंबन्धी और दशम भाव में पूर्वोक्त ग्रह बैठे हों तो गुरु (पिता) या राजसंबन्धी प्रश्न कहना। लग्ननवांश का स्वामी मित्र राशि में बलवान् हो तो मित्र-संबन्धी और शत्रु राशि में हो तो शत्रुसंबन्धी प्रश्न कहना २२२। २२३॥

चरलग्ने चरभागे मध्याद्भ्रष्टे प्रवासिचिन्ता स्यात्।
भ्रष्टः सप्तमभवनात्पुनर्निवृत्तो यदि न वक्री ॥ २२४ ॥

यदि चर लग्न में और चर के ही नवांश में पूर्वोक्त ग्रह दशम से द्वादश तक में बैठे हों तो परदेशी की चिन्ता होती है। सातवें से नवम तक में बैठे हों तो अपने स्थान से प्रवासी के लौटने की चिन्ता होत है यदि वक्री ग्रह न हो तो। वक्री होने से विपरीत फल होता है ॥ २२४ ॥

अस्ते रविसितवक्रैः परजायां स्वां गुरौ बुधे वेश्याम् ।
चन्द्रे च वयःशशिवत्प्रवदेत्सौरेऽन्त्यजादीनाम् ॥ २२५ ॥

सातवें में सूर्य, शुक्र और मंगल बैठे हों तो परस्त्री की, बृहस्पति सातवें हो तो अपनी स्त्री की, बुध सप्तम में हो तो वेश्या की, चन्द्रमा सप्तम में हो तो शशिवदनी की और शनैश्चर सप्तम में बैठा हो तो अन्त्यज (नीच) जाति की स्त्री की चिन्ता पृच्छक के हृदय में कहना ॥ २२५ ॥

अवस्था प्रश्न ।

कुमारिकां बालशशी बुधश्च वृद्धां शनिः सूर्यगुरू प्रसूताम् ।
स्त्री कर्कशां भौमसितौ च धत्ते एवं वयःस्यात्पुरुषेषु चैवम् २२६

सप्तम में बाल चन्द्रमा या बुध हो तो कुमारी, शनि हो तो बूढ़ी, सूर्य और बृहस्पति हों तो प्रसूता, मंगल और शुक्र हो तो कर्कशा स्त्रीसंबन्धी प्रश्न कहना। इसी प्रकार पुरुष की भी अवस्था जानना ॥ २२६ ॥

सुरतप्रश्न ।

सौम्येत्थशाले हिमगौ तु केन्द्रे सौख्यातिरेकःसविलासहासः ।
क्रूरेत्थशाले हिमगौ सरोषे क्रूरान्वितेऽभूत्कलहो नृवध्वाः २२७
पीडाऽथवाऽसीत्सुरते युवत्या रजोयथास्तर्क्षमुपैति तद्वत् ।
लग्ने सुरेज्ये भृगुजे कलत्रे तुर्ये हिमांशौ सविलासहासौ २२८

सुरत के प्रश्न में—शुभग्रहों से इत्थशाल करता हुआ चन्द्रमा केन्द्र में हो तो अत्यन्त सुख के साथ हास-विलास होता है। और चन्द्रमा यदि पापग्रहों से युक्त हो या पापग्रहों से इत्थशाल करता हुआ केन्द्र में हो तो स्त्री-पुरुषों का रोष के साथ कलह होता है। यदि पापग्रहों से युक्त चन्द्रमा सातवें भाव में बैठा हो तो युवती स्त्री के रजोदोष से रतिसमय पीड़ा होती है। यदि लग्न में बृहस्पति, सातवें में शुक्र और चौथे स्थान में चन्द्रमा हो तो हास-विलास के साथ क्रीड़ा होती है ॥ २२७।२२८ ॥

शुभग्रहोत्थे च कम्बूलयोगे युतो रजः पुष्पसुगन्धियुक्तम् ।
स्वच्चोचगे हर्म्यरतं निगद्यं स्थितं द्विदेहे वनिता स्वकीया २२९
चरोदये सा रमिते परस्त्री केन्द्रे शनौ सा सुरजो दिवारतिम् ।
निशोदये रात्रिखगे च रात्रौ दिवानिशं तद्बलिनोर्द्विखेटाः २३०

सप्तमेश और लग्नेश का शुभग्रहों से कम्बूलयोग हो तो फूलों कीसी सुगन्ध से युक्त कामिनी का रज होता है । पापाक्रान्त होने से दुर्गन्ध युक्त जानना । यदि पूर्वोक्त ग्रह अपने उच्च में या अपनी राशि में हों तो सुन्दर महल में रमण जानना । यदि द्विस्वभाव लग्न हो तो अपनी स्त्री से समागम कहना । यदि चर लग्न हो तो परस्त्री से रमण जानना । केन्द्र में शनि हो तो रजस्वला से रमण तथा दिवाबली लग्न हो तो दिन में और रात्रिबली लग्न या ग्रह हो तो रात्रि में रमण और दिवाबली और रात्रिबली दोनों हों तो दिनरात में रमण जानना ॥ २३० ॥

महर्घ-प्रश्न ।

मेषे वृषे च मिथुने शुभयुक्तदृष्टे
न ग्रैष्मिकं तु सुलभं भवति पृथिव्याम् ।
सौम्ये धनुर्मृगघटेषु च सारधान्यं
कुर्यात्समर्घमशुभैः सहितोऽसमर्घम् ॥ २३१ ॥

यदि प्रश्नलग्न में मेष, वृष और मिथुन राशि शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो भूमि पर ग्रीष्मऋतु का अनाज सुलभ होगा । और धन, मकर और कुंभ में शुभग्रह हों तो शारदीय धान्य (शरद् ऋतु में होनेवाले अन्न) सुलभ होंगे । यदि पापयुक्त हों तो महँगा और शुभयुक्त हों तो अनाज सस्ता होगा ॥ २३१ ॥

लग्ने बलाढ्ये निजनाथसौम्यैर्युक्तेक्षिते केन्द्रगतैः शुभैश्च ।
सर्वैः समर्घं विबलैर्विलग्ने केन्द्रेषु पापैः सकलं त्वनर्घ्यम् २३२

यदि लग्न बलयुक्त हो और अपने स्वामी अथवा शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तथा सब शुभग्रह केन्द्र में स्थित हों तो धान्य सस्ता होगा और लग्न में और केन्द्र में बलरहित पापग्रह हों तो सब वस्तुएँ महँगी होंगी ॥२३२॥

मेषार्क प्रवेश का शुभाशुभ फल।

राकाकुहूशशिपभास्वदजप्रवेशे
लग्नेश्वराः शुभखगैर्युतवीक्षिताश्चेत् ।
तद्वत्सरे जगति सौख्यमलं प्रकुर्युः
पापार्दिते गदनरेन्द्रभयं प्रजानाम् ॥ २३३ ॥

अमावस्या और पौर्णमासी को चन्द्रराशि का पति सूर्य मेष में प्रवेश करे उस समय का लग्नेश्वर शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो उस साल में संसार में पूर्ण सुख होता है और यदि पापग्रहों से पीड़ित हो तो प्रजा को भय होता है ॥ २३३ ॥

मेषप्रवेशोदयतः स्वराशेः केन्द्रेषु पापोडुपतीत्थशाले ।
पापग्रहैर्दृष्टयुतेऽथ तस्मिन्वर्षे गदोर्तिः प्रियमन्नमुर्व्याम् २३४॥

मेष के सूर्य का जिस लग्न में प्रवेश हो उससे केन्द्र में स्थित या अपनी राशि में स्थित चन्द्रमा का पापग्रहों से इत्थशाल हो अथवा पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो उस वर्ष में संसार में रोग हो और पृथ्वी पर अन्नप्रिय हो अर्थात् अन्न महँगा हो ॥ २३४ ॥

भानोःमेषप्रवेशोदयभवनपतिः सद्ग्रहः स्वोच्चसंस्थः
स्वर्क्षस्थो वापि केन्द्रे शुभगगनचरैर्दृष्टयुक्तो बलाढ्यः ।
तस्मिन्वर्षे विदध्याज्जगति शुभसुखं भूरि सत्यं सुबुद्धिः
क्रूरः क्रूरार्दितो वा दिशति नृपभयं कष्टमन्नं महर्घम् ॥ २३५ ॥

मेषार्क प्रवेश के समय लग्नेश शुभग्रह हो और अपनी राशि में बैठा हो या अपने उच्च में हो केन्द्र में बैठा हो और शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तथा बलवान् हो उस वर्ष में शुभ कार्य, सुख, सत्य और सुबुद्धि का देनेवाला होता है । यदि वह लग्नेश पापाक्रान्त हो तो राजा से भय, कष्ट और अन्न महँगा करता है ॥ ३५ ॥

मेषार्कप्रवेश लग्न से मनुष्यों का शुभाशुभ फल ।

जन्मोदयाद्भास्वदजप्रवेशलग्नं हि यद्भावगतं शुभान्वितम् ।
तद्भाववृद्धिं विदधाति तस्मिन्वर्षे नृणां पापयुतं तदन्यथा २३६

जन्म लग्न से मेषार्क प्रवेश लग्न शुभग्रहों से युक्त जिस भाव में प्राप्त हो उस भाव की उस वर्ष में वृद्धि होती है । यदि पापग्रह युक्त हो तो उस भाव की हानि होती है ॥ २३६ ॥

जन्मोदये देहसुखं धनेऽर्थलाभस्तृतीये च कुटुम्बवृद्धिः ।
तुर्ये सुहृत्सौख्यमथात्मजाप्तिः पुत्रेऽथ षष्ठेऽरिपराजयः स्यात् २३७

जन्म लग्न में मेषार्क प्रवेश हो तो देह में सुख, जन्म लग्न से दूसरे में धन लाभ, तीसरे में कुटुंब की वृद्धि, चौथे में मित्र सुख, पाँचवें में पुत्र प्राप्ति और जन्म लग्न से छठे में हो तो शत्रु की हार होती है ॥ २३७ ॥

स्त्रीसौख्याप्तिर्भवति मदने मृत्युरुग्भीश्च रन्ध्रे
धर्मार्थाप्तिस्तपसि दशमे वित्तसौख्यास्पदाप्तिः ।
लाभे लाभः सुखधनचया दुःखदारिद्र्यमन्त्ये
पुंसो मेषं प्रविशति रवौ जन्मलग्नाद्विलग्ने ॥२३८॥

जन्म लग्न से सातवें लग्न में मेषार्क प्रवेश हो तो स्त्री से सुख की प्राप्ति, आठवें में हो तो मृत्यु का भय, नवें में धर्म और धन की प्राप्ति, दशवें में धन और स्थान की प्राप्ति, ग्यारहवें में हो तो सुख और धन का संचय तथा बारहवें लग्न में मेषार्क प्रवेश हो तो दुःख और दरिद्र होता है । यह जन्म लग्न से पुरुषों के मेषार्क प्रवेश लग्न का विचार करना चाहिए ॥ २३८ ॥

श्रीनीलकण्ठेन शरत्फलोत्तरं प्रश्नाख्यतन्त्रं यदकारि पूर्वम् ।
तत्सांप्रतं पूर्णतरं न लभ्यते ह्यावश्यकं प्रश्नफलं हि मन्ये २३९

इति श्रीदैवज्ञानन्तसुतनीलकण्ठदैवज्ञसंगृहीतं
तृतीयं प्रश्नतन्त्रं समाप्तम् ॥ ३ ॥

पहले श्रीनीलकण्ठजी ने वर्षतन्त्र के अनन्तर प्रश्नतंत्र भी बनाया था किन्तु इस समय वह पूर्ण नहीं मिलता है अतः आवश्यक प्रश्नफल लिखा है ॥ २३९ ॥

बाणानन्दाङ्कभूवर्षे श्रावणेऽसितपक्षके ।
प्रतिपद्बुधवारे च भाषेयं पूर्णतांगता ॥

सुकुल शक्तिधर गुरुचरण, बार बार हिय ध्याय ।
नीलकण्ठि शुभ ग्रन्थ की, भाषा शुद्ध बनाय ॥
प्रश्नतंत्र की अतिसरल, भाषा कीन्ह बखान ।
भूल चूक बिसराय कर, करि हैं कृपा सुजान ॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां प्रश्नतन्त्रे खूबचन्द्रशर्मविरचितायां
भाषाटीकायां विशेषप्रश्ननिरूपणं
नाम तृतीयं प्रकरणम् ॥ ३ ॥